UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186425

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H520.1/J536 Accession No. H.2201

Author [illegible]

Title [illegible] 11952

This book should be returned on or before the date last marked below

ग्रन्थमाला सम्पादक और नियामक
श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन एम० ए०, डालमियानगर

प्रकाशक
अयोध्याप्रसाद गोयलीय
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस

प्रथम संस्करण ३०००
अप्रैल १९५२
मूल्य छः रुपये

मुद्रक
जे० के० शर्मा
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस
इलाहाबाद

समर्पण

जो अगणित बालिकाओं, युवतियों और वृद्धाओंकी माँ हैं,
जिनके हृदयमें अपार वात्सल्यभाव भरा है, जिनसे मुझे
निरन्तर लिखने में स्फूर्ति और प्रेरणा मिला करती
है, उन साध्वी परम तपस्विनी, परोपकारिणी

माँ श्री ब्र० पं० चन्दाबाई जी

अधिष्ठात्री

श्री जैन-बाला-विश्राम, आरा

के

कमलोंमें सादर यह

प्रयास

समर्पित है

नेमिचन्द्र शास्त्री

अपनी बात

आश्विन कृष्णा प्रतिपदाकी सन्ध्या थी, नगरके सभी जिनालय विद्युत्प्रकाशसे आलोकित थे। धूपघटोंसे निकलनेवाले सुगन्धित धूम्रने देशदिगन्तको सुवासित कर दिया था। अगर-बत्तियोंकी सुगन्धने न जाने कितनी मर्मकथाओंसे मेरा मन भर दिया, जिससे प्राण-प्राणकी अन्तर्पीड़ा मुखरित हो उठी।

अपार जन-समुदाय उमड़ता हुआ जिनालयोंकी सुषमा, मोहक सजावट और दिव्यालोकके दर्शनकी लालसासे चला जा रहा था। आज पर्यूषणकी समाप्तिके पश्चात् जैन-धर्मानुयायियोंने अपने भीतरके समान बाहरको भी आलोकित किया था। दीपावलीसे भी मनोरम दृश्य विद्यमान था। जैन-मन्दिरोंमें फेनोज्वल सौन्दर्यका प्रवाह देश और कालकी सीमासे ऊपर था। इसलिए सैकड़ोंकी नहीं, सहस्रोंकी टोलियाँ आती और जाती थीं। रंग-बिरंगे झाड-फानूसोंके बीच सन्ध्याके आकुल वक्ष पर यौवनका स्वर्णकलश भरा रखा था। झालर-तोरणोंसे सजे जिनालय दर्शकोंके मनको उलझा लेनेमें पूर्ण सक्षम थे। सन्ध्यानिलके मादक झोंके मन्थर गतिसे प्रवाहित हो अपार भीड़को सौन्दर्यकी उस प्रभासे सम्बद्धकर आत्म-विभोर बना रहे थे। देखते-देखते उत्सवका एक पारावार उमड आया। चित्र-विचित्र वस्त्राभूषणोंमें सहस्रों ग्रामीण नर-नारियोंकी अपार वसुन्धरा चारों ओर व्याप्त हो गयी। मैं सरस्वती भवनके बाहिरी बरामदेमें बैठा हुआ इस अपार भीडको अपनेमें खोया हुआ देख रहा था। आँखें विद्युत्प्रकाशकी ओर थीं और मन न मालूम कहाँ विचरण कर रहा था।

आज ही मध्याह्नमें एक निबन्ध पढा था, जिसमें लेखकने बतलाया

था कि "**लाइब्रेरियन संसारके ज्ञानियोंमे एक विलक्षण ज्ञ्नी होता है। यद्यपि विश्वमे उसका सम्मान नहीं होता, पर विद्वत्तामें वह किसीसे भी घट नहीं। वह लाइब्रेरियन अभागा है, जो पढ़ता और लिखता नहीं।**" न मालूम मेरा मन आज क्यों उदास था, और अभी तक इसी निबन्धमे उलझा हुआ था। लाइब्रेरियन हुए मुझे अभी दो ही वष हुए थे, अतः अनेक महत्वाकाक्षाओंके मसृण स्पर्शने मेरे मनको गुदगुदाया और मेरी हृदय-वीनके तार झनझना उठे। विचार विभोर होनेसे नेत्र बन्द हो गये और मुझे मालूम हुआ कि सामने 'भवन' के सिंहद्वारसे वीणा धारिणी, हंसवाहिनी, शुभ्र-वसना, शान्तिदायिनी सरस्वती मुस्कराती हुई आयी और उसने मेरे मस्तकपर अपना वरद हस्त रखा। अवलम्बन पा मेरे अज्ञान वारिद हटने लगे, विचार वल्लरी झूमने लगी, मन मधुकर गुनगुनाने लगा। मुझे ऐसा लगा कि चन्द्रमा और नक्षत्रोंने कहा—अब विलम्ब क्या? दो वर्षसे निखट्टू बने बैठे हो, सावधान हो जाओ।

आँखे खोलते ही मूर्त्ति अदृश्य हो गयी, पर अपार भीडका कोलाहल ज्यो-का-त्यो था। मैंने इधर-उधर उस दिव्य सौन्दर्यको देखा, पर अब वहाँ केवल सौरभ ही था। अत. कलेजेको हाथोंसे थामे बहुत देर तक किकर्त्तव्य विमूढ बना रहा। सोचता रहा कि क्या सचमुचमे ही मैं ज्योतिष विषय पर लिख सकूँगा। रातके दो बजे भीडका ताता बन्द हुआ, मैं 'भवन' बन्द कर घर गया।

प्रात.काल जागनेपर मन कुछ भारी-सा प्रतीत हुआ। रातकी उलझन ऐठती जा रही थी। रह-रहकर हृदयसे असन्तोष और अतृप्तिके निश्वास निकल रहे थे। हर्ष और विषादकी धूप-छायाने मनको बेचैन कर दिया था। अतः भाराच्छन्न मन लिये चल पडा अपने अभिन्न मित्र स्वर्गीय श्री पं० जगन्नाथ तिवारीके पास। मैंने अपने हृदयको उनके समक्ष उड़ेल दिया और रातकी घटना ज्यो-की-त्यो बिना किसी नमक-मिर्चके कह सुनायी। अपने स्वभावानुसार सुनकर वह खूब हँसे और बोले—

"आखिरकार बात वही होगी, जो मै कहा-करता था। यदि इस प्रेरणाको पाकर भी तुम अड़ियल घोड़ेकी तरह अड़े रहे तो तुम्हारे जीवनमे यह सबसे बड़ा दुर्भाग्य होगा।"

उनका मेरे लिए स्नेहका सम्बोधन था महाराजजी, अत. अपने इस सम्बोधनका प्रयोग करते हुए मेरी पीठ थपथपायी और आज्ञाके स्वरमें कहा—"कल 'भारतीय ज्योतिष' की रूप रेखा बन जानी चाहिए और परसोसे तुमको मुझे लिखकर प्रति दिन कम-से-कम पाँच पृष्ठ देने होंगे। बस, अब महाराजजी जाइये, मै इससे अधिक कन्सेशन करनेवाला नही हूँ।"

उनके इस स्नेहने मेरा मन हल्का कर दिया। घर आते ही माथा-पच्चीकर रूप रेखा तैयार की और लिखना आरम्भ कर दिया। अपने लिखनेमे पूज्या माँ श्री पडिता चन्दाबाईजी से भी जब-तब सलाह ले लेता था। जिस-किसी तरह से दो वर्षों के कठिन परिश्रमके पश्चात् पुस्तक समाप्त हुई।

लिखनेका कार्य पूर्ण होनेके अनन्तर मैने एक पत्र श्रद्धेय प० नाथूराम प्रेमी बम्बईको लिखा, जिसमे अपनी इस रचनाके देखनेका अनुरोध किया। प्रेमीजीने उत्तरमे लिखा कि—"मै ज्योतिष विषयमे अभिज्ञ नही हूँ, अतः अपनी पुस्तक अवलोकनार्थ मेरे पास न भेजकर श्री हजारीप्रसाद द्विवेदीके पास भेजे। मै पत्र व्यवहारकर आपकी पुस्तकके अवलोकनकी उनसे स्वकृति लिए लेता हूँ। आपको उपयुक्त सुझाव उन्हीसे मिल सकेगा।"

एक सप्ताहके बाद पुन. प्रेमीजी का पत्र मिला—"श्री हजारीप्रसाद द्विवेदीने स्वीकृति दे दी है, आप अपनी रचना शान्तिनिकेतनके पतेसे उन्हे भेज दे।" मैने श्री प्रेमीजीके आदेशानुसार इस रचनाको श्री हजारीप्रसाद द्विवेदीके पास भेज दिया। लगभग छ. महीनेके पश्चात् पुस्तक वहाँसे लौटी और साथ ही एक पत्र भी मिला, जिसमे कुछ सुझाव थे।

पुस्तक कैसी है? इसपर मुझे एक शब्द भी नही लिखना। पाठक स्वयं

निर्णय कर सकेंगे। विश्वमें अपने दहीको कोई भी खट्टा नही बतलाता है। अपना काना-कलूटा पुत्र भी प्रिय होता है।

पुस्तक लिखनेमे अनेक प्राचीन और नवीन आचार्यों और लेखकों की पुस्तकोसे सहायता ली है, अतः सर्वप्रथम उन सभीके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना परम कर्त्तव्य है। जिन व्यक्तियोसे पुस्तको द्वारा या वाचनिक सम्मति द्वारा सहायता प्राप्त हुई है, उनमे सर्वश्री स्व० पं० जगन्मोहन तिवारी, श्री पं० नाथूराम प्रेमी बम्बई, श्री डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी बनारस, श्री पूज्य प० कैलाशचन्द्र जी सिद्धान्त शास्त्री, बनारस, प्रो० गो० खुशाल जैन एम० ए०, साहित्याचार्य काशी, श्री रामनरेशलाल श्रीराम होटल पटना, श्री प० तारकेश्वर त्रिपाठी, ज्योतिषाचार्य आरा, और अपनी धर्म-पत्नी श्रीमती सुशीलादेवीका मै अत्यन्त आभारी हूँ।

पुस्तक प्रकाशित करनेमे भारतीय ज्ञानपीठ काशीके सुयोग्य मंत्री श्री प० अयोध्याप्रसादजी गोयलीय और लोकोदय ग्रन्थमालाके संपादक श्री बा० लक्ष्मीचन्द्रजी जैन एम० ए० का भी आभारी हूँ, आ॰ दोनों महानुभावोंकी सत्कृपासे ही यह रचना प्रकाशित हो सकी है।

प्रूफ-सशोधनमें श्री सरस्वती प्रिंटिग वर्क्स लि० आराके व्यवस्थ॰ श्री जुगल किशोर जैन बी० एस-सी० से भी पर्याप्त सहायता मिली, अतः आपका भी आभारी हूँ।

निवेदक

नेमिचन्द्र शास्त्र

विषय-सूची

प्रथमाध्याय

मानवकी जिज्ञासा १
ज्योतिषका व्युत्पत्त्यर्थ २
रतीय-ज्योतिषकी परि-
भाषा और क्रमिक विकास २
ज्योतिषका उद्भव स्थान और
काल ७
रतीय-ज्योतिष की प्राची-
नता पर विदेशीय विद्वानों
के अभिमत १३
मानवजीवन और भारतीय-
तिष १७
य-ज्योतिषका रहस्य २७
ज्योतिषकी उपयोगिता ३७
-ज्योतिषके इतिहास-
कालवर्गीकरण ४१
रकाल (ई० पू०
००के पहलेका समय) ४२
(ई० पू० १०००० ई० पू० ५०० तक) ५०
वर्त्तमानकालीन ज्योतिष-सिद्धान्त ५३–७७
मासविचार ५३
ऋतुविचार ५४
अयनविचार ५६
वर्षविचार ५८
युगविचार ५९
ग्रहकक्षा ६२
ग्रहविचार ७०
राशिविचार ७४
गुह्य—ग्रहणविचार ७५
विषुव और दिन वृद्धिका विचार ७५
आदिकाल (ई० पू० ५००— ई० ५०० तक) सामान्य परिचय ७७
आदिकाल प्रमुख ग्रन्थ और ग्रन्थकारोंका परिचय ८३-१०९
ऋक्ज्योतिष ८४
यजु और अथर्वज्योतिष ८८
सूर्यप्रज्ञप्ति ९०
चन्द्रप्रज्ञप्ति ९२
ज्योतिष्करण्डक ९५
कल्पसूत्र, निरुक्त और व्याकरणमें ज्योतिषचर्चा ९५

स्मृति एव महाभारतकी ज्योतिषचर्चा ९६
वशिष्ठसिद्धान्त ९९
रोमकसिद्धान्त ९९
पौलिशसिद्धान्त १००
सूर्यसिद्धान्त १०१
ऋषिपुत्र १०३
आर्यभट्ट प्रथम १०५
कालकाचार्य १०७
द्वितीय आर्यभट्ट १०९
पर्व मध्यकाल (ई० ५०१—१०० तक) सामान्य परिचय १०९-११५
पूर्वमध्यकालके प्रमुख ज्योतिर्विद और उनके ग्रंथोंका परिचय ११५-१२३
वराहमिहिर ११५
कल्याणवर्मा ११६
ब्रह्मगुप्त ११७
मुञ्जाल ११८
महावीराचार्य ११८
भट्टोत्पल ११९
चन्द्रसेन १२०
श्रीपति १२१
श्रीधर १२१
भट्ट वोसरि १२३
उत्तर मध्यकाल (ई० १००१—१६००): सामान्य परिचय १२३-१२
उत्तर मध्यकालके ग्रन्थ और ग्रन्थकारोंका परिचय १२९-१४२
भास्कराचार्य १३०
दुर्गदेव १३१
उदयप्रभदेव १३२
मल्लिषेण १३३
राजादित्य १३
वल्लालसेन १३
पद्मप्रभसूरि १३
नरचन्द्र उपाध्याय १३
अट्टकवि या अर्हद्दास १३
महेन्द्रसूरि १३७
मकरन्द १३७
केशव १३८
गणेश १३८
ढुण्ढिराज १३९
नीलकण्ठ १३९
रामदैवज्ञ १४०
मल्लारि १४
नारायण १४
रगनाथ १४.
अर्वाचीन काल (ई०१६०१—१९५१) :

सामान्य परिचय १४२-१४४
अर्वाचीन कालके प्रमुख ज्योतिर्विदोंका परिचय १४४-१५०
मुनीश्वर १४४
दिवाकर १४४
कमलाकर भट्ट १४५
नित्यानन्द १४५
महिमोदय १४५
मेघविजयगणि १४६
उदयकुशल १४७
ऋषिचन्द्रगणि १४७
बाघजी मुनि १४७
यशस्वत सागर १४७
जगन्नाथ सम्राट् १४७
बापूदेव शास्त्री १४८
नीलाम्बर झा १४८
सामन्त चन्द्रशेखर १४९
सुधाकर द्विवेदी १४९
समीक्षा १५०

द्वितीयाध्याय

भारतीय-ज्योतिषके सिद्धान्त १५२-३२६
तिथि : परिभाषा, स्वामी एव संज्ञाएँ १५३-१५४
नक्षत्र : स्वरूप, स्वामी एव संज्ञाएं १५४-१५७
योग स्वरूप और स्वामी १५७-१५८
करण स्वरूप और स्वामी १५८
वार : स्वरूप और संज्ञाएं १५८-१५९
नक्षत्रोंके चरणाक्षर १५९
अक्षरानुसार राशिज्ञान १६०
राशियोंका परिचय १६०-१६२
राशिस्वरूपका प्रयोजन, शत्रुता-मित्रता, स्वामी और अगविभाग १६३
आवश्यक परिभाषाएँ १६४
जातक—जन्मपत्र-निर्माण-गणित १६४-३२६
स्थानीय सूर्योदय निकालन-की विधि १६४
चरसारणी १६५
सूर्योदय साधनका उदाहरण १६९
स्टैण्डर्ड टायमको लोकल टायम बनानेकी विधि और उदाहरण १७०-१७१
अक्षाश और देशान्तर बोधक सारणी—भारतके समस्त नगरो के लिए १७२-१८५
वेलान्तर सारणी १८६
इष्टकाल बनानेके नियम और उदाहरण १८८-१९०

भयात और भभोग साधनके नियम और उदाहरण १९०-१९२
लग्न निकालनेकी प्रक्रिया १९२
पलभाज्ञानसारणी १९३
पलभासाधनके उदाहरण १९४
लग्नसाधनका उदाहरण १९५
अयनाश निकालनेकी विधि और उदाहरण १९७
लग्न निकालनेकी सुगम विधि और उदाहरण १९८
लग्नसारणी २००
लग्नशुद्धिका विचार २०४
सोदाहरण प्राणपद साधन और उसके द्वारा लग्नशुद्धि २०४
सोदाहरण गुलिक साधन २०७
गुलिक लग्नका उपयोग २०८
लग्नके शुद्धाशुद्ध अवगत करनेके सोदाहरण अन्य उपाय २०९
नवग्रह स्पष्ट करनेकी सोदाहरण विधि २१०
चन्द्र स्पष्टकी विधि और उदाहरण २१४
चन्द्रगति साधन और उदाहरण २१५
चन्द्रसारणी द्वारा चन्द्र स्पष्ट करनेकी विधि और उदाहरण २१६
नक्षत्रोपरि स्पष्ट राश्यादि चन्द्रसारणी २१७
जन्मपत्री लिखनेकी प्रक्रिया २२०
संस्कृत भाषामे जन्मपत्री लिखनेकी विधि २२१
द्वादश भाव स्पष्ट करनेकी विधि २२२-२३८
नतसाधनके नियम और उदाहरण २२२
दशम साधनका उदाहरण २२४
भुक्ताश साधन द्वारा दशमका उदाहरण २२५
दशम भाव साधन करनेके अन्य नियम और उदाहरण २२६
दशम लग्नसारणी २२८
लग्नसे दशम भाव साधन सारणी २३२
अन्य भाव साधन करनेकी प्रक्रिया और उदाहरण २३६
दशवर्ग विचार २४०-२५३
गृह २४०
होरा साधन और उसका उदाहरण २४०
द्रेष्काण साधन और उसका उदाहरण २४२

सप्तमाश साधन और उसका उदाहरण २४३
नवमाश साधन और उसका उदाहरण २४४
दशमाश साधन और उदाहरण २४६
द्वादशाश साधन और उसका उदाहरण २४८
षोडशाश साधन और उसका उदाहरण २५०
त्रिशाश साधन और उसका उदाहरण २५१
षष्ठ्यश साधन और उसका उदाहरण २५३
ग्रहोकी निसर्ग मैत्री विचार २५९
तात्कालिक मैत्री विचार २५९
पचधा मैत्री विचार २६०
पारिजातादि विचार २६०
कोरकाशकुण्डली बनानेकी विधि २६१
स्वाशकुण्डलीके निर्माणकी विधि और उदाहरण २६२
दशा विचार २६२-३००
विंशोत्तरी दशा निकालनेकी विधि २६२
विशोत्तरी दशा साधन और उदाहरण २६३
विशोत्तरी दशा चक्र २६६
अन्तर्दशा निकालनेकी विधि और उदाहरण २६६
चन्द्रमाकी अन्तर्दशामे नौ ग्रहोकी अन्तर्दशा २६७
सूर्यादि नौ ग्रहोके अन्तर्दशा चक्र २६८
जन्मपत्रीमे अन्तर्दशा लिखनेकी विधि और उदाहरण २७०
प्रत्यन्तर दशा विचार २७३
सूर्यकी दशाके नौ प्रत्यन्तर २७३
चन्द्रमाके दशाके नौ प्रत्यन्तर २७५
मंगलकी दशाके नौ प्रत्यन्तर २७७
राहुकी दशाके नौ प्रत्यन्तर २७९
बृहस्पतिकी दशाके नौ प्रत्यन्तर २८१
शनिकी दशाके नौ प्रत्यन्तर २८३
बुधकी दशाके नौ प्रत्यन्तर २८५
केतुकी दशाके नौ प्रत्यन्तर २८७
शुक्रकी दशाके नौ प्रत्यन्तर २८९
अष्टोत्तरी दशा और उसके स्पष्ट करनेकी सोदाहरण विधि २९१
अष्टोत्तरी दशा चक्र २९३
अष्टोत्तरी अन्तर्दशा साधन २९३
अष्टोत्तरीके सूर्यादि अन्तर्दशा चक्र २९३

योगिनी अन्तर्दशा साधन और
उदाहरण २९५
योगिनी अन्तर्दशा साधन
और चक्र २९८
बल विचार ३००-३२२
उच्चबल साधन और
उदाहरण ३०१
उच्च-नीच राश्येशबोधक चक्र ३०२
युग्मायुग्मबल साधन और
उदाहरण ३०२
केन्द्रादिबल साधन और
उदाहरण ३०३
द्रेष्काणबल-साधन और
उदाहरण ३०४
सप्तवर्गबल-साधन और
उदाहरण ३०४
दिग्बल-साधन और उदाहरण ३०६
कालबल-साधन ३०८-३२०
नतोन्नतबल-साधन और
उसका उदाहरण ३०८
पक्षबल-साधन और उदाहरण ३०९
दिवारात्रि व्यंशबल-साधन
और उदाहरण ३०९
वर्षेशादिबल-साधन ३१०
कलियुगाद्यहर्गण-साधन विधि
और उदाहरण ३१०
दिनेश-साधन ३१२
कालहोरेश-साधन और
उदाहरण ३१२
आयनबल-साधन और
उदाहरण ३१३
मध्यम ग्रह बनानेका नियम ३१५
अहर्गण बनानेका नियम
और उदाहरण ३१९
मध्यम सूर्यादि नवग्रह-साधन
विधि और उदाहरण ३१७
भौमादि ग्रहोंका शीघ्रोच्च
बनानेका नियम और
उदाहरण ३१९
नैसर्गिक-बल-साधन और
उदाहरण ३२०
दृग्बल-साधन और उदाहरण ३२०
ग्रहोंके बलाबलका निर्णय ३२१
अष्टवर्ग विचार ३२२
रवि, चन्द्रादिकी रेखाएँ ३२३-३२६

तृतीयाध्याय

**जन्मकुंडलीका
फलादेश** ३२७-४७१
जन्मकुण्डलीका प्रयोजन ३२७
सूर्यादि नवग्रहोंके स्वरूप ३२८
फलादेशके लिए उपयोगी

ग्रहोके स्थान-दग्बिलादि
छः प्रकारके बल ३३०
ोंकी दृष्टि ३३१
ोके उच्च और मूलत्रिकोण-
का विचार ३३१
शभावो—स्थानोंका
परिचय, विचारणीय बातें
आदि ३३२
प्रतिपादनके कतिपय
ोनियम ३३५
ोन्मसमयमे मेषादि द्वादश
राशियोंमें नवग्रहोंका फल ३३६
द्वादश भावोमे रहनेवाले नव-
ग्रहोका फल ३४१
उच्चराशिगत ग्रहोका फल ३४९
मूल त्रिकोण राशिमे गये
हुए ग्रहोंका फल ३४९
स्वक्षेत्रगत ग्रहोका फल ३५०
मित्रक्षेत्रगत ग्रहोका फल ३५०
नीचराशिगत ग्रहोका फल ३५१
नवग्रहोंकी दृष्टिका फल ३५१
ो ग्रहोकी युतिका फल ३५८
ीन ग्रहोकी युतिका फल ३५९
चार ग्रहोकी युतिका फल ३६१
पाँच ग्रहोकी युतिका फल ३६३
छः ग्रहोंकी युतिका फल ३६४
द्वादशभाव विचार ३६४-४३५
लग्न विचार ३६४-३७९
राशि सज्ञाएँ ३६५
राशि सज्ञाओपरसे शारीरिक
स्थिति ज्ञात करनेके नियम ३६५
शरीरके अगोका विचार ३६७
जन्मसमयके वातावरणका
परिज्ञान ३६८
अरिष्ट विचार ३६९
गण्ड अरिष्ट ३७१
अरिष्टभग योग ३७२
जारजयोग ३७४
बधिर योग ३७४
मूकयोग ३७५
नेत्ररोगी योग ३७५
सुख और साहस विचार ३७८
नौकरी योग ३७८
द्वादश भावोमे लग्नेशका फल ३७८
**द्वितीय भाव—धन
विचार** ३७९-३८५
धनी योग ३७९
दारिद्र योग ३८०
बड़ा व्यापारी और दिवालिया
योग ३८१
जमीन्दारी योग ३८२
सुसरालसे धनप्राप्तिके योग ३८३

धनेशका द्वादश भावोंमें फल ३८३
तृतीय भाव विचार ३८५-३९०
भाई-बहनका सुख ३८५
भ्रातृसंख्या ३८६
अन्य विशेष योग ३८७
आजीविका विचार ३८७
तृतीयेशका द्वादश भावोंमें फल ३८९
चतुर्थ भाव विचार ३९०-३९८
मकानके सुखका विचार ३९०
कतिपय सुख योग ३९१
दुःख योग ३९१
इस भावके विशेष योग ३९१
जातकके गोद—दत्तक जानेके योग ३९२
चतुर्थेशका द्वादश भावोंमें फल ३९३
पंचम भाव विचार ३९४-४०२
विद्या-बुद्धि विचार ३९४
कवि, ज्योतिषी, गणितज्ञ एवं विशेषज्ञ होनेके योग ३९५
सन्तान विचार ३९६
सन्तान प्रतिबन्धक योग ३९८
विलम्बसे सन्तानप्राप्ति योग ३९८
सन्तान संख्या विचार ४००
पञ्चमेशका द्वादश भावोंमें फल ४०२
षष्ठ भाव विचार ४०२-४०६
शत्रुपीड़ा विचार ४०३
रोग विचार ४०५
षष्ठेशका द्वादश भावोंमें फल ४०५
सातवें भावका विचार ४०६-४१३
विवाहके प्रतिबन्धक योग ४०६
विवाह योग ४०९
विवाहसंख्या विचार ४०९
स्त्रीरोग विचार ४१०
विवाह-समय विचार ४१०
स्त्रीमृत्यु विचार ४११
सप्तमेशका द्वादश भावोंमें फल ४१२
अष्टम भाव विचार ४१३-४२५
दीर्घायु योग ४१३
अल्पायु योग ४१४
मध्यमायु योग ४१४
जैमिनीके मतसे आयुविचार ४१६
स्पष्टायु-साधनका नियम ४१८
आयुसाधनकी दूसरी प्रक्रिया और उदाहरण ४१९
नक्षत्रायुसाधन ४२०
ग्रह रश्मियों द्वारा आयु-साधन ४२१
लग्नायुसाधन ४२१
केन्द्रायुसाधन ४२१
योगोंपरसे आयु साधन ४२३

अष्टमेशका द्वादश भावोंमें फल ४२४
नवम भाव विचार ४२४-४२८
भाग्य विचार ४२५
भाग्योदयकाल ४२६
नवम भावका विशेष फल ४२६
भाग्येशका द्वादश भावोंमे फल ४२७
दशम भाव विचार ४२८-४३१
लोकमान्य, श्रीमान्, तपस्वी और प्रतापी होनेके योग ४२९
पितृसुख योग ४२९
दशमेशका द्वादश भावोमे फल ४३०
एकादश भाव विचार ४३१-४३३
आमदनी योग ४३१
बहुलाभ योग ४३२
द्वादश भावोमे लाभेशका फल ४३२
बारहवें भावका विचार ४३३-४३५
व्यवसायका निर्णय ४३३
व्ययके योग ४३४
द्वादश भावोंमें द्वादशेशका फल ४३४
द्वादश लग्नोंका फल ४३५
होराफल ४३७
सप्तमांश चक्रका फल ४३८
नवमांशकुण्डलीके फलका विचार ४३८
द्वादशांशकुण्डलीके फलका विचार ४३९
चन्द्रकुण्डलीका फल ४४०
विंशोत्तरी दशाका फल विचार ४४०-४६६
रविदशा फल ४४१
चन्द्रदशा फल ४४१
भौमदशा फल ४४२
बुधदशा फल ४४२
गुरुदशा फल ४४३
शुक्रदशा फल ४४३
शनिदशा फल ४४४
राहुदशा फल ४४४
केतुदशा फल ४४५
भावेशोके अनुसार विशोत्तरी दशाका फल ४४५
वक्रीग्रहकी दशाका फल ४४७
मार्गीग्रहकी दशाका फल ४४७
नीच और शत्रुक्षेत्रीग्रहकी दशाका फल ४४७
अन्तर्दशाफल ४४८–६५
सूर्यकी महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल ४४९
चन्द्रमाकी महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल ४५१

मंगलकी महादशामें सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल ४५३
राहुकी महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल ४५५
गुरुकी महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल ४५७
शनिकी महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल ४५९
बुधकी महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल ४६१
केतुकी महादशामे सभी ग्रहोकी अन्तर्दशाका फल ४६३
शुक्रकी महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल ४६५
स्त्रीजातक ४६६–४७१
वैधव्ययोग ४६७
स्त्रीके सप्तम स्थानमे प्रत्येक ग्रहका फल ४६८
अल्पपत्या या अनपत्या योग ४६९
पतिके गुण-दोष द्योतक योग ४७०

चतुर्थाध्याय

ताजिक (वर्षफल) ४७२–५४३
वर्षपत्र बनानेकी सोदाहरण विधि ४७३
वर्ष प्रवेश सारणी ४७५
वर्ष प्रवेशकी तिथिका साधन ४
तिथि, नक्षत्र, वार आदि वर्ष प्रवेशके जाननेकी एक सरल विधि और उदाहरण ४७८
मुन्था साधनके नियम और उदाहरण ४७
वर्षकुडलीके भावस्पष्टका गणित ४८०
ताजिक मित्रादि संज्ञा ४८४
पंचवर्ग ४८५
हद्दा-साधन ४८५
उच्चबल साधन ४८६
सारणी द्वारा उच्चबल साधन और उदाहरण ४८७
पंचवर्गीय बल साधन और उदाहरण ४८८
सूर्य-उच्चबल सारणी ४९०
चन्द्र-उच्चबल सारणी ४९४
भौम-उच्चबल सारणी ४९८
बुध-उच्चबल सारणी ५०२
गुरु-उच्चबल सारणी ५०६
शुक्र-उच्चबल सारणी ५१०
शनि-उच्चबल सारणी ५१४
हद्दाबल ५१८
द्रेष्काणबल ५१८

वर्गांशबल ५१८
लीग्रहका निर्णय ५१८
पञ्चाधिकारी ५१९
त्रिराशिपति विचार ५१९
ताजिक शास्त्रानुसार ग्रहों-
की दृष्टि ५२०
बलवती दृष्टि और विशेष
दृष्टि ५२१
दीप्ताश ५२१
वर्षेशका निर्णय ५२२
चन्द्रवर्षेशका निर्णय ५२२
हर्षबल साधन ५२३
षोड़श योगोंका फल सहित
लक्षण ५२४
सहम साधन और सहम
सस्कार ५२८
पुण्यसहमका साधन और
उदाहरण ५२९
गुरु और विद्या सहमका साधन
और उदाहरण ५२९
अर्थ, मित्र, आशा, राजा या
पिता और माता सहम
का साधन ५३०
कर्म, प्रसूति, शत्रु, बन्धन,
भ्रातृ सहमका साधन ५३१
पुत्र, विवाह, व्यापार, रोग
मृत्यु, यात्रा और धन
सहमका साधन ५३२
विशोतरी मुद्दादशाका
साधन और उदाहरण ५३३
योगिनी मुद्दादशाका साधन
और उदाहरण ५३४
मासप्रवेश साधन और
उदाहरण ५३५
वर्षेशका फल ५३७
मुन्थाफल ५३९
वर्ष-अरिष्ट-योग ५३९
अरिष्टभंगयोग ५४०
वर्षमे धन प्राप्तिका विचार ५४१
वर्षमे स्वास्थ्य विचार ५४१

पञ्चमाध्याय

मेलापक, मुहूर्त्त और
प्रश्न ५४४-५९२
मेलापककी उपयोगिता
और विधि ५४४-५५६
पति और भार्यानाशक योग ५४५
सौभाग्य विचार ५४५
वर-कन्याकी कुण्डली मिलाने
के अन्य नियम ५४६
वर्ण जाननेकी विधि और
वर्णके गुणानयन ५४८

वश्य जाननेकी विधि और उसके गुणानयन ५४९
तारा विचार और उसके गुणानयन ५५०
योनिज्ञान विधि और गुणानयन ५५१
ग्रहमैत्री और उसके गुणानयन ५५३
गुण और उसके गुणानयन ५५४
भकूट और उसके गुणानयन ५५५
नाडी और उसके गुणानयन ५५६
गैणक्यका उदाहरण ५५६
मुहूर्त्त विचार ५५७–५७७
सूतिका स्नान मुहूर्त ५५७
स्तनपान मुहूर्त्त ५५८
जातकर्म और नामकर्मका मुहूर्त्त ५५८
दोलारोहण मुहूर्त्त ५५८
भूम्युपवेशन मुहूर्त्त ५५९
बालकको वाहर निकालने का मुहूर्त्त ५५९
अन्नप्राशन मुहूर्त्त ५५९
कर्णवेध मुहूर्त्त ५६०
चूडाकर्म (मुण्डन) का मुहूर्त्त ५६१
अक्षरारम्भ मुहूर्त्त ५६२
विद्यारम्भ मुहूर्त्त ५६२
वरदान मुहूर्त्त ५६३
विवाह मुहूर्त्त ५६३
गुरुवल, सूर्यवल और चन्द्रवल विचार ५६४
विवाहमे अन्धादि लग्न और उनका फल ५६४
विवाहके शुभ लग्न ५६५
लग्नशुद्धि ५६५
ग्रहोका वल ५६५
वधूप्रवेश मुहूर्त्त ५६५
द्विरागमन मुहूर्त्त ५६६
यात्रा मुहूर्त्त ५६६
वारशूल और नक्षत्रशूल ५६७
चन्द्रवास विचार और फल ५६७
गृहारम्भ मुहूर्त्त ५६९
नूतन गृहप्रवेश मुहूर्त्त ५६९
जीर्णगृह प्रवेश मुहूर्त्त ५७०
शान्ति और पौष्टिक कार्य का मुहूर्त्त ५७१
कुँआ खुदवानेका मुहूर्त्त ५७१
दुकान करनेका मुहूर्त्त ५७२
बड़े-बड़े व्यापार करने का मुहूर्त्त ५७२
राजासे मिलनेका मुहूर्त्त ५७२
वगीचा लगाने, रोगमुक्त होने पर स्नान करने,

नौकरी करने एवं मुकदमा दायर करनेका मुहूर्त्त ५७३
औषध, मन्त्रसिद्धि, सर्वारम्भ एव मन्दिर निर्माणका मुहूर्त्त ५७४
प्रतिमा निर्माणका मुहूर्त्त ५७५
प्रतिष्ठा मुहूर्त्त ५७५
मण्डप बनानेका मुहूर्त्त ५७६
होमाहुतिका मुहूर्त्त ५७६
अग्निवास और उसका फल ५७७
प्रश्नविचार ५७७–५९२
रोगीके स्वस्थ, अस्वस्थ होने-के प्रश्नका विचार ५७८
नक्षत्रानुसार रोगीके रोगकी अवधिका ज्ञान ५७९
शीघ्रमृत्युका परिज्ञान ५७९
चोरज्ञान ५७९
नक्षत्रानुसार चोरी गयी वस्तुकी प्राप्तिका विचार ५८१
प्रवासी प्रश्न विचार ५८२
गर्भस्थ सन्तान पुत्र है या पुत्रीका विचार ५८२
मूक प्रश्न विचार ५८४
मुष्टिका प्रश्न विचार ५८५
केरलमतानुसार प्रश्न विचार ५८६
जय-पराजय प्रश्न ५८७
सुख-दुख, जीवन-मरणके प्रश्नोका विचार ५८८
वर्षा प्रश्न ५८८
गर्भका प्रश्न ५८८
प्रकारान्तरसे पुत्र-कन्या प्रश्न विचार ५८९
कार्यसिद्धिकी समय मर्यादा ५८९
विवाह प्रश्न ५९०
चमत्कार प्रश्न ५९०
उपसहार ५९२

संकेत विवरण

ऋक् सं०	ऋग्वेद संहिता
त्रि० सा० गा०	त्रिलोकसार गाथा
बृ० उ०	बृहदारण्यकोपनिषद्
तै० सं०	तैत्तिरीय संहिता
प्र० व्या०	प्रश्नव्याकरणाङ्ग
ऐ० ब्रा०	ऐत्तिरीय ब्राह्मण
तै० ब्रा०	तैत्तिरीय ब्राह्मण
शत० ब्रा०	शतपथ ब्राह्मण
ठा० अ० सू०	ठाणाङ्ग अध्याय सूत्र
स० स० सू०	समवायाङ्ग समवाय सूत्र
अ० स०	अथर्ववेद संहिता
स०	समवाङ्ग
ऋ० ज्यो०	ऋक्ज्योतिष
ऊ० ज्यो०	अथर्व ज्योतिष
सू० प्र०	सूर्य प्रज्ञप्ति
चं० प्र०	चन्द्र प्रज्ञप्ति
ज्यो० क०	ज्योतिष्करण्डक
आ० प० अ०	महाभारतका आदि पर्व, अध्याय
व० या० वि० प० अ०	महाभारतका वन पर्व, अध्याय
श० प० अ०	शतपथ ब्राह्मण, अध्याय
सू० स०	सूर्यसिद्धान्त
आ० सू०	आचाराङ्ग सूत्र

पौ० सि०	पौलिश सिद्धान्त
तै० प्र०	तैत्तिरीय-प्रातिशाख्य
तै० अ०	तैत्तिरीय-अरण्यक
छ० उ०	छान्दोग्योपनिषद्
छ० ब्रा०	छान्दोग्य-ब्राह्मण
ऋ० भू०	ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका
ऋ० इं०	ऋग्वैदिक इडिया
ए० रि०	एशियाटिक रिसर्चेज
ओ० टे०	ओरियटल सस्कृत टेक्स्ट
ग्रे० इं०	ग्रेटर इंडिया
नारा० उ० अ०	नारायण उपनिषद् अनुच्छेद

भारतीय-ज्योतिष

प्रथमाध्याय

आकाशकी ओर दृष्टि डालते ही मानव-मस्तिष्कमें उत्कण्ठा उत्पन्न होती है कि ये ग्रह, नक्षत्र क्या वस्तु है ? तारे क्यों टूटकर गिरते है ? पुच्छल तारे क्या है और ये कुछ दिनोंमें क्यों विलीन हो जाते है ? सूर्य प्रतिदिन पूर्व दिशामें ही क्यों उदित होता है ? ऋतुएं किस अनुसार क्यों आती है ? आदि ।

मानव स्वभाव ही कुछ ऐसा है कि वह जानना चाहता है—क्या ? कैसे ? क्यों ? क्या हो रहा है ? और क्या होगा ? यह केवल प्रत्यक्ष बातोंको ही जानकर सन्तुष्ट नहीं होता, बल्कि जिन बातोंसे प्रत्यक्ष लाभ होनेकी कोई भावना नहीं है, उनके जाननेके लिये भी उत्सुक रहता है । जिस बातके जाननेकी मानवको उत्कट इच्छा रहती है, उसके अवगत हो जानेपर उसे जो आनन्द मिलता है, जो तृप्ति होती है उससे वह निहाल हो जाता है ।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणसे विश्लेषण करनेपर ज्ञात होगा कि मानवकी इस जिज्ञासाने ही उसे ज्योतिषशास्त्रके गम्भीर रहस्योद्घाटनके लिये प्रवृत्त किया है । आदिम मानवने आकाशकी प्रयोगशालामें सामने आने ग्रह, नक्षत्र और तारों प्रभृतिका अपनी कुशल चक्षुओं द्वारा निरीक्षण करना प्रारम्भ किया और अनेक रहस्योंका पता लगाया । किन्तु आश्चर्यकी बात यह है कि तबसे अबतक विश्वकी रहस्यमयी वृत्तियोंके उद्घाटन करनेका प्रयत्न करनेपर भी यह और उलझता जा रहा है ।

व्युत्पत्त्यर्थ

ज्योतिषशास्त्रकी व्युत्पत्ति "**ज्योतिषां सूर्यादि ग्रहाणां बोधकं शास्त्रं**" की गयी है; अर्थात् सूर्यादि ग्रह और कालका बोध करानेवाले शास्त्रको ज्योतिष शास्त्र कहा जाता है। इसमें प्रधानत ग्रह, नक्षत्र, धूमकेतु आदि ज्योतिः पदार्थोंका स्वरूप, सचार, परिभ्रमणकाल, ग्रहण और स्थिति प्रभृति समस्त घटनाओंका निरूपण एव ग्रह, नक्षत्रोंकी गति, स्थिति और सचारानुसार शुभाशुभ फलोंका कथन किया जाता है। कुछ मनीषियोंका अभिमत है कि नभोमण्डलमें स्थित ज्योति सम्बन्धी विविध विषयक विद्याको ज्योतिर्विद्या कहते है; जिस शास्त्रमें इस विद्याका साङ्गोपाङ्ग वर्णन रहता है, वह ज्योतिषशास्त्र है। इस लक्षण और पहलेवाले ज्योतिषशास्त्रके व्युत्पत्त्यर्थमें केवल इतना ही अन्तर है कि पहलेमें गणित और फलित दोनों प्रकारके विज्ञानोंका समन्वय किया गया है, पर दूसरेमे खगोल ज्ञानपर ही दृष्टिकोण रखा गया है। विद्वानोंका कथन है कि इस शास्त्रका प्रादुर्भाव कब हुआ, यह अभी अनिश्चित है। हाँ, इसका विकास, इसके शास्त्रीय नियमोंमे सशोधन और परिवर्द्धन प्राचीन कालसे आजतक निरन्तर होते चले आये है।

भारतीय ज्योतिषशास्त्र की परिभाषा और उसका क्रमिक विकास

भारतीय ज्योतिषकी परिभाषाके स्कन्धत्रय——सिद्धान्त, होरा और संहिता अथवा स्कन्धपञ्च——सिद्धान्त, होरा, सहिता, प्रश्न और शकुन ये अग माने गये है। यदि विराट् पञ्चस्कन्धात्मक परिभाषाका विश्लेषण किया जाय तो आजका मनोविज्ञान, जीवविज्ञान, पदार्थविज्ञान, रसायनविज्ञान, चिकित्साशास्त्र इत्यादि भी इसीके अन्तर्भूत हो जाते है।

इस शास्त्रकी परिभाषा भारतवर्षमें समय-समयपर विभिन्न रूपोंमे मानी जाती रही है। सुदूर प्राचीन कालमे केवल ज्योतिःपदार्थों——ग्रह, नक्षत्र, तारों आदिके स्वरूप विज्ञानको ही ज्योतिष कहा जाता था। उस समय

सैद्धान्तिक गणितका बोध इस शास्त्रसे नहीं होता था, क्योंकि उस कालमें केवल दृष्टि-पर्यवेक्षण द्वारा नक्षत्रोंका ज्ञान प्राप्त करना ही अभिप्रेत था।

भारतियोंकी जब सर्वप्रथम दृष्टि सूर्य और चन्द्रमापर पड़ी थी, उन्होंने इनसे भयभीत होकर इन्हें दैवत्व रूपमें मान लिया था। वेदोंमें कई जगह नक्षत्र, सूर्य एवं चन्द्रमाके स्तुतिपरक मन्त्र आये है। निश्चय ही प्रागैतिहासिक भारतीय मानवने इनके रहस्यसे प्रभावित होकर ही इन्हें दैवत्व रूपमें माना है।

ब्राह्मण और आरण्यकोंके समयमें यह परिभाषा और विकसित हुई तथा उस कालमें नक्षत्रोंकी आकृति, स्वरूप, गुण एवं प्रभावका परिज्ञान प्राप्त करना ज्योतिष माना जाने लगा। आदिकालमें नक्षत्रोंके शुभाशुभ फलानुसार कार्योंका विवेचन तथा ऋतु, अयन, दिनमान, लग्न आदिके शुभाशुभानुसार विधायक कार्योंको करने का ज्ञान प्राप्त करना भी इस शास्त्र-की परिभाषामें परिगणित हो गया। सूर्यप्रज्ञप्ति, ज्योतिष्करण्डक, वेदाङ्ग-ज्योतिष प्रभृति ग्रन्थोंके प्रणयन तक ज्योतिषके गणित और फलित ये दो भेद स्पष्ट नहीं हुए थे। यह परिभाषा यहीं सीमित नहीं रही, किन्तु ज्ञानोन्नतिके साथ-साथ विकसित होती हुई राशि और ग्रहोंके स्वरूप, रंग, दिशा, तत्त्व, धातु इत्यादिके विवेचन भी इसके अन्तर्गत आ गये।

आदिकालके अन्तमें ज्योतिषके गणितसिद्धान्त और फलित ये दोनों भेद स्वतन्त्र रूपमें प्रस्फुटित हो गये थे। ग्रहोंकी गति, स्थिति, अपनाश, पात आदि गणित ज्योतिषके अन्तर्गत तथा शुभाशुभ समयका निर्णय, विधायक यज्ञ, यागादि कार्योंके करनेके लिये समय और स्थानका निर्धारण फलित ज्योतिषका विषय माना जाता था। पूर्व मध्यकालकी अन्तिम शताब्दियोंमें सिद्धान्त ज्योतिषके स्वरूप में भी विकास हुआ, लेकिन

१ ई० पू० ५००—ई० ५०० तकका समय
२ ई० ५०१—१००० तकका समय

खगोलीय निरीक्षण और ग्रहवेधकी परिपाटीके कम हो जानेसे गणितके कल्पनाजाल द्वारा ही ग्रहोंके स्थानोंका निश्चय करना सिद्धान्त ज्योतिषके अन्तर्गत आ गया। तथा पूर्व मध्यकालके प्रारम्भमें ज्योतिषका अर्थ स्कन्ध-त्रय—सिद्धान्त, संहिता और होराके रूपमें ग्रहण किया गया। परन्तु इस युगके मध्यमें इस परिभाषाने और भी संशोधन देखे और आगे जाकर यह पञ्चरूपात्मक—होरा, गणित, संहिता, प्रश्न और निमित्त रूप हो गयी।

होरा

इसका दूसरा नाम जातक शास्त्र है। इसकी उत्पत्ति अहोरात्र शब्दसे है, आदि शब्द 'अ' और अन्तिम शब्द 'त्र'का लोप कर देनेसे होरा शब्द बनता है। जन्मकालीन ग्रहोंकी स्थितिके अनुसार व्यक्तिके लिये फला-फलका निरूपण इसमें किया जाता है। इस शास्त्रमें जन्मकुण्डलीके द्वादश भावोंके फल उनमें स्थित ग्रहोंकी अपेक्षा तथा दृष्टि रखनेवाले ग्रहोंके अनुसार विस्तारपूर्वक प्रतिपादित किये जाते हैं। मानवजीवनके सुख, दुःख, इष्ट, अनिष्ट, उन्नति, अवनति, भाग्योदय आदि समस्त शुभा-शुभोंका वर्णन इस शास्त्रमें रहता है। होरा ग्रन्थोंमें फल निरूपणके दो प्रकार हैं। एकमें जातकके जन्म नक्षत्रपरसे और दूसरेमें जन्म लग्नादि द्वादश भावोंपरसे विस्तारपूर्वक विभिन्न दृष्टिकोणोंसे फलकथनकी प्रणाली बतायी गयी है। होरा शास्त्रपर अनेक स्वतन्त्र रचनाएं हैं। समय समयपर इस शास्त्रमें अनेक संशोधन और परिवर्तन हुए हैं। इस शास्त्रके वराह-मिहिर, नारचन्द्र, सिद्धसेन, ढुंढिराज, केशवादि प्रधान रचयिता हैं। आचार्य वराहने इस शास्त्रमें एक नवीन समन्वयकी प्रणाली चलायी है। नारचन्द्रने ग्रह और राशियोंके स्वरूपानुसार भाव और दृष्टिके समन्वय तथा कारक, मारक आदि ग्रहोंके सम्बन्धोंकी अपेक्षासे फल प्रतिपादनकी प्रक्रियाका प्रचलन किया है। श्रीपति एवं श्रीधर आदि नवीं, दसवीं और ग्यारहवीं शताब्दीके होरा शास्त्रकारोंने ग्रहबल, ग्रहवर्ग, विंशोत्तरी आदि दशाओंके फलोंको इस शास्त्रकी परिभाषाके अन्तर्गत मान लिया है।

इस प्रकार होराशास्त्रकी परिभाषा निरन्तर विकसित होती आ रही है। इसमें त्रुटिसे लेकर कल्पकाल तककी काल गणना, सौर, चान्द्र मानोंका प्रतिपादन, ग्रह गतियोंका निरूपण व्यक्त-अव्यक्त गणितका प्रयोजन, विविध प्रश्नोत्तर विधि, ग्रह, नक्षत्रकी स्थिति, नाना प्रकारके तुरीय, नलिका इत्यादि यन्त्रोंकी निर्माण विधि, दिक्, देश, काल ज्ञानके अनन्यतम उपयोगी अंग अक्षक्षेत्र सम्बन्धी अक्षज्या, लम्बज्या, चुज्या, कुज्या, तद्वृत्ति, समशङ्कु इत्यादिका आनयन रहता है। प्राचीनकालमें इसकी परिभाषा केवल सिद्धान्त गणितके रूपमें मानी जाती थी। आदि-कालमें ग्रहगणित द्वारा ही ग्रहगण-मान साधकर ग्रहोंका आनयन करना इस शास्त्रका प्रधान प्रतिपाद्य विषय था। पूर्व मध्यकालमें इसकी यह परि-भाषा ज्योंकी त्यों अवस्थित रही। उत्तर मध्यकालमें इसने अनेक पह-लुओंके पल्लोंको पकड़ा और इस युगके प्रारम्भमें वासनात्मक होती हुई भी व्यक्तगणितको अपनाती रही, इसीलिए इस कालमें गणितके सिद्धान्त, तन्त्र और करण ये तीन भेद प्रकट हुए।

गणित या सिद्धान्त

जिसमें सृष्ट्यादिसे इष्ट दिन पर्यन्त ग्रहगण बनाकर ग्रह सिद्ध किये जायं वह सिद्धान्त, जिसमें युगादिसे इष्ट दिन पर्यन्त ग्रहगण बनाकर ग्रह गणित किया जाय वह तन्त्र और जिसमें कल्पित इष्ट वर्षका युग मानकर उस युगके भीतर ही किसी अभीष्ट दिनका ग्रहगण लाकर ग्रहानयन किया जाय उसे करण कहते हैं। उत्तर मध्यकालके अन्तमें गणित ज्योतिषकी परिभाषा विस्तृत होनेकी अपेक्षा संकुचित दिखलायी पड़ती है, क्योंकि इस युगमें क्रियात्मक ग्रहगणितको छोड़ वासनात्मक (उपपत्ति विषयक) ग्रहगणितका ही आश्रय ज्योतिषियोंने ले लिया, जिससे वास्तविक ग्रहगणितका विकास कुछ रुक-सा गया। यद्यपि करण ग्रन्थोंकी सारणियाँ तैयार की गयी थीं, किन्तु आगे आकाश निरीक्षण और व्यक्तक्रियात्मक ग्रहगणितके अभावमें संशोधन न हो सके। इस प्रकार गणित ज्योतिषकी

परिभाषा कभी शैशव और कभी यौवनके साथ अठखेलियाँ करती रही।

संहिता

इसमे भूशोधन, दिक्शोधन, शल्योद्धार, मेलापक, आद्यायानन, गृहोपकरण, इष्टिका द्वार, गेहारम्भ, गृहप्रवेश, जलाशय निर्माण, मागलिक कार्योके मुहूर्त्त, उल्कापात, वृष्टि, ग्रहोके उदयास्तका फल, ग्रहाचारका फल एवं ग्रहण-फल आदि बातोका निरूपण विस्तारपूर्वक किया जाता है। मध्य युगमे सहिताकी परिभाषा होरा, गणित और शकुनके मिश्रित रूपमे मानी गयी है। ९वी, और १०वी शताब्दीमे क्रियाकाण्ड भी इसकी परिभाषाके अन्तर्गत आ गया है। सहिताशास्त्रका जन्म आदिकालमे हुआ और इसकी परिभाषाका क्षेत्र उत्तरोत्तर बढता चला गया। कुछ जैनाचार्योने जीवनोपयोगी आयुर्वेदकी चर्चाएँ भी सहिताके अन्तर्गत रखी है। १२वी और १३वी शताब्दीमे इस शास्त्रकी परिभाषा इतनी विकसित हुई है कि जीवनसे सम्बद्ध सभी उपयोगी लौकिक विषय इसके अन्तर्गत आ गये है।

प्रश्नशास्त्र

यह तत्काल फल बतलानेवाला शास्त्र है। इसमे प्रश्नकर्त्ताके उच्चारित अक्षरोपरसे फलका प्रतिपादन किया जाता है। ईस्वी सन्की पाँचवी और छठवी शताब्दीमे केवल पृच्छकके उच्चारित अक्षरो परसे फल बतलाना ही प्रश्नशास्त्रके अन्तर्गत था; लेकिन आगे जाकर इस शास्त्रमे तीन सिद्धान्तोंका प्रवेश हुआ--(१) प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त, (२) प्रश्नलग्न-सिद्धान्त और (३) स्वरविज्ञान-सिद्धान्त। दिगम्बर जैनग्रन्थोकी अधिकतर रचनाएँ दक्षिण-भारतमे होनेके कारण प्राय. सभी प्रश्न ग्रन्थ प्रश्नाक्षर-सिद्धान्तको लेकर निर्मित हुए है। अन्वेषण करनेपर स्पष्ट मालूम होता है कि केवलज्ञान प्रश्नचूडामणि, चन्द्रोन्मीलन प्रश्न, आयज्ञान तिलक, अर्हच्चूडामणि आदि ग्रन्थोके आधारपर ही आधुनिक कालमें केरल प्रश्नशास्त्रकी रचना हुई है।

वराहमिहिरके पुत्र पृथुयशाके समयसे प्रश्नलग्नवाले सिद्धान्तका प्रचार भारतमे जोरोसे हुआ है। ९वी, १०वी और ११वी शतीमे इस सिद्धान्तको विकसित होनेके लिये पूर्ण अवसर मिला है, जिससे अनेक स्वतन्त्र रचनाएँ भी, इस विषयपर लिखी गयी है। इस शास्त्रकी परिभाषामे उत्तर मध्यकाल तक अनेक सशोधन और परिवर्द्धन होते रहे है। चर्या, चेष्टा, हाव, भाव आदिके द्वारा मनोगत भावोका वैज्ञानिक दृष्टिसे विश्लेषण करना भी इस शास्त्रके अन्तर्गत आ गया है।

शकुन

इसका अन्य नाम निमित्तशास्त्र भी मिलता है। पूर्व मध्यकाल तक इसने पृथक् स्थान प्राप्त नही किया था, किन्तु सहिताके अन्तर्गत ही इसका विषय आता था। ईस्वी सन्की १०वी, ११वी और १२वी शतियोमे इस विषयपर स्वतन्त्र विचार होने लग गया था, जिससे इसने अलग शास्त्रका रूप प्राप्त कर लिया। वि० सं० १०८९मे आचार्य दुर्गदेवने अरिष्ट विषयको भी शकुनशास्त्रमें मिला दिया था। आगे चलकर इस शास्त्रकी परिभाषा और भी अधिक विकसित हुई और इसकी विषय-सीमामे प्रत्येक कार्यके पूर्वमें होनेवाले शुभाशुभोंका ज्ञान प्राप्त करना भी आ गया। वसन्तराज शकुन, अद्भुतसागर जैसे शकुन ग्रन्थोंका निर्माण इसी परिभाषाको दृष्टिमें रखकर किया गया प्रतीत होता है।

यदि पक्षपात छोड़कर विचार किया जाय तो स्पष्ट मालूम हो जायगा कि अन्य शास्त्रोके समान भारतीय ही इस शास्त्रके आदि आविष्कर्त्ता है। योगविज्ञान जो कि भारतीय आचार्योकी विभूति माना जाता है, इसका पृष्ठाधार है। यहाँके ऋषियोने योगाभ्यास द्वारा अपनी सूक्ष्म प्रज्ञासे शरीरके भीतर ही सौर-मण्डलके दर्शन किये और अपना निरीक्षण कर आकाशीय सौर-मण्डलकी व्यवस्था

ज्योतिषका उद्भव स्थान और काल

की।[1] अंकविद्या जो इस शास्त्रका प्राण है, उसका श्रीगणेश भी भारतमें ही हुआ है। मध्यकालीन भारतीय संस्कृति नामक पुस्तकमें श्री ओझाजीने लिखा है—"भारतने अन्य देशवासियोंको जो अनेक बातें सिखाई, उनमें सबसे अधिक महत्त्व अंकविद्याका है। संसार-भरमें गणित, ज्योतिष, विज्ञान आदिकी आज जो उन्नति पायी जाती है, उसका मूल कारण वर्तमान अंक क्रम है, जिसमें एकसे नौ तकके अंक और शून्य इन दस चिन्होंसे अंकविद्याका सारा काम चल रहा है। यह क्रम भारतवासियोंने ही निकाला और उसे सारे संसारने अपनाया।"[2]

उपर्युक्त उद्धरणसे स्पष्ट है कि प्राचीनतम कालमें भारतीय ऋषि खगोल और ज्योतिषशास्त्रसे परिचित थे। कुछ लोग भारतीय ज्योतिषमें ग्रीक शब्दोंका सम्मिश्रण होनेके कारण तथा प्राचीन भारतीय ज्योतिषमें मेष, वृष आदि बारह राशियों एवं मंगल, बुध, गुरु इत्यादि ग्रहोंके नामोंका स्पष्ट उल्लेख न मिलनेके कारण उसे ग्रीससे आया हुआ बतलाते हैं, परन्तु विचार करनेपर वास्तविक बात ऐसी प्रतीत नहीं होगी। क्योंकि उन लोगोंने आगत शब्दोंके प्रमाणमें होरा, (लग्न और राशि-भाग) हिबुक (जन्मकुण्डलीका चतुर्थ भाव), आपोक्लीम, द्रेष्काण (राशिका तृतीयांश), कण्टक (चतुर्थभाव), पणफर, अनफा, सुनफा, दुरधरा (योगविशेष), तुंग (उच्च-स्थान), मुसल्लह (नवमांश), मुन्था (जन्मलग्नस्थित किसी भी अभीष्ट वर्षकी राशि), इन्दुवार, इत्थशाल, ईसराफ, यमया, मणऊ (योग विशेष)को उपस्थित किया है।

प्राचीन भारतमें ग्रीस देशसे अनेक विद्यार्थी विभिन्न शास्त्रोंका अध्ययन करनेके लिये आते थे और वर्षों रहकर भारतीय आचार्योंसे भिन्न भिन्न

---

१ विशेष जानने के लिए इसी पुस्तक का 'जीवन और ज्योतिष' प्रकरण देखें।

२ मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृ० १०८

शास्त्रोका अध्ययन करते थे, जिससे उनके अत्यधिक सम्पर्कके कारण कुछ शब्द ई० पू० ३री शतीमें, कुछ ई० ६वी शतीमें और कुछ पन्द्रहवी-सोलहवी शतीमे ज्योतिषमें मिल गये । भारतके कई ज्योतिर्विद ईस्वी सन्‌की चौथी और पाँचवी शताब्दीमे ग्रीस गये थे, इससे पाँचवी शतीके अन्त और छठवीके प्रारम्भमें अनेक ग्रीक शब्द भारतीय ज्योतिषमे आ गये।

डब्ल्यू० डब्ल्यू० हन्टरने लिखा है कि "आठवी शतीमे अरबी विद्वानोने भारतसे ज्योतिष विद्या सीखी और भारतीय ज्योतिष सिद्धान्तोंका 'सिद हिंद' नामसे अरबीमे अनुवाद किया।"[1] अरबी भाषामे लिखी गयी 'आइन-उल-अम्बाफितल कालुली अत्‌वा' नामक पुस्तकमे लिखा है कि "भारतीय विद्वानोने अरबके अन्तर्गत बगदादकी राजसभामें जाकर ज्योतिष, चिकित्सा आदि शास्त्रोकी शिक्षा दी थी । कर्क नामके एक विद्वान् शक सवत् ६९४मे बादशाह अलमसूरके दरबारमे ज्योतिष और चिकित्साके ज्ञानदानके निमित्त गये थे।"[2]

दूसरी युक्ति जो राशि और ग्रहोके स्पष्ट नामोल्लेख न मिलनेके रूपमे दी गयी है, निस्सार है । क्योकि जब प्राचीन साहित्यमे सौर जगत्‌के सूक्ष्म अवयव नक्षत्रोंका जिक्र मिलता है तब स्थूल अवयव राशिका ज्ञान कैसे न रहा होगा ? आकाशकी ओर दृष्टि डालते ही सर्वप्रथम राशियोका ही दर्शन होता है, नक्षत्रोका नही । नक्षत्रोका दर्शन राशि दर्शनके पश्चात् सूक्ष्म निरीक्षण करनेपर होता है । अतएव राशिज्ञानके अभावमे नक्षत्रोका प्रतिपादन सभव नही कहा जा सकता ।

ऋक्‌वेदसहितामे चक्र शब्द आया है, जो राशिचक्रका बोधक है । **"द्वादशारं नहि तज्जराय"**[3] इस मन्त्रमे द्वादशार शब्द बारह राशियोका

---

१ हंटर इंडियन-गैजेटियर—इंडिया, पृ० २१८

२ ज्योतिष रत्नाकर प्रथम भाग—भूमिका

३ ऋक् सं० १, १६४, ११

बोधक है। प्रकरण गत विशेषताओंके ऊपर ध्यान देनेसे इस मन्त्रमें स्पष्टतया द्वादश राशियोंका निर्देश मिलेगा। श्री० वा० सम्पूर्णानन्द[1] जी, सम्मान्य शिक्षामंत्री, उत्तर प्रदेश 'द्वादशारं' शब्दको द्वादश राशियोके बोधक होनेमे शंका करते है तथा द्वादश महीनोका द्योतक होनेकी सभावना करते है, परन्तु उनकी यह सभावना तर्कसंगत नही। कारण स्पष्ट है कि इस मत्रके आगेवाले भागमें ३६० दिन वर्ष--१२ राशियोके माने गये है। १२ महीनोके ३६० दिन नही हो सकते, क्योकि चान्द्रमास २९॥ दिनसे अधिक नही होता, इस हिसाबसे वर्षमे ३५४ दिन होते हैं, किन्तु मंत्रमें ३६० दिन वताये गये है, जो कि द्वादश राशि मान लेनेपर ठीक आ जाते है। प्रत्येक राशिमें ३० अंश तथा प्रत्येक अशका मध्यम मान एक दिन, इस प्रकार ३६० दिन द्वादश राश्यात्मक चक्रमें हो जाते है। जैन ज्योतिषके विद्वान् गर्ग, ऋषिपुत्र और कालकाचार्यने परम्परागत राशिचक्रका निरूपण किया है।

कुछ पाश्चात्य विद्वान् भारतीय ज्योतिषको बैबीलोनियासे आया हुआ बतलाते है। उन्होने लिखा है कि भारतीय बैबीलोन गये और वहाँसे ज्योतिष सीखकर आये, मैक्समूलरने इस मतकी समीक्षा करते हुए लिखा है--

"The twenty-seven constellations, which were chosen in India as a kind of lunar zodiac, were supposed to have come from Babylon. Now the Babylonian zodiac was solar, and in spite of repeated researches, no trace of lunar zodiac has been found, But supposing even that a lunar zodiac had been discover-

---

१ क्या भारतीय ज्योतिष ग्रीससे आया है ? साप्ताहिक संसार, ५ जुलाई, १९४५

ed in Babylon, no one acquainted with Vedic literature and with the ancient Vedic Ceremonial would easily allow himself to be persuaded that the Hindus had borrowed that simple division of the sky from the Babylonians. It is well known that most of the Vedic sacrifices depend on the moon, far more than on the sun."

—Vol. XIII, Lecture iv, "objections", pp. 126-127

अर्थात्—प्राचीन भारतीय विद्वान् खगोलका ज्ञान प्राप्त करनेके लिये बैबीलोन गये और वहाँकी भाषा सीखकर खगोल विद्या सीखी। भारत वापस आकर सूर्यको आधार मानकर आकाशके विभाग करनेमें कठिनाईका अनुभव किया, क्योंकि सूर्योदय होनेपर अधिकांश नक्षत्र दूर-दर्शक यन्त्रसे भी नहीं देखे जा सकते और इस कारण चन्द्रमाके आधार-पर आकाशको सत्ताईस नक्षत्रोंमें बाँटा; चन्द्रमाकी विभिन्न कलाओंका अध्ययन करके उसके अनुसार पक्ष, मास और वर्ष बनाये, जिन्हें आगे चल-कर सौर समयसे सम्बद्ध कर दिया गया; यह सब हास्यास्पद मालूम होता है। अनुकरण जहाँ भी किया जाता है, वहाँ पूर्ण रूपसे, और उस अनुकरण-की पूरी छाप इतिहासपर लग जाती है। भारतीय खगोलके इतिहासमें बैबीलोनके खगोलकी छाप हमें मिलती ही नहीं है। बैबीलोनमें सूर्यकी गतियोंको दृष्टिमें रखकर नक्षत्रोंका विभाजन किया गया है, पर भारतमें चन्द्रमाको प्रधान मानकर आकाशका बँटवारा २८ नक्षत्रोंमें किया है। मैक्समूलरने आगे बताया है—

"We must never forget that what is natural in one place is natural in other places also, and no case has been made out in favour of a foreign origin of the elementary astronomical notions of the Hindus as

found or presupposed in the Vedic hymns."

—Objections, p. 130.

अर्थात्—भारतियोंकी आकाशका रहस्य जाननेकी भावना विदेशीय प्रभाववश उद्भूत नहीं हुई, बल्कि स्वतन्त्र रूपसे उत्पन्न हुई है। अतएव स्पष्ट है कि भारतीय ज्योतिषका जन्मस्थान भारत है, इसके ऊपर पूर्व-मध्यकालमें विदेशीय सम्पर्कके कारण कुछ प्रभाव अवश्य पड़ा है; परन्तु मूलभूत भावना भारतकी ही है। मूल ज्योतिषके तत्त्व इसी पुण्यभूमिमें आजसे हजारों वर्ष पहले आविष्कृत हुए हैं।

ऋक्वेद और शतपथ ब्राह्मण आदि ग्रन्थोंके अध्ययनसे पता चलता है कि आजसे कमसे कम २८००० वर्ष पहले भारतियोंने खगोल और ज्योतिष-शास्त्रका मन्थन किया था। वे आकाशमें चमकते हुए नक्षत्रपुञ्ज, शशि-पुञ्ज, देवतापुञ्ज, आकाशगंगा, नीहारिका आदिके नाम, रूप, रंग, आकृतिसे पूर्णतया परिचित थे।

कौनसा नक्षत्र ज्योतिपूर्ण है, नभोमण्डलमें ग्रहोंके संचारसे आकर्षण कैसे होता है तथा ग्रहोंके प्रकाशका प्रभाव पृथ्वी स्थित प्राणियोंपर कैसे पड़ता है, इत्यादि बातोंका वेदोंमें वर्णन है।[1]

जैनग्रन्थ सूर्यप्रज्ञप्ति, गर्गसंहिता, ज्योतिष्करण्डक इत्यादिमें ज्योतिष-शास्त्रकी अनेक महत्वपूर्ण बातोंका वर्णन किया गया है। इन ग्रन्थोंके अवलोकनसे स्पष्ट मालूम हो जाता है कि उदयकालमें भारतीय ज्योतिष कितना उन्नतिशील था। अयन, मलमास, क्षयमास, नक्षत्रों की श्रेणियाँ, सौरमास, चान्द्रमास आदिका सूक्ष्म विवेचन ज्योतिष्करण्डकमें सुन्दर ढंगसे भारतीय ज्योतिषकी प्राचीनता और मौलिकता सिद्ध कर रहा है।[2]

---

१ Orion or Researches into the Antiquity of Vedas, pp. 1-5 17-38

२ देखें—वेदांग ज्योतिषकी भूमिका भाग पृ० १-२६ तक डा० श्याम शास्त्री

भारतीय ज्योतिषकी प्राचीनतापर विदेशीय विद्वानोंके अभिमत

भारतीय ज्योतिषको प्राचीन और मौलिक केवल भारतीय विद्वान् ही सिद्ध नही करते है, बल्कि अनेक विदेशीय विद्वानोने भी इसकी प्राचीनता स्वीकार की है। यहाँ कुछ विद्वानोके मत दिये जाते है--

(१)--अलबरूनीने लिखा है कि ज्योतिषशास्त्रमे हिन्दू लोग संसारकी सभी जातियोसे बढकर है। मैंने अनेक भाषाओके अकोके नाम सीखे है, पर किसी जातिमे भी हजारसे आगेकी सख्याके लिये मुझे कोई नाम नही मिला। हिन्दुओमे अट्ठारह अको तककी सख्याके लिये नाम है, जिनमे अतिम सख्याका नाम परार्द्ध बताया गया है।[1]

(२)--प्रो० मैक्समूलरने स्पष्ट शब्दोमे कहा है कि भारतवासी आकाश मण्डल और नक्षत्र मण्डल आदिके बारेमे अन्य देशोके ऋणी नही है। मूल आविष्कर्त्ता वे ही इन वस्तुओके है।[2]

(३)--फ्रान्सीसी पर्यटक फ्राक्वीस बर्नियर भी भारतीय ज्योतिष-ज्ञानकी प्रशंसा करते हुए लिखते है कि भारतीय अपनी गणना द्वारा चन्द्र और सूर्य ग्रहणकी बिल्कुल ठीक भविष्यद्वाणी करते है। इनका ज्योतिषज्ञान प्राचीन और मौलिक है"[3]

(४)--फ्रान्सीसी यात्री टरवीनियरने भी भारतीय ज्योतिषकी प्राचीनता और विशालतासे प्रभावित होकर कहा है कि "भारतीय ज्योतिष-ज्ञानमे प्राचीनकालसे ही अतीव निपुण है।"[4]

---

१ अलबरूनीज इंडिया; जिल्द १, पृ० १७४-१७७

२ इंडिया ह्वाट केन इट टीच अस, पृ० ३६०-३६६

३ ट्रावेल्स इन दी मुगल इम्पायर, पृ० ३२९

४ टरवीनियरस ट्रेविल इन इण्डिया, पृ० ४३३

(५)--एसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटैनिकामे लिखा है कि--"इसमें कोई सन्देह नही कि हमारे (अग्रेजी) वर्तमान अक क्रमकी उत्पत्ति भारतसे है। सभवत खगोल सम्बन्धी उन सारणियोके साथ जिनको एक भारतीय राजदूत ईस्वी सन् ७७३मे बगदादमे लाया, इन अकोका प्रवेश अरबमे हुआ। फिर ईस्वी सन्की नवी शताब्दीके प्रारम्भिक कालमे प्रसिद्ध अबुजफर मोहम्मद अल् खारिज्मीने अरबीमे उक्त क्रमका विवेचन किया और उसी समयसे अरबोमे उसका प्रचार बढने लगा। योरोपमे शून्य सहित यह सम्पूर्ण अकक्रम ईस्वी सन्की १२वी शताब्दीमे अरबोसे लिया गया और इस क्रमसे बना हुआ अकगणित 'अल् गोरिट्मस' नामसे प्रसिद्ध हुआ।"[1]

(६)--कौन्ट जॉर्मस्टर्जनने लिखा है कि--"बेली द्वारा किये गये गणितसे यह प्रतीत होता है कि ईस्वी सन्से ३००० वर्ष पूर्वसे ही भारतवासियोने ज्योतिषशास्त्र और भूमितिशास्त्रमे अच्छी पारदर्शिता प्राप्त कर ली थी।"[2]

(७)--कर्नलटॉडने अपने राजस्थान नामक ग्रन्थमे लिखा है कि--"हम उन ज्योतिषियोको कहाँ पा सकते है, जिनका ग्रहमण्डल सम्बन्धी ज्ञान अब भी योरोपमे आश्चर्य उत्पन्न कर रहा है।"[3]

(८)--मिस्टर मारिया ग्राह्यकी सम्मति है कि समस्त मानवीय परिष्कृत विज्ञानोमे ज्योतिष मनुष्यको ऊँचा उठा देता है।..... इसके प्रारम्भिक विकासका इतिहास ससारकी मानवताके उत्थानका इतिहास है। भारतमे इसके आदिम अस्तित्वके बहुतसे प्रमाण मौजूद है।"[4]

---

१ एंसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटैनिका; जिल्द १७, पृ० ६२६

२ Theogony of the Hindus, p. 37

३ टॉड राजस्थान भूमिका भाग पृ० ५-११

४ Letters on India, p. 109-111

(९)--मिस्टर सी० वी० क्लार्क एफ० जी० एफ० कहते है कि--"अभी बहुत वर्ष पीछे तक हम सुदूर स्थानोके अक्षाश (Longitudes) के विषयमे निश्चयात्मक रूपसे ज्ञान नही रखते थे, किन्तु प्राचीन भारतियोने ग्रहण-ज्ञानके समय से ही इन्हे जान लिया था। इनकी यह अक्षाश, रेखाशवाली प्रणाली वैज्ञानिक ही नही, अचूक है।"[१]

(१०)--प्रो० विल्सनने कहा है कि "भारतीय ज्योतिषियोको प्राचीन खलीफो विशेषकर हारूँरशीद और अलमायनने भलीभाँति प्रोत्साहित किया। वे बगदाद आमन्त्रित किये गये और वहाँ उनके ग्रन्थोका अनुवाद हुआ।"[२]

(११)--डाक्टर राबर्टसनका कथन है कि बारह राशियोका ज्ञान सबसे पहले भारतवासियोको ही हुआ था। भारतने प्राचीन कालमे ही ज्योतिर्विद्यामे अच्छी उन्नति की थी।"[३]

(१२)--प्रो० कोलब्रुक और वेबर साहबने लिखा है कि "भारतको ही सर्वप्रथम चान्द्रनक्षत्रोका ज्ञान था। चीन और अरबके ज्योतिषका विकास भारतसे ही हुआ है। उनका क्रान्तिमण्डल हिन्दुओका ही है। निस्सन्देह उन्हीसे अरबवालोने इसे लिया था।"

(१३)--विख्यात चीनी विद्वान् लियाग चिचावके शब्दोमे "वर्तमान सभ्य जातियोने जब हाथ पैर हिलाना भी प्रारम्भ नही किया था तभी हम दोनो भाइयोने (चीन और भारत) मानव सम्बन्धी समस्याओको ज्योतिष जैसे विज्ञान द्वारा सुलझाना आरम्भ कर दिया था।"[४]

(१४)--प्रो० वेलस महोदयने प्लेफसर साहबकी कुछ पंक्तियाँ

---

१ Theogony of the Hindus, p. 37

२ Ancient and Mediaeval India, Vol. I, p. 114

३ भारतीय सभ्यता और उसका विश्वव्यापी प्रभाव, पृ० ११७

४ Letters on India, p. 109-111

(५)––एंसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटैनिकामे लिखा है कि––"इसमें कोई सन्देह नही कि हमारे (अंग्रेजी) वर्तमान अक क्रमकी उत्पत्ति भारतसे है। सभवत. खगोल सम्बन्धी उन सारणियोके साथ जिनको एक भारतीय राजदूत ईस्वी सन् ७७३मे बगदादमे लाया, इन अकोका प्रवेश अरबमे हुआ। फिर ईस्वी सन्की नवी शताब्दीके प्रारम्भिक कालमे प्रसिद्ध अबुजफर मोहम्मद अल् खारिज्मीने अरबीमे उक्त क्रमका विवेचन किया और उसी समयसे अरबोमे उसका प्रचार बढने लगा। योरोपमे शून्य सहित यह सम्पूर्ण अकक्रम ईस्वी सन्की १२वी शताब्दीमे अरबोसे लिया गया और इस क्रमसे बना हुआ अकगणित 'अल् गोरिट्मस' नामसे प्रसिद्ध हुआ।"[1]

(६)––कौन्ट जॉर्मस्टर्जनने लिखा है कि––"बेली द्वारा किये गये गणितसे यह प्रतीत होता है कि ईस्वी. सन्मे ३००० वर्ष पूर्वमे ही भारतवासियोने ज्योतिषशास्त्र और भूमितिशास्त्रमे अच्छी पारदर्शिता प्राप्त कर ली थी।"[2]

(७)––कर्नलटॉडने अपने राजस्थान नामक ग्रन्थमे लिखा है कि––"हम उन ज्योतिषियोको कहाँ पा सकते है, जिनका ग्रहमण्डल सम्बन्धी ज्ञान अब भी योरोपमे आश्चर्य उत्पन्न कर रहा है।"[3]

(८)––मिस्टर मारिया ग्राह्यकी सम्मति है कि समस्त मानवीय परिष्कृत विज्ञानोमे ज्योतिष मनुष्यको ऊँचा उठा देता है।..... इसके प्रारम्भिक विकासका इतिहास ससारकी मानवताके उत्थानका इतिहास है। भारतमे इसके आदिम अस्तित्वके बहुतसे प्रमाण मौजूद है।"[4]

---

१ एंसाइक्लोपीडिया ऑफ ब्रिटैनिका; जिल्द १७, पृ० ६२६

२ Theogony of the Hindus, p. 37

३ टॉड राजस्थान भूमिका भाग पृ० ५-११

४ Letters on India, p. 109-111

(९)--मिस्टर सी० वी० क्लार्क एफ० जी० एफ० कहते है कि--"अभी बहुत वर्ष पीछे तक हम सुदूर स्थानोके अक्षाश (Longitudes) के विषयमे निश्चयात्मक रूपसे ज्ञान नही रखते थे, किन्तु प्राचीन भारतियोने ग्रहण-ज्ञानके समय से ही इन्हें जान लिया था। इनकी यह अक्षाश, रेखाशवाली प्रणाली वैज्ञानिक ही नही, अचूक है।"[१]

(१०)--प्रो० विल्सनने कहा है कि "भारतीय ज्योतिषियोको प्राचीन खलीफो विशेषकर हारूँरशीद और अलमायनने भलीभाँति प्रोत्साहित किया। वे बगदाद आमन्त्रित किये गये और वहाँ उनके ग्रन्थोका अनुवाद हुआ।"[२]

(११)--डाक्टर राबर्टसनका कथन है कि बारह राशियोंका ज्ञान सबसे पहले भारतवासियोको ही हुआ था। भारतने प्राचीन कालमे ही ज्योतिर्विद्यामे अच्छी उन्नति की थी।"[३]

(१२)--प्रो० कोलब्रुक और वेबर साहबने लिखा है कि "भारतको ही सर्वप्रथम चान्द्रनक्षत्रोका ज्ञान था। चीन और अरबके ज्योतिषका विकास भारतसे ही हुआ है। उनका क्रान्तिमण्डल हिन्दुओका ही है। निस्सन्देह उन्हीसे अरबवालोने इसे लिया था।"

(१३)--विख्यात चीनी विद्वान् लियाग चिचावके शब्दोमे "वर्तमान सभ्य जातियोने जब हाथ पैर हिलाना भी प्रारम्भ नही किया था तभी हम दोनों भाइयोने (चीन और भारत) मानव सम्बन्धी समस्याओंको ज्योतिष जैसे विज्ञान द्वारा सुलझाना आरम्भ कर दिया था।"[४]

(१४)--प्रो० वेलस महोदयने प्लेफसर साहबकी कुछ पंक्तियाँ

---

१ Theogony of the Hindus, p. 37

२ Ancient and Mediaeval India, Vol. I, p. 114

३ भारतीय सभ्यता और उसका विश्वव्यापी प्रभाव, पृ० ११७

४ Letters on India, p. 109-111

उद्धृत की है, जिनका आशय है कि ज्योतिष ज्ञानके विना बीजगणितकी रचना कठिन है। विद्वान् विल्सन कहते है कि भारतने ज्योतिष और गणितके तत्त्वोका आविष्कार अति प्राचीन कालमे किया था।[१]

(१५) डी० मार्गनने स्वीकार किया है कि "भारतियोका गणित और ज्योतिष यूनानके किसी भी गणित या ज्योतिषके सिद्धान्तकी अपेक्षा महान् है। इनके तत्व प्राचीन और मौलिक है।"[२]

(१६)—डा० थीबो बहुत सोच विचार और समालोचनाके अनन्तर इस निष्कर्षपर पहुँचे है कि "भारत ही रेखागणितके मूलसिद्धान्तोका आविष्कर्त्ता है। इसने नक्षत्रविद्यामे भी पुरातनकालमे ही प्रवीणता प्राप्त कर ली थी, यह रेखागणितके सिद्धान्तोका उपयोग इस विद्याको जाननेके लिये करता था।"

(१७) —वर्जेस महोदयने सूर्यसिद्धान्तके अग्रेजी अनुवादके परिशिष्ट-में अपना मत उद्धृत करते हुए बताया है कि भारतका ज्योतिष टालमीके सिद्धान्तोपर आश्रित नही है, किन्तु इसने ई० सन्के बहुत पहले ही इस विषयका पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर लिया था।[३]

उपर्युक्त उद्धरणोसे स्पष्ट है कि भारतीय ज्योतिषशास्त्रका उद्भव स्थान भारत ही है। इसने किसी देशसे सीखकर यहां प्रचार नही किया है। श्री लोकमान्य तिलकने अपनी 'ओरायन' नामक पुस्तकमे बताया है कि भारतका नक्षत्र-ज्ञान, जिसका कि वेदोमे वर्णन आता है, ईस्वी सन्से कमसे कम पाँच हजार वर्ष पहलेका है। भारतीय नक्षत्रविद्यामे अत्यन्त प्रवीण थे। अतएव बैबीलोन या यूनान अथवा ग्रीससे भारतमे यह विद्या नही आयी है। ई० सन् पूर्व दूसरी शताब्दी तक इस शास्त्रमें

---

१ Mill's India, Vol. II, page 151

२ Ancient and Mediaeval India, Vol. I, p. 374

३ पञ्चसिद्धान्तिकाकी भूमिका, पृ० LIII—LV

आदान-प्रदान भी नहीं हुआ है, किन्तु ई० सन् २-६ शती तक विदेशियोंके अत्यधिक सम्पर्कके कारण पर्याप्त आदान-प्रदान हुआ है। पाश्चात्य सभ्यताके स्नेही कुछ समालोचक इसी कालके साहित्यको देखकर भारतीय-ज्योतिषको यूनान या ग्रीससे आया हुआ बतलाते हैं।

बैबीलोनिया भाषाके कुछ शब्द ऐसे भी हैं, जो संस्कृतमें ज्योंके त्यों पाये जाते हैं, ज्योतिषशास्त्रमें इन शब्दोंका प्रयोग देखकर इसे बैबीलोनसे आया हुआ सिद्ध करनेकी असफल चेष्टा कुछ समीक्षक करते हैं, किन्तु ज्योतिषके मूलबीजों और अपनी परम्पराके अवलोकनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह विज्ञान भारतीय ज्योतिषियोंके मस्तिष्ककी ही उपज है। हाँ, जैसे इस देशने अरब आदिको इस विज्ञानकी शिक्षा दी, उसी प्रकार यूनान और बैबीलोनसे पुराना सम्पर्क होनेके कारण कुछ ग्रहण भी किया। पर इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि ये देश ही इस विज्ञानके लिये भारतके गुरु हैं।

जी० आर० के०ने अपनी हिन्दू एस्ट्रोनोमी नामक पुस्तकमें बताया है कि "भारतने टालमीके ज्योतिषसिद्धान्तका उपयोग तो कम ही किया है, किन्तु प्राचीन यूनानी सिद्धान्तोंकी परम्पराका निर्वाह ही बहुत काल तक करता रहा है। इसके मूलभूत सिद्धान्त यवनोंके सम्पर्कसे ही प्रस्फुटित हुए हैं। राशियोंकी नामावली भी भारतीय नहीं है," आदि। गम्भीरतासे सोचनेपर तथा इस शास्त्रके इतिहासका अवलोकन करनेपर यह धारणा भ्रान्त सिद्ध हो जाती है। अतः ईस्वी सन्‌से कमसे कम दस हजार वर्ष पहले भारतने ज्योतिषविज्ञानका आविष्कार किया था।

मानव जीवन और भारतीय ज्योतिष

मनुष्य स्वभावसे ही अन्वेषक प्राणी है। वह सृष्टिकी प्रत्येक वस्तुके साथ अपने जीवनका तादात्म्य सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है।

उसकी इसी प्रवृत्तिने ज्योतिषके साथ जीवनका सम्बन्ध स्थापित करनेके लिये बाध्य किया है। फलतः वह अपने जीवनके भीतर ज्योतिष तत्त्वोंका प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहता है। इसी कारण वह शास्त्रीय एवं व्यावहारिक ज्ञान द्वारा प्राप्त अनुभवको, ज्योतिषकी कसौटीपर कसकर देखना चाहता है कि ज्योतिषका जीवनमें क्या स्थान है ?

समस्त भारतीय ज्ञानकी पृष्ठभूमि दर्शनशास्त्र है, यही कारण है कि भारत अन्य प्रकारके ज्ञानको दार्शनिक मापदण्ड द्वारा मापता है। इसी अटल सिद्धान्तके अनुसार वह ज्योतिषको भी इसी दृष्टिकोणसे देखता है। भारतीय दर्शनके अनुसार आत्मा अमर है, इसका कभी नाश नही होता है, केवल यह कर्मोके अनादि प्रवाहके कारण पर्यायोको बदला करता है। अध्यात्मशास्त्रका कथन है कि दृश्य सृष्टि केवल नाम रूप या कर्म ही नही है, किन्तु इस नाम रूपात्मक आवरणके लिये आधारभूत एक अरूपी, स्वतन्त्र और अविनाशी आत्मतत्त्व है तथा प्राणीमात्रके शरीरमे रहनेवाला यह तत्त्व नित्य एवं चैतन्य है, केवल कर्मबन्धके कारण वह परतन्त्र और विनाशीक दिखलाई पड़ता है। वैदिक दर्शनोमे कर्मके सचित, प्रारब्ध और क्रियमाण ये तीन भेद माने गये है। किसीके द्वारा वर्तमान क्षण तक किया गया जो कर्म है—चाहे वह इस जन्ममे किया गया हो या पूर्व जन्मोमे, वह सब संचित कहलाता है। अनेक जन्म-जन्मान्तरोके सचित कर्मोको एक साथ भोगना सभव नही है; क्योकि इनसे मिलनेवाले परिणाम स्वरूप फल परस्पर विरोधी होते है, अतः इन्हे एकके बाद एक कर भोगना पड़ता है। सचितमेसे जितने कर्मोके फलको पहले भोगना शुरू होता है, उतने ही को प्रारब्ध कहते है। तात्पर्य यह है कि संचित अर्थात् समस्त जन्म-जन्मान्तर के कर्मोके संग्रहमेसे एक छोटे भेदको प्रारब्ध कहते है। यहाँ इतना स्मरण रखना होगा कि समस्त संचितका नाम प्रारब्ध नही, बल्कि जितने भागका भोगना आरम्भ हो गया है, प्रारब्ध है। जो कर्म अभी हो रहा है या जो अभी किया जा रहा है, वह क्रियमाण है। इस प्रकार इन तीन तरहके

कर्मोंके कारण आत्मा अनेक जन्मों--पर्यायोंको धारण कर संस्कार अर्जन करता चला आ रहा है।

आत्माके साथ अनादि कालीन कर्म-प्रवाहके कारण लिङ्गशरीर--कार्माण शरीर और भौतिक स्थूल शरीरका सम्बन्ध है। जब एक स्थानसे आत्मा इस भौतिक शरीरका त्याग करता है तो लिङ्ग शरीर उसे अन्य स्थूल शरीरकी प्राप्तिमें सहायक होता है। इस स्थूल भौतिक शरीरमें विशेषता यह है कि इसमें प्रवेश करते ही आत्मा जन्म-जन्मान्तरोंके संस्कारों-की निश्चित स्मृतिको खो देता है। इसलिये ज्योतिर्विदोंने प्राकृतिक ज्योतिषके आधारपर कहा है कि यह आत्मा मनुष्यके वर्तमान स्थूल शरीरमें रहते हुए भी एकसे अधिक जगत्के साथ सम्बन्ध रखता है। मानवका भौतिक शरीर प्रधानतः ज्योति, मानसिक और पौद्गलिक इन तीन उपशरीरोंमें विभक्त है। यह ज्योतिः उपशरीर Astrals's body द्वारा नाक्षत्र जगत्से, मानसिक उपशरीर द्वारा मानसिक जगत्से और पौद्गलिक उपशरीर द्वारा भौतिक जगत्से सम्बद्ध है। अतः मानव प्रत्येक जगत्से प्रभावित होता है तथा अपने भाव, विचार और क्रिया द्वारा प्रत्येक जगत्को प्रभावित करता है। उसके वर्तमान शरीरमें ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य आदि अनेक शक्तियोंका धारक आत्मा सर्वत्र व्यापक है तथा शरीर प्रमाण रहनेपर भी अपनी चैतन्य क्रियाओं द्वारा विभिन्न जगतोंमें अपना कार्य करता है। मनोवैज्ञानिकोंने आत्माकी इस क्रियाकी विशेषताके कारण ही मनुष्यके व्यक्तित्वको बाह्य और आन्तरिक दो भागोंमें विभक्त किया है।

बाह्यव्यक्तित्व--वह है जिसने इस भौतिक शरीरके रूपमें अवतार लिया है। यह आत्माकी चैतन्य क्रियाकी विशेषताके कारण अपने पूर्व जन्मके निश्चित प्रकारके विचार, भाव और क्रियाओंकी ओर झुकाव प्राप्त करता है तथा इस जीवनके अनुभवोंके द्वारा इस व्यक्तित्वके विकासमें

वृद्धि होती है और यह धीरे-धीरे विकसित होकर आन्तरिक व्यक्तित्वमें मिलनेका प्रयास करता है।

आन्तरिक व्यक्तित्व---वह है जो अनेकों वाह्य व्यक्तित्वोंकी स्मृतियों, अनुभवों और प्रवृत्तियोंका संश्लेषण अपनेमें रखता है।

वाह्य और आन्तरिक इन दोनों व्यक्तित्व सम्बन्धी चेतनाके ज्योतिषमें विचार, अनुभव और क्रिया ये तीन रूप माने गये हैं। वाह्य व्यक्तित्वके तीन रूप आन्तरिक व्यक्तित्वके इन तीनों रूपोंसे सम्बद्ध है, पर आन्तरिक व्यक्तित्वके ये तीनों रूप अपनी निजी विशेषता और शक्ति रखते है, जिससे मनुष्यके भौतिक, मानसिक और आध्यात्मिक इन तीनों जगतोंका संचालन होता है। मनुष्यका अन्त करण इन दोनों व्यक्तित्वके उक्त तीनों रूपोंको मिलानेका कार्य करता है। दूसरे दृष्टिकोणसे यह कहा जा सकता है कि ये तीनों रूप एक मौलिक अवस्थामें आकर्षण और विकर्षणकी प्रवृत्ति द्वारा अन्त करणकी सहायतासे सन्तुलित रूपको प्राप्त होते है। तात्पर्य यह है कि आकर्षणकी प्रवृत्ति वाह्य व्यक्तित्वको और विकर्षणकी प्रवृत्ति आन्तरिक व्यक्तित्वको प्रभावित करती है और इन दोनोंके बीचमें रहनेवाला अन्त.करण इन्हें सन्तुलन प्रदान करता है। मनुष्यकी उन्नति और अवनति इस संतुलनके पलड़ेपर ही निर्भर है।

मानव जीवनके बाह्य व्यक्तित्वके तीन रूप और आन्तरिक व्यक्तित्वके तीन रूप तथा एक अन्त.करण इन सातके प्रतीक सौर जगत्में रहनेवाले सात ग्रह माने गये है। उपर्युक्त सात रूप सब प्राणियोंके एकसे नही होते है, क्योंकि जन्म-जन्मान्तरोंके सचित, प्रारब्ध कर्म विभिन्न प्रकारके है; अतः प्रतीक रूप ग्रह अपने-अपने प्रतिरूप्यके सम्बन्धमें विभिन्न प्रकारकी बातें प्रकट करते है। प्रतिरूप्योंकी सच्ची अवस्था बीजगणितकी अव्यक्त मान कल्पना द्वारा निष्पन्न अंकोंके समान प्रकट हो जाती है।

आधुनिक वैज्ञानिक प्रत्येक वस्तुकी आन्तरिक रचना सौरमण्डलसे मिलती जुलती बतलाते है। उन्होने परमाणुके सम्बन्धमें अन्वेषण करते

हुए बताया है कि प्रत्येक पदार्थकी सूक्ष्म रचनाका आधार परमाणु है। अथवा यों कहें कि परमाणुकी ईंटोंको जोड़कर पदार्थका विशाल भवन निष्पन्न होता है और यह परमाणु सौरजगत्के समान आकार-प्रकारवाला है। इसके मध्यमें एक घन विद्युतका विन्दु है, जिसे केन्द्र कहते हैं। इसका व्यास एक इंचके दस लाखवें भागका भी दस लाखवाँ भाग बताया गया है। परमाणुके जीवनका सार इसी केन्द्रमें बसता है। इस केन्द्रके चारों ओर अनेक सूक्ष्मातिसूक्ष्म विद्युतकण चक्कर लगाते रहते हैं और ये केन्द्रवाले धनविद्युतकणके साथ मिलनेका उपक्रम करते रहते हैं। इस प्रकारके अनन्त परमाणुओंके समाहारका एकत्र स्वरूप हमारा शरीर है। भारतीय दर्शनमें भी 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे'का सिद्धान्त प्राचीन कालसे ही प्रचलित है। तात्पर्य यह है वास्तविक सौरजगत्में सूर्य, चन्द्र आदि ग्रहोंके भ्रमण करनेमें जो नियम कार्य करते हैं, वे ही नियम प्राणीमात्रके शरीरमें स्थित सौरजगत्के ग्रहोंके भ्रमण करनेमें भी काम करते हैं। अतः आकाश स्थित ग्रह शरीर स्थित ग्रहोंके प्रतीक हैं।

प्रथम कल्पनानुसार बाह्य और आन्तरिक व्यक्तित्वके छः रूप तथा एक अन्त करण इन सातों प्रतिरूपोंके प्रतीक ग्रह निम्न प्रकार है—

१—बाह्य व्यक्तित्वके प्रथम रूप—विचारका प्रतीक बृहस्पति है। यह प्राणीमात्रके शरीरका प्रतिनिधित्व करता है और शरीर संचालनके लिये रक्त प्रदान करता है। जीवित प्राणीके रक्तमें रहनेवाले कीटाणुओं-की चेतनामें इसका सम्बन्ध रहता है। इस प्रतीक द्वारा बाह्य व्यक्तित्वके प्रथम रूपसे होनेवाले कार्योंका विश्लेषण किया जाता है। इसलिये ज्योतिष-शास्त्रमें प्रत्येक ग्रहसे किसी भी मनुष्यके आत्मिक, अनात्मिक और शारी-रिक इन तीन प्रकारके दृष्टिकोणसे फलका विचार किया जाता है। कारण स्पष्ट है कि मनुष्यके व्यक्तित्वके किसी भी रूपका प्रभाव शरीर, आत्मा और बाह्य जड़, चेतन पदार्थ, जो शरीरसे भिन्न है, पड़ता है। उदाहरणके लिये बाह्य व्यक्तित्वके प्रथम रूप विचारको लिया जा सकता

है; मनुष्यके विचारका प्रभाव शरीर और चेतन शक्तियाँ––स्मृति, अनुभव, प्रत्यभिज्ञा आदि तथा मनुष्यसे सम्बद्ध अन्य वस्तुओपर भी पडता है। इन तीनोसे अलग रहकर मनुष्य कुछ नही कर सकेगा, उसका जीवन जडवत् स्तम्भित हो जायगा। अतएव प्रथम रूपके प्रतीक बृहस्पतिका विवेचन निम्न प्रकार अवगत करना चाहिये।

अनात्मा––इस दृष्टिकोणसे बृहस्पति व्यापार, कार्य, वे स्थान और व्यक्ति जिनका सम्बन्ध धर्म और कानूनसे है––मन्दिर, पुजारी, मंत्री, न्यायालय, न्यायाधीश, विश्वविद्यालय, धारासभाएं, जनताके उत्सव, दान, सहानुभूति आदिका प्रतिनिधित्व करता है।

आत्मा––इस दृष्टिकोणसे यह ग्रह विचार मनोभाव और इन दोनोका मिश्रण, उदारता, अच्छा स्वभाव, सौन्दर्य प्रेम, शान्ति, भक्ति एव व्यवस्था-बुद्धि, इत्यादि आत्मिक भावोका प्रतिनिधित्व करता है।

शरीर––इस दृष्टिकोणसे पैर, जघा, जिगर, पाचनक्रिया, रक्त एवं नसोका प्रतिनिधित्व करता है।

२––बाह्य व्यक्तित्वके द्वितीय रूपका प्रतीक मगल है। यह इन्द्रिय-ज्ञान और आनन्देच्छाका प्रतिनिधित्व करता है। जितने भी उत्तेजक और सवेदना-जन्य आवेग है उनका यह प्रधान केन्द्र है। बाह्य आनन्द-दायक वस्तुओके द्वारा यह क्रियाशील होता है और पूर्वकी आनन्ददायक अनुभवोकी स्मृतियोको जागृत करता है। वाञ्छित वस्तुकी प्राप्ति तथा उन वस्तुओकी प्राप्तिके उपायोके कारणोकी क्रियाका प्रधान उद्गम है। यह प्रधान रूपसे इच्छाओका प्रतीक है।

अनात्मिक दृष्टिकोणसे––यह सैनिक, डाक्टर, रसायनिक, नाई, बढ़ई, लुहार, मशीनका कार्य करनेवाला, मकान बनानेवाला, खेल एवं खेलके सामान आदिका प्रतिनिधित्व करता है।

आत्मिक दृष्टिकोणसे––यह साहस, बहादुरी, दृढता, आत्मविश्वास, क्रोध, लडाकू-प्रवृत्ति एवं प्रभुत्व प्रभृति भावों और विचारोका प्रतिनिधि है।

शारीरिक दृष्टिकोणसे--यह बाहरी सिर--खोपड़ी, नाक, एवं गालका प्रतीक है। इसके द्वारा सक्रामक रोग, घाव, खरोंच, आपरेशन, रक्तदोष, दर्द आदि अभिव्यक्त होते हे।

३--बाह्य व्यक्तित्वके तृतीय रूपका प्रतीक चन्द्रमा है, यह मानवपर शारीरिक प्रभाव डालता है और विभिन्न अगो तथा उनके कार्योमें सुधार करता है। वस्तु-जगत्से सम्बन्ध रखनेवाले पिछले मस्तिष्कपर इसका प्रभाव पड़ता है। बाह्य जगत्की वस्तुओ द्वारा जो क्रियाएँ होती है, उनका इससे विशेष सम्बन्ध है। सक्षेपमे यह कहा जा सकता है कि चन्द्रमा स्थूल शरीरगत चेतनाके ऊपर प्रभाव डालता है तथा मस्तिष्कमे उत्पन्न होनेवाले परिवर्तनशील भावोका प्रतिनिधि है।

अनात्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे--यह श्वेत रग, जहाज, बन्दरगाह, मछली, जल, तरलपदार्थ, नर्स, दासी, भोजन, रजत एवं बैंगनीरंगके पदार्थोंपर प्रभाव डालता है।

आत्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे--यह संवेदन, आन्तरिक इच्छा, उतावलापन, भावना, विशेषत. घरेलू जीवनकी भावना, कल्पना, सतर्कता एवं लाभेच्छापर प्रभाव डालता है।

शारीरिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे--इसका पेट, पाचनशक्ति, आँतें, स्तन, गर्भाशय, योनिस्थान, आँख एवं नारीके अन्य गुप्ताङ्गोपर प्रभाव पड़ ता है।

४--आन्तरिक व्यक्तित्वके प्रथम रूपका प्रतीक शुक्र है, यह सूक्ष्म मानव चेतनाओंकी विधेय क्रियाओका प्रतिनिधित्व करता है। पूर्णबली शुक्र नि.स्वार्थ प्रेमके साथ प्राणीमात्रके प्रति भ्रातृत्व-भावनाका विकास करता है।

अनात्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे--इसका सुन्दर वस्तुएँ, आभूषण, आनन्ददायक चीजे--नाच, गान, वाद्य, सजावटकी चीजे, कलात्मक वस्तुएँ एव भोगोपभोगकी सामग्री आदिपर प्रभाव पड़ता है।

आत्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे—स्नेह, सौन्दर्य-ज्ञान, आराम, आनन्द, विशेष प्रेम, स्वच्छता, परख-बुद्धि, कार्य क्षमता आदिपर इसका प्रभाव पड़ता है।

शारीरिक दृष्टिकोणसे—गला, गुरदा, आकृति, वर्ण, केश—जहाँ तक सौन्दर्यसे सम्बन्ध है, साधारणतः शरीर-सचालित करनेवाले अग एवं लिङ्ग आदिपर इसका प्रभाव पडता है।

५—आन्तरिक व्यक्तित्वके द्वितीय रूपका प्रतिनिधि बुध है। यह प्रधान रूपसे आध्यात्मिक शक्तिका प्रतीक है। इसके द्वारा आन्तरिक प्रेरणा, सहेतुक-निर्णयात्मक-बुद्धि, वस्तु-परीक्षण-शक्ति, समझ और बुद्धिमानी आदिका विश्लेषण किया जाता है। इस प्रतीकमें विशेषता यह रहती है कि यह गम्भीरतापूर्वक किये गये विचारोका विश्लेषण बड़ी खबीसे करता है।

अनात्मिक दृष्टिकोणसे—स्कूल, कालेजका शिक्षण, विज्ञान, वैज्ञानिक और साहित्यिक स्थान, प्रकाशन-स्थान, सपादक, लेखक, प्रकाशक, पोस्टमास्टर, व्यापारी एव बुद्धिजीवियोपर इसका विशेष प्रभाव पड़ता है। पीले रंग और पारा धातुपर भी यह अपना प्रभाव डालता है।

आत्मिक दृष्टिकोणसे—यह समझ, स्मरणशक्ति, खण्डन-मण्डन शक्ति, सूक्ष्म कलाओंकी उत्पादक शक्ति एव तर्कणा आदिका प्रतिनिधि है।

शारीरिक दृष्टिकोणसे—यह मस्तिष्क, स्नायुक्रिया, जिह्वा, वाणी, हाथ तथा कलापूर्ण कार्योत्पादक अंगोपर प्रभाव डालता है।

६—आन्तरिक व्यक्तित्वके तृतीय रूपका प्रतिनिधि सूर्य है। यह पूर्ण दैवत्वकी चेतनाका प्रतीक है, इसकी सात किरणें है जो कार्यरूपसे भिन्न होती हुई भी इच्छाके रूपमें पूर्ण होकर प्रकट होती है। मनुष्यके विकासमें सहायक तीनों प्रकारकी चेतनाओंके सन्तुलित रूपका यह प्रतीक है। यह पूर्ण इच्छा शक्ति, ज्ञान शक्ति, सदाचार, विश्राम, शान्ति, जीवनकी उन्नति एवं विकासका द्योतक है।

अनात्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे--जो व्यक्ति दूसरोंपर अपना प्रभाव रखते हों ऐसे राजा, मंत्री, सेनापति, सरदार, प्रधान, आविष्कारक, पुरातत्त्ववेत्ता आदिपर अपना प्रभाव डालना है।

आत्मिक दृष्टिकोणकी अपेक्षासे--यह प्रभुता, ऐश्वर्य, प्रेम, उदारता, महत्वाकाक्षा, आत्मविश्वास, आत्मनियंत्रण, विचार और भावनाओंका सतुलन एवं सहृदयताका प्रतीक है।

शारीरिक दृष्टिसे--हृदय, रक्त-सचालन, नेत्र, रक्त-वाहक छोटी नसें, दाँत, कान आदि अगोंका प्रतिनिधि है।

७--अन्त.करणका प्रतीक शनि है। यह बाह्य चेतना और आन्तरिक चेतनाको मिलानेमें पुलका काम करता है। प्रत्येक नवजीवनमें आन्तरिक व्यक्तित्वसे जो कुछ प्राप्त होता है और जो मनुष्यके व्यक्तिगत जीवनके अनुभवोंसे मिलता है, उससे मनुष्यको यह वृद्धिगत करता है। यह प्रधान रूपसे 'अहं' भावनाका प्रतीक होता हुआ भी व्यक्तिगत जीवनके विचार, इच्छा और कार्योंके संतुलनका भी प्रतीक है। विभिन्न प्रतीकोंसे मिलनेपर यह नाना तरहसे जीवनके रहस्योंको अभिव्यक्त करता है। उच्च स्थान अर्थात् तुला राशिका शनि विचार और भावोंकी समानताका द्योतक है।

अनात्मिक दृष्टिकोणसे--कृषक, हलवाहक, पत्रवाहक, चरवाहा, कुम्हार, माली, मठाधीश, कृपण, पुलिस अफसर, उपवास करनेवाले साधु-सन्यासी आदि व्यक्ति तथा पहाड़ी स्थान, चट्टानी प्रदेश, बंजर भूमि, गुफा, प्राचीन ध्वस स्थान, स्मशानघाट, कब्रस्थान एव चौरस मैदान आदिका प्रतिनिधि है।

आत्मिक दृष्टिसे--तात्त्विकज्ञान, विचार-स्वातन्त्र्य, नायकत्व, मनन-शीलता, कार्यपरायणता, आत्मसयम, धैर्य, दृढ़ता, गम्भीरता, चारित्र-शुद्धि, सतर्कता, विचारशीलता एवं कार्यक्षमताका प्रतीक है।

शारीरिक दृष्टिसे--हड्डियाँ, नीचेके दाँत, बड़ी आँतें, एवं मान्स-पेशियोंपर प्रभाव डालता है।

उपर्युक्त विवेचनसे स्पष्ट है कि सौरजगत्के सात ग्रह मानवजीवनके विभिन्न अवयवोके प्रतीक है । इन सातोंकी क्रिया--फल द्वारा ही जीवनका सचालन होता है । प्रधान सूर्य और चन्द्रमा बौद्धिक और शारीरिक उन्नति, अवनतिके प्रतीक माने गये है । पूर्वोक्त जीवनके विभिन्न अवयवोके प्रतीक ग्रहोका क्रम दोनों व्यक्तित्वोके तृतीय, द्वितीय, प्रथम और अन्तःकरणके प्रतीकोके अनुसार है अर्थात् आन्तरिक व्यक्तित्वके तृतीय रूपका प्रतीक सूर्य, बाह्य व्यक्तित्वके तृतीय रूपका प्रतीक चन्द्रमा, बाह्यव्यक्तित्वके द्वितीय रूपका प्रतीक मगल, आन्तरिक व्यक्तित्वके द्वितीय रूपका प्रतीक बुध, बाह्य व्यक्तित्वके प्रथम रूपका प्रतीक बृहस्पति, आन्तरिक व्यक्तित्वके प्रथम रूपका प्रतीक शुक्र एव अन्तःकरणका प्रतीक शनि, इस प्रकार सूर्य, चन्द्र, मगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि इन सातो ग्रहोका क्रम सिद्ध होता है । अतः स्पष्ट है कि मानव जीवनके साथ ग्रहोका अभिन्न सम्बन्ध है ।

आचार्य वराहमिहिरके सिद्धान्तोको मनन करनेसे ज्ञात होगा कि शरीर चक्र ही ग्रह-कक्षावृत्त है । इस कक्षावृत्तके द्वादश भाग मस्तक, मुख, वक्षस्थल, हृदय, उदर, कटि, वस्ति, लिग, जघा, घुटना, पिडली और पैर क्रमश. मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन सज्ञक है । इन बारह राशियोमें भ्रमण करने वाले ग्रहोमे आत्मा रवि, मन चन्द्रमा, धैर्य मगल, वाणी बुध, विवेक गुरु, वीर्य शुक्र और सवेदन शनि है । तात्पर्य यह है कि वराहमिहिराचार्यने सप्तग्रह और द्वादश राशियोकी स्थिति देहधारी प्राणीके भीतर ही बतलायी है । इस शरीर स्थित सौरचक्रका भ्रमण आकाशस्थित सौरमण्डलके नियमोके आधारपर ही होता है । ज्योतिषशास्त्र व्यक्त सौरजगत्के ग्रहोकी गति, स्थिति आदिके अनुसार अव्यक्त शरीर स्थित सौरजगत्के ग्रहोकी गति, स्थिति आदिको प्रकट करता है । इसीलिये इस शास्त्र द्वारा निरूपित फलोका मानव जीवनसे सम्बन्ध है ।

प्राचीन भारतीय आचार्योंने प्रयोगशालाओंके अभावमें भी अपने दिव्य योगबल द्वारा आभ्यन्तर सौरजगत्का पूर्ण दर्शन कर आकाश-मण्डलीय सौरजगत्के नियम निर्धारित किये थे, उन्होंने अपने शरीर स्थित सूर्यकी गतिसे ही आकाशीय सूर्यकी गति निश्चित की थी। इसी कारण ज्योतिषके फलाफलका विवेचन आज भी विज्ञान सम्मत माना जाता है।

भारतीय ज्योतिषका रहस्य

यद्यपि 'मानव जीवन और भारतीय ज्योतिष' इस प्रकरणसे ही भारतीय ज्योतिषके रहस्यका आभास मिल जाता है, परन्तु तो भी इस विषयपर स्वतन्त्र विचार करना आवश्यक है। प्राय समस्त भारतीय विज्ञानका लक्ष्य एकमात्र अपनी आत्माका विकास कर उसे परमात्मामें मिला देना या तत्तुल्य बना लेना है। दर्शन या विज्ञान सभीका ध्येय विश्वकी गूढ़ पहेलीको सुलझाना है। ज्योतिष भी विज्ञान होनेके कारण इस अखिल ब्रह्माण्डके रहस्यको व्यक्त करनेका प्रयत्न करता है।

यद्यपि आत्माके स्वरूपका स्पष्टीकरण करना योग या दर्शनका विषय है; लेकिन ज्योतिषशास्त्र भी इस विषयसे अपनेको अछूता नहीं रखता। भारतकी प्रमुख विशेषता आत्माकी प्रेष्ठता है। इस प्रिय वस्तुकी प्राप्तिके लिये सभी दार्शनिक या वैज्ञानिक अपने अनुभवोंकी थैली बिना खोले नहीं रह सकते। फलतः दर्शनके समान ज्योतिषने भी आत्माके श्रवण, मनन और निदिध्यासनपर गणितके प्रतीकों द्वारा जोर दिया है। यों तो स्पष्टरूपसे ज्योतिषमें आत्मसाक्षात्कारके उक्त साधनोंका कथन नहीं मिलेगा, लेकिन प्रतीकोंसे उक्त विषय सहजमें ही हृदयगम्य किये जा सकते हैं। प्रायः देखा भी जाता है कि उत्कृष्ट आत्मज्ञानी ज्योतिष रहस्यका वेत्ता अवश्य होता है। प्राचीन या अर्वाचीन युगमें दर्शनशास्त्रसे अपरिचित व्यक्ति ज्योतिर्विद्के पदपर आसीन होनेका अधिकारी नहीं माना गया है।

ज्योतिषशास्त्रका अन्य नाम ज्योति.शास्त्र भी आता है, जिसका अर्थ प्रकाश देनेवाला या प्रकाशके सम्बन्धमें बतलानेवाला शास्त्र होता है; अर्थात् जिस शास्त्रसे ससारका मर्म, जीवन-मरणका रहस्य और जीवनके सुख-दु.खके सम्बन्धमे पूर्ण प्रकाश मिले वह ज्योतिषशास्त्र है। छान्दोग्य उपनिषदमे ब्रह्मका वर्णन करते हुए बताया है कि "मनुष्यका वर्तमान जीवन उसके पूर्व-संकल्पो और कामनाओका परिणाम है तथा इस जीवनमे वह जैसा सकल्प करता है, वैसा ही यहाँसे जानेपर बन जाता है। अतएव पूर्ण प्राणमय, मनोमय, प्रकाशरूप एव समस्त कामनाओ और विषयोके अधिष्ठान भूत ब्रह्मका ध्यान करना चाहिए।"[1] इससे स्पष्ट है कि ज्योतिषके तत्त्वोके आधारपर वर्तमान जीवनका निर्माण कर प्रकाशरूप—ज्योति.स्वरूप ब्रह्मका सान्निध्य प्राप्त किया जा सकता है।

स्मरण रखनेकी बात यह है कि मानव जीवन नियमित सरल रेखाकी गतिसे नही चलता, बल्कि इसपर विश्वजनीन कार्यकलापोके घात-प्रतिघात लगा करते है। सरल रेखाकी गतिसे गमन करनेपर जीवनकी विशेषता भी चली जायगी, क्योकि जबतक जगत्के व्यापारोका प्रवाह जीवन रेखाको धक्का देकर आगे नही बढ़ाता अथवा पीछे लौटाकर उसका ह्रास नही करता तबतक जीवनकी दृढता प्रकट नही हो सकती। तात्पर्य यह है कि सुख और दु.खके भाव ही मानवको गतिशील बनाते है, इन भावोकी उत्पत्ति बाह्य और आन्तरिक जगत्की सवेदनाओसे होती है। इसीलिये मानव जीवन अनेक समस्याओंका सन्दोह और उन्नति-अवनति—आत्म-विकास और ह्रासके विभिन्न रहस्योका पिटारा है। ज्योतिषशास्त्र आत्मिक, अनात्मिक भावो और रहस्योको व्यक्त करनेके साथ-साथ उपर्युक्त

---

[1] **मनोमयः प्राणशरीरोभारूपः सत्यसंकल्प आकाशात्मा सर्वकर्मा सर्वकामः सर्वगन्धः सर्वरसः सर्वमिदमभ्यात्तोऽवाक्यनादरः।—छान्दो० ३।१४**

सन्दोह और पिटारेका प्रत्यक्षीकरण कर देता है। भारतीय ज्योतिषका रहस्य इसी कारण अतिगूढ हो गया है। जीवनके आलोच्य सभी विषयोंका इस शास्त्रका प्रतिपाद्य विषय बनना ही इस बातका साक्षी है कि यह जीवनका विश्लेषण करनेवाला शास्त्र है।

भारतीय ज्योतिषशास्त्रके निर्माताओंके व्यावहारिक एवं पारमार्थिक ये दो लक्ष्य रहे हैं। प्रथम दृष्टिसे इस शास्त्रका रहस्य गणना करना तथा दिक्, देश एवं कालके सम्बन्धसे मानव समाजको परिज्ञान कराना कहा जा सकता है। प्राकृतिक पदार्थोंके अणु-अणुका परिशीलन एवं विश्लेषण करना भी इस शास्त्रका लक्ष्य है। सासारिक समस्त व्यापार दिक्, देश और काल इन तीनके सम्बन्धसे ही परिचालित हैं, इन तीनके ज्ञान बिना व्यावहारिक जीवनकी कोई भी क्रिया सम्यक् प्रकार सम्पादित नहीं की जा सकती है। अतएव मुखारुरूपसे दैनदिनी कार्योंका सचालन करना ज्योतिषका व्यावहारिक उद्देश्य है। इस शास्त्रमे काल—समयको पुरुष—ब्रह्म माना है और ग्रहोंकी रश्मियोंके स्थितिवश इस पुरुषके उत्तम मध्यम, उदासीन एवं अधम ये चार अग विभाग किये हैं। त्रिगुणात्मक प्रकृतिके द्वारा निर्मित समस्त जगत सत्त्व, रज और तमोमय है। जिन ग्रहोंमें सत्त्वगुण अधिक रहता है उनकी किरणे अमृतमय ; जिनमे रजोगुण अधिक रहता है उनकी उभयगुण मिश्रित किरणे; जिनमें तमोगुण अधिक रहता है उनकी विषमय किरणें एवं जिनमे तीनो गुणोकी अल्पता रहती है, उनकी गुणहीन किरणें मानी गई है। ग्रहोके शुभाशुभत्वका विभाजन भी इन किरणोके गुणोंसे ही हुआ है। आकाशमे प्रतिक्षण अमृतरश्मि सौम्य ग्रह अपनी गतिसे जहाँ-जहाँ जाते है, उनकी किरणें भूमण्डलके उन-उन प्रदेशोंपर पडकर वहाँके निवासियोके स्वास्थ्य, बुद्धि आदिपर अपना सौम्य प्रभाव डालती है। विषमय किरणोंवाले क्रूर ग्रह अपनी गतिसे जहाँ गमन करते है, वहाँ वे अपने दुष्प्रभावसे वहाँके निवासियों-के स्वास्थ्य और बुद्धिपर अपना बुरा प्रभाव डालते है। मिश्रित रश्मि

ग्रहोके प्रभाव मिश्रित एवं गुणहीन रश्मियोंके ग्रहोका प्रभाव अकिञ्चित्कर होता है ।

उत्पत्तिके समय जिन-जिन रश्मिवाले ग्रहोकी प्रधानता होती है, जातकका स्वभाव वैसा ही बन जाता है । प्रसिद्धि भी है--

एते ग्रहा बलिष्ठाः प्रसूतिकाले नृणां स्वमूर्तिसमम् ।
कुर्युर्देहं नियतं बहवश्च समागता मिश्रम् ॥

अतएव स्पष्ट है कि ससारकी प्रत्येक वस्तु आन्दोलित अवस्थामे रहती है और हर वस्तुपर ग्रहोका प्रभाव पडता रहता है ।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र इन चारो वर्णोकी उत्पत्ति भी ग्रहोके-सम्बन्धसे ही होती है । जिन व्यक्तियोका जन्म कालपुरुषके उत्तमाङ्ग--अमृतमय रश्मियोके प्रभावसे होता है वे पूर्णबुद्धि, सत्यवादी, अप्रमादी, स्वाध्यायशील, जितेन्द्रिय, मनस्वी एव सच्चरित्र होते है, अतएव ब्राह्मण; जिनका जन्मकाल पुरुषके मध्यमाङ्ग--रजोगुणाधिक्य मिश्रित रश्मियोके प्रभावसे होता है वे मध्य बुद्धि, तेजस्वी, शूरवीर, प्रतापी, निर्भय, स्वाध्याय-शील, साधु-अनुग्राहक एवं दुष्टनिग्राहक होते है, अतएव क्षत्रिय; जिनका जन्म उदासीन अग--गुणत्रयकी अल्पतावाली ग्रह रश्मियोके प्रभावमे होता है वे उदासीन बुद्धि, व्यवसायकुशल, पुरुषार्थी, स्वाध्यायरत एवं सम्पत्ति-शाली होते है, अतएव वैश्य एवं जिनका जन्म अधमाङ्ग--तमोगुणाधिक्य रश्मिवाले ग्रहोके प्रभावसे होता है वे विवेकशून्य, दुर्बुद्धि, व्यसनी, सेवा-वृत्ति एव हीनाचरणवाले होते है अतएव शूद्र बताये गये है । ज्योतिषकी यह वर्णव्यवस्था वंशपरम्परासे आगत वर्णव्यवस्थासे भिन्न है, क्योकि हीन वर्णमें भी जन्मा व्यक्ति ग्रहोकी रश्मियोके प्रभावसे उच्चवर्णका हो सकता है ।

भारतीय ज्योतिर्विदोंका अभिमत है कि मानव जिस नक्षत्र-ग्रह वातावरणके तत्त्वप्रभाव विशेषमे उत्पन्न एवं पोषित होता है, उसमें

उसी तत्त्वकी विशेषता रहती है। ग्रहोंकी स्थितिकी विलक्षणताके कारण अन्य तत्त्वोंका न्यूनाधिक प्रभाव होता है। देशकृत ग्रहोंका संस्कार इस बातका द्योतक है कि स्थान विशेषके वातावरणमे उत्पन्न एव पुष्ट होने-वाला प्राणी उस स्थानपर पड़नेवाली ग्रह रश्मियोंकी अपनी निजी विशेषताके कारण अन्य स्थानपर उसी क्षण जन्मे व्यक्तिकी अपेक्षा भिन्न स्वभाव, भिन्न आकृति एवं विलक्षण शरीरावयववाला होता है। ग्रहरश्मियोका प्रभाव केवल मानवपर ही नही, बल्कि वन्य, स्थलज एवं उद्भिज आदिपर भी अवश्य पड़ता है। ज्योतिषशास्त्रमे मुहूर्त-- समय विधानकी जो मर्म-प्रधान व्यवस्था है, उसका रहस्य इतना ही है कि गगनगामी ग्रह-नक्षत्रोकी अमृत, विष एव उभय गुणवाली रश्मियोका प्रभाव सदा एकसा नही रहता,। गतिकी विलक्षणताके कारण किसी समयमें ऐसे नक्षत्र या ग्रहोका वातावरण रहता है, जो अपने गुण और तत्त्वोकी विशेषताके कारण किसी विशेष कार्यकी सिद्धिके लिये ही उपयुक्त हो सकते है। अतएव विभिन्न कार्योंके लिये मुहूर्त्तशोधन अन्धश्रद्धा या विश्वासकी चीज नही है, किन्तु विज्ञान सम्मत रहस्य पूर्ण है। हाँ, कुशल परीक्षकके अभावमे इन चीजोकी परिणाम-विषमता दिखलाई पड़ सकती है।

'ग्रहोके प्रनिष्ट प्रभावको दूर करनेके लिये जो रत्न धारण करनेकी परिपाटी ज्योतिषशास्त्रमे प्रचलित है, निरर्थक नहीं है। इसके पीछे भी विज्ञानका रहस्य छुपा है। प्रायः सभी लोग इस बातसे परिचित है कि सौरमण्डलीय वातावरणका प्रभाव पाषाणोके रंग-रूप, आकार-प्रकार, एवं पृथ्वी, जल, अग्नि आदि तत्त्वोंमेसे किसी तत्त्वकी प्रधानतापर पड़ता है। सम गुणवाली रश्मियोके ग्रहोसे पुष्ट और संचालित व्यक्तिको वैसी ही रश्मियोके वातावरणमें उत्पन्न रत्न धारण कराया जाय तो वह उचित परिणाम देता है। प्रतिकूल प्रभावके मानवको विपरीत स्वभावोत्पन्न रत्न धारण करा दिया जाय तो वह उसके लिये विषम हो जायगा।

स्वभावानुरूप रश्मि प्रभाव परीक्षणके पश्चात् तात्त्विक साम्य हो जानेपर रत्न सहजमे लाभप्रद हो सकता है।

तात्पर्य यह है कि ग्रहोके जिन तत्त्वोके प्रभावसे जो रत्न विशेष प्रभावित है, उसका प्रयोग उस ग्रहके तत्त्वके अभावमे उत्पन्न मनुष्यपर किया जाय तो वह अवश्य ही उस व्यक्तिको उचित शक्ति देनेवाला होगा। कृष्णपक्षमे उत्पन्न जिन व्यक्तियोको चन्द्रमाका अरिष्ट होता है अर्थात् जिन्हे चन्द्रबल या चन्द्रमाकी अमृत रश्मियोकी शक्ति उपलब्ध नही होती है, उनके शरीरमें केल्शियम––चूनेकी अल्पता रहती है। ऐसी अवस्थामे उक्त कमीको पूरा करनेके लिये चन्द्र प्रभाव जन्य मौक्तिक मणिका प्रयोग लाभकारी होता है। ज्योतिषी चन्द्रमाके कष्टसे पीड़ित व्यक्तिको इसी कारण मुक्ता धारण करनेका निर्देश करते है। अनुभवी ज्योतिर्विद् ग्रहोकी गतिसे ही शारीरिक और मानसिक विकारोका अनुमान कर लेते है। अतएव सिद्ध है कि ग्रहोंकी रश्मियोंका प्रभाव संसारके समस्त पदार्थोपर पड़ता है; ज्योतिषशास्त्र इस प्रभावका विश्लेषण करता है।

भारतीय ज्योतिषके लौकिक पक्षमें एक रहस्यपूर्ण बात यह है कि ग्रह फलाफलके नियामक नही है, किन्तु सूचक है। अर्थात् ग्रह किसीको सुख-दु.ख नही देते, बल्कि आनेवाले सुख, दु खकी सूचना देते है। यद्यपि यह पहले कहा गया है कि ग्रहोकी रश्मियोका प्रभाव पड़ता है, पर यहाँ इसका सदा स्मरण रखना होगा कि विपरीत वातावरणके होनेपर रश्मियोके प्रभावको अन्यथा भी सिद्ध किया जा सकता है। जैसे अग्निका स्वभाव जलानेका है, पर जब सूर्यकान्तमणि हाथमे ले ली जाती है, तो वही अग्नि जलानेके कार्यको नही करती, उसकी दाहक शक्ति सूर्यकान्तके प्रभावसे क्षीण हो जाती है। इसी प्रकार ग्रहोकी रश्मियोके अनुकूल और प्रतिकूल वातावरणका प्रभाव अनुकूल या प्रतिकूल रूपसे अवश्य पड़ता है। आजके कृत्रिम जीवनमे ग्रह रश्मियाँ अपना प्रभाव डालनेमें प्रायः असमर्थ रहती है। भारतीय दर्शन या अध्यात्मशास्त्रका यह सिद्धान्त भी उपेक्षणीय

नही कि अर्जित संस्कार ही प्राणीके सुख-दुःख, जीवन-मरण, विकास-ह्रास, उन्नति-अवनति प्रभृतिके कारण है। सस्कारोका अर्जन सर्वदा होता रहता है। पूर्व संचित संस्कारोंको वर्तमान सचित संस्कारोसे प्रभावित होना पड़ता है।

अभिप्राय यह है कि मनुष्य अपने पूर्वोपार्जित अदृष्टके साथ-साथ वर्तमानमे जो अच्छे या बुरे कार्य कर रहा है, उन कार्योका प्रभाव उसके पूर्वोपार्जित अदृष्टपर अवश्य पड़ता है। हाँ, कुछ कर्म ऐसे भी मजबूत हो सकते है जिनके ऊपर इस जन्ममें किये गये कृत्योका प्रभाव नही भी पड़ता है। उदाहरणके लिये एक कोष्ठबद्धताके रोगीको लिया जा सकता है। परीक्षाके बाद इस रोगीसे डाक्टरने कहा कि तुम्हारी कोष्ठबद्धता दस दिनके उपवास करनेपर ही ठीक हो सकती है। यदि इस रोगीको उपवास न कराके विरेचनकी दवा दे दी जाय तो वह दूसरे दिन ही मलके निकल जानेपर तन्दुरुस्त हो जाता है। इसी प्रकार पूर्वोपार्जित कर्मोकी स्थिति और उनकी शक्तिको इस जन्मके कृत्योके द्वारा सुधारा जा सकता है।

अतएव ज्योतिषका प्रधान उपयोग यही है कि ग्रहोके स्वभाव और गुणो द्वारा अन्वय, व्यतिरेक रूप कार्य कारण जन्य अनुमानसे अपने भावी सुख, दुःख प्रभृतिको पहलेसे अवगत कर अपने कार्योमे सजग रहना चाहिये; जिससे आगामी दुःखको सुखरूपमें परिणत किया जा सके। यदि ग्रहोंका फल अनिवार्य रूपसे भोगना ही पड़े, पुरुषार्थको व्यर्थ मानें तो फिर इस जीवको कभी मुक्तिलाभ हो ही नही सकेगा। मेरी तो दृढ धारणा है कि जहाँ पुरुषार्थ प्रबल होता है, वहाँ अदृष्टको टाला जा सकता है अथवा न्यून्य रूपमे किया जा सकता है। कही-कही पुरुषार्थ अदृष्टको पुष्ट करनेवाला भी होता है। लेकिन जहाँ अदृष्ट अत्यन्त प्रबल होता है और पुरुषार्थ न्यून रूपमे किया जाता है, वहाँ अदृष्टकी अपेक्षा पुरुषार्थ हीन पड जानेके कारण अदृष्टजन्य फलाफल अवश्य भोगने पड़ते है।

अतएव यह निश्चित है कि यह शास्त्र केवल आगामी शुभाशुभोकी सूचना देनेवाला है; क्योकि ग्रहोकी गतिके कारण उनकी विष एव अमृत रश्मियो-की सूचना मिल जाती है। इस सूचनाका यदि सदुपयोग किया जाय तो फिर ग्रहोके फलोका परिवर्तन करना कैसे असभव माना जा सकेगा ? इसलिये यह ध्रुव सत्य है कि ज्योतिष सूचक शास्त्र है विधायक नही। लौकिक दृष्टिसे इस शास्त्रका सबसे बडा यही रहस्य है।

भारतीय ज्योतिषके रहस्यको यदि एक शब्दमे व्यक्त किया जाय तो यही कहा जायगा कि चिरन्तन और जीवनसे सम्बद्ध सत्यका विश्लेषण करना ही इस शास्त्रका आभ्यन्तरिक मर्म है। ससारके समस्त शास्त्र जगत्के एक-एक अशका निरूपण करते है, पर ज्योतिष आन्तरिक एव बाह्य जगत्से सम्बद्ध समस्त ज्ञेयोका प्रतिपादन करता है। इसका सत्य दर्शनके समान जीव और ईश्वरमे ही सम्बद्ध नही है, किन्तु उससे आगेका भाग है। दार्शनिकोने निरश परमाणुको मानकर अपनी चर्चाका वही अन्त कर दिया, पर ज्योतिर्विदोने इस निरशको भी गणित द्वारा साश सिद्ध कर अपनी सूक्ष्मताका परिचय दिया है। कमलाकर भट्टने दार्शनिको द्वारा अभिमत निरश परमाणु पद्धतिका जोरदार खण्डन कर सत्यको कल्पनासे परेकी वस्तु बतलाया है। यद्यपि ज्योतिषका सत्य जीवन और जगत्से सम्बद्ध है, किन्तु अतीन्द्रिय है।

इन्द्रियो द्वारा होनेवाला ज्ञान अपूर्ण होनेके कारण कदाचित् ज्ञानान्तर-से बाधित हो सकता है। कारण स्पष्ट है कि इन्द्रियज्ञान अव्यवहित ज्ञान नही है, इसीसे इन्द्रियानुभूतिमे भेदका होना सभव है। ज्योतिषका ज्ञान आगम ज्ञान होते हुए भी अतीन्द्रिय ज्ञानके तुल्य सत्यके निकट पहुँचनेवाला है। इसके द्वारा मनकी विविध प्रवृत्तियोका विश्लेषण जीवनकी अनेक समस्याओंके समाधानको करता है। चित्तविश्लेषण शास्त्र फलित ज्योतिष-का एक भेद है। फलितांग जहाँ अनेक जीवनके तत्त्वोकी व्याख्या करता है, वहाँ मानसिक वृत्तियोका विश्लेषण भी। यद्यपि यह विश्लेषण साहित्य

और मनोविज्ञानके विश्लेषणसे भिन्न होता है, पर इसके द्वारा मानव जीवनके अनेक रहस्यो एव भेदोको अवगत किया जा सकता है ।

मानवके समक्ष जहाँ दर्शन नैराश्यवादकी धूमिल रेखा अकित करता है, वहाँ ज्योतिष कर्त्तव्यके क्षेत्रमे ला उपस्थित करता है । भविष्यको अवगत कर अपने कर्त्तव्यो द्वारा उसे अपने अनुकूल बनानेके लिये ज्योतिष प्रेरणा करता है । यही प्रेरणा प्राणियोके लिये दु खविघातक और पुरुषार्थ साधक होती है ।

पारमार्थिक दृष्टिसे परिशीलन करनेपर भारतीय ज्योतिषका रहस्य परमब्रह्मको प्राप्त करना है । यद्यपि ज्योतिष तर्कशास्त्र है, इसका प्रत्येक सिद्धान्त सहेतुक बताया गया है । पर तो भी इसकी नीवपर विचार करनेसे ज्ञात होता है कि इसकी समस्त क्रियाएँ विन्दु—शून्यके आधारपर चलती है, जो कि निर्गुण निराकार ब्रह्मका प्रतीक है । विन्दु दैर्घ्य और विस्तारसे रहित अस्तित्ववाला माना गया है । यद्यपि परिभाषाकी दृष्टिसे स्थूल है, पर वास्तवमे वह अत्यन्त सूक्ष्म, कल्पनातीत, निराकार वस्तु है । केवल व्यवहार चलानेके लिये हम उसे कागज या स्लेटपर अकित कर लेते है । आगे चलकर यही विन्दु गतिशील होता हुआ रेखा-रूपमे परिवर्तित होता है अर्थात् जिस प्रकार ब्रह्मसे 'एकोऽह बहुस्याम' कामनारूप उपाधिके कारण मायाका आविर्भाव हुआ है, उसी प्रकार विन्दुसे एक गुण—दैर्घ्यवाली रेखा उत्पन्न हुई है । अभिप्राय यह है कि भारतीय ज्योतिषमे विन्दु ब्रह्मका प्रतीक और रेखा मायाका प्रतीक है । इन दोनोके सयोगसे ही क्षेत्रात्मक, बीजात्मक एव अकात्मक गणितका निर्माण हुआ है । भारतीय ज्योतिषका प्राण यही गणितशास्त्र है ।

भारतीय अनेक दार्शनिकोने रेखागणित और बीजगणितकी क्रियाओ-का दार्शनिक दृष्टिसे विश्लेषण किया है । बीजगणितके समीकरण सिद्धान्तमे अलीकमिश्रणकी व्याख्या करते हुए कहा गया है कि अध्यारोप और अप-वाद विधिसे ब्रह्मके स्वरूपको—अध्यारोप निष्प्रपच ब्रह्ममे जगत्का

आरोप कर देना है और अपवाद विधिसे आरोपित वस्तुका पृथक्-पृथक् निराकरण करना होता है, इसीसे उसके स्वरूपको ज्ञात कर सकते हैं। तात्पर्य यह है कि प्रथमतः आत्माके ऊपर शरीरका आरोप कर लिया जाता है, पश्चात् साधना द्वारा आत्माको अन्नमय, मनोमय, विज्ञान और आनन्दमय इन पंचकोशों एवं स्थूल और सूक्ष्म कारण शरीरोंसे पृथक् कर उस आत्माका ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। उदाहरण—— $क^२+२क=३५$, यहाँ अज्ञात राशिका मूल्य निकालनेके लिये दोनों ओर कुछ जोड़ दिया जाय तो अज्ञात राशिका मूल्य ज्ञात हो जायगा। अतएव यहाँ एक संख्या जोड़ दी तो—— $क^२+२क+१=३५+१=(क+१)^२$ $=(६)^२$ . . $क+१=६$ $(क+१)-१=६-१$ . . $क=५$

इस उदाहरणमें पहले जो एक जोड़ा गया था, अन्तमें उसीको निकाल दिया। इसी प्रकार जिस शरीरका आत्माके ऊपर आरोप किया गया था, अपवाद द्वारा उसी शरीरको पृथक् कर दिया जाता है। इसी प्रकार दर्शनके प्रकाशमें बीजगणितके सारे सिद्धान्त आध्यात्मिक दिखलाई पड़ेंगे।

श्रद्धेय डा० भगवानदासजीने[१] रेखागणितकी प्रथम प्रतिज्ञाका विश्लेषण करते हुए कहा है कि यहाँ दो वृत्तोंका आपसमें जो सम्बन्ध बताया गया है, वह असीम, अनादि, अनन्त पुरुष और प्रकृतिके अभेद्य सम्बन्धका द्योतक है। लेकिन यहाँ अभेद्य सम्बन्ध ऐसा है जिससे इनका पृथक् होना भी सिद्ध है। इनके बीच रहनेवाला त्रिभुज मन, इन्द्रिय और शरीर अथवा सत्त्व, रजस् और तमोगुणसे विशिष्ट प्राणीका प्रतीक है। इसी कारण डाक्टर सा०ने लिखा है कि "मैथेमैटिक्स—गणितका सच्चा रहस्य भी तभी खुलेगा जब वह गुप्त-लुप्त अंशके प्रकाशमें जांची और जानी जायगी।"

ज्योतिषशास्त्रमें प्रधान ग्रह सूर्य और चन्द्र माने गये हैं। सूर्यको पुरुष

---

१ देखें दर्शनका प्रयोजन, पृ० ७१

और चन्द्रमाको स्त्री अर्थात् पुरुष और प्रकृतिके रूपमे इन दोनो ग्रहोको माना है। पाँच तत्त्व रूप भौम, बुध, गुरु, शुक्र एवं शनि बताये गये हैं। ये प्रकृति, पुरुष और तत्त्वोके सम्बन्धसे ही सारा ज्योतिश्चक्र भ्रमण करता है अतएव सक्षेपमें ही कहा जा सकता है कि पारमार्थिक दृष्टिमे भारतीय ज्योतिषशास्त्र अध्यात्मशास्त्र है।

ज्योतिषकी उपयोगिता

मनुष्यके समस्त कार्य ज्योतिषके द्वारा ही चलते है। व्यवहारके लिये अत्यन्त उपयोगी दिन, सप्ताह, पक्ष, मास, अयन, ऋतु, वर्ष एव उत्सव-तिथि आदिका परिज्ञान इसी शास्त्रसे होता है। यदि मानव समाजको इसका ज्ञान न हो तो धार्मिक-उत्सव, सामाजिक त्यौहार, महापुरुषोके जन्म दिन, अपनी प्राचीन-गौरव-गाथाका इतिहास प्रभृति किसी भी बातका ठीक-ठीक पता न लगा सकेगा और न कोई उचित कृत्य ही यथासमय सम्पन्न किया जा सकेगा। शिक्षित या सभ्य समाजकी तो बात ही क्या भारतीय अपढ कृषक भी व्यवहारोपयोगी ज्योतिष ज्ञानसे परिचित है, वह भलीभाँति जानता है कि किस नक्षत्रमे वर्षा अच्छी होती है, अत. कब बीज बोना चाहिये जिससे फसल अच्छी हो। यदि कृषक ज्योतिष-शास्त्रके उपयोगी तत्त्वोंको न जानता तो उसका अधिकाश श्रम निष्फल जाता।

कुछ महानुभाव यह तर्क उपस्थित कर सकते है कि आजके वैज्ञानिक युगमे कृषिशास्त्रके मर्मज्ञ असमयमे ही आवश्यकतानुसार वर्षाका आयोजन या निवारण कर कृषि कर्मको सम्पन्न कर लेते है; इस दशामे कृषकके लिये ज्योतिष ज्ञानकी आवश्यकता नही। पर उन्हे यह भूलना न चाहिये कि आजका विज्ञान भी प्राचीन ज्योतिषका एक लघु शिष्य ह। ज्योतिष शास्त्रके तत्त्वोसे पूर्णतया परिचित हुए बिना विज्ञान भी असमयमे वर्षाका आयोजन और निवारण नही कर सकता है। वास्तविक बात यह है कि

चन्द्रमा जिस समय जलचर राशि और जलचर नक्षत्रोंपर रहता है, उसी समय वर्षा होती है। **वैज्ञानिक प्रकृतिके रहस्यको** ज्ञातकर **जब चन्द्रमा जलचर नक्षत्रोंका भोग करता है**, वृष्टिका आयोजन कर लेता है। वराही-संहितामें भी कुछ ऐसे सिद्धान्त आये है जिनके द्वारा जलचर चान्द्र नक्षत्रोंके दिनोंमें वर्षाका आयोजन किया जा सकता है। प्राचीन मन्त्र शास्त्रमें जो वृष्टिके आयोजन और निवारणकी प्रक्रिया बताई गई है, उसमें जलचर नक्षत्रोंको आलोडित करनेका विधान है। साराश यह है कि वैज्ञानिक जलचर चन्द्रमाके तत्त्वोंको ज्ञातकर जलचर नक्षत्रोंके दिनोंमें उन तत्त्वोंका सयोजन कर असमयमें वृष्टि कार्यको कर लेता है। इसी प्रकार वृष्टिका निवारण जलचर चन्द्रमाके जलीय परमाणुओंके विघटन द्वारा सम्पन्न किया जा सकता है। प्राचीन ज्योतिषके अनन्यतम अग संहिताशास्त्रमें इस प्रकारकी चर्चाएँ भी आई है। भद्रबाहु संहिताके शुक्रचार अध्यायमें शुक्रकी गतिके अध्ययन द्वारा वृष्टिका निरूपण किया गया है। अतएव यह मानना पड़ेगा कि ज्योतिष तत्त्वोंकी जानकारीके बिना कृषिकर्म सम्यक्तया सम्पन्न करना संभव नहीं।

जहाजके कप्तानको ज्योतिषकी नित्य बडी आवश्यकता होती है; क्योंकि वे ज्योतिषके द्वारा ही समुद्रमें जहाजकी स्थितिका पता लगाते है। घड़ीके अभावमें सूर्य, चन्द्र, नक्षत्रोंके पिण्डोंको देखकर आसानीसे समयका पता लगाया जा सकता है। ज्योतिष-ज्ञानके अभावमें लम्बी यात्रा तय करना निरापद नहीं है, क्योंकि ज्योतिष-ज्ञानके द्वारा ही नये देशो और रेगिस्तानोंमें रास्ता निकाला जा सकता है तथा अक्षांश और देशान्तर-के द्वारा उस स्थानकी स्थिति और उसकी दिशा आदिका निर्णय किया जाता है। जहाँकी सीमा पैमायश द्वारा निश्चित नहीं की जा सकती है, वहाँ ज्योतिषके द्वारा प्रतिपादित अक्षाश और देशान्तरके आधारपर सीमाएँ निश्चित की गई है। भूगोलका अध्ययन तो इस शास्त्रके ज्ञानके बिना अधूरा ही समझा जायगा।

अन्वेषण कार्यको सम्पन्न करना भी ज्योतिष-ज्ञानके बिना सभव नही। आजतक जितने भी नवीन अन्वेषक हुए है वे या तो स्वय ज्योतिषी होते थे अथवा अपने साथ किसी ज्योतिषीको रखते थे। एक बार अमेरिकाके एक विद्वान्ने कहा था कि ग्रह-नक्षत्रोके ज्ञानके बिना नवीन देशका पता लगाना सभव नही। जहाँ आधुनिक वैज्ञानिक यत्र कार्य नही करते, अधिक गर्मी या सर्दीके कारण उनकी शक्ति क्षीण हो जाती है, वहाँ चन्द्र-सूर्यादि ग्रह-नक्षत्रोके ज्ञान द्वारा दिक्, देशका बोध सरलतापूर्वक किया जा सकता है।

किसी उच्चतम पहाडकी ऊँचाई और अति गम्भीर नदीकी गहराई-का ज्ञान ज्योतिषशास्त्रके द्वारा किया जा सकता है। शायद यहाँ यह शका की जाय कि पहाडकी ऊँचाई और नदीकी गहराई ; ज्ञान रेखा-गणितके द्वारा किया जाता है, ज्योतिषके द्वारा नही, पर गम्भीरतासे जन्म।द ...पर मालूम हो जायगा कि रेखागणित ज्योतिषका अभिन्न ...ह। प्राचीन ज्योतिर्विदोने रेखागणितके मुख्य सिद्धान्तोका निरूपण ईस्वी सन् ५वी और ६वी शताब्दीमे ही कर दिया है।

इतिहासको भी ज्योतिषने बडी सहायता पहुँचाई है। जिन बातोकी तिथिका पता अन्य साधनोके द्वारा नही लग सकता है, ज्योतिषके द्वारा सहजमें ही लगाया जा सकता है। यदि ज्योतिषशास्त्रका ज्ञान नही होता तो वेदकी प्राचीनता कदापि सिद्ध नही की जा सकती थी। श्रद्धेय लोक-मान्य तिलकने वेदोंमे प्रतिपादित नक्षत्र, अयन और ऋतु आदिके आधारपर ही वेदोका समय निर्धारित किया है। सूर्य और चन्द्र ग्रहणोंके आधारपर अनेक प्राचीन ऐतिहासिक तिथियाँ क्रम-बद्धकी जा सकती है।

भूगर्भसे प्राप्त विभिन्न वस्तुओका काल ज्योतिषशास्त्रके द्वारा जितनी सरलता और प्रामाणिकताके साथ निश्चित किया जा सकता है; उतना अन्य शास्त्रोंके द्वारा नही। एक बार श्री गौरीशकर हीराचन्द ओझाने

बताया था कि पुरातत्त्वकी वस्तुओंके यथार्थ समयको जाननेके लिये ज्योतिष-ज्ञानकी आवश्यकता है।

सृष्टिके रहस्यका पता भी ज्योतिषसे ही लगता है। प्राचीनकालसे ही भारतवर्षमें सृष्टि रहस्यकी छान-बीन करनेके लिये ज्योतिषशास्त्रका उपयोग किया जा रहा है। इसी कारण सिद्धान्त ज्योतिषके ग्रन्थोंमें सृष्टिका विवेचन अवश्य रहता है। प्रकृतिके अणु-अणुका रहस्य ज्योतिषमें बताया गया है जिससे प्रत्येक व्यक्ति सृष्टि-रहस्यको ज्ञात कर अपने कार्यों-का सम्पादन कर सकता है। जड़-चेतन सभी पदार्थोंकी आयु, आकार-प्रकार, उपयोगिता एवं उनके भेद-प्रभेदका जितना सुन्दर विज्ञान सम्मत कथन इस शास्त्रमें रहता है उतना अन्यमें नहीं।

आयुर्वेद तो ज्योतिषका चचेरा भाई है। ज्योतिषज्ञानके बिना औषधियोंका निर्माण यथासमय सम्पन्न नहीं किया जा सकता। कारण स्पष्ट है कि ग्रहोंके तत्त्व और स्वभावको ज्ञात कर उन्हींके अनुसार उसी तत्त्व और स्वभाववाली दवाका निर्माण करनेसे वह दवा विशेष गुणकारी होती है। जो भिषक् इस शास्त्रके ज्ञानसे अपरिचित रहते हैं वे सुन्दर और अपूर्व गुणकारी दवाओंका निर्माण नहीं कर सकते।

एक अन्य बात यह है कि इस शास्त्रके ज्ञान द्वारा रोगीकी चर्या और चेष्टाको अवगत कर बहुत कुछ अंशोंमें रोगकी मर्यादा जानी जा सकती है। संवेगरंगशाला नामक ज्योतिष ग्रन्थमें रोगीकी रोग मर्यादा जाननेके अनेक नियम आये हैं। अतएव जो चिकित्सक आवश्यक ज्योतिष तत्त्वों-को जानकर चिकित्सा कर्मको सम्पन्न करता है, वह अपने इस कार्यमें अधिक सफल होता है।

साधारण व्यक्ति भी इस शास्त्रके सम्यक् ज्ञानसे अनेक रोगोंसे बच सकते हैं; क्योंकि अधिकांश रोग सूर्य और चन्द्रमाके विशेष प्रभावोंसे उत्पन्न होते हैं। फायलेरिया रोग चन्द्रमाके प्रभावके कारण ही एकादशी और अमावस्याको बढ़ता है। ज्योतिर्विदोंका अनुमान है कि जिस प्रकार

चन्द्रमा समुद्रके जलमें उथल-पुथल मचा डालता है उसी प्रकार शरीरके रुधिर प्रवाहमें भी अपना प्रभाव डालकर निर्बल मनुष्योंको रोगी बना डालता है। अतएव ज्योतिष द्वारा चन्द्रमाके तत्त्वोंको अवगत कर एकादशी और अमावस्याको वैसे तत्त्वोंवाले पदार्थोंके सेवनसे बचनेपर फायलेरिया रोग छूट जाता है तथा निर्बल मनुष्य रोगोंके आक्रमणसे अपनी रक्षा कर सकता है।

इस शास्त्रकी सबसे बड़ी उपयोगिता यही है कि यह समस्त मानव-जीवनके प्रत्यक्ष और परोक्ष रहस्योंका विवेचन करता है और प्रतीकों द्वारा समस्त जीवनको प्रत्यक्ष रूपमें उस प्रकार प्रकट करता है जिस प्रकार दीपक अन्धकारमें रखी हुई वस्तुको दिखलाता है। मानवका व्यावहारिक कोई भी कार्य इस शास्त्रके ज्ञान बिना नहीं चल सकता है।

भारतीय-ज्योतिषका कालवर्गीकरण

किसी भी शास्त्र या विज्ञानका सम्यक् अध्ययन करनेके लिये उसका इतिहास जानना आवश्यक होता है; क्योंकि उस शास्त्रके इतिहास द्वारा तद्विषयक रहस्य समझमें आ जाते हैं। ज्योतिषशास्त्र सृष्टि और प्रकृतिके रहस्यको व्यक्त करनेवाला है। मानव प्रकृतिकी पाठशालामें सदासे इस शास्त्रका अध्ययन करता चला आ रहा है, अतः इस शास्त्रके उद्भव स्थान और कालका निश्चितरूपसे पता लगाना जरा टेढी खीर है। चाहे अन्य ज्ञानोंकी निर्झरिणीके आदि स्रोतका पता लगाना संभव हो, पर प्रकृतिके अनन्यतम अंग इस शास्त्रका छोर-पैड़ ढूँढना मानव शक्तिसे परे की बात है। अथवा दूसरे शब्दोंमें यह भी कहा जा सकता है कि जिस दिनसे मानवने होश सभाला उसी दिनसे उसने ज्योतिषके आवश्यक तत्त्वोंका अध्ययन करना शुरू कर दिया। भले ही वह इन तत्त्वोंको अभिव्यक्त करनेकी योग्यताके अभावमें दूसरोंको न बता सका हो, पर उसका

जीवन निर्वाह इन तत्त्वोके बिना हो नही सकता था, फलत मानव जीवनके विकासके साथ-साथ ज्योतिषका भी विकास हुआ।

कालवर्गीकरणकी दृष्टिसे इस शास्त्रके इतिहासको निम्न युगोमे विभक्त किया जा सकता है—

अन्धकार काल—ई० पू० १०००० वर्षके पहलेका समय
उदयकाल—ई० पू० १०००० —ई० पू० ५०० तक
आदिकाल—ई० पू० ४९९—ई० ५०० तक
पूर्वमध्यकाल—ई० ५०१—ई० १००० तक
उत्तरमध्यकाल—ई० १००१—ई० १६०० तक
आधुनिककाल—ई० १६०१—ई० १९४६ तक

उपर्युक्त कालोका वर्गीकरण ज्योतिषशास्त्रके विकासके आधारपर किया गया है। यो तो भारतीय सस्कृतिके इतिहासको भी उपर्युक्त वर्गोमे विभक्त किया जाता है, लेकिन यहाँपर ज्योतिषको अनादि निधन मानते हुए भी अभिव्यञ्जन प्रणालीके विकासपर [illegible] दृष्टि रखी गई है।

अन्धकार काल (ई० पू० १०००० के पहलेका समय)

यह पहले ही कहा जा चुका है कि ज्योतिषशास्त्रके जन्मका पता लगाना शक्ति गम्य नही है। यह मानव सृष्टिके समान अनादि है। ज्योतिषका सिद्धान्त है कि एक कल्पकालमे ४३२०००००० वर्ष होते है, सृष्टि आरम्भ होते ही सभी ग्रह अपनी-अपनी कक्षामे नियमित रूपसे भ्रमण करने लगते है। मानव सुदूर प्राचीनकालमे सृष्टिके अनन्तर बहुत समयतक लिपि रूप भाषा शक्तिसे रहित था। वह अपना काम चलानेके लिये केवल संकेतात्मक भाषाका ही प्रयोग करता था। विकासवाद बतलाता है कि आरम्भमे मनुष्य केवल नाद कर सकता था, इसी अस्पष्ट नाद द्वारा अपने सुख-दुःख, हर्ष-पीडा आदि भाव प्रदर्शित करता

था। जब अनुभव और अनुमानने परस्पर एक दूसरेकी सहायता कर मानव जातिकी विकसित परम्परा कायम कर दी तो सभाषण शक्तिका आविर्भाव हुआ। नादको निरन्तर उच्चारित कर विभिन्न भावों, विचारों और उनके भेदोंको क्रमश. प्रदर्शित करनेकी चेष्टा की गई। ज्ञानाभ्युदयके साथ-साथ नाद शक्ति भी वृद्धिगत होने लगी और धीरे-धीरे भावोंके साथ-साथ इंगित, चेष्टा और व्यक्तनादका आरम्भ हुआ। इसी बीचमें अनुकरणकी मात्राने प्रकृति प्रदत्त भाव और विचारोंके विनिमयमें पर्याप्त योग दिया, जिससे मानवने आजके समान सभाषण योग्यता प्राप्त की।

यहाँ इतना और स्मरण रखना होगा कि सभाषणकी भाषाके आविर्भूत होनेपर लिपिकी भाषा अभी प्राचीन मानवको अज्ञात थी। इस समय उसके सारे कार्य मौखिक ही चलते थे। वेद शब्दका अर्थ जो 'श्रुत' किया गया है वह भी इस बातका द्योतक है कि प्राचीन मानवका समस्त ज्ञानभाण्डार मुखाग्र था, उसमें उसके लिपिबद्ध करनेकी क्षमता नहीं थी।

मानवकी स्वाभाविक प्रवृत्तियोंका विश्लेषण करनेपर अवगत होगा कि 'क्यों' और 'कैसे' ये दो जिज्ञासाएँ उसकी प्रधान हैं। वह प्रत्येक वस्तुके आदि कारणकी खोज करता है और उसके सम्बन्धमें सभी अद्भुत बातोंको जाननेके लिये लालायित रहता है। जब तक उसकी यह ज्ञान-पिपासा शान्त नहीं होती उसे चैन नहीं पड़ता। फलत. आदि मानवके मस्तिष्कमें भी यत्किञ्चित् विकासके अनन्तर ही समय, दिशा और स्थान जिनके बिना उसका काम चलना कठिन ही नहीं, बल्कि असंभव था. के सम्बन्धमें क्यों और कैसे ये प्रश्न अवश्य उत्पन्न हुए होंगे तथा इन प्रश्नोंके उत्तर पानेकी भी उसने चेष्टा की होगी। यह निश्चित है कि किसीभी प्रकारके ज्ञानका स्रोत समय, दिशा और स्थानके ज्ञानके बिना प्रवाहित नहीं हो सकता है। इसलिये उक्त तीनों विषयोंका ज्ञान ज्योतिषके द्वारा सम्पन्न होनेपर ही अन्य विषयोंका ज्ञान मानवको हुआ होगा।

भारतकी अपनी निजी विशेषता आध्यात्मिक ज्ञानकी है और इसका

सम्पादन योग-क्रिया द्वारा प्राचीन कालसे होता चला आ रहा है। इस सिद्धान्तके अनुसार महाकुण्डलिनी नामकी शक्ति समस्त सृष्टिमे परिव्याप्त रहती है और व्यक्तिमे यही शक्ति कुण्डलिनीके रूपमे व्यक्त होती है। इसका विश्लेषण इस प्रकार समझना चाहिये कि पीठमें स्थित मेरुदण्ड सीधे जहाँ जाकर वायु और उपस्थके मध्य भागमे लगता है, वहाँ त्रिकोण चक्रमे स्वयभू लिग स्थित है। इस चक्रका अन्य नाम अग्निचक्र भी बताया गया है। इस स्वयंभू लिगको साढे तीन वलयोमें लपेटे सर्पकी तरह कुण्डलिनी अवस्थित है। इसके अनन्तर मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर अनाहत, विशुद्धाख्य और आज्ञा ये षट् चक्र क्रमशः ऊपर-ऊपर स्थित है। इन चक्रोको भेद करनेके बाद मस्तकमे शून्य चक्र है, जहाँ जीवात्माको पहुंचा देना योगीका चरम लक्ष्य होता है; इस स्थानपर सहस्रार चक्र होता है। प्राणवायुको वहन करनेवाली मेरुदण्डसे सम्बद्ध इड़ा, पिगला और सुषुम्ना ये तीन नाड़ियाँ है। इनमे इड़ा और पिगलाको सूर्य और चन्द्र भी कहा गया है। सुषुम्नाके भीतर वज्रा, चित्रिणी और ब्रह्मा ये तीन नाड़ियाँ कुण्डलिनी शक्तिका वास्तविक मार्ग है। साधक—नाना प्रकारके साधनो द्वारा कुण्डलिनी शक्तिको उद्बुद्ध कर स्फोट—नाद करता है। इस नादसे सूर्य, चन्द्र और अग्नि रूप प्रकाश होता है। इस प्रकार योगी लोग व्यक्तिके अन्दर रहनेवाली कुण्डलिनीको महाकुण्डलिनीमे मिलानेका प्रयत्न करते है।

उपर्युक्त योग-ज्ञान केवल आध्यात्मिक ही नही, प्रत्युत ज्योतिष विषयक भी है। उक्त योगबलसे भारतियोंने अपने भीतरके रहनेवाले सोरजगत्को पूर्णतया ज्ञात कर और उसकी तुलना निरीक्षण द्वारा आकाशमण्डलीय सौरजगत्से कर अनेक ज्योतिषके सिद्धान्त निकाले, जो बहुत काल तक मौखिक रूपमे अवस्थित रहे।

अनुभव भी बतलाता है कि मानवने अपनी आवश्यकताकी पूर्त्तिके लिये सबसे प्रथम स्थान, दिक् और काल इन तीनके सम्बन्धमे जानकारी

प्राप्त की होगी। क्योंकि किसीसे भी पूछा जाय कि अमुक वस्तु कहाँ स्थित है, तो वह यही उत्तर देगा कि अमुक दिशामें है। अमुक घटना कब घटी ? तो वह यही कहेगा कि अमुक समयमें। अभिप्राय यह है कि अमुक स्थानसे इतना पूर्व, अमुकसे इतना दक्षिण, इतने बजकर इतने मिनटपर अमुक कार्य हुआ, इतना बतला देनेपर उस कार्य विषयक स्वाभाविक जिज्ञासा शान्त हो जाती है। ज्योतिष द्वारा उक्त विषयोंका ज्ञान प्राप्त करना ही साध्य माना गया है। इसलिए उदयकालमें जब ज्योतिषके सिद्धान्त लिपिबद्ध किये जा रहे थे, इसकी बडी प्रशंसा की गई है। स्थान एवं काल-बोधक शास्त्र होनेके कारण इसे जीवनका अभिन्न अंग बतलाया गया है।

यद्यपि अन्धकार युगका ज्योतिष विषयक साहित्य उपलब्ध नहीं है, पर तो भी इतना तो मानना ही पडेगा कि उस कालका मानव दिन, रात, पक्ष, मास, अयन और वर्ष आदि कालाङ्गोंसे पूर्ण परिचित था। इस जानकारीके साथ-साथ ही उसे कालको प्रकट करनेवाले चन्द्र, सूर्यका बोध भी अवश्य रहा होगा। लिखित प्रमाणोंके अभावमें इस युगमें आकाश-मण्डल मानवकी दृष्टिसे ओझल रहा हो, यह माननेकी बात नहीं है। इस पृथ्वीपर जन्म लेते ही उसने अपनी चक्षुओंके द्वारा आकाशका रहस्य अवश्य ज्ञात किया होगा। प्राणिशास्त्र बतलाता है कि आदि मानव अपने योग और ज्ञान द्वारा आयुर्वेद एवं ज्योतिषशास्त्रके मौलिक तत्त्वोंको ज्ञातकर भौतिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओंकी पूर्ति करता था।

अन्धकार कालकी ज्योतिष विषयक मान्यताओंका पता उदयकाल और आदिकालके साहित्यसे भी लग जाता है। सर्वप्रथम यहाँ वैदिक मान्यताके आधारपर इस कालका समर्थन किया जायगा।

वैदिक दर्शनमें सृष्टिका सृजन और विनाश माना गया है। इसके अनुसार सृष्टिके बन जानेके अनन्तर ही मनुष्य ग्रह, नक्षत्रोंका अध्ययन करना शुरू कर देता है और ज्योतिषके आवश्यक जीवनोपयोगी तत्त्वोंको ज्ञातकर अपनी ज्ञानराशिकी वृद्धि करता है। भाषा शक्ति भी जगन्नियन्ता

द्वारा उसे प्राप्त हो जाती है तथा भाव और विचारोको अभिव्यक्त करनेकी क्षमता भी साधारणतया आ जाती है। परन्तु इतनी विशेषता है कि अभिव्यञ्जनाका विकास एकाएक नही होता, बल्कि धीरे-धीरे विकसित हो इसी प्रणालीसे साहित्यका जन्म होता है।

जबसे मनुष्यने चिन्ता करना आरम्भ किया तभीसे उसकी वाक्शक्ति, कल्पना और बुद्धि उसके रहस्योद्घाटनके लिये प्रवृत्त हुई है। शास्त्रोमे बताया गया है कि परिदृश्यमान विश्व एक समय प्रगाढ अन्धकारसे आच्छादित था। उस समयकी अवस्थाका पता लगाना कठिन है, किसी भी लक्षण द्वारा उसका अनुमान करना सभव नही। उस समय यह तर्क और ज्ञानसे अतीत होकर प्रगाढ निद्रामे अभिभूत था। अनन्तर स्वयम्भू अव्यक्त भगवान् महाभूतादि चौबीस तत्त्वोमे इस ससारको प्रकट कर तमोभूत अवस्थाके विध्वसक हो प्रकट हुए। सृष्टिकी कामनासे इस स्वय शरीरी भगवान्ने अपने शरीरसे जलकी सृष्टि की और उसमे बीज डालकर सुवर्ण सदृश तेजोमय एक अडा निकाला। उस अडेमे भगवान्ने स्वय पितामह ब्रह्माके रूपमे जन्म ग्रहण किया। इसके पश्चात् ब्रह्माने अपने ध्यानबलसे इस ब्रह्माण्डको दो खण्डोमें विभक्त कर दिया। ऊर्ध्व खण्डमे स्वर्गादि लोक, अधोखण्डमे पृथिव्यादि तथा मध्यदेशमे आकाश, अष्टदिक् और समुद्रोकी सृष्टि की। इसके अनन्तर मानव आदि प्राणी तथा उनमे मन, विषय ग्राहक इन्द्रियाँ, अनन्त कार्यक्षमता अहकार आदिका सृजन किया। साराश यह कि 'अडे'के भीतरसे जब भगवान् निकले तब उनके सहस्र सिर, सहस्र नेत्र, और सहस्र भुजाएँ थी। ये ही उस मानव सृष्टिके रूपमे प्रकट हुए जो सृष्टि असीम, अनन्त और विराट् थी। इस विश्वको भगवान्का द्वितीय रूप कहा गया है, जिसके दोनो चक्षु चन्द्र और सूर्य बताये गये है।

उपर्युक्त सृष्टि निर्माणके विश्लेषणसे स्पष्ट है कि मानवको जिस समय इन्द्रियाँ और मन प्राप्त हुए उसी समय उसे सृष्टि रहस्यको व्यक्त

करनेवाले ज्योतिष-तत्त्व भी ज्ञात हो गये थे। चाहे उपर्युक्त सृष्टि तत्त्व शास्त्ररूपमे सहस्रो वर्षोके बाद आया हो, पर सृष्टि रचनाके साथ ही विश्वस्रष्टाने उनके साथ मानवका सम्बन्ध स्थापित कर दिया था, जिसमे आवश्यक ज्योतिष विषयक सिद्धान्त उसे उसी समय ज्ञात हो चुके थे।

जैन मान्यताकी दृष्टिसे विचार करनेपर अन्धकार कालके ज्योतिष तत्त्वपर बडा सुन्दर प्रकाश पडता है। इस मान्यताके अनुसार यह ससार अनादि कालसे ऐसा ही चला आ रहा है, इसमे न कोई नवीन वस्तु उत्पन्न होती है और न किसीका विनाश ही होता है, केवल वस्तुओंकी पर्याये बदला करती है। इस ससारका कोई स्रष्टा नही है, यह स्वय सिद्ध है। किन्तु भारत और ऐरावत क्षेत्रमे अवसर्पिणी कालके अन्तमे खण्ड प्रलय होती है जिसमे कुछ पुण्यात्माओंको जो विजयार्द्धकी गुफाओमे छिप गये थे, छोड़ शेष सभी जीव नष्ट हो जाते है। उत्सर्पिणीके दु:षमा-दु षमा नामक प्रथम कालमे जल, दूध और घीकी वृष्टिसे जब पृथ्वी चिकनी रहने योग्य हो जाती है तो वे बचे हुए जीव आकर बस जाते है और फिर उनका ससार चलने लगता है।

जैन मान्यतामे बीस कोडाकोडी अद्धा[1] सागरका एक कल्पकाल बताया गया है। इस कल्पकालके दो भेद है—एक अवसर्पिणी और दूसरा उत्सर्पिणी। अवसर्पिणी कालके सुषमा-सुषमा, सुषमा, सुषमा-दु:षमा, दु:षमा-सुषमा, दु षमा और दु षमा-दु षमा ये छ. भेद तथा उत्सर्पिणीके दु षमा-दु षमा, दु षमा, दु.षमा-सुषमा, सुषमा-दु.षमा, सुषमा और सुषमा-सुषमा ये छ: भेद माने गये है। सुषमा-सुषमाका प्रमाण चार कोड़ाकोड़ी सागर, सुषमाका तीन कोडाकोडी सागर, सुषमा-दु षमाका दो कोड़ाकोड़ी सागर, दु:षमा-सुषमाका ४२ हजार वर्ष कम एक कोडाकोड़ी सागर, दु.षमाका २१ हजार वर्ष एव दु.षमा-दु षमाका २१ हजार वर्ष होता है। प्रथम और

---

१ यह अरब-खरबकी संख्यासे कई गुना अधिक होता है।

द्वितीय कालमें भोगभूमि[1]की रचना, तृतीय कालके आदिमें भोगभूमि और अन्तमें कर्मभूमिकी रचना रहती है। इस तृतीय कालके अन्तमें १४ कुलकर उत्पन्न होते है जो प्राणियोंको विभिन्न प्रकारकी शिक्षाएं देते है।

प्रथम कुलकर प्रतिश्रुतिके समयमें जब मनुष्यको सूर्य और चन्द्रमा दिखलाई पडे तो वे इनसे सशकित हुए और अपनी शंका दूर करनेके लिये इनके पास गये। इन्होंने सूर्य और चन्द्रमा सम्बन्धी ज्योतिष विषयक ज्ञानकी शिक्षा दी। जिससे इनके समयके मनुष्य इन ग्रहोके ज्ञानसे परिचित होकर अपने कार्योंका सचालन करने लगे। इसके पश्चात् द्वितीय कुलकरने नक्षत्र विषयक शंकाओका निराकरण कर अपने युगके व्यक्तियो-को आकाश मण्डलकी समस्त बाते बतलाई।[2]

उपर्युक्त विवेचनसे स्पष्ट है कि जैन मान्यताके अनुसार इस कल्पकालमें आजसे अरब-खरब वर्षो पहले ज्योतिष-तत्त्वोकी शिक्षाएँ दी गई थी। उपलब्ध जैन साहित्य भले ही इतना प्राचीन न हो, पर उसके तत्त्व मौखिक रूपमें खरबो वर्ष पहले विद्यमान थे। आजका इतिहास भी जैनधर्मका अस्तित्व प्राक् ऐतिहासिक कालमें स्वीकार करता है। इस धर्मके सिद्धान्तोको व्यक्त करनेवाली प्राकृत भाषा ही इस बातका ज्वलन्त

---

१ जहाँ भोजन, वस्त्र आदि समस्त आवश्यकताकी चीजें कल्पवृक्षोंसे प्राप्त होती है, वह भोगभूमि कहलाती है। इस कालमें बालक ४९ दिनमें युवावस्थाको प्राप्त हो जाता है और आयु अपरिमित कालकी होती है। इस युगमें मनुष्यको योगक्षेमके लिये किसी प्रकारका श्रम नहीं करना पड़ता है।

२ इणससितारावदविभयं दंडादिसीमचिण्हकादिं।
तुरगादिवाहणं सिसुमुइदंसण णिब्भयं वेत्ति॥
—त्रि० सा० गा० ७९९

प्रमाण है कि यह धर्म प्राणियोंका नैसर्गिक धर्म है। प्रागैतिहास कालके क्षत्रिय इस धर्मके आराधक थे और वे आध्यात्मिक विद्यासे पूर्ण परिचित थे। छान्दोग्य उपनिषद्में एक कथा आई है, जिसमें बताया है कि अरुणके पुत्र श्वेतकेतु पाञ्चालोकी परिषद्में गये और वहाँ क्षत्रिय राजा प्रवण जैबालिने उनसे जीवकी उत्क्रान्ति, परलोक गति और जन्मान्तरके सम्बन्धमें पाँच प्रश्न किये; किन्तु श्वेतकेतु उनमेंसे किसी प्रश्नका उत्तर नहीं दे सका। इसके पश्चात् श्वेतकेतु अपने पिताके पास आया और जैबालि द्वारा पूछे गये प्रश्नोंका उत्तर उनसे चाहा, पर पिता भी उन प्रश्नोंका उत्तर नहीं दे सके। अतएव दोनों मिलकर जैबालिके पास गये और उनसे प्रश्नोंका उत्तर पूछा—

स ह कृच्छ्री बभूव। तं ह चिरं वस इत्याज्ञापयाञ्चकार। तं हो वाच यथा मा त्वं गौतमावदो यथेयं न प्राक् त्वत्तः पुरा विद्या ब्राह्मणान् गच्छति।

अर्थात्—गौतमकी प्रार्थना सुनकर राजा चिन्तित हुआ और उसने ऋषिसे कुछ समय ठहरनेको कहा और प्रश्नोंका उत्तर देना आरंभ किया—हे गौतम! आप मुझसे जो विद्या प्राप्त करना चाहते हैं, वह आपसे पहले किसी ब्राह्मणको प्राप्त नहीं हुई है।

बृहदारण्यक उपनिषद्के निम्न मंत्रसे भी इसका समर्थन होता है—

इयं विद्या इतः पूर्वं न कस्मिंश्चित् ब्राह्मणे उवास तां त्वहं तुभ्यं वक्ष्यामि।—बृ० उ० ६।२।८

अतएव स्पष्ट है कि आध्यात्मिक ज्ञानकी धाराके समान जैन ज्योतिषकी धारा भी अन्धकार कालमें विकसित थी। इसलिये उदयकालके जैन साहित्यमें ग्रह, नक्षत्रोंका अत्यन्त सुस्पष्ट कथन मिलता है।

अन्धकार युगके ज्योतिष विषयक साहित्यके अभावमें भी इतना तो मानना ही पड़ेगा कि उस कालमें ज्योतिष विकसित अवस्थामें था। भारतीय ऋषियोंने दिव्य ज्ञान शक्ति द्वारा आकाश मण्डलके समस्त

तत्त्वोंको ज्ञात कर लिया था और जैसे-जैसे आगे जाकर अभिव्यञ्जनाकी प्रणाली विकसित होती गई, ज्योतिष तत्त्व साहित्य द्वारा प्रकट होने लगे। अतएव अन्धकार कालमे ज्योतिषके महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त खूब पल्लवित और पुष्पित थे। मेरा तो अनुमान है कि दैनिक कार्योके सम्पादनार्थ उपयोगी पाक्षिक तिथिपत्र भी उस समय काममे लाये जाते थे। उस युगके प्रत्येक व्यक्तिको ग्रह, नक्षत्रोका इतना ज्ञान था, जिससे वह केवल आकाशको देखकर ही समय और दिशाको ज्ञात कर लेता था। उदयकालमें जिन ज्योतिष सिद्धान्तोको साहित्यिक रूप प्रदान किया गया है, वे अन्धकार कालमें मौखिक रूपमे वर्तमान थे।

उदय काल (ई० पू० १०००००—ई० पू० ५०० तक)

उदयकालमे समस्त ज्ञानभाण्डार एक रूपमे था, इस युगमे विषयोकी दृष्टिसे यह विभिन्न अगोमे विभक्त नही हुआ था। इसलिये उस कालका ज्योतिष साहित्य पृथक् नही मिलता है, बल्कि अन्य विषयोके साथ सन्निविष्ट है। प्राचीन मानव ज्योतिषको भी धर्म मानता था; उस युगमे व्यक्ति और समाजके सारे कार्य एक ही नियमपर चलते थे; अतः धर्म, दर्शन और ज्योतिष ये भेद साहित्यमे प्रस्फुटित नही हुए थे तथा सब विषयोका साहित्य एक साथ ही रहता था।

कुछ लोगोका कहना है कि उदयकालके पूर्वमें आर्य लोग भारतमे उत्तरी ध्रुवसे आये थे और यहाँ वस जानेके पश्चात् उन्होने वेद, वेदाङ्ग आदि साहित्यकी रचना की। लेकिन विचार करनेपर अवगत होगा कि अन्धकार युगमें उत्तरी ध्रुव उस स्थानपर था, जिसे आज बिहार और उड़ीसा कहते है। वह भारतके बाहर नही था। आधुनिक प्राणी शास्त्रके ज्ञाताओंने अनुसन्धान कर प्रमाणित किया है कि उत्तरी ध्रुव स्थिर नही है तथा अपने प्राचीन स्थानसे पूर्व, पश्चिम और उत्तरकी ओर चलते

हुए वर्तमान स्थितिको प्राप्त हुआ है। अतएव यह माननेमे हमे तनिक भी सकोच नही कि प्राचीन आर्य उत्तरी ध्रुव स्थानमे रहते थे और यह प्रदेश भारतके अन्तर्गत ही था। आर्योने उदयकालमें अपने गौरवपूर्ण वैदिक साहित्यको जन्म दिया। यद्यपि वेद, आरण्यक ब्राह्मण, द्वादशाङ्ग, प्रकीर्णक और उपनिषद् आदि धार्मिक रचनाएँ मानी जाती है, पर इनमें ज्योतिष, आयुर्वेद, शिल्प आदि विषयोकी चर्चाएँ पर्याप्त मात्रामे मौजूद है। उदयकालके साहित्यमे मास, ऋतु, अयन, वर्ष, युग, ग्रह, ग्रहण, ग्रहवक्षा, नक्षत्र, त्रिपुव, नक्षत्र-लग्न, दिन-रातका मान और उसकी वृद्धि हानि आदि विषयोका विचार ज्योतिषकी दृष्टिमे किया जाने लगा था। वेदोमे प्रतिपादित ज्योतिष चर्चाकी अपेक्षा शतपथ ब्राह्मण, बृहदारण्यक, तैत्तिरीय ब्राह्मण, ऐत्तिरीय ब्राह्मण आदि ग्रन्थोमे विकसित रूपसे उपलब्ध है। इन ग्रन्थोमे ज्योतिषके सिद्धान्तोका व्यावहारिक और शास्त्रीय इन दोनो दृष्टिकोणोसे प्रतिपादन किया है। ऋग्वेदके समयमे दिनको केवल कामचलाऊ समयके रूपमे माना जाता था, पर ब्राह्मण और आरण्यकोके समयमे उसका ज्योतिषकी दृष्टिसे विवेचन होने लग गया था। दिनकी वृद्धि कैसे और कब होती है तथा वह कितना बडा होता है, आदि बातोकी शास्त्रीय मीमान्सा होने लग गई थी।

इस कालकी ज्ञानिराशिपर दृष्टिपात करनेसे ज्ञात होता है कि सूर्य और चन्द्रमाके अतिरिक्त भौमादि पाँच ग्रह भी ज्योतिष विषयक साहित्यके विषय बन गये थे। जैन अग साहित्यमे नवग्रहोका स्पष्ट उल्लेख भी ईस्वी सन्से सहस्रों वर्ष पूर्व होने लग गया था। यद्यपि उपलब्ध द्वादशाङ्ग इतना प्राचीन नही है, लेकिन उसकी परम्परा अविच्छिन्न रूपसे बहुत पहलेसे चली आ रही थी। भगवान् महावीर स्वामीके निर्वाणके अनन्तर उनके उपदेशानुसार द्वादशाङ्ग साहित्यमे सशोधन और परिवर्द्धन किये गये थे तथा अग साहित्यका एक नवीन सस्करण तैयार किया गया था।

उदयकालकी ज्योतिष परम्परामें स्वतन्त्र रूपसे इस विषयकी रचनाएँ नही मिलती है। पर अन्य विषयोंके साथ जितना इस विषयका साहित्य है, उसका सकलन किया जाय तो खासा साहित्य इस युगका तैयार हो सकता है।

इस युगमें ज्योतिषके भेद, प्रभेद भी आविर्भूत नही हुए थे, केवल सामान्य ज्योतिष शब्दसे इस शास्त्रके ग्रह, नक्षत्रोंके गणित और उनके फल ग्रहीत होते थे।

ईस्वी सन्‌से पाँच सौ वर्ष पूर्वमें रचे गये प्राचीन जैन आगममें ज्योतिषीके लिये 'जोईसगविउ' शब्द आया है। भाष्यकारोंने इस शब्दका अर्थ ग्रह, नक्षत्र, प्रकीर्णक और ताराओंके विभिन्न विषयक ज्ञानके साथ राशि और ग्रहोंकी सम्यक् स्थितिके ज्ञानको प्राप्त करना, किया है। अतएव स्पष्ट है कि उदयकालमें राशिचक्र, नक्षत्रचक्र और ग्रहचक्रका प्रचार था।

प्रत्येक कालमें ज्योतिषके ऊपर देशकी परिस्थिति और राजनीतिका प्रभाव पडता रहता है। प्रस्तुत उदयकालीन ज्योतिष भी उपर्युक्त परिस्थितियोंसे अछूता नही है। उस समयकी प्रजातन्त्र प्रणालीका प्रभाव ज्योतिष पर गहरा पड़ा है। फलतः फल प्रतिपादक ग्रह और नक्षत्रोंको समान रूपमें स्वीकार किया गया है। जब तक भारतमें कौटिल्य नीतिका प्रचार नही हुआ तब तक मित्रत्व, शत्रुत्व, उच्चत्व और नीचत्व आदि दृष्टियोंसे फल प्रतिपादनकी प्रणालीका प्रचलन इस शास्त्रमें नही हुआ है। उदयकालमें केवल ग्रहोंकी योग्यताकी दृष्टिसे फल प्रक्रिया प्रचलित थी। इस प्रक्रियाका समर्थन विषुवकथनकी प्रणालीसे होता है।

अतः यह निर्विवाद सिद्ध है कि इस युगमें ज्योतिषने साहित्य-रूपमें जन्म ही नही लिया था, बल्कि वह अपने शैशवकालके साथ अठखेलियाँ करता हुआ अपनी किशोर अवस्थाको प्राप्त हो रहा था।

उदयकालीन ज्योतिष-सिद्धांत

वैदिक साहित्य विविध विषयोंका अथाह समुद्र है, इसमें धार्मिक सिद्धान्तोंके साथ-साथ ज्योतिषके अनेक सिद्धान्त चमत्कारिक ढंगसे बताये गये है। ऋग्वेदमें वर्षको १२ चान्द्रमासोंमें विभक्त किया है तथा प्रत्येक तीसरे वर्ष चान्द्र और सौर वर्षका समन्वय करनेके लिये एक अधिकमास ——मलमास जोड़ा करते थे। एक स्थानपर ऋग्वेदमें वर्षके १२ माह, ३६० दिन और ७२० रात्रि-दिन——३६० रात्रि+३६० दिनका वर्णन करते हुए लिखा है——

द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत।
तस्मिन्त्साकं त्रिशता न शंकवोऽर्पिताः षष्टिर्न चलाचलासः॥

——ऋक० सं० १, १६४. ४८

तैत्तिरीय संहितामें १२ महीनोंके नाम मधु, माधव, शुक्र, शुचि, नभस्, नभस्य, इष, ऊर्ज, सहस, सहस्य, तपस् एव तपस्य आये है।

मास विचार

इसी प्रकरणमें समर्प अधिमासका द्योतक और अहंस्पति क्षयमासका द्योतक भी आया है। पद्य निम्न प्रकार है——

मधुश्च माधवञ्च शुक्रश्च नभश्च नभस्यश्चेषश्चोर्जश्च सहश्च।
सहस्यश्च तपश्च तपस्यश्चोपयामगृहीतोऽसि स ँसर्वोस्य ँहस्पत्याय
त्वा॥——तै० सं० १. ४. १४

ऋग्वेदमें चान्द्रमास और सौरवर्षकी चर्चा कई स्थानोंपर आई है। इससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि चान्द्र और सौरका समन्वय करनेके लिये अधिमासकी कल्पना ऋग्वेदके समयमें प्रचलित थी।

प्रश्न व्याकरणाङ्गमें बारह महीनोंकी बारह पूर्णमासी और अमावास्याओंके नाम और उनके फल निम्न प्रकार बताये है——

ता कहंते पुण्णमासी आहितेति वदेज्जा तत्थ खलु इमातो बारस पुण्णमासीओ बारस अमावसाओ पण्णत्ताओ तंजहा सविट्ठी, पोट्ठवती, आसोइ, कत्तिया, मगसिरा, पोसी, माही, फग्गुणी, चेत्ती, विसाही जेट्ठामुला असाढी ॥

प्र० व्या० १०.६

अर्थात्—श्रावण मासकी श्रविष्ठा, भाद्रपदकी पौष्टवती, आश्विनकी असोई, कार्त्तिककी कृत्तिका, मार्गशीर्षकी मृगशिरा, पौषकी पोषी, माघकी माघी, फाल्गुनकी फाल्गुनी, चैत्रकी चैत्री, वैशाखकी विशाखी, ज्येष्ठकी मूली एव आषाढकी आषाढी पूर्णिमा बताई गई है। कहीं-कहीं पूर्ण-मासियोके नामोके आधारपर मासोके नाम भी आये है।

ऋतुविचार

उदयकालमे ऋतु विचार किया जाता था। ई० पू० ८०००मे वसन्त ऋतु ही प्रारम्भिक ऋतु मानी जाती थी, किन्तु ई० पू० ५००मे प्रारम्भिक ऋतु वर्षा ऋतु मानी जाने लगी थी। तैत्तिरीय सहितामे कहा गया है—

मधुश्च माधवश्च वासंतिकावृतू शुक्रश्च शुचिश्च ग्रैष्मावृतू नभश्च नभस्यश्च वार्षिकावृतू इषश्चोर्जश्च शारदावृतू सहश्च सहस्यश्च हैमंतिकावृतू तपश्च तपस्यश्च शैशिरावृतू ॥—तै० सं० ४.४.११

अर्थात्—मधु और माधव वसन्त ऋतु, शुक्र और शुचि ग्रीष्म ऋतु, नभस् और नभस्य वर्षा ऋतु, इष और ऊर्ज शरद ऋतु, सहस और सहस्य हेमन्त ऋतु एव तपस और तपस्य शिशिर ऋतुवाले मास है।

ऋग्वेदमें ऋतु शब्द कई स्थानोंपर आया है पर वहाँ इस शब्दका प्रयोग वर्षके अर्थमे हुआ है। ऐतरिय ब्राह्मणमे पाँच ही ऋतु आई है। उसमे हेमन्त और शिशिर इन दोनोको एक ही रूपमें माना है—

द्वादशमासाः पंचर्तवो हेमन्तशिशिरयोः समासेन।

—ऐ० ब्रा० १,१

तैत्तिरीय ब्राह्मणमे ऋतुओका उल्लेख करते हुए बताया गया है—

तस्य ते वसन्तः शिरः। ग्रीष्मो दक्षिणः पक्षः। वर्षाः पुच्छँ। शरदुत्तरः पक्षः। हेमन्तो मध्यं ॥––तै० ब्रा० ३.१०.४.१

अर्थात्––वर्षका सिर वसन्त, दाहिना पख ग्रीष्म, बायां पंख शरद, पूंछ वर्षा और हेमन्तको मध्य भाग कहा गया है। तात्पर्य यह है कि तैत्तिरीय ब्राह्मण कालमे वर्षको पक्षीके रूपमे माना गया है और ऋतुओको उसका विभिन्न अग बतलाया है।

तैत्तिरीय सहितामे ऋतुका एक पात्र रूपमे वर्णन करते हुए बताया गया है कि––

उभयतोमुखमृतुपात्रं भवति कोट्टि तद्वेद यदृतूनां मुखम्।

––तै० सं० ६.५.३

तात्पर्य यह है कि ऋतु पात्रके दोनो ओर मुख रहते है। लेकिन इन मुखोकी दिशाका ज्ञान करना कठिन है। ऋतुकी स्थिति सूर्यपर निर्भर है। एक वर्षमे सौरमासका आरम्भ चान्द्रमासके आरम्भके साथ ही होता है। प्रथम वर्षके सौरमासका आरम्भ शुक्लपक्षकी द्वादशी तिथिको और आगे आनेवाले तीसरे वर्षमे सौरमासका आरम्भ कृष्णपक्षकी अष्टमीको बताया गया है। साराश यह है कि सर्वदा सौरमास और चान्द्रमासका आरम्भ एक तिथिको न होनेके कारण ऋतु आरम्भकी तिथि अनियमित है। पूर्व वैदिक युगमे वर्षा ऋतुका आरम्भ निरयन मृगशिर नक्षत्रके आरम्भके कुछ पूर्व या उत्तर माना जाता था।

शतपथ ब्राह्मणमे निम्न आख्यायिका आई है, जिससे ऋतुके सम्बन्धमें सुन्दर प्रकाश मिलता है––

प्रजापतेर्ह वै प्रजाः ससृजनास्य पर्वाणि विसस्रँ––सुः स वै संवत्सर एव प्रजापतिस्तस्यैतानि पर्वाण्यहोरात्रयोः सन्धीपौर्णमासी चामावास्या चतुर्मुखानि ॥३५॥ स विस्रस्तैः पर्वभिः न शशाक सँ हातुं तेमेतैर्हवियज्ञैर्देवा अभिषज्यन्नग्निहोत्रेणैवाहोरात्रयोः संधी तत्पर्वाभिषज्यंस्तत्समःदधु पौर्णमासेन चैवामावास्येन च पौर्णमासीं चामावास्यां च तत्पर्वाभिषज्यं-

स्तत्समदधुश्चातुर्मास्यैरेवर्तुमुखानि तत्पर्वाभिषज्यंस्तत्समदधुः॥

—शत० ब्रा० १.६.३

अर्थात्—प्रजा उत्पन्न करनेके बाद प्रजापतिके पर्व शिथिल हो गये। इस सूत्रमे प्रजापतिसे संवत्सर अभिप्रेत है और पर्व शब्दसे अहोरात्रकी दोनो सन्धियाँ-पूर्णमासी, अमावास्या एवं ऋतु-आरम्भ-तिथि-ग्रहण की गई है तथा चातुर्मासके ज्ञानसे ऋतुओकी व्यव स्थाकी गई है। तात्पर्य यह है कि शतपथ ब्राह्मणके पूर्व ऋतु व्यवस्था सौर और चान्द्रमासके अनुसार एक तिथिमे सिद्ध नही हुई थी अतः ऋतु आरम्भकी तिथिका ज्ञान करना असंभव-सा जँचता था; इसलिये बादके आचार्योंने चार महीनेकी ऋतु मानकर ऋतु सन्धिको ज्ञात किया था तथा अग्नि, सूर्य और चन्द्रमा ये तीन ऋतुएँ मानी गई थी।

यदि तर्ककी कसौटीपर इस ऋतु व्यवस्थाको कसा जाय तो अवगत होगा कि इस युगमे पक्षसन्धि और ऋतुसन्धिकी वास्तविक व्यवस्था प्रायः अज्ञात थी। हाँ, काम चलानेके लिये ये चीजे प्रचलित थी।

उदयकालमे अयनके सम्बन्धमें भी शास्त्रीय विवेचन होने लग गया था। ऋग्वेदमे कई स्थानोपर अयन शब्द आया है, पर निश्चित रूपसे यह नही कहा जा सकता है कि यह अयन शब्द सूर्यके दक्षिणायन या उत्तरायणका द्योतक है। शतपथ ब्राह्मणके निम्न पद्यसे अयनके सम्बन्धमे अवगत होता है—

अयनविचार

वसन्तो ग्रीष्मो वर्षाः। ते देवा ऋतवः शरद्धेमंतः शिशिरस्ते पितरो . . . स(सूर्यः) पत्रोदगावर्तते। देवेषु तर्हि भवति . . . यत्र दक्षिणा वर्तते पितृषु तर्हि भवति॥—श० ब्रा० २.१.३

अर्थात्—शिशिर ऋतुसे ग्रीष्मर्तु पर्यन्त उत्तरायण और वर्षा ऋतुसे हेमन्त ऋतु पर्यन्त दक्षिणायन होता था लेकिन उदयकालकी अन्तिम शताब्दियोंमे हेमन्तके मध्यमेसे ग्रीष्मके मध्य तक उत्तरायण माना जाने

लगा था। यद्यपि उपर्युक्त मत्रमे उत्तरायण और दक्षिणायनका स्पष्ट कथन नही है, पर प्रकरणके अनुसार अर्थ करनेपर उक्त अर्थ सिद्ध हो जाता है।

तैत्तिरीय संहिताके **तस्मादादित्यः षण्मासो दक्षिणेनैति षडुत्तरेण'** मन्त्रसे सूर्यका छह महीनेका उत्तरायण और छह महीनेका दक्षिणायन सिद्ध होता है।

य· · · ·उदगयने प्रमीयते देवानामेव महिमानं गत्वादित्यस्य सायुज्यं गच्छत्यथयो दक्षिणे प्रमीयते पितृणामेव महिमानं गत्वा चन्द्रमस सायुज्यं-सलोकतामाप्नोति।--नारा० उ० अनु० ६०

मैत्राणि उपनिषद्मे उदग् अयन, उत्तरायण ये शब्द कई स्थानोंपर आये है। उदक् अयनके पर्यायवाची शब्द देवयान, देवलोक और दक्षिणायनके पर्यायवाची पितृयाण, पितृलोक बताये गये है।

जैन ग्रन्थोमे विस्तारसे उत्तरायण और दक्षिणायनकी व्यवस्था बतलाते हुए लिखा है कि जम्बूद्वीपके मध्यमें सुमेरु पर्वत है। सूर्य, चन्द्र आदि समस्त ज्योतिर्मण्डल इस पर्वतकी परिक्रमा किया करता है। सूर्य प्रदक्षिणाकी गति उत्तरायण और दक्षिणायन इन भागोमे विभक्त है और इनकी वीथियाँ--गमन मार्ग १८३ है, जो सुमेरुकी प्रदक्षिणाके रूपमें गोल, किन्तु बाहरकी ओर फैलते हुए है। इन मार्गोकी चौड़ाई $\frac{५८}{६१}$ योजन है तथा एक मार्गसे दूसरे मार्गका अन्तर दो योजन बताया गया है। इस प्रकार कुल मार्गोकी चौड़ाई और अन्तरालोका प्रमाण ५१० योजन है, जो कि ज्योतिष शास्त्रकी परिभाषामे चार क्षेत्र कहलाता है। ५१० योजनमेसे १८० योजन चार क्षेत्र जम्बूद्वीपमे और अवशेष ३३० योजन लवण समुद्रमें है। सूर्य एक मार्गको दो दिनमे पूरा करता है, जिससे ३६६ दिन या एक वर्ष पूरा करनेमे लगते है।

सूर्य जब जम्बूद्वीपके अन्तिम आभ्यन्तर मार्गसे बाहरकी ओर निकलता हुआ लवण समुद्रकी ओर जाता है, तब बाह्य लवण समुद्रके अन्तिम मार्गपर

चलने तकके कालको दक्षिणायन और जब सूर्य लवण समुद्रके बाह्य अन्तिम मार्गसे भ्रमण करता हुआ आभ्यन्तर जम्बूद्वीपकी ओर आता है उसे उत्तरायण कहते हैं। अतएव स्पष्ट है कि उदयकालकी अन्तिम शताब्दियोंमें उत्तरायण और दक्षिणायनका ज्योतिषशास्त्रकी दृष्टिसे सूक्ष्म विचार होने लग गया था। भारतीय आचार्योंने इस विषयको आगे खूब पल्लवित और पुष्पित किया।

वर्षविचार

ऋग्वेदमें वर्षके वाचक शरद् और हेमन्त शब्द आये है, वहाँ इन शब्दोंका अर्थ ऋतु न मान सम्वत्सर बताया गया है। गोपथ ब्राह्मणमें वर्षके लिये हायन शब्द आया हैं। वाजसनेयि सहितामें वर्षके लिये समा शब्द व्यवहृत हुआ है। वर्षकी दिन सख्या ३५४ अथवा ३६५ मानी गई है। शतपथ ब्राह्मणमें आजकलके अर्थमे ही वर्ष शब्दका व्यवहार किया गया है। ऋग्वेदके दसवे मण्डलमे **'समानां मास आकृतिः'** इस मन्त्रमे समा शब्दके द्वारा ही वर्ष शब्दका प्रतिपादन किया गया है। वैदिक कालमे सायन वर्ष ग्रहण किया जाता था, यह सायन या सौरवर्षकी प्रणाली ई० पू० ५०० तक पाई जाती है। आदिकालमे निरयन वर्षका विचार भी होने लग गया था। वर्ष या सम्वत्सरकी व्युत्पत्ति करते हुए शतपथ ब्राह्मणमें लिखा है—

ऋतुभिर्हिसंवत्सरः शक्नोति स्थातुम्।—श० ब्रा० ६.७.१.१८

अर्थात् 'सवसति ऋतवः यत्र' की गई है। तात्पर्य यह है कि जिसमे ऋतुएँ वास करती हो वह वर्ष या सवत्सर कहलाता है।

वर्षका आरम्भ कब होता था, इस सम्बन्धमे ऋग्वेदमे कोई स्पष्ट उल्लेख नही है, परन्तु यजुर्वेदमे वसन्तारम्भमे वर्षारम्भ कहा गया है। उदयकालकी अन्तिम शताब्दियोमे दक्षिणायनके प्रारम्भिक दिनसे भी वर्षारम्भ माना जाने लगा था। यो तो वैदिक कालमे वर्षके चान्द्र और सौर ये दो भेद भी प्रकट हो गये थे। लेकिन नाक्षत्र, बार्हस्पति आदि

विभिन्न प्रकारके वर्ष नहीं माने जाते थे। इस कालके ऋषि मधु और माधव आदि मासोंको भी सौरमासके रूपमें ही मानते थे, क्योंकि वर्षारम्भ सौरमास कालिक था।

वैसे तो मासोंकी गणना चान्द्रमासके अनुसार भी मिलती है तथा सौर और चान्द्रके समन्वय करनेके लिये प्रत्येक तीसरे वर्ष एक अधिकमास भी जोडा जाता था। उस समयकी व्यावहारिक वर्ष प्रणाली आजकलकी वर्षप्रणालीसे भिन्न थी। युग वर्षोंके क्रमानुसार प्रत्येक वर्षका नाम भी पृथक्-पृथक् होता था।

ठाणाङ्ग और प्रश्न व्याकरणाङ्गमें सायन सौर वर्षका कथन मिलता है। समवायाङ्गमें चान्द्रवर्षकी दिन संख्या ३५४से कुछ अधिक बतलाई गई है। ६३वे समवायमें चान्द्रवर्षकी उत्पत्तिका कथन भी किया गया है। इस प्रकार उदयकालमें वर्षके सम्बन्धमें शास्त्रीय दृष्टिसे मीमान्सा की गई है।

युगविचार

ऋग्वेदमें काल मानका द्योतक युग शब्द कई स्थानोंमें आया है, लेकिन कल्प शब्दका प्रयोग इस अर्थमें कहींपर भी दिखलाई नहीं पडता है। ऋग्वेदमें युगके सम्बन्धमें कहा है—

तदूचुषे मानुषेमा युगानि कीर्तेन्यं मघवा नाम बिभ्रत्।
उपप्रमंदस्युहत्याय वज्री यद्ध सूनुः श्रवसे नाम दधे॥

ऋ० सं० १.१०३-४

इस मंत्रकी व्याख्या करते हुए सायणाचार्यने लिखा है—

"मनुष्याणां सम्बन्धीनि इमानि दृश्यमानानि युगानि अहोरात्रसंघनिष्पाद्यानि कृतत्रेतादीनि सूर्यात्मना निष्पादयतीति शेषः"

अर्थात्—सतयुग, त्रेतादि युग शब्दसे ग्रहण किये गये हैं। इससे स्पष्ट है कि वेदोंके निर्माण कालमें सतयुग, त्रेतादिका प्रचार था। ऋग्वेदके निम्न मंत्रसे युगके सम्बन्धमें एक नया प्रकाश मिलता है—

दीर्घतमा मामेतयो जुजुर्वान् दशमे युगे ।
अपामर्थं यतीनां ब्रह्मा भवति सारथिः ॥––ऋ० सं० १.१५८.६

अर्थात्––इस मन्त्रमे एक आख्यायिका आई है, उसमें कहा गया है कि ममताके पुत्र दीर्घतम नामके महर्षि अश्विन्के प्रभावसे अपने दुःखोसे छूटकर स्त्री-पुत्रादि कुटुम्बियोके साथ दस युग पर्यन्त सुखसे जीवित रहे । यहाँ दस युग शब्द विचारणीय है । यदि पाँच वर्षका युग माना जाय, जैसा कि आदिकालमे प्रचलित था, तो ऋषिकी आयु ५० वर्षकी आती है, जो बहुत थोड़ी प्रतीत होती है और यदि दस वर्षका युग माना जाय तो १०० वर्षकी आयु आती है । वैदिक कालके अनुसार यह आयु भी सभव नही जँचती है । दूसरी बात यह भी है कि दस वर्षके युग-प्रमाणका उल्लेख कही मिलता भी नही है, अतः द्वितीय युगमान वर्ष ग्रहण करना उचित नहीं । सायणाचार्यने युगकी इस समस्याको सुलझानेके लिये **"दशयुग-पर्यन्तं जीवन् उक्तरूपेण पुरुषार्थसाधकोऽभवत् अथवा जीवन् उत्तर-रूपेण पुरुषार्थसाधकोऽभवत् ।"**

इस प्रकारकी व्याख्या की है । इस व्याख्यासे युग प्रमाणकी समस्या सरलतासे सुलझ जाती है अर्थात् दीर्घतमने अश्विन्के प्रभावसे दुःखसे छुटकारा पाकर जीवनके अवशेष दस युग––५० वर्ष सुखसे बिताये थे । अतएव इस आख्यायिकासे स्पष्ट है कि उदयकालमे युगका मान पाँच वर्ष लिया जाता था । ऋग्वेदके अन्य दो मन्त्रोसे युग शब्दका अर्थ काल और अहोरात्र भी सिद्ध होता है । पाँचवे मण्डलके ७३वे सूक्तके तीसरे मंत्रमे **"नहुषा युगा मन्हारजांसि दीयथः ।"** पदमे युग शब्दका अर्थ––**"युगो-पलक्षितान् कालान् प्रसरादिसवनान् अहोरात्रादिकालान् वा ।"** किया गया है । इससे स्पष्ट है कि उदयकालमें युग शब्दका अन्य अर्थ अहोरात्र विशिष्ट काल भी लिया जाता था । ऋग्वेदके छटवें मण्डलके नवमें सूक्तके चौथे मन्त्रमे **"युगे युगे विदथ्यं"** पदमें युगे-युगे शब्दका अर्थ 'काले-काले' किया गया है । वाजसनेयि संहिताके १२वें अध्यायकी १११वीं

काण्डकामे **'दैव्यं मानुषा युगा'** ऐसा पद आया है। इससे सिद्ध होता है कि उस कालमें देव-युग और मनुष्य-युग ये दो युग प्रचलित थे। तैत्तिरीय संहिताके **"या जाता ओ ऽधयो देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा"** मन्त्रसे देव-युगकी सिद्धि होती है।

ठाणाङ्गमें पाँच वर्षका एक युग बताया गया है। इसमें ज्योतिषकी दृष्टिसे युगकी अच्छी मीमान्सा की गई है। एक स्थानपर बताया गया है कि—

पंच संवच्छरा प० तं० णक्खत्तसंवच्छरे जुग संवच्छरे, पमाण संवच्छरे लक्खणसंवच्छरे सणिचरसंवच्छरे। जुगसंवच्छरे पंचविट्टे प० तं० चंदे चंदे, अभिवड्ढिए, चंदे, अभिवड्ढिए चेव। पमाणसंवच्छरे पंचविहे प० तं० णक्खत्ते, चंदे, उऊ अइच्चे, अभिवड्ढिए।—ठा० ५, उ० ३ सू० १०

अर्थात्—पच संवत्सरात्मक युगके ५ भेद है—नक्षत्र, युग, प्रमाण, लक्षण और शनि। युगके भी पच भेद बताये गये है—चन्द्र, चन्द्र, अभिवर्द्धित, चन्द्र और अभिवर्द्धित।

समवायाङ्गमें युगके सम्बन्धमें बहुत स्पष्ट और सुन्दर ढगसे बताया गया है—

पंच संवच्छरियस्सणं जुगस्स रिउमासेणं मिज्जमाणस्स एगसट्ठिं उऊमासा प०॥—स० ६१, सू० १

अर्थात्—पच वर्षात्मक एक युग होता है। इस युगके पाँच वर्षोंके नाम चन्द्र, चन्द्र, अभिवर्द्धित, चन्द्र और अभिवर्द्धित बताये गये है। पच वर्षात्मक युगमें ६१ ऋतुमास होते है।

प्रश्न व्याकरणाङ्गमें भी युग-प्रक्रियाका विवेचन किया गया है, इसमें एक युगके दिन और पक्षोंका निरूपण किया है।

उपर्युक्त युग प्रक्रियाके ऊपर आलोचनात्मक दृष्टिसे विचार किया जाय तो अवगत होगा कि उदयकालमें युग शब्द विभिन्न अर्थोंमें प्रयुक्त होता था। जहाँ काल गणना अभिप्रेत थी, वहाँ पाँच वर्षका ही युग ग्रहण

किया जाता था। इस समय आदिकालके समान पच वर्षात्मक युगके संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर एव इद्वत्सर ये पाँच पृथक्-पृथक् वर्ष माने जाते थे। ऋग्वेदके ७वे मण्डलान्तर्गत १०३वे सूक्तके ७वे एव ८वे मत्रमे सवत्सर और परिवत्सर वर्षोंके नाम आये है तथा इन वर्षोंमे विधेय यज्ञोका वर्णन किया गया है। तैत्तिरीय ब्राह्मणके एक मत्रसे ध्वनित होता है कि उस कालमे सवत्सरका स्वामी अग्नि, परिवत्सरका आदित्य, इदावत्सरका चन्द्रमा, इद्वत्सर एव अनुवत्सरका वायु होता था। वाजसनेयि सहिता और तैत्तिरीय ब्राह्मणोके मत्रोसे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि उदयकालके इन वर्षोंमे विशेष-विशेष कृत्य निर्धारित थे। तथा वर्तमान वर्षके स्वामीको सन्तुष्ट करनेके लिये विशेष यज्ञ किये जाते थे।

उदयकालमे कालगणनासे सम्बद्ध और भी अनेक प्रकारके समय विभाग प्रचलित थे। अन्वेषण करनेसे ज्ञात होता है कि सप्ताहका प्रचार इस कालमे नही था।

जब पक्षका विचार ऋग्वेदमे वर्तमान है, तब सप्ताहका जिक्र भी होना चाहिये था, लेकिन उदयकालकी तो बात ही क्या आदिकाल और पूर्व मध्यकालकी प्रारम्भिक शताब्दियोमे भी सप्ताहका प्रचलन ज्योतिषमे नही हुआ प्रतीत होता है।

उदयकालमे केवल समय विभाग ज्ञान तक ही ज्योतिष सीमित नही था; बल्कि ज्योतिषके मौलिक सिद्धान्त भी ज्ञात थे। ग्रह कक्षाका स्पष्ट उल्लेख तो वैदिक साहित्यमे नही है, किन्तु तैत्तिरीय ब्राह्मणके कई मत्रोसे सिद्ध होता है कि पृथ्वी, अन्तरिक्ष, द्यौ, सूर्य और चन्द्र ये क्रमश. ऊपर-ऊपर है। तैत्तिरीय सहिताके निम्न मंत्रसे ग्रहकक्षाके ऊपर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है—

ग्रहकक्षा विचार

यथाग्निः पृथिव्या समनमदेवं मह्यं भद्रा, सन्नतयः सन्नमन्तु वायवे समनमदंतरिक्षाय समनमद् यथा वायुरंतरिक्षेण सूर्याय समनमद् दिवा

समनमद् यथा सूर्यो दिवा चन्द्रमसे समनमन्नक्षेत्रेभ्यः समनमद् यथा चन्द्रमा नक्षत्रैर्वरुणाय समनमत् ॥ --तै० सं० ७.५.२३

अर्थात्--सूर्य आकाशकी, चन्द्रमा नक्षत्र-मण्डलकी, वायु अन्तरिक्षकी परिक्रमा करते है। और अग्निदेव पृथ्वीपर निवास करते है। साराश यह है कि सूर्य, चन्द्र और नक्षत्र क्रमशः ऊपर-ऊपरकी कक्षावाले है। तैत्तिरीय ब्राह्मणके निम्न मन्त्रमे विश्व व्यवस्थाके सम्बन्धमे अच्छा प्रकाश मिलता है।--

लोकोसि स्वर्गोसि। अनन्तस्यपारोसि। अक्षितोस्यक्षय्योसि। तपसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतं। विश्वस्य भर्त्ता विश्वस्य जनयिता। तंत्वोपदधे कामदुघमक्षितं। प्रजापतिस्त्वा-सादयतु। तया देवतयांगिरस्वध्रुवासीद्। तपोसि लोके श्रितं। तेजसः प्रतिष्ठा तेजोसि तपसि श्रितं। समुद्रस्य प्रतिष्ठा। समुद्रोसि तेजसि श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। अपःस्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रतिष्ठा युष्मासु। पृथिव्यस्यप्सुश्रिता। अग्नेः प्रतिष्ठा। अग्निरसि पृथिव्या श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। अन्तरिक्षमस्यग्नौ श्रितं। वायोः प्रतिष्ठा। वायुरस्यन्तरिक्षे श्रितः। दिवः प्रतिष्ठा। द्यौरसि वायौ श्रिता। आदित्यस्य प्रतिष्ठा। आदित्योसि दिवि श्रितः। चन्द्रमसः प्रतिष्ठा। चन्द्रमा अस्यादित्ये श्रितः। नक्षत्राणां प्रतिष्ठा। नक्षत्राणि स्थ चन्द्रमसि श्रितानि। सम्वत्सरस्य प्रतिष्ठा युष्मासु। सम्वत्सरोसि नक्ष-त्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा ऋतवः स्थ सम्वत्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मासु। मासाः स्थर्तुषु श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मासु। अधर्मासाः स्थमासु श्रिताः। अहोरात्रयोः प्रतिष्ठा युष्मासु। अहोरात्रे-स्थोर्धमासेषु श्रिते। भूतस्य प्रतिष्ठे भव्यस्य प्रतिष्ठे। पौर्णमास्यष्टका-मावास्या ॥ ॥--तै० ब्रा० ३.११.१

अर्थात्--लोक अनन्त और अपार है, इसका कभी विनाश नही होता। पृथ्वीके ऊपर अन्तरिक्ष, अन्तरिक्षके ऊपर द्यौ है। इस द्यौ लोकमे सूर्य

भ्रमण करता है। अन्तरिक्षमे केवल वायु गमन करता है। सूर्यके ऊपर चन्द्रमा स्थित है, इसका गमन नक्षत्रोके मध्यमे होता है। मेघ, वायु, विद्युत ये तीनो भी अन्तरिक्ष और द्यौ लोकके मध्यमे है। सूर्य, चन्द्र एवं नक्षत्रोका स्थान भी द्यौलोक है।

ऋग्वेदके प्रथम मण्डलान्तर्गत १[illegible] सूर्य और लोकका वर्णन स्पष्ट आया है। मालूम होता है कि उस समय उर्ध्वलोक, मध्यलोक और अधोलोककी कल्पनाने ज्योतिषमे स्थान प्राप्त कर लिया था।

आलोचनात्मक दृष्टिकोणसे विचार करनेपर ज्ञात होगा कि वर्तमान ग्रहकक्षासे भिन्न उस समयकी ग्रहकक्षा थी। आजकल चन्द्र-कक्षाको नीचे और सूर्य कक्षाको ऊपर मानते है। पर उदयकालमे चन्द्रमा-की कक्षाको सूर्यकी कक्षासे ऊपर माना जाता था। इस कक्षाक्रमका समर्थन समवायाङ्ग और प्रश्न व्याकरणाङ्गसे भी होता है। इन ग्रन्थोमे तारा, सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, बुध, शुक्र, मगल, गुरु और शनिकी कक्षाओको क्रमशः ऊपर-ऊपर बताया गया है।

सामान्यतया भारतीय आचार्योकी यह प्रारम्भिक कल्पना स्वाभाविक भी मालूम पड़ती है; क्योकि जब सूर्य दिखलाई पड़ता है उस समय नक्षत्र हमारे दृष्टिगोचर नही होते अतः सूर्यका गमन नक्षत्र कक्षाके अन्दर नही होता है, यह सहज कल्पना दोषयुक्त नही कही जा सकती है। लेकिन चन्द्रमाके सम्बन्धमें सूर्यके गमनवाला नियम काम नही करता है, इसलिये चन्द्रमाके गमनके समय उसके पासके नक्षत्र दिखलाई पड़ते है। इसका प्रधान कारण यही ज्ञात होता है कि चन्द्रमा नक्षत्रोके मध्यसे गमन करता है। तात्पर्य यह है कि चन्द्रमा ऊँचा होनेके कारण नक्षत्र प्रदेशोसे गुजरता है, इसलिये उसके गमन समयमे नक्षत्र दिखलाई पड़ते है। सूर्य नक्षत्रोंसे बहुत नीचे है, इसलिये उसके गमन कालमे नक्षत्र दिखलाई नही पड़ते है। इसी प्रकार बुध, शुक्र आदिकी कक्षाएँ भी युक्तियुक्त प्रतीत होती है।

उदयकालके साहित्यमें ग्रह-कक्षाके सम्बन्धमे विभिन्न प्रकारके विचार

मिलते है। अगले साहित्यमे ये ही सिद्धान्त विकसित होकर आधुनिक रूपको प्राप्त हुए है।

नक्षत्रविचार

उदयकालमे भारतियोको नक्षत्रोका पूर्ण ज्ञान था। इन्होने अपने पर्यवेक्षण द्वारा मालूम कर लिया था कि सम्पातबिन्दु भरणीका चतुर्थ चरण है, अतएव कृत्तिकासे नक्षत्र गणना की जाती थी। कुछ विद्वानोका मत है कि उदय कालमे कृत्तिकाका प्रथम चरण ही सम्पातबिन्दु था, अतएव उस कालके ज्योतिर्विद् कृत्तिकासे नक्षत्र गणना करते थे। ऋग्वेदमे वर्तमान प्रणालीके अनुसार नक्षत्र चर्चा मिलती है--

अमी य ऋक्षा निहितास उच्चा नक्तंदहश्रे कुहचिद्दिवेयुः।
अदब्धानि वरुणस्य व्रतानि विचाकशच्चन्द्रमा नक्तमेति॥

इस मन्त्रमे रात्रिमे नक्षत्र प्रकाश एव दिनमे नक्षत्र प्रकाशाभावका निरूपण किया गया है।

वाजनावती सूर्यस्य योषा चित्रा मघा राय ईशे वसूनां।

--ऋ० सं० ७.७५.५

इस मन्त्रमे चित्रा और मघाका स्पष्ट उल्लेख किया गया है। यजुर्वेदके एक मन्त्रमे सत्ताइस नक्षत्रोको गन्धर्व कहा गया है, जिससे ध्वनित होता है कि उस समय सत्ताइस नक्षत्रोका प्रचार था, पर यह जानना कठिन है कि नक्षत्रोकी गणना किस प्रकार ली जाती थी। अथर्ववेदमे कृत्तिकादि अट्ठाइस नक्षत्रोका वर्णन करते हुए लिखा है--

चित्राणि साकं दिवि रोचनानि सरीसृपाणि भुवने जवानि।
अष्टाविंशं सुमतिमिच्छमानो अहानि गीर्भिः सपर्यामि नाकम्॥
सुहवं मे कृत्तिका रोहिणी चास्तुभद्रं मृगशिरः शमार्द्रा।
पुनर्वसू सूनृता चारु पुष्यो भानुराश्लेषा अयनं मघा मे॥
पुण्यं पूर्वाफाल्गुन्यौ चात्र हस्तश्चित्रा शिवा स्वातिः सुखो मे।
अनुराधो विशाखे सुहनानुराधा ज्येष्ठा सुनक्षत्रमरिष्टं मूलम्॥

अग्नं पूर्वा रासन्तां मे आषाढा ऊर्ज यं द्युत्तर आ वहन्तु ।
अभिजिन्मे रासतां पुण्यमेव श्रवणः श्रविष्ठा कुर्वतां सुपुष्टिम् ॥
आ मे महच्छतभिषग्वरीय आ मे द्वया प्रोष्ठपदा सुशर्म ।
आ रेवती चाश्वयुजौ भगं मे आ मे रयि भरण्य आ वहन्तु ॥

—अ० सं० १९.७

इसी प्रकार तैत्तिरीय श्रुतिमे नक्षत्रोके नाम, उनके देवता, वचन और लिग भी बताये गये है । इसके अनुसार कृत्तिकाका अग्नि देवता, स्त्रीलिग और बहुवचन; रोहिणीका प्रजापति देवता, स्त्रीलिग और एक-वचन, मृगशिरका सोम देवता, नपुसक लिग और एकवचन; आर्द्राका रुद्र देवता, स्त्रीलिग और एकवचन, पुनर्वसुका आदित्य देवता, पुल्लिग और द्विवचन,; तिष्य या पुष्यका बृहस्पति देवता, पुल्लिग और एकवचन; आश्लेषाका सर्प देवता, स्त्रीलिग और बहुवचन, मघाका पितृ देवता, स्त्रीलिग और बहुवचन, पूर्वाफाल्गुनी या फल्गुनीका भग देवता, स्त्रीलिग और द्विवचन; हस्तका सविता देवता, पुल्लिग और एक वचन, चित्राका इन्द्र देवता, स्त्रीलिग और एकवचन, स्वाति या निष्टयाका वायु देवता, स्त्रीलिग और एकवचन; विशाखाका इन्द्राग्नि देवता, स्त्रीलिग और द्विवचन; अनुराधाका मित्र देवता, स्त्रीलिग और बहुवचन; ज्येष्ठाका इन्द्र देवता, स्त्रीलिग और एकवचन; मूल, विचृतौ या मूलबर्हिणीका निर्ऋति देवता, स्त्रीलिग और एकवचन; अषाढा या पूर्वाषाढ़ाका अप् देवता, स्त्रीलिग और बहुवचन; अषाढा या उत्तराषाढा-का विश्वेदेव देवता, स्त्रीलिग और बहुवचन; अभिजित्का ब्रह्म देवता, नपुसक लिग और एकवचन; श्रवण या श्रोणाका विष्णु देवता, स्त्रीलिग और एकवचन; श्रविष्ठाका वसू देवता, स्त्रीलिग और बहुवचन; शतभि-षक्का इन्द्र या वरुण देवता, पुल्लिग और एकवचन; प्रोष्ठपद या पूर्व-प्रोष्ठपदका अज एक पाद देवता, पुल्लिग और बहुवचन; प्रोष्ठपद या उत्तर प्रोष्ठपदका अहिर्बुध्निय देवता, पुल्लिग और बहुवचन; रेवतीका

पूषा देवता, स्त्रीलिग और एकवचन; अश्विभुज् या अश्विनीका अश्विन् देवता, स्त्रीलिग और द्विवचन एवं भरणीका यम देवता, स्त्रीलिंग और बहुवचन बताया है। इसी स्थानपर नक्षत्रोके फलाफलोका सुन्दर विवेचन किया है। शतपथ ब्राह्मण और ऐत्तरेय सहितामे भी यही क्रम मिलता है। उदयकालके अन्तिम भागमे नक्षत्रोके फलाफलमे पर्याप्त विकास हो गया था। अथर्ववेदमे मूल नक्षत्रमे उत्पन्न बालककी दोष शान्तिके लिये अग्नि आदि देवताओसे प्रार्थनाएँ की गई है।—

ज्येष्ठघ्न्यां जातो विचृतोर्यमस्य मूलबर्हणात् परिपालयेनम्।
अत्येनं नेषद्दुरितानि विश्वा दीर्घायुत्वाय शतशारदाय॥

इस मत्रमे एक मूलसज्ञक नक्षत्रोमे जात बालकके दोषको दूर करने एव उसके कल्याणके लिये अग्निदेवसे प्रार्थना की गई है। उदयकालमे नक्षत्रोंका जितना परिज्ञान भारतियोको था उतना अन्य देशवासियोको नही।

वाजसनेयि सहितामे **'प्रज्ञानाय नक्षत्रदर्श यादसे गणकं'** सूक्ति आई है। इसमे प्रयुक्त नक्षत्रदर्श और गणक ये दो शब्द बहुत उपयोगी है, इनसे प्रकट होता है कि उदयकालमे ज्योतिषकी मीमान्सा शास्त्रीय दृष्टिसे की जाने लगी थी।

प्रश्नव्याकरणागमें नक्षत्रोके फलोंका विशेष ढगसे निरूपण करनेके लिये इनका कुल, उपकुल और कुलोपकुलोमे विभाजन कर वर्णन किया गया है—

ता कहंते कुला उवकुला कुलावकुला आहितोति वदेज्जा ?

तत्थ खलु इमा बारस कुला बारस उबकुला चत्तारि कुलावकुला पण्णत्ता॥ बारस कुला तं जहा—धणिट्ठा कुलं उत्तराभद्दवयाकुलं, अस्सिणीकुलं, कत्तियाकुलं, मिगसिरकुलं, पुस्सोकुलं, महाकुलं, उत्तराफग्गुणीकुलं, चित्ताकुलं, विसाहाकुलं, मूलोकुलं, उत्तराषाढाकुलं॥ बारस उवकुला पण्णत्ता तं जहासवणो उवकुलं, पुव्वभद्दवया उवकुलं, रेवतिउवकुलं, भरणिउवकलं, रोहिणीउवकुलं, पुवावसुउवकुलं, असलेसाउवकुलं पुव्वफग्गुणी-

उवकुलं, हत्थें उवकुलं साति उवकुलं, जेट्ठाउवकुलं, पुव्वासाढाउवकुलं ॥ चत्तारि कुलावकुलं पण्णत्तातंजहा--अभिजिति कुलावकुलं, सतभिसया कुलावकुलं, अद्दाकुलावकुलं, अणुराहा कुलावकुलं ॥

--प्र० व्या० १०.५

अर्थात्--बारह नक्षत्र कुल, बारह उपकुल और चार नक्षत्र कुलोपकुल संज्ञक हैं। धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिर, पुष्य, मघा, उत्तराफाल्गुनी, चित्रा, विशाखा, मूल एवं उत्तराषाढा ये नक्षत्र कुल संज्ञक, श्रवण, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, भरणी, रोहिणी, पुनर्वसु, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, स्वाति, ज्येष्ठा एवं पूर्वाषाढा ये नक्षत्र उपकुल संज्ञक और अभिजित्, शतभिषा, आर्द्रा एवं अनुराधा कुलोपकुल संज्ञक हैं। यह कुलोपकुलका विभाजन पूर्णमासीको होनेवाले नक्षत्रोंके आधारपर किया गया है। साराश यह है कि श्रावण मासके धनिष्ठा, श्रवण और अभिजित्; भाद्रपद मासके उत्तराभाद्रपद, पूर्वाभाद्रपद और शतभिष; क्वार या आश्विन मासके अश्विनी और रेवती; कार्त्तिक मासके कृत्तिका और भरणी, अगहन या मार्गशीर्ष मासके मृगशिर और रोहिणी, पौषमासके पु य पुनर्वसु और आर्द्रा, माघ मासके मघा और आश्लेषा, फाल्गुन मासके उत्तरा-फाल्गुनी और पूर्वाफाल्गुनी; चैत्र मासके चित्रा और हस्त; वैशाख मासके विशाखा और स्वाति, ज्येष्ठ मासके मूल, ज्येष्ठा और अनुराधा एवं आषाढ मासके उत्तराषाढ़ा और पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र बताये गये हैं। प्रत्येक मासकी पूर्णमासीको उस मासका प्रथम नक्षत्र कुल संज्ञक, दूसरा उपकुल संज्ञक और तीसरा कुलोपकुल संज्ञक होता है। अर्थात् श्रावण मासकी पूर्णिमाको धनिष्ठा पड़े तो कुल, श्रवण हो तो उपकुल और अभिजित् हो तो कुलोपकुल संज्ञावाला होता है। इसी प्रकार आगेके मासवाले नक्षत्रोंकी संज्ञाका ज्ञान किया जा सकता है। इस संज्ञाका प्रयोजन उस महीनेके फलादेशसे बताया गया है। नक्षत्रोंके दिशाद्वारका प्रतिपादन करते हुए समवायाङ्गमें बताया है कि--

कत्ति आइया सत्तणक्खत्ता पुव्वदारिआ। महाइआ सत्तणक्खत्ता दाहिण दारिआ। अणुराहाइआ सत्तणक्खत्ता अवरदारिया। धणिट्ठाइआ सत्तणक्खत्ता उत्तरदारिआ॥

—सं० अं० सं० ७ सू० ५

अर्थ—कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, और आश्लेषा ये सात नक्षत्र पूर्वद्वार; मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा स्वाति और विशाखा दक्षिण द्वार; अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, अभिजित् और श्रवण ये सात नक्षत्रपश्चिम द्वार एवं धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी ये सात नक्षत्र उत्तर द्वारवाले है।

ठाणाङ्गमें चन्द्रमाके साथ स्पर्शयोग करनेवाले नक्षत्रोंका कथन करते हुए बताया गया है कि—

अट्ठ नक्खत्ताणं चेदेण सद्धिं पमड्ढं जोगं जोएइ तं० कत्तिया रोहिणी पुणव्वसु महा चित्ता विसाहा अणुराहा जिट्ठा।

—ठा० अं० ठा० ८ सू० १००

अर्थात्—कृत्तिका, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, चित्रा, विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा ये आठ नक्षत्र स्पर्शयोग करनेवाले है। इस योगका फल भी तिथिके हिसाबसे बताया गया है। इसी प्रकार नक्षत्रोंकी अन्य संज्ञाएँ तथा उत्तर, पश्चिम, दक्षिण और पूर्व दिशाकी ओरसे चन्द्रमाके साथ योग करनेवाले नक्षत्रोंके नाम और उनके फल विस्तारपूर्वक बताये गये है।

उदयकालके समग्र साहित्यपर दृष्टिपात करनेसे ज्ञात होता है कि इस युगमे नक्षत्रज्ञानकी इतनी उन्नति हुई थी जिससे नक्षत्रोंकी ताराएँ और उनके आकार भी विचारके विषय बन गये थे। हस्त नक्षत्रकी पाँच ताराएँ हाथके आकारकी है, जिस प्रकार हाथमें पाँच अँगुलियाँ होती है उसी प्रकार हस्तकी पाँच ताराएँ भी। तैत्तिरीय ब्राह्मणमे नक्षत्रोंकी आकृति प्रजापतिके रूपमे मानी गई है—

यो वै नक्षत्रियं प्रजापतिं वेद। उभयोरेनं लोकयोर्विदुः। हस्त एवास्य हस्तः। चित्रा शिरः। निष्टचा हृदयं। ऊरू विशाखे। प्रतिष्ठानूराधाः। एष वै नक्षत्रियः प्रजापतिः।

—तै० ब्रा० १.५.२

अर्थात्—नक्षत्र रूपी प्रजापतिका चित्रा सिर, हस्त हाथ,निष्टचा—स्वाति हृदय, विशाखा जघा एव अनुराधा पाद है। इसी ग्रन्थमे एक स्थानपर आकाशको पुरुषाकार माना गया है। इस पुरुषका स्वाति हृदय बताया गया है। शतपथ ब्राह्मण और तैत्तिरीय ब्राह्मणमे नक्षत्रोकी आकृतिका बड़ा सुन्दर विवेचन है। इन ग्रन्थोसे सुस्पष्ट सिद्ध होता है कि प्राचीन कालमे नक्षत्र विद्याका भारतमे अधिक विकास था। इसके प्रभाव और गुणोका वर्णन भी अथर्ववेदके कई मन्त्रोमे मिलता है। शतपथ ब्राह्मणके एक मत्रमे बतलाया गया है कि सप्तर्षि नक्षत्रपुञ्ज जाज्वल्यमान नक्षत्रपुञ्ज है। तैत्तिरीय ब्राह्मणके कुछ मत्रोमे अग्न्याधान, विशेष यज्ञ एव अन्य धार्मिक कृत्योके लिये शुभाशुभ नक्षत्रोका कथन किया गया है। अतएव स्पष्ट है कि उदयकालमे नक्षत्र विद्या उन्नतिकी चरमसीमापर थी, इसीलिये इस युगमे ज्योतिषका अर्थ नक्षत्रविद्या किया जाता था। वाजसनेयिसहिता और सूयगडाङ्गकी ज्योतिषचर्चासे उपर्युक्त कथनकी पुष्टि सम्यक् प्रकार हो जाती है।

ग्रहविचार

यो तो वैदिक साहित्यमे स्पष्ट रूपसे ग्रहोका उल्लेख नही मिलता है। केवल सूर्य और चन्द्रमाका उल्लेख प्रायः सर्वत्र पाया जाता है, पर ये भी ग्रह रूपमे माने गये प्रतीत नही होते है। स्थान-स्थानपर देवताके रूपमे इनसे प्रार्थनाएँ की गई है। ऋग्वेदके निम्न मत्रसे ग्रहोके सम्बन्धमें पर्याप्त ज्ञान हो जाता है—

अमी ये पंचोक्षणो मध्ये तस्थुर्महो दिवः।
देवत्रा नु प्रवाच्यं सध्रीचीनानि वावृतुर्वित्तं मे अस्य रोदसी॥

ऋ० सं० १.१०५ १०

अर्थात्—ये महाप्रबल पाँच (देव) विस्तीर्ण द्युलोकके मध्यमे रहते है, मै उन देवोके सम्बन्धमे स्तोत्र तैयार करना चाहता हूँ। वे सब एक साथ आनेवाले थे, लेकिन आज वे सब निकल गये।

इस मत्रमे देव शब्द प्रकट रूपसे नही आया है। फिर भी पूर्वापर सन्दर्भसे उसका अध्याहार करना ही पडता है। यहाँ जो एक साथ आने-वाले, इस पदका प्रयोग किया गया है, इससे भौमादि पाँच ग्रह सिद्ध होते है। क्योकि भौमादि पाँच ग्रह आकाशमे कभी-कभी एक साथ भी दिखलाई पडते है। यदि 'दिवमध्ये' पदका अर्थ दिनमध्ये किया जायगा तो दोष आवेगा, क्योकि दिनमे सब ग्रह दिखाई नही देते; बल्कि अस्तगत ग्रहको छोड़ शेष सभी ग्रह रात्रिमे दिखलाई पड़ते है। वेदमत्रोमे देव शब्दका अर्थ सृष्टि चमत्कार और प्रत्यक्ष तेज ही माना गया है; अतएव उपर्युक्त मत्रमें देव शब्दका तात्पर्य देव विशेष नही, प्रत्युत धात्वर्थकी अपेक्षा चमत्कार या प्रकाश है। अतएव सुस्पष्ट है कि प्रकाशयुक्त पाँच ग्रह भौमादि ग्रह ही है। इसका अन्य कारण यह भी है कि वेदोमे अश्विनी आदि दो देव अथवा द्वादश देव या तेतीस देवोका ही उल्लेख मिलता है। पाँच देव कही भी देवरूपमे नही आये है। ऋग्वेदके दसवे मण्डलके ५५वे सूक्तमे भी पाँच देवोका अर्थ पाँच ग्रह ही लिया गया है। वहाँ उन पाँच देवोका घर नक्षत्र मण्डलमें बताया है, इससे सिद्ध है कि पाँच देव भौमादि पाँच ग्रहोके ही द्योतक है।

एक बात यह भी है कि उदयकालमे प्रकाशमान शुक्र और गुरु भार-तियोकी दृष्टिसे ओझल नही रहे होगे। उस समय उन दोनोका साधारण ज्ञान ही नही होगा, किन्तु उनके सम्बन्धमे विशेष बाते भी जानते होगे। शुक्रका ज्ञान उस समय विशेष रूपसे था। ऋग्वेदके कई मत्रोसे ध्वनित होता है कि प्रति बीस मासमे नौ मास शुक्र प्रातःकालमे पूर्व दिशाकी ओर दिखलाई पड़ता था, जिससे ऋषिगण स्नान, पूजा आदिके समयको ज्ञात कर अपने दैनिक कार्योको सम्पन्न करते थे। वे उसे प्रकाशमान नक्षत्र

नहीं समझते थे, बल्कि उसे ग्रहके रूपमें मानते थे। वैदिक साहित्यसे यह भी पता लगता है कि दो-तीन महीने तक बृहस्पति शुक्रके पास ही भ्रमण करता था। इन दो-तीन महीनोंमें कुछ दिन तक शुक्रके बहुत नजदीक रहता है, परन्तु शुक्रकी गति तेज होनेके कारण बृहस्पति पीछे रह जाता है और शुक्र पूर्वकी ओर आगे बढ जाता है। इस गमनका फल यह होता है कि शुक्र पूर्वकी ओर उदित होता है और उसी कारण बृहस्पति पश्चिमकी ओर अस्तको प्राप्त होता है। इस अस्त और उदयकी व्यवस्थाके पूर्व इतना निश्चित है कि कुछ समय तक दोनों साथ रहते है। इस परिस्थितिके अध्ययनसे वैदिक साहित्यमें गुरुको ग्रह माना गया हो, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। उदयकालमें शुक्र और गुरु ग्रह माने जाते थे, इस कल्पनापर निम्न मन्त्रसे सुन्दर प्रकाश पडता है—

ईर्माव्यद्वृषे वपुश्चक्रं रथस्य येमथुः।

परिद्यामन्यत्रा यतो महा रजांसि दीयथः॥ —ऋ० सं० ५.७३.३

अर्थ—हे अश्विनो तुमने अपने रथके एक तेजस्वी चक्रको सूर्यको शोभायमान करनेके लिये रख दिया है और दूसरे चक्रसे तुम लोकके चारों ओर घूमते हो। उपर्युक्त मन्त्रमें एक तेजस्वी चक्रको सूर्यके पास रख दिया है, इससे शुक्रका ग्रहण किया गया है और दूसरे चक्रसे गुरुका ग्रहण किया गया है। निरुक्तमें द्युस्थानीय देवतायोंमें 'अश्विनों'की गणना की गई है और उनकी स्तुतिका काल अर्धरात्रिके बादका बताया गया है।

ऋग्वेदमें एक स्थानपर 'अश्विनों'का सम्बन्ध उषासे बतलाया है। निरुक्त और ऋग्वेदकी इस चर्चाका ज्योतिर्दृष्टिकोणसे विश्लेषण किया जाय तो ज्ञात होगा कि 'अश्विनौ' गुरु और शुक्र ये दो ग्रह है, अन्य कोई देव नहीं।

ऋग्वेद संहिताके चौथे मण्डलके ५०वें सूक्तमें गुरुके सम्बन्धमें स्वतन्त्र कल्पना भी मिलती है। इस कल्पनाका तैत्तिरीय ब्राह्मणके निम्न मन्त्रसे भी समर्थन होता है—

बृहस्पतिः प्रथमं जायमानः । तिष्यं नक्षत्रमभि संबभूव ॥

—तै० ब्रा० ३ १.१

अर्थात्—बृहस्पति प्रथम तिष्य नक्षत्रमें उत्पन्न हुआ था। इसका परम शर १ अंश ३० कला था, इसलिये सत्ताइस नक्षत्रोंमेंसे इसके निकट पुष्य, मघा, विशाखा, अनुराधा, शतभिष और रेवती थे। गुरु और तिष्य—पुष्य नक्षत्रका योग इतना निकट है कि दोनोंका भेद निर्धारण करना कठिन है, इसीसे पुष्य नक्षत्रमें गुरुकी उत्पत्ति हुई, यह कल्पना प्रसूत हुई होगी। पुष्य नक्षत्रका स्वामी भी गुरु माना गया है, अतएव सिद्ध होता है कि उदयकालमें गुरुकी गतिका ज्ञान था, इससे उसका ग्रहत्व स्वयं सिद्ध है।

उदयकालके अन्तिम भागमें ग्रहोंके सम्बन्धमें ज्योतिषशास्त्रकी दृष्टिसे विभिन्न पल्लवोंका विचार होने लग गया था। ठाणाङ्गमें अंगारक, वक्र, लोहिताक्ष, शनैश्चर, कनक, कनक-कनक, कनकविताल, कनकसंतानक, सोमसहित, आश्वासन, कज्जोवग, कर्बट, अयकरक, दुदुमक, शंख, शंखवर्ण, इन्द्राग्नि, धूमकेतु, हरि, पिंगल, बुध, शुक्र, बृहस्पति, राहु, अगस्ति, भाणवक, काश, स्पर्श, धुर, प्रमुख, विकट, विसन्धि, नियल, पडिल, जटिलक, अरुण, अग्निल, काल, महाकाल, स्वस्तिक, सौवस्तिक, वर्द्धमान, पुष्पमालक, अंकुश, प्रलम्ब, नित्यलोक, नित्योदयित, स्वयंप्रभ, उसभ, श्रेयंकर, क्षेमंकर, आभंकर, प्रभंकर, अपराजित, अरज, अशोक, विगतशोक, विमल, विमुख, वितत, वित्रस्त, विशाल, शाल, सुव्रत, अनिवर्तक, एकजटी, द्विजटी, करकरीक, राजगल, पुष्पकेतु एवं भावकेतु आदि ८८ ग्रहोंके नाम बताये हैं।[1]

समवायाङ्गमें भी उपर्युक्त ८८ ग्रहोंका समर्थन मिलता है—

एगमेगस्सणं चंदिम सूरियस्स अट्ठासीइ अट्ठासीइ महग्गहा परिवारो प० ॥—स० ८८.१

---

१ देखें—ठा० पृ० ९८-१००

अर्थात्—एक चन्द्र और सूर्यका परिवार ८८ महाग्रहोका है।

प्रश्नव्याकरणाङ्गमे सूर्य, चन्द्र, मगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु या धूमकेतु इन नौ ग्रहोके सम्बन्धमे प्रकाश डाला गया है। अत-एव उदयकालके अन्तमे ग्रहोका विचार शास्त्रीय दृष्टिसे होने लग गया था।

राशिविचार

यद्यपि ऋग्वेदमे राशि विचार स्पष्ट रूपमे नही मिलता है, पर उसके निम्न मंत्र द्वारा राशियोकी कल्पना की जा सकती है—

द्वादशारं नहि तज्जराय वर्वर्त्ति चक्रं परिद्यामृतस्य।
आपुत्रा अग्ने मिथुना सो अत्र सप्त शतानि विंशतिश्च तस्थुः॥

—ऋ० १, १६४, ११

अर्थात्—इस मत्रमे 'द्वादशार' शब्दसे द्वादश राशियोका ग्रहण किया गया है। वैसे तो ऋग्वेदमे और भी दो-एक जगह चक्र शब्द आया है, जो राशिचक्रका बोधक ही प्रतीत होता है।

द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नभ्यानि क उ तच्चिकेत।

—ऋ० १, १६४, ४९

स्पष्ट आगम प्रमाणके अभावमे भी युक्ति द्वारा इतना तो मानना ही पड़ेगा कि आकाशमण्डलका राशि एक स्थूल अवयव और नक्षत्र सूक्ष्म अवयव है। जब भारतियोने सौर-जगत्के सूक्ष्म अवयव नक्षत्रोका इतनी गम्भीरताके साथ ऊहापोह किया था, तब क्या वे स्थूलावयव राशिके बारेमें कुछ भी विचार नही करते होगे? साधारणतः बुद्धि द्वारा इस प्रश्नका उत्तर यही मिलेगा कि प्राचीन भारतियोने जहाँ सूक्ष्म अवयव नक्षत्रोको साहित्यिक मूर्त्तिमान रूप प्रदान किया है, वहाँ स्थूल अवयव राशियोको भी अवश्य साहित्यका मूर्त्तिमान रूप प्रदान किया होगा। एक दूसरी बात यह भी है कि आज हमारा प्राचीन सभी साहित्य उपलब्ध भी नही है। संभवतः जिस ग्रन्थमे राशियोका विवेचन किया गया हो,

वह ग्रथ नष्ट हो गया हो या किसी प्राचीन ग्रन्थागारमे पड़ा अन्वेषकोकी बाट जोह रहा हो।

कोई भी निष्पक्ष ज्योतिषका विद्वान् उदयकालके अन्य ज्योतिष-सिद्धान्तोके विवरणोको देखकर यह माननेको तैयार नही होगा कि उस कालमे राशियोका प्रचार नही था अथवा भारतीय लोग राशिज्ञानसे अपरिचित थे। आदिकालीन वेदाङ्ग ज्योतिष और ज्योतिष्करण्डकमें लग्नका सुस्पष्ट वर्णन है। कुछ लोग चाहे उसे नक्षत्र-लग्न माने या चाहे राशिलग्न, पर इतना तो माननेके लिये बाध्य होना पड़ेगा कि उदयकालमे राशियोका प्रचार था। साहित्यके अभावमे राशियोके ज्ञानके अभावको नही स्वीकार किया जा सकता है।

गुह्यविचार

ऋग्वेद सहिताके ५वे मण्डलान्तर्गत ४०वे सूत्रमे सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहणका वर्णन मिलता है। इस स्थानपर ग्रहणोकी उपद्रव-शान्तिके लिये इन्द्र आदि देवताओसे प्रार्थनाएँ की गई है। ग्रहण लगनेका कारण राहु और केतुको ही माना गया है।

समवायाङ्गके १५वे समवायके ३रे सूत्रमे राहुके दो भेद बतलाये है--नित्यराहु और पर्वराहु। नित्यराहुको कृष्णपक्ष और शुक्लपक्षका कारण तथा पर्वराहुको चन्द्रग्रहणका कारण माना है। केतु, जिसका ध्वजदण्ड सूर्यके ध्वजदण्डसे ऊँचा है, अतः भ्रमणवश यही केतु सूर्यग्रहणका कारण होता है। अभिप्राय यह है कि सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहणकी मीमान्सा भी उदयकालमे साहित्यके अन्तर्गत शामिल हो गई थी।

विषुव और दिनवृद्धिका विचार

वेदोमे दिनरात्रिकी समानताका द्योतक विषुव कही नही आया है। लेकिन तैत्तिरीय ब्राह्मण और एत्तिरीय ब्राह्मणमे विषुवका कथन किया गया है--

यथा वै पुरुष एवं विषुवांस्तस्य यथा दक्षिणोर्ध एवं पूर्वार्धो विषुवंतो

यथोत्तरोर्ध एवमुत्तरोर्धो विषुवतस्तस्मादुत्तर इत्याचक्षते प्रबाहुक्सतः शिर एव विषुवान् ॥

--ऐ० ब्रा० १८.२२

अर्थात् इस मंत्रमें विषुवको पुरुषकी उपमा दी गई है जिस प्रकार पुरुषके दक्षिणाङ्ग और वामाङ्ग होते हैं इसी प्रकार विषुवान् संवत्सरका सिर है और उससे आगे पीछे आनेवाले छह-छह महीने दक्षिण और वामाङ्ग है। तैत्तिरीय ब्राह्मणमें कहा है--

संतातिर्वा एते ग्रहाः। यत्परः समानः। विषुवान् दिवाकीर्त्यः। यथा शालायै पक्षसी। एवं ॰ संवत्सरस्य पक्षसी ॥

--तै० ब्रा० १.२.३

अर्थात् संवत्सर रूपी पक्षीका विषुवान् शिर है और उससे आगे पीछे आने-वाले छह-छह महीने उसके पक्ष हैं। जैन आगम ग्रन्थोंमें भी विषुवान्के सम्बन्धमें संक्षिप्त चर्चा मिलती है।

ऋग्वेदके एक मंत्रमें प्रार्थना की गयी है कि जिस प्रकार सूर्य दिनकी वृद्धि करता है, उसी प्रकार हे अश्विन् आयु वृद्धि करिये। दिनवृद्धि और दिनमानकी चर्चा गोपथ और शतपथ ब्राह्मणमें बीजरूपसे मिलती है। उदयकालके अन्तिमभागकी रचना समयवायाङ्ग में दिनरातकी व्यवस्था-पर अच्छा ऊहा-पोह है।--

बाहिराओ उत्तराओणं कट्ठाओ सूरिए पढमं छम्मासं अयमाणे चोयालीस इमे मंडलगते अट्ठासीति एगसट्ठिभागे मुहुत्तस्स दिवसखेत्तस्स निवुड्ढेत्ता रयणिखेत्तस्स अभिनिवुड्ढेत्ता सूरिए चारं चरइ; दक्खिण कट्ठाओणं सूरिए दोच्चं छम्मासं अयमाणे चोयालीसतिमे मंडलगते अट्ठासीइ एगसट्ठि भागे मुहुत्तस्सं रयणिखेत्तस्स निवुड्ढेत्ता दिवस खेत्तस्स अभिनिवुड्ढित्ताणं सूरिए चारं चरइ ॥--सं० ८८.४

अर्थात्--सूर्य जब दक्षिणायनमें निषध पर्वतके अभ्यन्तर मण्डलसे निकलता

हुआ ४८वे मडल—गमन मार्गमे आता है उस समय $\frac{2}{61}$ मु० दिन कम होकर रात बढती है—इस समय २४ घटीका दिन और ३६ घटीकी रात होती है। उत्तर दिशामे ४८वे मडल—गगनमार्गपर जब सूर्य आता है तब $\frac{2}{61}$ मु० दिन बढने लगता है और इस प्रकार जब सूर्य ९३वे मडलपर पहुंचता है तो दिन परमाधिक अर्थात् ३६ घटीका होता है। यह स्थिति आषाढी पूर्णिमाको घटती है।

सूयगडाङ्गमे भी दिनरातकी व्यवस्थाके सम्बन्धमे सक्षिप्त उल्लेख मिलता है, जो लगभग उपर्युक्त व्यवस्थासे मिलता-जुलता है।

इस प्रकार उदयकालमे ज्योतिषके सिद्धान्त अन्य विषयोके साथ लिपिबद्ध किये गये थे।

आदिकाल (ई० पू० ५००—ई० ५०० तक) का सामान्य परिचय

उदयकालमे जहाँ वेद, ब्राह्मण और आरण्यकोमे फूटकर रूपसे ज्योतिष चर्चा पायी जाती है, वहाँ आदिकालमे इस विषयके ऊपर स्वतन्त्र ग्रन्थ रचना की जाने लगी। इस युगमे शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छन्द ये छ भेद वेदाङ्गके प्रकट हो गये थे। अभिव्यञ्जना-की प्रणाली विकसित होकर ज्ञानभाण्डारका विभिन्न विषयोमे वर्गीकरण करनेकी क्षमता रखने लग गयी थी। इस युगका मानव अपने भाव और विचारोको केवल अपने तक ही सीमित नही रखता था, बल्कि वह उन्हे दूसरो तक पहुँचानेके लिये बद्धकटि था। उदयकालमे वेद, ब्राह्मणादि ग्रन्थ ज्ञान सामान्यको लेकर चले थे तथा उनके प्रतिपाद्य विषयका लक्ष्य भी एक था, लेकिन इस युगमे ज्ञानभाण्डारकी अभिव्यक्तिका मापदण्ड ऊँचा उठा; फलतः ज्योतिष-साहित्यका विकास भी स्वतन्त्र रूपसे हुआ। यज्ञोंके तिथि, मूहूर्त्तादि स्थिर करनेमें इस विद्याकी नितान्त आवश्यकता

पड़ती थी, इसलिये इस विषयका अध्ययन आदिकालमें व्यापक रूपसे हुआ। ई० पू० १००-ई० स० २००के साहित्यसे ज्ञात होता है कि आदि-कालमे ज्योतिषका साहित्य केवल ग्रह, नक्षत्र विद्या तक ही सीमित नही था; प्रत्युत धार्मिक, राजनीतिक एव सामाजिक विषय भी इस शास्त्रके आलोच्य विषय बन गये थे तथा उदयकालमे विशृखलित रूपमे प्रचलित ज्योतिष-मान्यताओका संकलन वेदाङ्ग ज्योतिषके रूपमे आरम्भ हो गया था

वेदाङ्ग ज्योतिषके रचनाकालके सम्बन्धमें विभिन्न मत है। प्रो० मैक्समूलरने इसका रचनाकाल ई० पू० ३००, पो० वेबरने ई० पू० ५००, कोलब्रुकने ई० पू० १४१० और प्रो० ह्विटनीने ई० पू० १३३८ बतलाया है। गणित क्रिया करनेसे वेदाङ्ग-ज्योतिषमे प्रतिपादित अयन ई० पू० १८०८मे आता है। क्योंकि ई० पू० ५७२मे रेवती तारा सम्पाती तारा मानी गयी है। इस समय उत्तराषाढाके प्रथम चरणमे उत्तरायण माना गया है, लेकिन वेदाङ्ग ज्योतिषके निर्माणकालमे धनिष्टारम्भमे उत्तरायण माना जाता था। अर्थात् १$\frac{3}{8}$ नक्षत्र--२३ अश २० कलाका अयनान्तर पडता है। सम्पातकी गति प्रतिवर्ष ५० कला है, अत. उक्त अन्तर १६८० वर्षमे पड़ेगा। अतएव १६८०--५७२=११०८। विभा-गात्मक धनिष्टारम्भी ३०० वर्ष और जोड देनेपर ११०८+३००= १४०८ वर्ष हुए। इस गणनाके हिसाबसे वेदाङ्ग ज्योतिषका रचनाकाल ई० पू० १४०८ हुआ।

निष्पक्ष दृष्टिसे विचार करनेपर मानना पड़ेगा कि वेदाङ्ग ज्योतिषमे प्रतिपादित तत्त्व अवश्य प्राचीन है, पर भाषा आदि कुछ चीजे ऐसी है जिससे इसका संकलनकाल ई० पू० ५८० वर्षसे पहले मानना उचित नही जँचता।

वेदाङ्ग ज्योतिषमे ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद ज्योतिष ये तीन ग्रन्थ माने जाते है। प्रथमके संग्रहकर्त्ता लगध नामके ऋषि है, इसमे ३६ कारिकाएँ है। यजुर्वेद ज्योतिषमें ४९ कारिकाएँ है, जिनमें ३० कारिकाएँ तो ऋग्वेद ज्योतिषकी है, और १३ नयी आयी हैं। अथर्व ज्योतिषमें १६२

श्लोक है। इन तीनों ग्रन्थोमें फलितकी दृष्टिसे अथर्व ज्योतिष महत्त्व-पूर्ण है।

आलोचनात्मक दृष्टिसे वेदाङ्ग ज्योतिषमें प्रतिपादित ज्योतिष मान्यताओंको देखनेसे ज्ञात होगा कि वे इतनी अविकसित और आदि रूपमें हैं जिससे उनकी समीक्षा करना दुष्कर है। डा० जे० वर्गेसने 'नोट्स ऑन हिन्दू एस्ट्रोनामी' नामक पुस्तकमें वेदाङ्ग ज्योतिषके अयन, नक्षत्र गणना, लग्न साधन आदि विषयोंकी आलोचना करते हुए लिखा है कि ईस्वी सन्से कुछ शताब्दि पूर्व प्रचलित उक्त विषयोंके सिद्धान्त स्थूल हैं। आकाश निरीक्षणकी प्रणालीका आविष्कार इस समय तक हुआ प्रतीत नहीं होता है, लेकिन इस कथनके साथ इतना स्मरण और रखना होगा कि वेदाङ्ग, ज्योतिषकी रचना यज्ञ-यागादिके समय विधानके लिये ही हुई थी, ज्योतिष तत्त्वोंके प्रतिपादनके लिये नहीं।

वेदाङ्ग ज्योतिषके आसपासमें रचे गये जैन ज्योतिषके ग्रन्थ सूर्य-प्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति और ज्योतिष्करण्डक इस विषयके स्वतन्त्र ग्रन्थ हैं, इसके अतिरिक्त कल्पसूत्र, निरुक्त, व्याकरण, स्मृतियाँ, महाभारत और जीवाभिगम सूत्र आदि ईस्वी सन्से सैकड़ों वर्ष पूर्व रचित ग्रन्थोंमें फुटकर रूपसे ज्योतिषकी अनेक चर्चाएँ आई हैं।

इस कालकी वैदिक ज्योतिष मान्यतामें दक्षिण और उत्तर ध्रुवोंमें बन्धा हुआ भचक्र प्रवह वायु द्वारा भ्रमण करता हुआ स्वीकार किया गया है। लेकिन जैन मान्यतामें सुमेरुको केन्द्र मान ग्रहोंके भ्रमण मार्गको बताया है। सूर्यप्रदक्षिणाकी गति उत्तरायण और दक्षिणायन इन दो भागोंमें विभक्त है और इन अयनोंकी वीथियाँ—गमनमार्ग १८४ हैं, जो सुमेरुकी प्रदक्षिणाके रूपमें गोल किन्तु बाहरकी ओर विस्तृत हैं। इन मार्गोंकी चौड़ाई $\frac{५१}{६०}$ योजन है तथा एक मार्गसे दूसरे मार्गका अन्तराल लगभग दो योजन बताया गया है। इस प्रकार कुल मार्गोंकी चौडाई और अन्तरालोंका प्रमाण ५१०से कुछ अधिक है, जो कि ज्योतिषमें योजना-

त्मक सूर्यका भ्रमण मार्ग कहा गया है। तात्पर्य यह कि सूर्य उत्तर-दक्षिण ५१० योजनके लगभग ही चलता है। निष्कर्ष यह है कि ई० पू० ५००-४००में भारतीय ज्योतिषमें ग्रहभ्रमणके दो सिद्धान्त प्रचलित थे। पहला सूत्र वह था जो पृथ्वीको केन्द्र मानकर प्रवहवायुके कारण ग्रहोंका भ्रमण स्वीकार करता था और दूसरा वह था जो सुमेरुको केन्द्र मानकर स्वाभाविक रूपसे ग्रहोंका गमन मानता था।

भारतीय ज्योतिषके ईस्वी पूर्व ५वीं शताब्दीके साहित्यका सूक्ष्म दृष्टिसे निरीक्षण करनेपर ज्ञात होगा कि इस युगमें ज्योतिषने समस्त वेदाङ्गोंमें श्रेष्ठ स्थान प्राप्त कर लिया था। वेदाङ्ग ज्योतिषके प्रारम्भमें इस शास्त्रका प्राधान्य दिखलाते हुए कहा है—

यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा।
तद्वेदाङ्गशास्त्राणां ज्योतिषं मूर्धनि स्थितम्॥

इस युगमें ज्योतिषको ज्ञानरूपी शरीरका नेत्र कहा गया है अर्थात् नेत्रोंके अभावमें जैसे शरीर अपूर्ण और व्यर्थ है उसी प्रकार, ज्योतिष ज्ञानके बिना अन्य विषयोंका ज्ञान अपूर्ण और अनुपयोगी है। इस युगके ज्योतिषशास्त्रके ज्ञानको व्यवहारोपयोगी होनेके साथ-साथ आत्मकल्याणकारी भी माना गया है। आचार्य गर्गने कहा है—

ज्योतिश्चक्रे तु लोकस्य सर्वस्योक्तं शुभाशुभम्।
ज्यो.तिर्ज्ञानं तु यो वेद स याति परमां गतिम्॥

अर्थात्—ज्योतिश्चक्र सम्पूर्ण लोकके शुभाशुभको व्यक्त करनेवाला है, अतः जो ज्योतिषशास्त्रका ज्ञाता है वह परम कल्याणको प्राप्त होता है।

ई० १००-३०० तक के कालमें इस शास्त्रकी उन्नति विशेष रूपसे हुई। कृत्तिकादि नक्षत्र गणनामें राशियोंका क्रम निर्धारण नहीं किया जा सकता था, इसलिए अश्विनी आदि नक्षत्र गणना प्रचलित हुई। तथा सम्पात तारा रेवती स्वीकृत हो गयी थी। इस कालमें ज्योतिषके प्रवर्त्तक

निम्न १८ आचार्य हुए, जिन्होंने अपने दिव्यज्ञान द्वारा ज्योतिषके सिद्धान्त-ग्रन्थोंका निर्माण किया।

सूर्यः पितामहो व्यासो वसिष्ठोऽत्रिः पराशरः।
कश्यपो नारदो गर्गो मरीचिर्मनुरङ्गिराः॥
लोमशः पौलिशश्चैव च्यवनो यवनो भृगुः।
शौनकोऽष्टादशाश्चैते ज्योतिः शास्त्रप्रवर्त्तकाः॥

——काश्यप

विश्वसृड्नारदो व्यासो वसिष्ठोऽत्रि पराशरः।
लोमशो यवनः सूर्यश्च्यवन कश्यपो भृगुः॥
पुलस्त्यो मनुराचार्यः पौलिशः शौनकोऽङ्गिराः।
गर्गो मरीचिरित्येते ज्ञेया ज्योतिःप्रवर्त्तकाः॥

——पराशर

अर्थात्——सूर्य, पितामह, व्यास, वसिष्ट, अत्रि, पराशर, काश्यप, नारद, गर्ग, मरीचि, मनु, अंगिरा, लोमश, पुलिश, च्यवन, यवन, भृगु एवं शौनक ये १८ ज्योतिषशास्त्रके प्रवर्त्तक बतलाये गये हैं। पराशरने इन १८ आचार्योंके साथ पुलस्त्य नामके एक आचार्यको और माना है, अतः इनके मतसे १९ आचार्य ज्योतिषशास्त्रके प्रवर्त्तक हैं। नारदने सूर्यको छोड शेष १७को ही इस शास्त्रका प्रवर्त्तक बतलाया है। इनमेंसे कुछ आचार्य संहिता और सिद्धान्त इन दोनोंके रचयिता हैं और कुछ सिर्फ एक विषयके। इनके निश्चित समयका पता लगाना कठिन है। श्रीसुधाकर द्विवेदीने वराहमिहिर विरचित पंचसिद्धान्तिकाकी प्रकाशिका नामक टीकाके प्रारम्भमें सूर्यऋषि संवादके कई श्लोक उद्धृत किये हैं तथा उनके सम्बन्धमें बताया है।

"आदि वेदाङ्गरूप ज्ञान पितामह——ब्रह्माको प्राप्त हुआ, उन्होंने अपने पुत्र वसिष्ठको दिया। विष्णुने उस ज्ञानको सूर्यको दिया, वही सूर्य-

सिद्धान्त नामसे विख्यात हुआ। उस सिद्धान्तको मैंने (सूर्यने) मयको दिया, वही वसिष्ठ सिद्धान्त है। पुलिशने निज निर्मित सिद्धान्तको गर्ग आदि मुनियोको बतलाया। मैंने (सूर्यने) शापग्रस्त होकर यवन जातिमें जन्म पाकर रोमकको रोमकसिद्धान्त बतलाया। रोमकने अपने नगरमें उसका प्रचार किया।"

श्रीरजनीकान्त शास्त्रीने सूर्यसिद्धान्तके प्रारम्भमें आयी हुई मयकी कथाको रूपक बतलाया है। उनका कथन है कि मय नामका कोई यूनानी इस देशमें ज्योतिषका ज्ञान प्राप्त करनेके लिये आया था। जब वह इस शास्त्रका मर्मज्ञ होकर अपने यहाँ गया तो उसीने इसका वहाँ प्रचार किया। इससे स्पष्ट है कि ई० पू० २००-ई० १०० तक के कालमें ही भारतीय ज्योतिषका प्रचार विदेशोमें होने लग गया था।

कौटिल्यके अर्थशास्त्रसे पता चलता है कि आदिकालके ज्योतिषी हर तरहके ज्यौतिषक और अन्य गणितोंसे पूर्ण परिचित होते थे। शरीरके फड़कनेका क्या अर्थ है, स्वप्नका फल कैसा होता है, विभिन्न प्रकारके शुभ-कर्मोंके करनेका शुभ मुहूर्त्त कौनसा है, युद्ध किस दिन करना चाहिये, सेनापति कौन हो, जिससे युद्धमें सफलता मिले। इस युगका ज्योतिषी केवल शुभाशुभ समयसे ही परिचित नहीं होता था, बल्कि वह प्राकृतिक ज्योतिषके आधारपर हाथी, घोड़ा एवं खड्ग आदिके इंगितोंसे भावी शुभाशुभ फलका निर्देश करता था।

ई० पू० १००—ई० ३०० तकके ज्योतिष विषयक साहित्यका अध्ययन करनेसे पता चलता है कि इस कालमें आलोचनात्मक दृष्टिसे ज्योतिषका अध्ययन ही नहीं होता था, बल्कि इस शास्त्रके वेत्ताओंकी भी आलोचनाएँ होने लग गई थी। यह आलोचनाका क्षेत्र सीमित नहीं हुआ, किन्तु ईस्वी सन्‌की ५वी शताब्दीमें होनेवाले आर्यभट्ट और लल्ल जैसे धुरन्धर ज्योतिर्विदोंने सिद्धान्तगणितसे हीन ज्योतिषीकी खिल्ली उड़ायी है। माण्डवीकी निम्न आलोचना प्रसिद्ध है—

दशदिनकृतपापं हन्ति सिद्धान्तवेत्ता त्रिदिनजनितदोषं तन्त्रविज्ञः स एव ।
करण भगणवेत्ता हन्त्यहोरात्रदोषं जनयति बहुपापं तत्र नक्षत्रसूची ॥

अर्थात्--सिद्धान्तगणितको जाननेवाला दस दिनके किये गये पापोंको, तन्त्रगणितका वेत्ता तीन दिनके किये गये पापोंको एवं करण और भगणका ज्ञाता एक दिनके किये गये पापको नष्ट करता है । पर केवल नक्षत्रोंका ज्ञाता ज्योतिषके वास्तविक तत्त्वोंकी अज्ञानताके कारण अनेक प्रकारके पापोंको उत्पन्न करता है । अभिप्राय यह है कि ईस्वी सन्‌की ४वीं और ५वीं सदीमें सामान्य ज्योतिषियोंकी नक्षत्रसूची--मूर्ख तक कहकर निन्दा की जाने लगी थी ।

आदिकालके अन्तमें भारतीय ज्योतिषने अनेक संशोधन देखे । ईस्वी सन्‌की ५वीं सदीमें होनेवाले आर्यभट्टने इस शास्त्रमें एक नयी क्रान्ति की । उसने अपनी अप्रतिम प्रतिभा द्वारा अनेक मौलिक सिद्धान्तोंके साथ-साथ ग्रहोंको स्थिर और पृथ्वीको चल सिद्ध किया तथा इसी आधार स्तम्भपर ग्रह गणितका निर्माण किया । इधर जैन मान्यतामें ऋषिपुत्र, भद्रबाहु और कालकाचार्यने ज्योतिषके अनेक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तोंको ग्रन्थ रूपमें निबद्ध किया । कालकाचार्यके सम्बन्धमें आयी हुई एक कथासे प्रकट होता है कि इन्होंने विदेशोंमें भ्रमण किया था तथा अन्य देशोंके ज्योतिष-वेत्ताओंके साथ रहकर प्रश्नशास्त्र और रमलशास्त्रका परिष्कार कर भारतमें प्रचार किया । आदिकालमें ज्योतिष-साहित्यका प्रणयन खूब हुआ है ।

आदिकाल (ई० पू० ५००से ई० ५०० तक)--प्रमुख ग्रन्थ और ग्रन्थकारोंका संक्षिप्त परिचय

इस कालकी सबसे प्रधान और प्रारम्भिक रचना वेदाङ्ग ज्योतिष है । यद्यपि इसके रचनाकालके सम्बन्धमें अनेक मत प्रचलित हैं, पर भाषा, शैली और विषयके परीक्षण द्वारा ई० पू० ५०० रचनाकाल मालूम पड़ता है ।

ऋक् ज्योतिष ऋक् ज्योतिषके प्रारम्भमे प्रतिपाद्य विषयोका जिक्र करते हुए बताया गया है--

पञ्चसंवत्सरमययुगाध्यक्षं प्रजापतिम् ।
दिनर्त्वयनमासाङ्गः प्रणम्य शिरसा शुचिः ॥१॥
ज्योतिषामयनं पुण्यं प्रवक्ष्याम्यनुपूर्वशः ।
सम्मतं ब्राह्मणेन्द्राणां यज्ञकालार्थसिद्धये ॥२॥

--अ० ज्यो० श्लो० १-२

अर्थात् एक युग सम्बन्धी दिवस, ऋतु, अयन, मास और युगाध्यक्षका वर्णन किया जायगा। तात्पर्य यह है कि पंचवर्षात्मक युगके अयन-नक्षत्र, अयन-मास, अयन-तिथि, ऋतु प्रारम्भ काल, पर्वराशि, उपादेयपर्व, भाग, योग, व्यतिपात और ध्रुवयोग, मुहूर्त्तप्रमाण, नक्षत्रदेवता, उग्र तथा क्रूर नक्षत्र, अधिमास, दिनमान, प्रत्येक नक्षत्रका भोग्यकाल, लग्नानयन, चन्द्रर्तुसंख्या, वेधोपाय एवं कलादि लक्षणका सक्षिप्त निरूपण किया गया है। इसमे माघशुक्ला प्रतिपदाको युगारम्भ और पौष कृष्णा अमावास्याको युग समाप्ति बतायी गयी है--

स्वराक्रमेते सोमार्कौ यदा साकं सवासवौ ।
स्यात्तदादियुगं माघस्तपश्शुक्लोऽयनह्युदक् ॥६॥

अर्थ--जब धनिष्ठा नक्षत्रके साथ सूर्य और चन्द्रमा योगको प्राप्त होते है, उस समय युगारम्भ होता है। यह काल माघ शुक्ल प्रतिपत्को पडता है। उत्तरायण और दक्षिणायनकी चर्चा भी उदयकालसे भिन्न मिलती है। इस युगमे आश्लेषार्धमे दक्षिणायन और धनिष्ठादिमे उत्तरायण माना गया है। एक युगके नक्षत्र और तिथ्यादि निम्न प्रकार बताये गये है--

प्रथमं सप्तमं चाहुरयनाद्यं त्रयोदशम् ।
चतुर्थं दशमं चैव द्वियुग्मं बहुलेऽप्यृतौ ॥९॥

वसुस्त्वष्टा भवोऽजश्च मित्रस्सर्पोऽश्विनौ जलम् ।
अर्यमाकोऽयनाद्यास्स्युरर्धपञ्चमभास्त्वृतुः ॥१०॥

अर्थात्—युगका प्रथम अयन माघ शुक्ला प्रतिपदाको धनिष्ठा नक्षत्रमें, द्वितीय अयन श्रावण शुक्ला सप्तमीको चित्रा नक्षत्रमें, तृतीय अयन माघ शुक्ला त्रयोदशीको आर्द्रा नक्षत्रमे, चतुर्थ अयन श्रावण कृष्णा चतुर्थीको पूर्वाभाद्र पद नक्षत्रमे, पाँचवाँ अयन माघ कृष्णा दशमीको अनुराधा नक्षत्रमे, छठवाँ अयन श्रावण शुक्ला प्रतिपदाको आश्लेषा नक्षत्रमे, सातवाँ माघ शुक्ला सप्तमीको अश्विनी नक्षत्रमे, आठवाँ श्रावण शुक्ला त्रयोदशीको पूर्वाषाढा नक्षत्रमे, नवमा माघ कृष्णा चतुर्थीको उत्तरा- फाल्गुनी नक्षत्रमे और दशवाँ अयन श्रावण कृष्णा दसमीको रोहिणी नक्षत्रमे माना गया है ।

दिनमानका कथन करते हुए उसकी हानि वृद्धिका प्रमाण बताया है—

धर्मवृद्धिरपां प्रस्थः क्षपाह्रास उदग्गतौ ।
दक्षिणे तौ विपर्यासः षण्मुहूर्त्ययनेन तु ॥८॥

अर्थात्—उत्तरायण सूर्यमे एक प्रस्थ जल निकलनेके काल प्रमाण—छः मुहूर्त्त दिनकी वृद्धि होती है, और इतने ही मुहूर्त्त रात्रिका क्षय होता है । दक्षिणायनमे विपरीत—छः मुहूर्त्त रात्रिकी वृद्धि और इतनेही मुहूर्त्त दिनका ह्रास होता है । अर्थात् उत्तरायणमे सबसे बड़ा दिन १८ मुहूर्त्त—३६ घटीका और रात १२ मुहूर्त्त—२४ घटीकी होती है । दक्षिणायनमे सबसे बडी रात १८ मुहूर्त्त और दिन १२ मुहूर्त्तका होता है । इस ग्रन्थमे एक चान्द्र वर्ष ३५४ दिन $\frac{५०}{६२}$ मुहूर्त्तका, एक नाक्षत्रवर्ष ३२७ $\frac{५०}{६२}$ दिनका, सावन वर्ष ३६० दिनका, सौरवर्ष ३६६ दिनका और अधिक मास सहित एक चान्द्रवर्ष ३८३ दिन २१ $\frac{१८}{६२}$ मुहूर्त्तका बताया गया है । एक युगमें ६० सौर मास, ६१ सावन मास और ६७ नाक्षत्र मास बताये है । पञ्चवर्षीय एक युगके दिनादिका मान इस प्रकार कहा है —

एक युगमे सौर दिन	=	१८००
,, ,, चान्द्रमास	=	६२
,, ,, सावन दिन	=	१८३०
,, ,, चान्द्र दिन	=	१८६०
,, ,, क्षय दिन	=	३०
,, ,, भगण या नक्षत्रोदय	=	१८३५
,, ,, चान्द्र भगण	=	६७
,, ,, चान्द्र सावन दिन	=	१७६८
एक सौर वर्षमे नक्षत्रोदय	=	३६७
एक अयनसे दूसरे अयन पर्यन्त सौर दिन	=	१८०
एक अयनसे दूसरे अयन तक सावन दिन	=	१८३

ऋक् ज्योतिषमे एक चान्द्रमासमे २९$\frac{३२}{६३}$ दिन और एक तिथिमे २९$\frac{३२}{६३}$ मुहूर्त्त बताये गये है। इसमे नक्षत्र गणना कृत्तिका और धनिष्ठासे मिलती है। नक्षत्रोका नामकरण निम्न प्रकार है--

(१) जौ--अश्विनी, (२) द्रा--आर्द्रा, (३) गः--पूर्वा-फाल्गुनी, (४) खे--विशाखा, (५) ध्वे--उत्तराषाढा, (६) हि--पूर्वाभाद्रपद, (७) रो--रोहिणी, (८) पा--आश्लेषा, (९) चित्--चित्रा, (१०) मू--मूल, (११) शक्--शतभिषक्, (१२) ण्ये--भरणी, (१३) सृ--पुनर्वसु, (१४) मा--उत्तराफाल्गुनी, (१५) धा--अनुराधा, (१६) न--श्रवण, (१७) रे--रेवती, (१८) मृ--मृगशिर, (१९) घा--मघा, (२०) स्वा--स्वाति, (२१) पा--पूर्वाषाढा, (२२) अज--पूर्वाभाद्रपद, (२३) कृ--कृत्तिका, (२४) ष्य--पुष्य, (२५) हा--हस्त, (२६) जे--ज्येष्ठा, (२७) ष्ठा--धनिष्ठा। इन नक्षत्रोके देवता भी इन्ही सकेताक्षरोमे बतला दिये गये है।

विषुवत्की पक्ष और तिथि संख्या निकालनेका नियम इस प्रकार बताया है--

विषुवन्तं द्विरभ्यस्य रूपोनं षड्गुणीकृतम् ॥
पक्षा यदर्धं पक्षाणां तिथिस्स विषुवान्स्मृतः ॥

तात्पर्य यह है कि समान दिनरात प्रमाणवाला विषुव दिन वर्षमे दो बार आता है। यह अयनके प्रत्येक अर्ध भागमे पडता है। आजकलके हिसाबसे सायन मेषादि और सायन तुलादिमें पड़ता है, पर इसका अर्थ भी वही है जो ऋक् ज्योतिषमे अयनार्ध बतलाया है, क्योकि कर्कसे लेकर धनु पर्यन्त दक्षिणायन होता है, इसमे तुलाके सायन सूर्यमे विषुव दिन पड़ेगा। इसी प्रकार मकरसे लेकर मिथुन तक उत्तरायण होता है, इसमे भी मेषके सायन सूर्यमे विषुव दिन माना गया है--अर्थात् अयनके अर्ध भागमे ही विषुव दिन पड़ता है, अतएव माघ शुक्लके आदिमे तीन सौरमासके अन्तरालमे पहला विषुव दिन पड़ेगा। इसकी गणित प्रक्रियाके लिये त्रैराशि की कि--६० सौर मासोमे १२४ चान्द्रपक्ष होते है तो तीन सौर मासमे कितने हुए ? इस प्रकार $\frac{३\times१२४}{६०}=\frac{३१}{५}$ यह शेष रखा। दूसरे विषुवमे छ. सौर मास होगे, इसलिए अन्तर्गत पक्ष $\frac{३१}{५}\times\frac{६}{३}=\frac{६२}{५}$ दो विषुवोमे क्षेप एक गुणा, तीनमे द्विगुणा तथा चारमे तिगुणा, इस प्रकार इष्ट विषुवमे एक कम गुणा क्षेप मानना पडेगा। अतः (वि–१) को पक्षोमे गुणा कर देनेपर अभीष्ट विषुव सख्या आ जायगी। अत. अभीष्ट विषुव संख्या=वि-(अन्तर्गत पक्ष)$-\frac{६}{५}$ (वि–१)$=\frac{६२}{५}$वि०$=\frac{६२}{५}$ इसमे क्षेपकको जोड़ देनेपर युगादिसे विषुव सख्या आ जायगी। आर्य ज्योतिषमे भी इसी अभिप्रायका एक करणसूत्र आया है।

ऋक् ज्योतिषके रचनाकाल तक ग्रह और राशियोका स्पष्ट व्यवहार नही होता था। इस ग्रन्थमें नक्षत्रोदयरूप लग्नका उल्लेख अवश्य है, पर उसका फल आजकलके समान नहीं बताया गया है। यदि गणित ज्योतिषकी दृष्टिसे ऋक् ज्योतिषको परखा जाय तो निराश ही होना पड़ेगा, क्योकि उसमे गणित ज्योतिषकी कोई भी महत्त्वपूर्ण बात नही है। सिर्फ यही कहा जा सकेगा कि

यज्ञ-यागादिके समय ज्ञानके लिये नक्षत्र, पर्व, अयन आदिका विधान बताया गया है ।

यजुर्वेद ज्योतिष प्रायः ऋक् ज्योतिषसे मिलता-जुलता है । विषय प्रतिपादनमें कोई मौलिक भेद नहीं है । अथर्व ज्योतिषमें फलित ज्योतिषकी अनेक महत्त्वपूर्ण बातें हैं । वास्तवमें इन तीनों वेदाङ्ग ज्योतिषोंमें ज्योतिषका स्वतन्त्र ग्रन्थ यही कहा जा सकता है । विषय और भाषाकी दृष्टिसे इसका रचनाकाल उक्त दोनोंसे अर्वाचीन है । इसमें तिथि, नक्षत्र, करण, योग, तारा और चन्द्रमाके बलाबलका सुन्दर निरूपण किया गया है ।--

यजु और अथर्व ज्योतिष

तिथिरेकगुणा प्रोक्ता नक्षत्रं च चतुर्गुणं ।
वारश्चाष्टगुणः प्रोक्तः करणं षोडशान्वितम् ॥९०॥

द्वात्रिंशद्गुणो योगस्तारा षष्ठिसमान्विता ।
चन्द्रः शतगुणः प्रोक्तस्तस्माच्चन्द्रबलाबलम् ॥९१॥

समीक्ष्य चन्द्रस्य बलाबलानि गृहाः प्रयच्छन्ति शुभाशुभानि ।

अर्थ--तिथिका एक गुण, नक्षत्रके चार गुण, वारके आठ गुण, करणके सोलह गुण, योगके बत्तीस गुण, ताराके साठ गुण और चन्द्रमाके सौ गुण कहे गये हैं । चन्द्रमाके बलाबलानुसार ही अन्य ग्रह शुभाशुभ फल देते हैं । तात्पर्य यह है कि अथर्व ज्योतिषकी रचनाके समय ज्योतिषशास्त्रका विचार सूक्ष्म दृष्टिसे होने लग गया था । इस समय भारतवर्षमें वारोंका भी प्रचार हो गया था तथा वाराधिपति भी प्रचलित हो गये थे--**आदित्यः सोमो भौमस्च तथा बुधबृहस्पतिः । भार्गवः शनैचरश्चैव ऐसे सप्त दिनाधिपाः ॥ ९३ ॥**

इसी प्रकार इसमें जातकके जन्म नक्षत्रको लेकर सुन्दर ढंगसे फल बतलाया है--

जन्म संपद्विपत्क्षेम्यः प्रत्वरः साधकस्तथा ।
नैधनो मित्रवर्गश्च परमो मैत्र एव च ॥१०३॥
दशमं जन्मनक्षत्रात्कर्मनक्षत्रमुच्यते ।
एकोनविंशतिं चैव गर्भाधानकमुच्यते ॥१०४॥
द्वितीयमेकादशं विंशमेष संपत्करो गणः ।
तृतीयमेकविंशंतु द्वादशं तु विपत्करम् ॥१०५॥
क्षेम्यं चतुर्थं द्वाविंशं तथा यच्च त्रयोदशं ।
प्रत्वरं पंचमं विद्यात्त्रयोविंशं चतुर्दशं ॥१०६॥
साधकं तु चतुर्विंशं षष्ठं पंचदशं च यत् ।
नैधनं पंचविंशं तु षोडशं सप्तमं तथा ॥१०७॥
मैत्रे सप्तदशं विद्यात्पर्याङ्गुशमितिचाष्टमं ।
सप्तविंशं परं मैत्रं नवमष्टादशं च यत् ॥१०८॥

अर्थात् तीन-तीन नक्षत्रोंका एक एक वर्ग स्थापित कर फल बताया है—

वर्गक्रम

१ जन्मनक्षत्र	१० कर्म नक्षत्र	१९ आधान नक्षत्र
२ संपत्कर नक्षत्र	११ संपत्कर नक्षत्र	२० संपत्कर नक्षत्र
३ विपत्कर नक्षत्र	१२ विपत्कर नक्षत्र	२१ विपत्कर नक्षत्र
४ क्षेमकर नक्षत्र	१३ क्षेमकर नक्षत्र	२२ क्षेमकर नक्षत्र
५ प्रत्वर नक्षत्र	१४ प्रत्वर नक्षत्र	२३ प्रत्वर नक्षत्र
६ साधक नक्षत्र	१५ साधक नक्षत्र	२४ साधक नक्षत्र
७ निधन नक्षत्र	१६ निधन नक्षत्र	२५ निधन नक्षत्र
८ मित्र नक्षत्र	१७ मित्र नक्षत्र	२६ मित्र नक्षत्र
९ परममित्र नक्षत्र	१८ परममित्र नक्षत्र	२७ परममित्र नक्षत्र

उपर्युक्त नक्षत्रोंका वर्गीकरण, जिसे तारा कहा जाता है, आजतक इसी प्रकार का चला आ रहा है । यों तो जातक ग्रन्थोंके फलादेशमें बहुत

संशोधन और परिवर्द्धन हुए है पर तारोका फलादेश जैसेका तैसा ही रह गया है। इस छोटेसे ग्रन्थमे ग्रह, उल्का, विद्युत, भूकम्प, दिग्दाह आदि का फल भी संक्षेपमे बताया है। ग्रहोके विशेष फलादेशके कथनमें **न कृष्णपक्षे शशिनः प्रभावः**' कहकर कृष्णपक्षमे चन्द्रमाको सर्वथा निर्बल बताया है और अन्य ग्रहोके बलाबलानुसार कार्योके करनेका विधान है।

सूर्य प्रज्ञप्ति

वेदाङ्ग ज्योतिषके समान प्राचीन ज्योतिषका प्रामाणिक और मौलिक ग्रन्थ सूर्य प्रज्ञप्ति है। इस ग्रन्थकी भाषा प्राकृत है। मलयगिरि सूरिने सस्कृत टीका लिखी है। इस ग्रन्थमे प्रधान रूपसे सूर्यके गमन, आयु, परिवार और संख्याका निरूपण किया गया है। इसमे जम्बूद्वीपमे दो सूर्य और दो चन्द्रमा बताये है, तथा प्रत्येक सूर्यके अट्ठाइस-अट्ठाइस नक्षत्र अलग-अलग कहे गये है। इन सूर्योका भ्रमण एकान्तर रूपसे होता है, जिससे दर्शकोको एक ही सूर्य दृष्टिगोचर होता है। इसमे दिन, मास, पक्ष, अयन आदिका कथन करते हुए दिनमानके सम्बन्धमे बताया है—

तस्से आदिच्चरस्स संवच्छरस्स सइंअट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति। सइंअट्ठारसमुहुत्ता राती भवति सइंदुवालिसमुहुत्ते दिवसे भवति सइंदुबालसमुहुत्ता राती भवति। पढमे छम्मासे अत्थि अट्ठारसमुहुत्ता राती भवति। दोच्च छम्मासे अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे णत्थि अट्ठारस मुहुत्ता राती अत्थि दुवालसमुहुत्ते दिवसे पढमे छम्मासे दोच्चे छम्मासे णत्थि।

अर्थात्—उत्तरायणमे सूर्य लवण समुद्रके बाहरी मार्गसे जम्बूद्वीपकी ओर आता है और इस मार्गके प्रारम्भमे सूर्यकी चाल सिंह गति, भीतर जम्बूद्वीपके आते-आते क्रमशः मन्द होती हुई गजगतिको प्राप्त हो जाती है। इस कारण उत्तरायणके आरम्भमे बारह मुहूर्त्त—२४ घटीका दिन होता है, किन्तु उत्तरायणकी समाप्ति पर्यन्त गतिके मन्द हो जानेसे १८ मुहूर्त्त—३६ घटीका दिन होने लगता है और रात १२ मुहूर्त्तकी—९ घंटा ३६ मिनटकी होने लगती है। इसी प्रकार दक्षिणायनके प्रारम्भमे सूर्य जम्बूद्वीपके

भीतरी मार्गसे बाहरकी ओर ––लवण समुद्रकी ओर मन्द गतिसे चलता हुआ शीघ्र गतिको प्राप्त होता है जिससे दक्षिणायनके आरम्भमे १८ मुहूर्त्त––१४ घटा २४ मिनटका दिन और १२ मुहूर्त्तकी रात होती है, परन्तु दक्षिणायनके अन्तमे शीघ्र गति होनेके कारण सूर्य अपने रास्तेको शीघ्र तय करता है जिससे १२ मुहूर्त्तका दिन और १८ मुहूर्त्तकी रात होती है। मध्यमे दिनमान लानेके लिये अनुपातसे १८-१२=६ मु० अ०, $\frac{६}{१८३}=\frac{१}{३१}$ मु०की प्रतिदिनके दिनमानमे उत्तरायणमे वृद्धि और दक्षिणायनमे हानि होती है।

यह दिनमान सब जगह एक नही होगा, क्योकि हमारे निवासरूपी पृथ्वी, जो कि जम्बूद्वीपका एक भाग है, समतल नही है। यद्यपि जैन मान्यतामे जम्बूद्वीपको समतल माना गया है, लेकिन सूर्य प्रज्ञप्तिमे बताया है कि पृथ्वीके बीचमे हिमवान्, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मि और शिखरिणी इन छः पर्वतोके आ जानेसे यह कही ऊँची और कही नीची हो गयी है। अतः ऊँचाई, निचाई अर्थात् अक्षाश, देशान्तरके कारण दिनमान अन्तर पड़ जाता है।

इस ग्रन्थमे पञ्चवर्षात्मक युगके अयनोके नक्षत्र, तिथि और मासका वर्णन निम्न प्रकार मिलता है––

प्रथमा बहुलपडिवए विइया बहुलस्स तेरिसीदिवसे।
सुद्धस्स या दसमीए बहुलस्स य सत्तमीए उ॥
सुद्धस्स चउत्थीए पवत्तये पंचमीउ आउट्ठी।
एया आवुट्टीओ सव्वाओ सावणे मासे॥
बहुलस्स सत्तमीए पडमा सुद्धस्स तो चउत्थीए।
बहुलस्स य पडिवए बहुलस्स य तेरसी दिवसे॥
सुद्धस्स य दसमीए पवत्तए पंचमीउ आउट्ठी।
एता आउट्ठीओ सव्वाओ माह मासंमि॥

––सू० प्र० पृ० २२२

अर्थात्--युगका प्रथम दक्षिणायन श्रावण कृष्णा प्रतिपदाको अभिजित् नक्षत्रमें, द्वितीय उत्तरायण माघ कृष्णा सप्तमीको हस्त नक्षत्रमे, तृतीय दक्षिणायन श्रावण कृष्णा त्रयोदशीको मृगशिर नक्षत्रमे, चतुर्थ उत्तरायण माघ शुक्ला चतुर्थीको शतभिषा नक्षत्रमे, पाँचवाँ दक्षिणायन श्रावण शुक्ला दसमीको विशाखा नक्षत्रमें, छठवाँ उत्तरायण माघ कृष्णा प्रतिपदाको पुष्य नक्षत्रमे, सातवाँ दक्षिणायन श्रावण कृष्णा सप्तमीको रेवती नक्षत्रमे, आठवाँ उत्तरायण माघ कृष्णा त्रयोदशीको मूल नक्षत्रमें, नौवाँ दक्षिणायन श्रावण शुक्ला नवमीको पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमे और दशवाँ उत्तरायण माघ कृष्णा त्रयोदशीको कृत्तिका नक्षत्रमें होता है।

इस ग्रन्थमें सूर्य परिवार और भ्रमण वृत्तोके सम्बन्धमे सुन्दर विवेचन किया गया है।

चन्द्रप्रज्ञप्तिका विषय प्रायः सूर्यप्रज्ञप्तिसे मिलता-जुलता है। फिर भी इतना तो मानना पड़ेगा कि इसका विषय सूर्यप्रज्ञप्तिकी अपेक्षा परिष्कृत है। इसमे सूर्यकी प्रतिदिनकी योजनात्मिका गति निकाली है तथा उत्तरायण और दक्षिणायनकी वीथियोका अलग-अलग विस्तार निकाल कर सूर्य और चन्द्रकी गति निश्चित की है। इसके चतुर्थ प्राभृतमे चन्द्र और सूर्यका संस्थान तथा तापक्षेत्रका सस्थान विस्तारसे बताया है। ग्रन्थकर्त्तानि समचतुस्र, विषमचतुस्र आदि विभिन्न आकारोका खण्डन कर सोलह वीथियोंमें चन्द्रमाका समचतुस्र गोल आकार बताया है। इसका कारण यह है कि सुषमासुषमा कालके आदिमे श्रावण कृष्णा प्रतिपदाके दिन जम्बूद्वीपका प्रथम सूर्य पूर्व-दक्षिण--अग्निकोणमे और द्वितीय सूर्य पश्चिमोत्तर--वायव्यकोणमें चला। इसी प्रकार प्रथम चन्द्रमा पूर्वोत्तर--ईशानकोणमे और द्वितीय चन्द्रमा पश्चिम-दक्षिण--नैऋत्यकोणमें चला। अतएव युगादिमें सूर्य और चन्द्रमाका समचतुरस्र सस्थान था, पर उदय होते समय ये ग्रह वर्तुला-

चन्द्रप्रज्ञप्ति

कारसे निकले, अत. चन्द्र और सूर्यका आकार अर्धकपीठ—अर्ध समचतुरस्र गोल बताया है ।

चन्द्रप्रज्ञप्तिमे छाया साधन किया है, तथा छाया प्रमाणपरसे दिनमान-का भी प्रमाण निकाला है, ज्योतिषकी दृष्टिसे यह विषय महत्त्वपूर्ण है । २५ वस्तुओंकी छाया बताई गई है, इनमे एक कीलकच्छाया या कीलच्छाया-का भी उल्लेख आया है; मालूम पडता है कि यह कीलच्छाया ही आगे जाकर शकुच्छायाके रूपमे परिवर्तित हो गई है । कीलीका मध्यम मान द्वादश अगुल माना है, जो आजकलके शकुमानके बराबर है । कीलच्छाया-का कथन सिर्फ सकेत मात्र है, विस्तृत रूपसे इसके सम्बन्धमे कुछ विचार नहीं किया है । पुरुषच्छाया परसे दिनमानकी साधनिका की गयी है—

ता अवड्ढ पोरिसिणं च्छाया दिवसस्स किंगते वा सेसे वा ता ति भागे गए वा ता सेसे वा, पोरिसिणं छाया दिवसस्स किं गए वा सेसे वा जाव चउभाग गए वा सेसे वा, ता दिवड्ढ पोरिसिणं छाया दिवसस्स किं गते वा सेसे वा, ता पंचभाग गए वा सेसे वा एवं अवड्ढ पोरिसिणं छाया पुच्छा दिवसस्स भागं छोट्टवा गरणं जाव ता अगुलट्ठि पोरिसिणं छाया दिवसस्स किं गए वा सेसे वा ता एकूण वीससतं भागे वा सेसे वा सातिरेग अगुणसट्ठि पोरिसिणं छाया दिवसस्स किं गए वा सेसे वा ताणं किं गए किंचि विगए वा सेसे वा ।—चं० प्र० ९.५.

अर्थात्—जब अर्ध पुरुष प्रमाण छाया हो उस समय कितना दिन व्यतीत हुआ और कितना शेष रहा ? इस प्रश्नका उत्तर देते हुए कहा है कि ऐसी छायाकी स्थितिमे दिनमानका तृतीयाश व्यतीत हुआ समझना चाहिए । यहाँ विशेषता इतनी है कि यदि दोपहरके पहले अर्ध पुरुष प्रमाण छाया हो तो दिनका तृतीय भाग गत और दो तिहाई भाग अवशेष तथा दोपहरके बाद अर्ध पुरुष प्रमाण छाया हो तो दो तिहाई भाग प्रमाण दिन गत और एक भाग प्रमाण दिन शेष समझना चाहिए । पुरुष प्रमाण छाया होनेपर दिनका चौथाई भाग गत और तीन चौथाई भाग शेष, डेढ पुरुष प्रमाण

छाया होनेपर दिनका पचम भाग गत और चार पचम भाग—$\frac{४}{५}$ भाग अवशेष दिन समझना चाहिये। इसी प्रकार दोपहरके बादकी छायामें विपरीत दिनमान जानना चाहिये। इस ग्रन्थमे गोल, त्रिकोण, लम्बी, चौकोर वस्तुओंकी छायापरसे दिनमानका ज्ञान किया गया है। यह छाया-प्रकरण ग्रहोकी गतिका ज्ञान करनेके लिये महत्त्वपूर्ण है। इसपरसे ग्रन्थकर्त्ताने सूर्यके मण्डलोका ज्ञान करनेके नियम भी निर्धारित किये है आगे जाकर इस ग्रन्थमे नक्षत्रोकी गति और चन्द्रमाके साथ योग करनेवाले नक्षत्रोका विवेचन किया है। चन्द्रमाके साथ तीस मुहूर्त्त तक योग करनेवाले श्रवण, धनिष्टा, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिर, पुष्य, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मूल और पूर्वाषाढा ये पन्द्रह नक्षत्र बताये है। पैंतालीस मुहूर्त्त तक चन्द्रमाके साथ योग करनेवाले उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, विशाखा और उत्तराषाढ़ ये छः नक्षत्र एव पन्द्रह मुहूर्त्त तक चन्द्रमाके साथ योग करनेवाले शतभिषा, भरणी, आर्द्रा, आश्लेषा, स्वाति और ज्येष्ठा ये छः नक्षत्र बताये गये है।

चन्द्रप्रज्ञप्तिके १७वे प्राभृतमे चन्द्रमाको स्वत. प्रकाशमान बतलाया तथा इसके घटने बढनेका कारण भी स्पष्ट किया है। १८वें प्राभृतमें चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारागओकी ऊँचाईका कथन किया है। इस प्रकरणके प्रारम्भमें अन्य मान्यताओकी मीमासा की गयी है। और अन्तमें जैन मान्यताके अनुसार ७९० योजनसे लेकर ९०० योजनकी ऊँचाईके बीचमे ग्रह-नक्षत्रोकी स्थिति बतायी है। २०वें प्राभृतमें सूर्य और चन्द्र ग्रहणोका वर्णन किया गया है तथा राहु और केतुके पर्यायवाली शब्द भी गिनाये गये है, जो आजकलके प्रचलित पर्यायवाची शब्दोसे भिन्न है।

यह प्राचीन ज्योतिषका मौलिक ग्रन्थ है। इसका विषय वेदाङ्ग ज्योतिषके समान अविकसित अवस्थामें है। इसमें भी नक्षत्र लग्नका

प्रतिपादन किया गया है। भाषा एवं रचना शैली आदिके परीक्षणसे पता लगता है कि यह ग्रन्थ ई० पू० ३००-४००का है। इसमें लग्नके सम्बन्धमें बताया गया है--

ज्योतिष्करण्डक

लग्गं च दक्खिणायविसुवे सुवि अस्स उत्तरं अयणे।
लग्गं साई विसुवेसु पञ्चसु वि दक्खिणे अयणे॥

अर्थात् अस्स यानी अश्विनी और साई--स्वाति ये नक्षत्र विषुवके लग्न बताये गये है। यहाँ विशिष्ट अवस्थाकी राशिके समान विशिष्ट अवस्थाके नक्षत्रोंको लग्न माना है।

इस ग्रन्थमें कृत्तिकादि, धनिष्ठादि, भरण्यादि, श्रवणादि एवं अभिजितादि नक्षत्र गणनाओंकी समालोचना की गई है।

आश्वलायन सूत्र, पारस्कर सूत्र, हिरण्यकेशी सूत्र, आपस्तम्ब सूत्र आदि सूत्र ग्रन्थोंमे फुटकल रूपमे ज्योतिष चर्चा मिलती है। आश्वलायन सूत्रमें **"श्रावण्यां पौर्णमास्यां श्रावणकर्मा," "सीमन्तोन्नयनं ...यदा पुंसानक्षत्रेण चन्द्रमा-युक्तः स्यात्"** इत्यादि अनेक वाक्य विभिन्न कार्योंके विभिन्न मुहूर्तोंके लिये आये है।

कल्प, सूत्र, निरुक्त और व्याकरणमे ज्योतिष चर्चा

पारस्कर सूत्रमें विवाहके नक्षत्रोंका वर्णन करते हुए लिखा है--**"त्रिषु त्रिषु उत्तरादिषु स्वातौ मृगशिरसि रोहिण्यां।"** अर्थात् उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, रेवती, और अश्विनी विवाह नक्षत्र बताये गये है। इन सूत्र ग्रन्थोंमे विभिन्न कार्योंके विधेय नक्षत्रोंका वर्णन मिलता है। बौधायन सूत्रमे--**"मीनमेषयोर्मेष-वृषभयोर्वसन्तः"** इस प्रकार लिखा मिलता है। इससे सिद्ध है कि सूत्र ग्रन्थोके समयमें राशियोंका प्रचार भारतमे हो गया था।

निरुक्तमें दिन, रात्रि, शुक्ल-कृष्ण पक्ष, उत्तरायण, दक्षिणायनका

कई स्थानोपर चमत्कारिक वर्णन आया है। इसमे युगपद्धतिकी पूर्व मध्यकालीन ज्योतिष ग्रन्थोके समान सुन्दर मीमान्सा मिलती है।

पाणिनीय व्याकरणमे सवत्सर, हायन, चैत्रादि मास, दिवस विभागात्मक मुहूर्त्त शब्द, पुष्य, श्रवण, विशाखा आदि नक्षत्रोकी व्युत्पत्ति की गयी है। **"विभाषाग्रहः"** ३. १ १४३मे ग्रह शब्दसे नवग्रहोका अनुमान करना भी असगत नही कहा जा सकेगा।

स्मृति एवं महाभारत की ज्योतिष-चर्चा

मनुस्मृतिमे सैद्धान्तिक ग्रन्थोके समान युग और कल्पमानका वर्णन मिलता है। याज्ञवल्क्य स्मृतिमे नवग्रहोका स्पष्ट कथन है—

सूर्यः सोमो महीपुत्रः सोमपुत्रो बृहस्पतिः।
शुक्रः शनैश्चरो राहुः केतुश्चैते ग्रहाः स्मृताः॥

—आचाराध्याय

इस श्लोकपरसे सातो वारोका अनुमान भी सहजमे किया जा सकता है। याज्ञवल्क्य स्मृतिमे क्रान्तिवृत्तके १२ भागोका भी कथन है, जिससे मेषादि १२ राशियोकी सिद्धि हो जाती है। श्राद्धकाल अध्यायमे वृद्धियोगका भी कथन है, इससे ज्योतिष शास्त्रके २७ योगोका समर्थन होता है। वास्तविक योग शब्दके अर्थमे व्यवहृत योग सर्वप्रथम अथर्व ज्योतिषमे ही मिलता है।

याज्ञवल्क्य स्मृतिके प्रायश्चित्त अध्यायमे **"ग्रहसंयोगजैः फलैः"** इत्यादि वाक्यो द्वारा ग्रहोके सयोगजन्य फलोका भी कथन किया गया है। इस स्मृतिमे अमुक नक्षत्रमे अमुक कार्यविधेय है, इसका कथन बहुत अच्छी तरहसे किया है।

महाभारतमे ज्योतिषशास्त्रकी अनेक बातोका वर्णन मिलता है। इसमे युग पद्धति मनुस्मृति जैसी ही है। सत युगादिके नाम, उनमे विधेय कृत्य कई जगह आये है। कल्पकालका निरुपण शान्तिपर्वके १८३वें

अध्यायमें विस्तारसे किया गया है। पञ्च वर्षात्मक युगका भी कथन उपलब्ध होता है। संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर एवं इद्वत्सर इन पाँच युग सम्बन्धी पाँच वर्षोंमें क्रमशः पाण्डव उत्पन्न हुए थे--

अनुसम्वत्सरं जाता अपि ते कुरुसत्तमाः। पाण्डुपुत्रा व्यराजन्त पंचसम्वत्सरा इव॥ आ० प०, अ० १२४.२४

पाण्डवोंको वनवास जानेके बाद कितना समय हुआ, इसके सम्बन्धमें भीष्म दुर्योधनसे कहते हैं--

तेषां कालातिरेकेण ज्योतिषां च व्यतिक्रमात्।
पंचमे पंचमे वर्षे द्वौ मासावुपजायतः॥
एषामभ्यधिकामासाः पंच च द्वादश क्षपाः।
त्रयोदशानां वर्षाणामिति मे वर्तते मतिः॥

--वि० प० अ० ५२.३-४

पाँच वर्षमें दो अधिमास यह वेदाङ्ग ज्योतिष पद्धति है और अधिमास आदिकी कल्पना भी वेदाङ्ग ज्योतिषके अनुसार ही महाभारतमें है।

महाभारतके अनुशासन पर्वके ६४वें अध्यायमें समस्त नक्षत्रोंकी सूची देकर बतलाया गया है कि किस नक्षत्रमें दान देनेसे किस प्रकारका पुण्य होता है। महाभारतकालमें प्रत्येक मुहूर्त्तका नामकरण भी व्यवहृत होता था तथा प्रत्येक मुहूर्त्तका सम्बन्ध भिन्न-भिन्न धार्मिक कार्योंसे शुभाशुभके रूपमें माना जाता था। २७ नक्षत्रोंके देवताओंके स्वभावानुसार विधेय नक्षत्रसे भावी शुभ एवं अशुभका निर्णय किया गया है। शुभ नक्षत्रोंमें ही विवाह, युद्ध एवं यात्रा करनेकी पद्धति थी। युधिष्ठिरके जन्म समयका वर्णन करते हुए बताया गया है कि--

ऐन्द्रे चन्द्रसमारोहे मुहूर्त्तेऽभिजिदष्टमे।
दिवो मध्यगते सूर्ये तिथौ पूर्णेति पूजिते॥

अर्थात--आश्विन् सुदी पंचमीके दोपहरको अष्टम अभिजित् मुहूर्त्तमें

सोमवारके दिन ज्येष्ठा नक्षत्रमें जन्म हुआ। महाभारतमें कुछ ग्रह अधिक अनिष्टकारक बताये गये है, विशेषतः शनि और मगलको अधिक दुष्ट माना है। मगल लाल रगका समस्त प्राणियोंको अशान्ति देनेवाला और रक्तपात करानेवाला समझा जाता था। केवल गुरु ही शुभ और समस्त प्राणियोको सुख-शान्ति देनेवाला बताया गया है। ग्रहोका शुभ नक्षत्रोंके साथ योग होना प्राणियोके लिये कल्याणदायक माना जाता था। उद्योग पर्वके १४३वे अध्यायके अन्तमे ग्रह और नक्षत्रोके अशुभ योगोका विस्तार-से वर्णन किया गया है। श्रीकृष्णने जब कर्णसे भेट की, तब कर्णने इस प्रकार ग्रह स्थितिका वर्णन किया है—"शनैश्चर, रोहिणी नक्षत्रमे मंगलको पीड़ा दे रहा है, ज्येष्ठा नक्षत्रमें मंगल वक्री होकर अनुराधा नामक नक्षत्रसे योग कर रहा है। महापात सज्ञक ग्रह चित्रा नक्षत्रको पीड़ा दे रहा है। चन्द्रमाके चिन्ह विपरीत दिखलाई पड़ते है और राहु सूर्यको ग्रसित करना चाहता है।" शल्य वधके समय प्रातःकालका वर्णन निम्न प्रकार किया है—

भृगुसूनुधरापुत्रौ शशिजेन समन्वितौ ॥—श० प० अ० ११.१८

अर्थात्—शुक्र, मगल और बुध इन दोनोका योग शनिके साथ अत्यन्त अशुभकारक बताया गया है। आज भी बुध और शनिका योग अशुभ माना जाता है। महाभारतमे १३ दिनका पक्ष अत्यन्त अशुभ बताया गया है—

चतुर्दशीं पंचदशीं भूतपूर्वा तु षोड़शीं।
इमां तु नाभिजानेहममावास्यां त्रयोदशीं ॥
चन्द्रसूर्यावुभौ ग्रस्तावेकमासीं त्रयोदशीं ॥

अर्थात्—व्यासजी अनिष्टकारी ग्रहोकी स्थितिका वर्णन करते हुए कहते है कि १४, १५ एव १६ दिनोके पक्ष होते थे; पर १३ दिनोंका पक्ष इसी समय आया है। तथा सबसे अधिक अनिष्टकारी तो एक ही मासमें

सूर्य ग्रहण और चन्द्र ग्रहणका होना है और यह ग्रहण योग भी त्रयोदशीके दिन पड़ रहा है, अतः समस्त प्राणियोंके लिये भयोत्पादक है। महाभारतसे यह भी सिद्ध होता है कि उस समय व्यक्तिके सुख-दुःख, जीवन-मरण आदि सभी ग्रह-नक्षत्रोंकी गतिसे सम्बद्ध माने जाते थे।

उपर्युक्त ज्योतिष चर्चाके अतिरिक्त ई० १००के लगभगमें स्वतन्त्र ज्योतिषके ग्रन्थ भी लिखे गये, जो रचयिताके नामपर उन सिद्धान्तोंके नामसे ख्यात हुए। वराहमिहिराचार्यने अपने पञ्चसिद्धान्तिका नामक संग्रह ग्रन्थमें पितामह सिद्धान्त, वसिष्ठ सिद्धान्त, रोमक सिद्धान्त, पौलिश सिद्धान्त और सूर्य सिद्धान्त इन पाँच सिद्धान्तोंका संग्रह किया। डाक्टर थीबो साहबने पञ्चसिद्धान्तिकाकी अंग्रेजी भूमिकामें पितामह सिद्धान्तको सूर्यप्रज्ञप्ति और ऋक्ज्योतिषके समान प्राचीन बताया है, लेकिन परीक्षण करनेपर इसकी इतनी प्राचीनता मालूम नहीं पड़ती है। ब्रह्मगुप्त और भास्कराचार्यने पितामह सिद्धान्तको ही आधार माना है। पितामह सिद्धान्तमें सूर्य और चन्द्रमाके अतिरिक्त अन्य ग्रहोंका गणित नहीं आया है।

वसिष्ठ सिद्धांत—पितामह सिद्धान्तकी अपेक्षा यह संशोधित और परिवर्द्धित रूपमें है। इसमें सिर्फ १२ श्लोक हैं, सूर्य और चन्द्रके सिवा अन्य ग्रहोंका गणित इसमें भी नहीं है। ब्रह्मगुप्तके कथनसे ज्ञात होता है कि पञ्चसिद्धान्तिकामें संग्रहीत वसिष्ठ सिद्धान्तके कर्त्ता कोई विष्णुचन्द्र नामके व्यक्ति थे। डा० थीबो साहबने बतलाया है कि विष्णुचन्द्र इसके निर्माता नहीं, बल्कि संशोधक हैं। श्री० शंकर बालकृष्ण दीक्षितने ब्रह्मगुप्तके समयमें ही दो प्रकारका वासिष्ठ बतलाया है, एक मूल दूसरा विष्णुचन्द्रका। वर्तमानमें लघुवसिष्ठ सिद्धान्त नामक ग्रन्थ मिलता है, जिसमें ९४ श्लोक हैं। इसका गणित पञ्चसिद्धान्तिकाके वसिष्ठसिद्धान्तकी अपेक्षा परिमार्जित और विकसित है।

रोमकसिद्धान्त—इसके व्याख्याता लाटदेव हैं। इसकी रचना शैलीसे मालूम पड़ता है कि यह किसी ग्रीक सिद्धान्तके आधारपर लिखा गया है।

कुछ विद्वानोंका अनुमान है कि अलकजेड्रियाके प्रसिद्ध ज्योतिषी टालमीके सिद्धान्तोंके आधारपर संस्कृतमें रोमक सिद्धान्त लिखा गया है, इसका प्रमाण वे यवनपुरके मध्याह्नकालीन सिद्ध किये गये अहर्गणको रखते हैं। ब्रह्मगुप्त, लाट, वसिष्ठ, विजयनन्दी और आर्यभट्टके ग्रन्थोंके आधारपर श्रीषेण द्वारा लिखा गया इसे कुछ अन्य विद्वान् बतलाते हैं। डा० थीबो साहब श्रीषेणको मूल ग्रन्थका रचयिता नहीं मानते हैं, बल्कि उसका उसे वह संशोधक बतलाते हैं। इसका गणित पूर्वके दो सिद्धान्तोंकी अपेक्षा अधिक विकसित है। इसमें सैद्धान्तिक विषयोंका निम्न वर्णन गणित सहित किया है--

महायुगान्त (४३२०००० वर्षोंका), युगान्त (२८५० वर्षोंका)।

नक्षत्र भ्रम	१५८२१८५६००	१०४३८०३
रवि भ्रम	४३२००००	२८५०
सावन दिवस	१५७७८६५६८०	१०४०९५३
चन्द्र भगण	५७७५१५७८$\frac{१}{२}$	३८१००
चन्द्रोच्च भगण	८८८२५८$\frac{१३१}{२५२}$	३२२$\frac{२३}{३७}$
चन्द्रपात भगण	२३२१६५$\frac{१०९०२५}{५६३}$	१५३$\frac{२६२२९}{१६३}$
सौर मास	५१८४००००	३४२००
अधिमास	१५९१५३८$\frac{१}{५२}$	१०५०
चन्द्रमास	५३४३१५७८$\frac{१}{५२}$	३५२५०
तिथि	१६०२९४७३६८$\frac{१}{२}$	१०५३५००
तिथिक्षय	२५०८१७६८$\frac{१}{२}$	१६५४७

ब्रह्मगुप्तने इस सिद्धान्तकी खूब खिल्ली उड़ाई है। वास्तवमें इसका गणित अत्यन्त स्थूल है। कुछ विद्वानोंने इसका रचनाकाल ई० १००-२००के मध्यमें माना है। इसके विषयको देखनेसे उपर्युक्त रचनाकाल युक्तियुक्त भी जँचता है।

पौलिशसिद्धान्त--इसका ग्रह गणित भी अर्को द्वारा स्थूल रीतिसे

निकाला गया है। एलबेरुनीका मत है कि अलक जेड्रियावासी पोलसके यूनानी सिद्धान्तोंके आधारपर इसकी रचना हुई है। डा० कर्न साहबने इस मतका खण्डन किया है। उनका कहना है कि प्राचीन भारतियोंको 'यवनपुर' ज्ञात था, तथा वे वहाँके अक्षांश, देशान्तर आदिसे पूर्ण परिचित थे। वर्तमानमें वराह और भट्टोत्पलका पृथक् पृथक् संग्रहीत पौलिश सिद्धान्त मिलता है, लेकिन दोनोंमें कोई समानता नहीं है। वराहमिहिर द्वारा संग्रहीत पौलिश सिद्धान्तमें चर निकालनेके लिये निम्न श्लोक आया है—

यवनाच्चरजानाडयः सप्तावन्त्यास्त्रिभागसंयुक्ता।
वाराणस्यां त्रिकृतिः साधनमन्यत्र वक्ष्यामि॥

अर्थात्—उज्जैनीमें चर ७ घटी २० पल और वनारसमें २ घटी है, अन्य स्थानोंके चरका साधन गणित द्वारा किया गया है। डा० थीबो साहबने इस सिद्धान्तका विवेचन करते हुए बताया है कि प्राचीन पौलिश सिद्धान्त उपलब्ध नहीं है। वराहके पौलिश सिद्धान्तसे मालूम पड़ता है कि इसके ग्रहणगणितमें अति स्थूलता है। आज जो पोलिशके नामसे सिद्धान्त उपलब्ध है, वह अपने मूल रूपमें नहीं है।

सूर्य-सिद्धान्त—इसके कर्त्ता कोई सूर्य नामके ऋषि बतलाये जाते हैं। इसमें आई हुई कथाके आधारपर इसका रचनाकाल त्रेता युगका प्रारम्भिक भाग बताया गया है। पर उपलब्ध सूर्य सिद्धान्त इतना प्राचीन नहीं जँचता है। कुछ लोगोंका खयाल है कि स्वयं सूर्य भगवान्ने मयकी तपस्यासे प्रसन्न होकर उस असुरको ज्योतिष ज्ञान दिया था। श्री महावीरप्रसाद श्रीवास्तवने सूर्य सिद्धान्तकी भूमिकामें असुर नामकी एक भौतिकवादी जाति बतलायी है, शिल्प और यंत्र विद्यामें यह जाति निपुण होती थी। सूर्य नामके ऋषिने इसी जातिको ज्योतिष शास्त्रकी शिक्षा दी थी। पाश्चात्य विद्वानोंने सूर्यसिद्धान्तकी स्थूलताका परीक्षण कर इसका रचनाकाल ई० पू० १८० या ई० १०० बताया है। यह ग्रन्थ ज्योतिषशास्त्रकी दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि वर्तमानमें उपलब्ध सूर्यसिद्धान्त

प्राचीन सूर्यसिद्धान्तसे भिन्न है, फिर भी इतना तो मानना पड़ेगा कि सैद्धान्तिक ग्रन्थोमे यह सबसे प्राचीन है। इसमें युगादिसे अहर्गण लाकर मध्यम ग्रह सिद्ध किये गये है और आगे संस्कार देकर स्पष्टग्रहविधि प्रतिपादित की है। इसके प्रारम्भमे ग्रहोकी गति सिद्ध करते हुए लिखा गया है--

पश्चात् व्रजन्तोऽतिजवान्नक्षत्रैः सततं ग्रहाः।
जीयमानास्तु लम्बन्ते तुल्यमेव स्वमार्गगाः॥
प्राग्गतित्वमतस्तेषां भगणैः प्रत्यहं गतिः।
परिणाहवशाद्भिन्नाः तद्वशाद्भानि भुञ्जते॥

अर्थात्--शीघ्रगामी नक्षत्रोके साथ सदैव पश्चिमकी ओर चलते हुए ग्रह अपनी-अपनी कक्षामे समान परिमाणमे हारकर पीछे रह जाते है, इसीलिये वह पूर्वकी ओर चलते हुए दिखलाई पड़ते है और कक्षाओकी परिधिके अनुसार उनकी दैनिक परिधि भी भिन्न दिखाई पड़ती है, इसलिये नक्षत्र चक्रको भी यह भिन्न समयमे--शीघ्रगामी ग्रह थोड़े समयमे और मन्दगति अधिक समयमे पूरा करते है। तात्पर्य यह है कि आकाशमे जितने तारे दिखलायी पड़ते है, वे सब ग्रहोके साथ पश्चिमकी ओर जाते हुए मालूम पड़ते है; परन्तु नक्षत्रोके बहुत शीघ्र चलनेके कारण ग्रह पीछे रह जाते है और पूर्वको चलते हुए दिखलाई पड़ते है। इनकी पूर्वकी ओर बढ़नेकी चाल तो समान है, पर इनकी कक्षाओका विस्तार भिन्न होनेसे इनकी गति भी भिन्न देख पड़ती है। इस कथनसे ग्रहोकी योजनात्मिका और कलात्मिका, दोनों प्रकारकी गतियाँ सिद्ध हो जाती है।

इस ग्रन्थमे मध्यमाधिकार, स्पष्टाधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार, सूर्यग्रहणाधिकार, परलेखाधिकार, ग्रहयुत्यधिकार, नक्षत्रग्रहयुत्यधिकार, उदयास्ताधिकार, शृङ्गोन्नत्यधिकार, पाताधिकार और भूगोलाध्याय नामक प्रकरण हैं।

उपर्युक्त पंचसिद्धान्तोके अतिरिक्त नारदसंहिता, गर्गसहिता आदि दो-चार संहिता ग्रन्थ और भी मिलते है, परन्तु इनका रचनाकाल निर्धारित करना कठिन है। गर्गसंहिताके जो फुटकर प्रकरण उपलब्ध है, वे बड़े उपयोगी है, उनसे भारतीय सस्कृतिके सम्बन्धमे बहुत कुछ ज्ञात हो जाता है। युगपुराण नामक अशसे उस युगकी राजनीतिक और सामाजिक दशापर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। इस ग्रन्थकी भाषा प्राकृत मिश्रित सस्कृत है, भाषाकी दृष्टिसे यह ग्रन्थ जैन मालूम पडता है। परन्तु निश्चित प्रमाण एक भी नही है। ज्योतिष शास्त्र विज्ञान मूलक होनेके कारण इसमे समय-समयपर परिवर्तन होते रहते है। अतएव प्राचीन ग्रन्थोमे अनेक सशोधन हुए है, इसी कारण किसी भी ग्रन्थका सबल प्रमाणोंके अभावमे रचनाकाल ज्ञात करना कठिन ही नही, बल्कि असभव है।

कौटिल्यके अर्थशास्त्रमे ऐसे कई प्रकरण है, जिनसे पता चलता है कि उस कालके ज्योतिषी हर प्रकारके ज्योतिष-गणितसे पूर्ण परिचित थे। तथा ज्योतिषशास्त्रका पर्यवेक्षण आलोचनात्मक ढगसे होने लग गया था। इसके एक-दो स्थल ऐसे भी है, जिनसे वसिष्ठ सिद्धान्त और पितामह सिद्धान्तके प्रचारका भी भान होता है। आर्यभट्टसे कुछ पूर्व ऋषिपुत्र नामके एक ज्योतिर्विद् हुए है। इनकी गणित विषयक रचनाएँ तो नहीं मिलती है, पर सहिता शास्त्रके यह प्रथम लेखक जँचते है।

ऋषिपत्र—यह जैन धर्मानुयायी ज्योतिषके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनके वंशादिका सम्यक् परिचय नही मिलता है, पर Catalogus Catalogorum के अनुसार यह आचार्य गर्गके पुत्र थे। गर्ग मुनि ज्योतिषके धुरन्धर विद्वान् थे, इसमें कोई सन्देह नही। इनके सम्बन्धमे लिखा मिलता है—

जैन आसीज्जगद्वंद्यो गर्गनामा महामुनिः।
तेन स्वयं निर्णीत यं सत्पाशात्र केवली॥

एतज्ज्ञानं महाज्ञानं जैनर्षिभिरुदाहृतम् ।
प्रकाश्य शुद्धशीलाय कुलीनाय महात्मना ॥

सभवतः इन्ही गर्गके वंशमे ऋषिपुत्र हुए होगे । इनका नाम भी इस बातका साक्षी है कि यह किसी मुनिके पुत्र थे । ऋषिपुत्रका वर्तमानमे एक निमित्त शास्त्र उपलब्ध है । इनके द्वारा रची गई एक सहिताका भी मदनरत्न नामक ग्रन्थमे उल्लेख मिलता है । इन आचार्यके उद्धरण बृहत्सहिताकी भट्टोत्पली टीकामे भी मिलते है ।

ऋषिपुत्रका समय वराहमिहिरके पूर्वमे है । इन्होने अपने बृहज्जातकके २६वे अध्यायके ५वे पद्यमे कहा है—**मुनिमतान्यवलोक्य सम्यग्घोरां वराहमिहिरो रुचिरां चकार ।**" इससे स्पष्ट है कि वराहमिहिरके पूर्व होरा सम्बन्धी परम्परा वर्तमान थी । इसी परम्परामे ऋषिपुत्र हुए है । ऋषिपुत्रका प्रभाव वराहमिहिरकी रचनाओपर स्पष्ट लक्षित होता है । उदाहरणके लिये एक-दो पद्य दिये जाते है—

ससलोहिवण्णहोवरि संकुण इत्ति होइ णायव्वो ।
संगामं पुण घोरं खग्गं सूरो णिवेदेई ॥

—ऋषिपुत्र

शशिरुधिरनिभे भानौ नभःस्थले भवन्ति संग्रामाः ।

—वराहमिहिर

जे दिट्ठभुविरसण्ण जे दिट्ठा कहमेणकत्ताणम् ।
सदसंकुलेन दिट्ठा वऊसट्ठिय ऐण वाणधिया ॥

—ऋषिपुत्र

भौमं चिरस्थिरभवं तच्छान्तिभिराहृतं शममुपैति ।
नाभसमुपैति मृदुतां क्षरति न दिव्यं वदन्त्येके ॥

—वराहमिहिर

उपर्युक्त अवतरणोंसे ज्ञात होता है कि ऋषिपुत्रकी रचनाओंका वराहमिहिरके ऊपर प्रभाव पड़ा है।

संहिता विषयकी प्रारम्भिक रचना होनेके कारण ऋषिपुत्रकी रचनाओंमें विषयकी गम्भीरता नहीं है। किसी एक ही विषयपर विस्तारसे नहीं लिखा है, सूत्ररूपमें प्राय. संहिताके प्रतिपाद्य सभी विषयोंका निरूपण किया है। शकुनशास्त्रका निर्माण इन्होंने किया है, अपने निमित्तशास्त्रमें इन्होंने पृथ्वीपर दिखाई देनेवाले, आकाशमें दृष्टिगोचर होनेवाले और विभिन्न प्रकारके शब्द-श्रवण द्वारा प्रकट होनेवाले इन तीन प्रकारके निमित्तों द्वारा फलाफलका अच्छा निरूपण किया है। वर्षोत्पात, देवोत्पात, रोजोत्पात, उल्कोत्पात, गन्धर्वोत्पात इत्यादि अनेक उत्पातों द्वारा शुभाशुभत्वकी मीमांसा बड़े सुन्दर ढंगसे इनके निमित्त शास्त्रमें मिलती है।

आर्यभट्ट प्रथम—ज्योतिषका क्रमबद्ध इतिहास आर्यभट्टके समयसे मिलता है। इनका जन्म ई० सन् ४७६में हुआ था, इन्होंने ज्योतिषका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'आर्यभटीय' लिखा है। इसमें सूर्य और तारोंके स्थिर होने तथा पृथ्वीके घूमनेके कारण दिन और रात होनेका वर्णन है। पृथ्वीकी परिधि ४९६७ योजन बतायी गयी है।

आर्यभट्टने सूर्य और चन्द्रग्रहणके वैज्ञानिक कारणोंकी व्याख्या की है कालक्रियापादमें युगके समान दो भाग करके पूर्व भागका उत्सर्पिणी और उत्तर भागका अवसर्पिणी नाम बताया है तथा प्रत्येकके सुषमा सुषमा सुषमा आदि छः छः भेद बताये हैं—

उत्सर्पिणी युगार्द्धं पश्चादवसर्पिणी युगार्द्धं च।
मध्ये युगस्य सुषमाऽऽदावन्ते दुःषमान्त्यंशात्॥

कालक्रियापादमें क्षेपक विधिसे ग्रहोंके स्पष्टीकरणकी विधि विस्तारसे बतलायी है तथा बुध, शुक्रको विलक्षण संस्कारसे संस्कृत कर स्पष्ट किया

है। गोलपादमे मेरुकी स्थितिका सुन्दर वर्णन किया है तथा अक्षक्षेत्रोंके अनुपात द्वारा लम्बज्या, अक्षज्याका साधन सुगमतासे किया है।

आर्यभट्टने १, २, ३ आदि अंक संख्याके द्योतक क, ख, ग आदि वर्ण कल्पना किये है अर्थात् अ, आ इत्यादि स्वर वर्ण और क, ख, ग आदि व्यञ्जन वर्णोका एक-एक संख्या वाचक अर्थ देकर बड़ी-बड़ी संख्याओंको प्रकाशित किया है। गीतिकापादमे कहा है—

वर्गाक्षराणि वर्गेऽवर्गेऽवर्गाक्षराणि कात् ङमौ यः।
खद्विनवके स्वरा नववर्गेऽवर्गे नवान्त्यवर्गे वा॥

क=१, ख=२, ग=३, घ=४, ङ०=५, च=६, छ=७, ज=८, झ=९, ञ=१०, ट=११, ठ=१२, ड=१३, ढ=१४, ण=१५, त=१६, थ=१७, द=१८, ध=१९, न=२०, प=२१, फ=२२, ब=२३, भ=२४, म=२५, य=३०, र=४०, ल=५०, व=६०, श=७०, ष=८०, स=९०, ह=१००। क=१, कि=१००, कु=१०००, कृ=१०००००, क्लृ=१००००००००, के=१००००००००००, कै=१००००००००००००, को=१००००००००००००००, कौ—१००००००००००००००००, ख=२, खि=२००, खु=२०००, खृ=२०००००, क्लृ=२००००००००, खे=२००००००००००, खै—२००००००००००००, खो=२००००००००००००००, खौ=२००००००००००००००००, इसी प्रकार आगेकी अंक संख्याएँ दी गई है।

कुछ पाश्चात्य विद्वान् आर्यभट्टकी इस अंक संख्यापरसे अनुमान करते है कि उन्होंने यह संख्याक्रम ग्रीकोंसे किया है। चाहे जो हो, पर इतना निश्चित है कि आर्यभट्टने पटनामे, जिसका प्राचीन नाम कुसुमपुर था, अपने अपूर्व ग्रन्थकी रचना की है। इनकी गणित विषयक विद्वत्ताका निदर्शन यही है कि इन्होने गणितपादमे वर्ग, वर्गमूल, घन, घनमूल एवं व्यवहार श्रेणियोंके गणितका सुन्दर विवेचन किया है।

कालकाचार्य—यह निमित्त और ज्योतिषके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इन्होंने अपनी प्रतिभासे शककुलके साहिको स्ववश किया था तथा गर्दभिल्लको दण्ड दिया था। जैन परम्परामें ज्योतिषके प्रवर्तकोंमें इनका मुख्य स्थान है, यदि यह आचार्य निमित्त और संहिताका निर्माण न करते तो उत्तरवर्ती जैन लेखक ज्योतिषको पापश्रुत समझकर अछूता ही छोड़ देते।

कालक कथाओंसे पता चलता है कि यह मध्य देशान्तर्गत, 'धारावास नामक नगरके राजा वयरसिंहके पुत्र थे। इनकी माताका नाम सुरसुन्दरी और बहनका नाम सरस्वती था। एक बार यह घोड़ेपर बनमें घूमने गये, वहाँ इनकी जैन मुनि गुणाकरसे मुलाकात हुई और उनका धर्मोपदेश सुनकर संसारसे विरक्त हो गये और बहुत समय तक जैनशास्त्रोंका अभ्यास करते रहे तथा थोड़े समयके पश्चात् आचार्य पदको प्राप्त हुए। पाटन (उत्तर गुजरात)के एक ताड़पत्रीय पुस्तक भण्डारमें ताड़पत्रपर लिखे गये एक प्रकरणमें एक प्राकृत गाथा मिली है, जिसमें बताया गया है कि—"कालका सूरिने प्रथमानुयोगमें जिन, चक्रवर्ती वासुदेव आदिके चरित्र और उनके पूर्व भवोंका वर्णन किया है। तथा लोकानुयोगमें बहुत बड़े निमित्त शास्त्रकी रचना की है।" भोजसागर गणि नामक विद्वान्ने संस्कृत भाषामें रमल विद्या विषयक एक ग्रन्थ लिखा है, उसमें उन्होंने कालकाचार्य द्वारा यवन देशसे लायी गयी इस विद्याको बताया है। इस घटनामें चाहे तथ्य हो या नहीं, पर इतना स्पष्ट है कि ईस्वी सन्की तीसरी शताब्दीके ज्योतिर्विदोंमें इनका गौरवपूर्ण स्थान था। वराहमिहिराचार्यने बृहज्जातकमें कालकसंहिताका उल्लेख किया है। इससे स्पष्ट है कि इन्होंने एक संहिता ग्रन्थ भी लिखा था, जो आज उपलब्ध नहीं है, पर निशीथिचूर्णि, आवश्यकचूर्णि, आदि ग्रन्थोंसे इनके ज्योतिष ज्ञानका पता सहजमें लगाया जा सकता है। ईस्वी सन्की प्रथम और द्वितीय शताब्दीके मध्यमें होनेवाले आचार्य उमास्वाति भी ज्योतिषके आवश्यक सिद्धान्तोंसे अभिज्ञ थे।

द्वितीय आर्यभट्ट—इनका सिद्धान्त 'महाआर्यभट्टीय'के नामसे प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थका दूसरा नाम 'महाआर्यसिद्धान्त' भी बताया जाता है। इसमें १८ अध्याय एवं ६२५ आर्या उपगीति है: पाटीगणित, क्षेत्र व्यवहार और बीजगणित भी इसमे सम्मिलित है। पाराशर सिद्धान्तसे इसमें ग्रह भगण लिये है। इसने प्रथम आर्यभट्टके सिद्धान्तमें कई तरहसे सशोधन किया है। कुछ लोग द्वितीय आर्यभट्टका काल ब्रह्मगुप्तके बाद बतलाते है, पर निश्चित प्रमाणके अभावमे कुछ नही कहा जा सकता है। भास्कराचार्यने अपने सिद्धान्त शिरोमणिके स्पष्टाधिकारमे द्रेष्काणोदय आर्यभट्टीयका दिया है, अतः यह भास्करके पूर्ववर्ती है, इतना निश्चित है। 'महा आर्य सिद्धान्त' ज्योतिषकी दृष्टिसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसकी परम्परा पीछेके अनेक ज्योतिर्विदोने अपनाई है। इनके जीवन वृत्तके सम्बन्धमें निश्चित रूपमे कुछ भी ज्ञात नही, पर इनके पाण्डित्यका अनुमान 'महा आर्य सिद्धान्त'से किया जा सकता है।

लल्लाचार्य—इनके पिताका नाम भट्टविविक्रम और पितामहका नाम शाम्ब था। लल्लाचार्यके गुरुका नाम प्रथम आर्यभट्ट बताया गया है। इनका जन्म श० सं० ४२१में हुआ था। इन्होने अपने 'शिष्यधी वृद्धि' नामक ज्योतिष ग्रन्थकी रचना आर्यभट्टकी परम्पराको लेकर की है—

आचार्याऽऽर्यभटोदितं सुविषमं व्यौमोकसां कर्म यच्छिष्याणामभिधीयते तदधुना लल्लेन धीवृद्धिदम्॥

विज्ञाय शास्त्रमलमार्यभटप्रणीतं तन्त्राणि यद्यपि कृतानि तदीय शिष्यैः। कर्मक्रमो न खलु सम्यगुदीरितस्तैः कर्म ब्रवीम्यहमतः क्रमशस्तु सूक्तम्॥

लल्लाचार्य गणित, जातक और सहिता इन तीनों स्कन्धोमे पूर्ण प्रवीण थे। यद्यपि यह आर्यभट्टके सिद्धान्तोको लेकर चले है, पर तो भी अनेक विशेष विषय इनके ग्रन्थोमे पाये जाते है। शिष्यधी वृद्धिमें प्रधान रूपसे गणिताध्याय और गोलाध्याय, ये दो प्रकरण है। गणिताध्यायमें

मध्यमाधिकार, स्पष्टाधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार, सूर्य-ग्रहणाधिकार, पर्वसभवाधिकार ग्रहयुत्यधिकार, भग्रहयुत्यधिकार, महापाताधिकार और उत्तराधिकार नामक उपप्रकरण है। गोलाध्यायमें छेदाधिकार, गोलबन्धाधिकार, मध्यगतिवासना, भूगोलाध्याय, ग्रहभ्रम-सस्थाध्याय, भुवनकोश, मिथ्याज्ञानाध्याय, यन्त्राध्याय और प्रश्नाध्याय नामक उपप्रकरण है। इनका 'रत्नकोष' नामक सहिता ग्रन्थ भी मिलता है। भास्कराचार्यने यद्यपि इनके सिद्धान्तोका खण्डन किया है, पर तो भी इनकी विद्वत्ताका लोहा उन्होने माननेसे इन्कार नही किया है।

त्रिस्कन्धविद्याकुशलैकमल्लो लल्लोऽपि यत्राऽप्रतिमो बभूव।
यातेऽपि किञ्चिद्गणिताधिकारे पाताधिकारे ममनाऽधिकारः॥

उपर्युक्त श्लोकसे स्पष्ट है कि भास्कराचार्य भी लल्लकी विद्वत्ताके कायल थे।

यदि सूक्ष्मनिरीक्षण द्वारा भास्करकी रचनाओंका परीक्षण किया जाय तो स्पष्ट ज्ञात होगा कि लल्लाचार्यकी अनेक बाते ज्योकी त्यो अपना ली गयी है। उत्क्रमज्या द्वारा साधित ग्रह प्रणाली इनकी मौलिक विशेषता है।

पूर्वमध्यकाल (ई० ५०१—१००० तक)

सामान्य परिचय

इस युगमे ज्योतिषशास्त्र उन्नतिकी चरमसीमापर था। वराहमिहिर जैसे अनेक धुरन्धर ज्योतिर्विद हुए, जिन्होने इस विज्ञानको क्रमबद्ध किया तथा अपनी अद्वितीय प्रतिभा द्वारा अनेक नवीन विषयोका समावेश किया। इस युगके प्रारम्भिक आचार्य वराहमिहिर या वराह है, जिन्होने अपने पूर्वकालीन प्रचलित सिद्धान्तोका पञ्चसिद्धान्तिकामे संग्रह किया। इस कालमे ज्योतिषके सिद्धान्त, संहिता और होरा ये तीन भेद प्रस्फुटित हो गये थे। ग्रह गणितके क्षेत्रमे सिद्धान्त, तन्त्र एवं करण

इन तीन भेदोंका प्रचार भी होने लग गया था । सिद्धान्त गणितमे कल्पादिसे, तन्त्रमे युगादिसे और करणमे शकाब्दपरसे ग्रहर्गण बनाकर ग्रहादिका आनयन किया जाता है। सिद्धान्तमे जीवा और चापके गणित द्वारा ग्रहोका फल लाकर आनीत मध्यम ग्रहमे संस्कार कर देते है तथा भौमादि ग्रहोका मन्द और शीघ्रफल लाकर मन्दस्पष्ट और स्पष्ट मान सिद्ध करते है ।

इस कालमे उदयास्त, युति, शृङ्गोन्नति आदिका गणित भी प्रचलित हो गया था । ब्रह्मपुत्र और महावीराचार्यने गणित विषयके अनेक सिद्धान्तोंको साहित्यका रूप प्रदान किया । महावीराचार्यकी असीमाबद्ध सख्याओके समाधानकी क्रिया बडी विलक्षण है । उपर्युक्त दोनो आचार्योके बीजगणित विषयक सिद्धान्तोपर दृष्टिपात करनेसे ज्ञात होगा कि इस युगमे—(१) ऋण राशियोके समीकरणकी कल्पना, (२) वर्ग समीकरणको हल करना, (३) एक वर्ग, अनेक वर्ग समीकरण कल्पना, (४) वर्ग, घन और अनेक घात समीकरणोको हल करना, (५) अकपाश, सख्याके एकादि भेद और कुट्टकके नियम, (६) केन्द्रफलको निकालना, (७) असीमाबद्ध समीकरण, (८) द्वितीय स्थानकी राशियोका असीमाबद्ध समीकरण, (९) अर्द्धच्छेद, त्रिकच्छेद आदि लघुरिक्थ सम्बन्धी गणित, (१०) अभिन्न राशियोका भिन्नराशियोके रूपमे परिवर्तन करना, आदि सिद्धान्त प्रचलित थे ।

पूर्व मध्यकालमे अंकगणितके भी निम्न सिद्धान्त आविष्कृत हो चुके थे ।—

(१) अभिन्न गुणन, (२) भागहार, (३) वर्ग, (४) वर्गमूल, (५) घन, (६) घनमूल, (७) भिन्न-समच्छेद, (८) भाग जाति, (९) प्रभागजाति, (१०) भागानुबन्ध, (११) भागमातृजाति, (१२) त्रैराशिक, (१३) पचराशिक, (१४) सप्तराशिक, (१५) नवराशिक, (१६) भाण्ड-प्रतिभाण्ड, (१७) मिश्रव्यवहार, (१८) सुवर्ण गणित, (१९) प्रक्षेपक गणित, (२०) समक्रय-विक्रय गणित, (२१) श्रेणीव्यवहार (२२)

क्षेत्रव्यवहार, (२३) छाया व्यवहार, (२४) स्वाशानुबन्ध, (२५) स्वाशापवाह, (२६) इष्टकर्म, (२७) द्वीष्टकर्म, (२८) चितिघन, (२९) घनाचिघन, (३०) एकपत्रीकरण एव (३१) वर्गप्रकृति आदि सिद्धान्तोका अंकगणितमे प्रयोग होने लग गया था।

रेखागणितके भी अनेक सिद्धान्तोका प्रयोग उस कालमे व्यापक रूपमे होता था। तथा इस विषयका वर्णन इस युगके प्राय सभी ज्योतिर्विदोंने विस्तारसे किया है। सिद्धान्त गणित, जिसके लिये जीवा-चापके गणित-की नितान्त आवश्यकता होती है और जिसका प्रचार आदिकालसे ही चला आ रहा था, इस युगमे उसमे अनेक सशोधन किये गये। लल्लाचार्यने उत्क्रमज्या द्वारा ही ग्रह गणितका साधन किया था, पर इस कालके आचार्यो-ने यूनान और ग्रीसके सम्पर्कसे क्रमज्या, कोटिज्या, कोटिचुत्क्रमज्या आदि द्वारा ग्रह गणितका साधन किया। पूर्वमध्यकालके ज्योतिष-साहित्यमे रेखागणितके निम्न सिद्धान्तोका उल्लेख मिलता है—

१—समकोण त्रिभुजमे कर्णका वर्ग दोनो भुजाओके जोडके बराबर होता है।

२—दिये हुए दो वर्गोके योग अथवा अन्तरके समान वर्ग बनाना।

३—आयतको वर्ग या वर्गको आयतम बदलना।

४—करणी द्वारा राशियोका वास्तविक वर्गमूल निकालना।

५—वृत्तको वर्ग और वर्गको वृत्तोमे बदलना।

६—शकु और वर्तुलके घनफल निकालना।

७—विषमकोण चतुर्भुजके कर्णानियनकी विधि और उसके दोनों कर्णोके ज्ञानसे भुज साधन करना।

८—त्रिभुज, विषमकोण चतुर्भुज और वृत्तका क्षेत्रफल निकालना।

९—सूचीव्यास, वलयव्यास, और वृत्तान्तर्गत वृत्तका व्यास निकालना।

१०—वृत्त परिधि, वृत्त सूची और उसके घनफलको निकालना।

रेखागणित और भूमिति गणितके साथ-साथ कोणमितिके ज्योतिषत्रि

विषयक गणितोंका प्रचार भी ई० सन् ७००-८००के मध्यमें हुआ था तथा ब्रह्मगुप्तने इस सम्बन्धमें अनेक सिद्धान्त निर्धारित कर त्रिकोणमिति गणितको ग्रहसाधनके लिये व्यवहृत किया था।

बृहत्संहितामें दैवज्ञकी विद्वत्ताकी समालोचना करते हुए लिखा है—

तत्र ग्रहगणिते पौलिशरोमकवासिष्ठसौरपैतामहेषु पञ्चस्वेतेषु सिद्धान्तेषु युगवर्षायनर्तुमासपक्षाहोरात्रयाममुहूर्तनाडीविनाडीप्राणत्रुटित्रुटचवयवाद्यस्य कालस्य क्षेत्रस्य च वेत्ता ॥

चतुर्णां च मासानां सौरसावननाक्षत्रचान्द्राणामधिमासकावमसम्भवस्य च कारणाभिज्ञः ॥

षष्टयब्दयुगवर्षमासदिनहोराधिपतीनां प्रतिपत्तिविच्छेदवित् ।

सौरादीनाञ्च मानानां सदृशासदृशयोग्यायोग्यत्वप्रतिपादनपटुः ॥

सिद्धान्तभेदेप्ययननिवृत्तौ प्रत्यक्षं सममण्डलरेखासम्प्रयोगाभ्युदितांशकानाञ्च छायाजलयन्त्रदृग्गणितसाम्येन प्रतिपादनकुशलः। सूर्यादीनाञ्च ग्रहाणां शीघ्रमन्दयाम्योत्तरनीचोच्चगतिकारणाभिज्ञः ॥

अर्थात्—पौलिश, रोमक, वाशिष्ठ, सौर, पितामह इन पाँचों सिद्धान्त सम्बन्धी युग, वर्ष, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, अहोरात्र, प्रहर, मुहूर्त्त, घटी, पल, प्राण, त्रुटि और त्रुटिके सूक्ष्म अवयव काल विभाग, कला, विकला, अंश और राशि रूप सूक्ष्म क्षेत्रविभाग; सौर, सावन, नाक्षत्र और चान्द्र मास, अधिमास तथा क्षयमासका सोपपत्तिक विवरण; सौर एवं चान्द्र दिनोंका यथार्थ मान और प्रचलित मान्यताओंके परीक्षणका विवेक; सममण्डलीय छायागणित; जल यन्त्र द्वारा दृग्गणित; सूर्यादि ग्रहोंकी शीघ्रगति, मन्दगति, दक्षिणगति, उत्तरगति, नीच और उच्च गति तथा उनकी वासनाएँ; सूर्य और चन्द्रमाके ग्रहणमें स्पर्श और मोक्षकाल; स्पर्श और मोक्षकी दिशा; ग्रहणकी स्थिति, विमर्द, वर्ण और देश, ग्रहयुति, ग्रहस्थिति, ग्रहोंकी योजनात्मक कक्षाएँ; पृथ्वी, नक्षत्र आदिका भ्रमण; अक्षांश, लम्बांश, ज्या, चरखण्डकाल, राशियोंके उदयमान एवं छाया-

गणित आदि विभिन्न विषयोमे पारंगत ज्योतिषीको होना आवश्यक बताया गया है ।

उपर्युक्त वाराही संहिताके विवेचनसे स्पष्ट है कि पूर्वमध्यकालके प्रारम्भमे ही ग्रह गणित उन्नतिकी चरमसीमापर था । ई० सन् ६००मे इस शास्त्रके साहित्यका निर्माण स्वतन्त्र आकाश निरीक्षणके आधारपर होने लग गया था । आदिकालीन ज्योतिषके सिद्धान्तोको परिष्कृत किया जाने लगा था ।

फलित ज्योतिष—पूर्वमध्यकालमे फलित ज्योतिषके संहिता और जातक अगोका साहित्य अधिक रूपसे लिखा गया है । राशि, होरा, द्रेष्काण, नवाश, द्वादशाश, त्रिशाश, परिग्रह स्थान, कालबल, चेष्टाबल, ग्रहोके रंग, स्वभाव, धातु, द्रव्य, जाति, चेष्टा, आयुर्दाय, दशा, अन्तर्दशा, अष्टकवर्ग, राजयोग, द्विग्रहादियोग, मुहूर्त्तविज्ञान, अगविज्ञान, स्वप्नविज्ञान, शकुन एव प्रश्न विज्ञान आदि फलितके अंगोका समावेश होरा शास्त्रमे होता था । संहितामे सूर्यादि ग्रहोकी चाल, उनका स्वभाव, विकार, प्रमाण, वर्ण, किरण, ज्योति, सस्थान, उदय, अस्त, मार्ग, पृथक् मार्ग, वक्र, अनवक्र, नक्षत्रविभाग और कूर्मका सब देशोमें फल, अगस्त्यकी चाल, सप्तर्षियोंकी चाल, नक्षत्रव्यूह, ग्रहशृंगाटक, ग्रहयुद्ध, ग्रह समागम, परिवेष, परिघ, वायु, उल्का, दिग्दाह, भूकम्प., गन्धर्व नगर, इन्द्रधनुष, वास्तुविद्या, अग-विद्या, वायसविद्या, अन्तरचक्र, मृगचक्र, अश्वचक्र, प्रासादलक्षण, प्रतिमा-लक्षण, प्रतिमाप्रतिष्ठा, घृतलक्षण, कम्बल लक्षण, खड्गलक्षण, पट्टलक्षण, कुक्कुटलक्षण, कूर्मलक्षण, गोलक्षण, अजालक्षण, अश्वलक्षण, स्त्री-पुरुष लक्षण एवं साधारण, असाधारण सभी प्रकारके शुभाशुभोका विवेचन अन्तर्भूत होता था । कही-कहीपर तो कुछ विषय होराके—स्वप्न और शकुन संहितामे गर्भित किये गये है । इस युगका फलित ज्योतिष केवल पञ्चाङ्ग ज्ञान तक ही सीमित नही था, किन्तु समस्त मानव जीवनके विषयोकी आलोचना और निरूपण करना भी इसीमें शामिल था ।

ईस्वी सन् ५००के लगभग ही भारतीय ज्योतिषका सम्पर्क ग्रीस, अरब और फारस आदि देशोंके ज्योतिषके साथ हुआ था। वराहमिहिरने यवनोंके सम्बन्धमें लिखा है कि—

म्लेच्छा हि यवनास्तेषु सम्यक् शास्त्रमिदं स्थितम्।
ऋषिवत्तेऽपि पूज्यन्ते किं पुनर्दैवविद् द्विजः॥

अर्थात्—म्लेच्छ—कदाचारी यवनोंके मध्यमें ज्योतिषशास्त्रका अच्छी तरह प्रचार है, इस कारण वे भी ऋषि-तुल्य पूजनीय है, इस शास्त्रका जाननेवाला द्विज हो तो बात ही क्या ?

इससे स्पष्ट है कि वराहमिहिरके पूर्व यवनोंका सम्पर्क ज्योतिष-क्षेत्रमें पर्याप्त मात्रामें विद्यमान था। ईस्वी सन् ७७१में भारतका एक जत्था बगदाद गया था और उन्हींमेंसे एक विद्वान्ने 'ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त'का व्याख्यान किया था। अरबमें इस ग्रन्थका अनुवाद 'अस सिन्द हिन्द' नामसे हुआ है। इब्राहीम इब्रहबीब अलफ़जारीने इस ग्रन्थके आधारपर मुसलिम चान्द्रवर्षके स्पष्टीकरणके लिये एक सारणी बनाई थी। अरबमें और भी कई विद्वान् ज्योतिषके प्रचारके लिये गये थे, जिससे वहाँ भारतके युगमानके अनुकरणपर हजारों और लाखों वर्षोंकी युगप्रणालीकी कल्पना कर ग्रन्थ लिखे गये।

भारतका ग्रीसके साथ ईस्वी सन् १००के लगभग ही सम्पर्क हो गया था, जिससे ज्योतिष शास्त्रमें परस्परमें बहुत आदान-प्रदान हुआ। भारतीय ज्योतिषमें अक्षांश, देशान्तर, चरसंस्कार और उदयास्तकी सूक्ष्म विवेचना मुसलिम और ग्रीक सभ्यताके सम्पर्कसे इस युगमें विशेष रूपसे हुई। पर सिद्धान्त और संहिता इन दो अंगोंको साहित्यिक रूप प्रदान करनेका सौभाग्य भारतको ही है। यद्यपि जातक अंगको जन्म इस देशने दिया था, पर लालन-पालनमें विदेशीय सभ्यताका रंग चढ़नेसे भारत-माँकी गोदमें पलनेपर भी कुछ संस्कार पूर्वमध्यकालमें ग्रीक लोगोंके पड़ गये, जो आजतक अक्षुण्ण रूपमें चले आ रहे हैं।

आजके कुछ विद्वान् ईस्वी सन् ६००-७००के लगभग भारतमें प्रश्न अंगका ग्रीक और अरबोंके सम्पर्कसे विकास हुआ बतलाते है तथा इस अगका मूलाधार भी उक्त देशोंके ज्योतिषको मानते हैं, पर यह गलत मालूम पड़ता है। क्योंकि जैन ज्योतिष जिसका महत्त्वपूर्ण अंग प्रश्न शास्त्र है, ईस्वी सन्की चौथी और पांचवी शताब्दीमे पूर्ण विकसित था। इस मान्यतामें भद्रबाहु विरचित अर्हच्चूड़ामणिसार प्रश्न ग्रन्थ प्राचीन और मौलिक माना गया है। आगेके प्रश्न ग्रन्थोका विकास इसी ग्रन्थकी मूल भित्तिपर हुआ प्रतीत होता है।

जैन मान्यतामें प्रचलित प्रश्न शास्त्रका विश्लेषण करनेसे प्रतीत होता है कि इसका बहुत कुछ अश मनोविज्ञानके अन्तर्गत ही आता है। ग्रीकोसे जिस प्रश्न शास्त्रको भारतने ग्रहण किया है, वह उपर्युक्त प्रश्न-शास्त्रसे विलक्षण है।

ईस्वी सन्की ७वी और ८वी सदीके मध्यमें 'चन्द्रोन्मीलन' नामक प्रश्न ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध था, जिसके आधारपर 'केरलप्रश्न'का आविष्कार भारतमें हुआ है। अतएव यह मानना पड़ेगा कि प्रश्न अंगका जन्म भारतमें हुआ और उसकी पुष्टि ईस्वी सन् ७००-९०० तकके समयमे विशेष रूपसे हुई।

पूर्वमध्यकालः

प्रमुख ज्योतिर्विद और उनके ग्रन्थोंका परिचय वराहमिहिर---यह इस युगके प्रथम धुरन्धर ज्योतिर्विद् हुए, इन्होने इस विज्ञानको क्रमबद्ध किया तथा अपनी अप्रतिम प्रतिभा द्वारा अनेक नवीन विशेषताओंका समावेश किया। इनका जन्म ईस्वी सन् ५०५में हुआ था। वृहज्जातकमें इन्होंने अपने सम्बन्धमे कहा है---

आदित्यदासतनयस्तवाप्तबोधः, काम्पिल्लके सवितुलब्धवरप्रसादः।
आवन्तिको मनिमतान्यवलोक्य सम्यग्घोरां वराहमिहिरो रुचिरां चकार॥

अर्थात्—कापित्थ (कालपी) नगरमे सूर्यसे वर प्राप्तकर अपने पिता आदित्यदाससे ज्योतिषशास्त्रकी शिक्षा प्राप्त की, अनन्तर उज्जैनीमे जाकर रहने लगे और वहीपर बृहज्जातककी रचना की। इनकी गणना विक्रमादित्यकी सभाके नवरत्नोमे की गयी है। यह त्रिष्वन्ध ज्योतिषशास्त्रके रहस्यवेत्ता, नैसर्गिक कविता-लताके प्रेमाश्रय कहे गये है। इन्होने ज्योतिष शास्त्रको जो कुछ दिया है, वह युग-युगो तक इनकी कीर्त्ति कौमुदीको भासित करता रहेगा।

इन्होने अपने पूर्वकालीन प्रचलित सिद्धान्तोका पञ्चसिद्धान्तिकामें संग्रह किया है। इसके अतिरिक्त बृहत्संहिता, बृहज्जातक, लघुजातक, विवाह-पटल, योगयात्रा और समास सहिता नाम्क ग्रन्थोकी रचना की है।

वराहमिहिरके जातक ग्रन्थोंका विषय सर्वसामान्य, गम्भीर और मत-मतान्तरोके विचारोंसे परिपूर्ण है। बृहज्जातकमे मेषादि राशियोंकी यवन संज्ञा, अनेक पारिभाषिक शब्द एव यवनाचार्योंका भी उल्लेख किया है। मय, शक्ति, जीवशर्मा, मणित्थ, विष्णुगुप्त, देवस्वामी, सिद्धसेन, और सत्याचार्य आदिके नाम आये है। इनकी सहिता भी अद्वितीय है; ज्योतिषशास्त्रमें यो अनेक सहिताएँ है, पर इनकी सहिता जैसी एक भी पुस्तक नही। डाक्टर कर्नने बृहत्संहिताकी बड़ी प्रशसा की है। वास्तविक बात तो यह है कि फलित ज्योतिषका इनके समान कोई अद्वितीय ज्ञाता नही हुआ है। यह निष्पक्ष ज्योतिषी और भारतीय ज्योतिष साहित्यके निर्माता माने जाते है। पाश्चात्य विद्वानोंका कथन है कि वराहमिहिराचार्यने भारतके ज्योतिषको केवल ग्रह-नक्षत्र ज्ञान तक ही मर्यादित न रखा, वरन् मानव जीवनके साथ उसकी विभिन्न पहलुओं द्वारा व्यापकता बतलायी तथा जीवनके सभी आलोच्य विषयोकी व्याख्याएँ की। सचमुचमे वराहमिहिराचार्यने एक खासा साहित्य इसपर तैयार किया है।

कल्याणवर्मा—इनका समय ईस्वी सन् ५७८ माना जाता है। इन्होने

यवनोके होराशास्त्रका सार संकलितकर सारावली नामक जातक ग्रन्थकी रचना की है। यह सारावली वराहमिहिरके बृहज्जातकसे भी बडी है, जातकशास्त्रकी दृष्टिसे यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। भट्टोत्पलने बृहज्जातक-की टीकामें सारावलीके कई श्लोक उद्धृत किये है। कल्याणवर्माने स्वय अपने सम्बन्धमें लिखा है--

देवग्रामपयः प्रपोषणबलाद्ब्रह्माण्डसत्पञ्जरम्।
कीर्त्तिः सिंहविलासिनीव सहसा यस्येह भर्त्तवा गता॥

होरां व्याघ्रभटेश्वरो रचयति स्पष्टां तु सारावलीम्।
श्रीमान् शास्त्रविचारनिर्मलमनाः कल्याणवर्माकृती॥

इससे स्पष्ट है कि वराहमिहिरके होराशास्त्रको सक्षिप्त देख यवन-होराशास्त्रोका सार लेकर इन्होने सारावलीकी रचना की है। इस ग्रन्थकी श्लोक संख्या ढाई हजारसे अधिक बतायी जाती है।

ब्रह्मगुप्त--यह वेधविद्यामे निपुण, प्रतिष्ठित और असाधारण विद्वान् थे। इनका जन्म पंजाबके अन्तर्गत 'भिलनालका' नामक स्थानमे ईस्वी सन् ५१८मे हुआ था। ३० वर्षकी अवस्थामे इन्होने 'ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त' नामक ग्रन्थकी रचना की। इसके अतिरिक्त ६७ वर्षकी अवस्थामे 'खण्ड-खाद्यक' नामक एक करण ग्रन्थ भी इन्होंने बनाया था। कहते है कि इस ग्रन्थका यह नाम अर्थात् ईखके रससे बना हुआ मधुर, रखनेका कारण यह बताया जाता है कि उस समयमें इस देशमें बौद्ध और सनातनियोमें धार्मिक झगड़ा बराबर चला करता था, इससे इन दोनोमें शास्त्रार्थ भी खूब होता था। सनातनियोके खण्डनके लिये बौद्ध और जैन ग्रन्थ लिखा करते थे और इन दोनोके खण्डनके लिये सनातनी। ज्योतिषमें भी यह खण्डन-मण्डनकी प्रथा प्रचलित थी। किसी बौद्ध पडितने 'लवणमुष्टि' अर्थात् एक मुष्टि नमक नामक ग्रन्थ लिखा था; जिसका तात्पर्य यही था कि सनातनियोंपर छिड़कनेके लिये एक मुट्ठीभर नमक। इसीके उत्तरमें

ब्रह्मगुप्तने 'खण्डखाद्यक' रचा अर्थात् मुट्ठीभर नमकके बदले इन्होने लोगोंको मधुरता दी।

ब्रह्मगुप्त ज्योतिषके प्रौढ विद्वान् थे। इन्होंने बीजगणितके कई नवीन नियमोका आविष्कार किया, इसीसे यह इस गणितके प्रवर्त्तक कहे गये है। अरबवालोने बीजगणित ब्रह्मगुप्तसे ही लिया है। इनके गणित ग्रन्थोंका अनुवाद अरबी भाषामे भी हुआ सुना जाता है। ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त-का 'असिन्द हिन्द' और 'खण्डखाद्यक'का 'अलर्कन्द' नाम अरववालोने रखा है।

इन्होने पृथ्वीको स्थिर माना है, इसलिये आर्यभट्टके पृथ्वी-चलन सिद्धान्तकी जी भर निन्दा की है। ब्रह्मगुप्तने अपने पूर्वके ज्योतिषियोकी गलतीका समाधान विद्वत्ताके साथ किया है। वैसे तो यह आर्यभट्टके निन्दक थे, पर अपना करण ग्रन्थ खण्डखाद्यक उसीके अनुकरणपर लिखा है। इस ग्रन्थके आरम्भके आठ अध्याय तो केवल आर्यभट्टके अनुकरणमात्र है, उत्तर भागके तीन अध्यायोमे आर्यभट्टकी आलोचना है। अलबरूनीने ब्रह्मगुप्तके ज्योतिष ज्ञानकी बहुत प्रशसा की है।

मुञ्जाल——इनका बनाया हुआ 'लघुमानस' नामक करण ग्रन्थ है, जिसमे ५८४ शकाब्दका अहर्गण सिद्ध किया गया है। इस ग्रन्थमे मध्यमा-धिकार, स्पष्टाधिकार, तिथ्याधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, ग्रहयुत्यधिकार, सूर्यग्रहणाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार और शृङ्गोन्नत्यधिकार ये आठ प्रकरण है। गणित ज्योतिषकी दृष्टिसे ग्रन्थ अच्छा मालूम पड़ता है। विषय प्रति-पादन की शैली सरल और हृदयग्राह्य है। पाठक पढ़ते-पढ़ते गणित जैसे शुष्क विषयको भी रुचि और धैर्यके साथ अन्त तक पढ़ता जाता है और अन्ततक जी नहीं ऊबता है। ग्रन्थकारकी यह शैली प्रशंसा योग्य है।

महावीराचार्य——ब्रह्मगुप्तके पश्चात् जैन सम्प्रदायमें महावीराचार्य नामके एक धुरन्धर गणितज्ञ हुए। यह राष्ट्रकूट वंशके अमोघवर्ष नृपतुंगके समयमें हुए थे, इसलिये इनका समय ईस्वी सन् ८५० माना जाता है।

इन्होंने ज्योतिषपटल और गणितसारसग्रह नामके ज्योतिष ग्रन्थोंकी रचना की है। ये दोनों ही ग्रन्थ गणित ज्योतिषके हैं, इन ग्रन्थोंसे इनकी विद्वत्ताका ज्ञान सहजमें ही लगाया जा सकता है। गणितसारके प्रारम्भमें गणित विषयकी प्रशंसा करते हुए लिखा है—

कामतन्त्रेऽर्थशास्त्रे च गान्धर्वे नाटकेऽपि वा।
सूपशास्त्रे तथा वैद्ये वास्तुविद्यादिवस्तुषु॥
छन्दोऽलङ्कारकाव्येषु तर्कव्याकरणादिषु।
कलागुणेषु सर्वेषु प्रस्तुतं गणितं परम्॥
सूर्यादिग्रहचारेषु ग्रहणे ग्रहसंयुतौ।
त्रिप्रश्ने चन्द्रवृत्तौ च सर्वत्राङ्गीकृतं हि तत्॥

इस ग्रन्थमें सज्ञाधिकार, परिकर्मव्यवहार, कलासवर्ण व्यवहार, प्रकीर्ण-व्यवहार, त्रैराशिकव्यवहार, मिश्रक व्यवहार, क्षेत्र गणित व्यवहार, खात-व्यवहार एवं छायाव्यवहार नामके प्रकरण हैं। मिश्रक व्यवहारमें सम-कुट्टीकरण, विषमकुट्टीकरण और मिश्रकुट्टीकरण आदि अनेक प्रकारके गणित हैं। पाटीगणित और रेखागणितकी दृष्टिसे इसमें अनेक विशेषताएँ हैं। इनके क्षेत्रव्यवहार प्रकरणमें आयतको वर्ग और वर्गको आयतके रूपमें बदलनेकी प्रक्रिया बतायी है। एक स्थानपर वृत्तोंको वर्ग और वर्गोंको वृत्तोंमें परिणित किया गया है। समत्रिभुज, विषमत्रिभुज, समकोण चतुर्भुज, विषमकोण चतुर्भुज, वृत्तक्षेत्र, सूचीव्यास, पञ्चभुजक्षेत्र एवं बहुभुजक्षेत्रोंका क्षेत्रफल, घनफल निकाला है। ज्योतिषपटलमें ग्रह, नक्षत्र और ताराओंके संस्थान, गति, स्थिति और संख्या आदिका प्रति-पादन किया है। यद्यपि ज्योतिषपटल सम्पूर्ण उपलब्ध नहीं है, पर जितना अंश उपलब्ध है उससे ज्ञात होता है कि गणितसारका उपयोग इस ग्रन्थके ग्रह गणितमें किया गया है।

भट्टोत्पल—यह प्रसिद्ध टीकाकार हुए हैं। जिस प्रकार कालिदासके

लिये मल्लिनाथ सिद्धहस्त टीकाकार माने जाते हैं उसी प्रकार वराहमिहिरके लिये भट्टोत्पल एक अद्वितीय प्रतिभाशाली टीकाकार हैं। यदि सच कहा जाय तो मानना पड़ेगा कि इनकी टीकाने ही वराहमिहिरको इतनी ख्याति प्रदान की है। वराहमिहिरके ग्रन्थोके अतिरिक्त वराहमिहिरके पुत्र पृथुयशाकृत 'षट्पञ्चाशिका' और ब्रह्मगुप्तके खण्डखाद्य नामक ग्रन्थोपर इन्होने विद्वत्तापूर्ण समन्वयात्मक टीकाएं लिखी हैं। टीकाग्रोके अतिरिक्त 'प्रश्न-ज्ञान' नामक स्वतन्त्र ग्रन्थ भी इनका रचा बताया जाता है। इस ग्रन्थके अन्तमे लिखा है--

भट्टोत्पलेन शिष्यानुकम्पयावलोक्य सर्वशास्त्राणि।
आर्यासप्तत्यैवं प्रश्नज्ञानं समासतो रचितम्॥

इससे स्पष्ट है कि सातसौ आर्या श्लोकोमे प्रश्नज्ञान नामक ग्रन्थकी रचना की है। भट्टोत्पलने अपनी टीकामे अपनेसे पहलेके सभी आचार्योके वचनो-को उद्धृत कर एक अच्छा तद्विषयक समन्वयात्मक संकलन किया है। इसके आधारपरसे प्राचीन ज्योतिषशास्त्रका महत्त्वपूर्ण इतिहास तैयार किया जा सकता है। इनका समय श० ८८८ है।

चन्द्रसेन--इनका रचा गया 'केवलज्ञानहोरा' नामक महत्त्वपूर्ण विशालकाय ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ कल्याणवर्माके पीछेका रचा गया प्रतीत होता है, इसके प्रकरण सारावलीसे मिलते जुलते हैं, पर दक्षिणमें रचना होनेके कारण कर्णाटक प्रदेशके ज्योतिषका पूर्ण प्रभाव है। इन्होने ग्रन्थके विषयको स्पष्ट करनेके लिये बीच बीचमें कन्नड़ भाषाका भी आश्रय लिया है। यह ग्रन्थ अनुमानतः तीन चार हजार श्लोकोंमें पूर्ण हुआ है। ग्रन्थके आरम्भमें कहा गया है--

होरा नाम महाविद्या वक्तव्यञ्च भवद्धितम्।
ज्योतिर्ज्ञानिकसारं भूषणं बुधपोषणम्॥

इन्होने अपनी प्रशसा भी प्रचुर परिमाणमे की है--

आगमः सदृशो जैनः चन्द्रसेन समोमुनिः।
केवली सदृशी विद्या दुर्लभा सचराचरे॥

इस ग्रन्थमें हेमप्रकरण, दाम्यप्रकरण, शिलाप्रकरण, मृत्तिकाप्रकरण, वृक्षप्रकरण, कार्पास-गुल्म-वल्कल-तृण-रोम-चर्म-पट-प्रकरण, संख्याप्रकरण नष्टद्रव्य प्रकरण, निर्वाहप्रकरण, अपत्यप्रकरण, लाभालाभप्रकरण, स्वरप्रकरण, स्वप्न-प्रकरण, वास्तुविद्याप्रकरण, भोजनप्रकरण, देहलोहदीक्षा प्रकरण, अञ्जन-विद्याप्रकरण, एवं विषविद्याप्रकरण आदि है। ग्रन्थको आद्योपान्त देखनेसे ज्ञात होता है, कि यह संहिता विषयक रचना है, होरा सम्बन्धी नहीं। होरा जैसा कि इसका नाम है, उसके सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा गया है।

श्रीपति—यह अपने समयके अद्वितीय ज्योतिर्विद थे। इनके पाटी गणित, बीजगणित और सिद्धान्तशेखर नामके गणित ज्योतिषके ग्रन्थ तथा श्रीपतिपद्धति, रत्नावली, रत्नसार, रत्नमाला ये फलित ज्योतिषके ग्रन्थ है। इनके पाटी गणितके ऊपर सिंहतिलक नामक जैनाचार्यकी एक 'तिलक' नामक टीका है। इनकी विशेषता यह है कि इन्होने ज्या खण्डोंके बिना ही चाप मानसे ज्याका आनयन किया है—

दोः कोटिभागरहिताभिर्हृताः खनागचन्द्रास्तदीयचरणोनशरार्कदिग्भिः।
ते व्यासखण्डगुणिता विहृताः फलंतु ज्याभिर्विनापि भवतो भुजकोटिजीवा॥

इनकी रचनाशैली अत्यन्त सरल और उच्चकोटिकी है। इन्हे केवल गणितका ही ज्ञान नहीं था, प्रत्युत ग्रहवेध क्रियासे भी यह पूर्ण परिचित थे। इन्होने वेध क्रिया द्वारा ग्रह गणितकी यान्त्रिकता अवगत कर उसका अलग संकलन किया था, जो सिद्धान्त शेखरके नामसे प्रसिद्ध है। ग्रहगणितके साथ-साथ जातक और मुहूर्त विषयोंके भी यह प्रकाण्ड पण्डित थे। इनका जन्म समय ईस्वी सन् ९९९ बताया जाता है।

श्रीधर—यह ज्योतिषशास्त्रके मर्मज्ञ विद्वान् थे। इनका समय दशवीं सदीका अन्तिम भाग माना जाता है। इन्होंने गणितसार और ज्योतिर्ज्ञान-

विधि संस्कृत भाषामें तथा जातक तिलक कन्नड़ भाषामें लिखे है। इनके गणितसारपर एक जैनाचार्यकी टीका भी उपलब्ध है।

गणितसारमें अभिन्न गुणक, भागहार, वर्ग, वर्गमूल, घन, घनमूल, भिन्न, समच्छेद, भागजाति, प्रभागजाति-भागानुबन्ध, भागमातृजाति, त्रैराशिक, सप्तराशिक, नवराशिक, भाण्ड-प्रतिभाण्ड, मिश्रकव्यवहार, भाव्यकव्यवहारसूत्र, एकपत्रीकरणसूत्र, सुवर्णगणित, प्रक्षेपकगणित, समक्रयविक्रय सूत्र, श्रेणीव्यवहार, क्षेत्रव्यवहार, खातव्यवहार, चितिव्यवहार, काष्ठव्यवहार, राशिव्यवहार, छायाव्यवहार आदि गणितोंका निरूपण किया गया है। इसमें "व्यासवर्गाद्दशगुणात्पद परिधिः" वाला परिधि आनयनका नियम बताया है। वृत्तक्षेत्रका क्षेत्रफल परिधि और व्यासके घातका चतुर्थांश बताया गया है, लेकिन पृष्ठ फलके सम्बन्धमें कहीं भी उल्लेख नहीं है।

ज्योतिर्ज्ञानविधि प्रारम्भिक ज्योतिषका ग्रन्थ है। इसमें व्यवहारोपयोगी मुहूर्त्त भी दिये गये है। आरम्भमें सवत्सरोंके नाम, नक्षत्र नाम, योगनाम, करणनाम, तथा उनके शुभाशुभत्व दिये गये है। इसमें मासशेष मासाधिपतिशेष, दिनशेष, दिनाधिपतिशेष आदि अर्थगणितकी अद्भुत और विलक्षण क्रियाएँ भी दी गयी है। यों तो मास शेष आदिका वर्णन अन्यत्र भी है, इस ग्रन्थके विषय एक नये तरीकेसे लिखे गये है, तिथिगोके स्वामी, नन्दा, भद्रा आदिका स्वरूप तथा उनका शुभाशुभत्व विस्तार सहित बताया गया है।

जातकतिलककी भाषा कन्नड़ है, यह ग्रन्थ भी जातक शास्त्रकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण सुननेमें आया है। दक्षिण भारतमें इनके ग्रन्थ अधिक प्रामाणिक माने जाते है तथा सभी व्यावहारिक कार्य इन्हीके ग्रन्थोके आधारपर वहाँ सम्पन्न किये जाते है।

श्रीधराचार्य कर्णाटक प्रान्तके निवासी थे। इनकी माताका नाम अव्वोका और पिताका नाम बलदेव शर्मा था। इन्होंने बचपनमें अपने पितासे ही संस्कृत और कन्नड़ साहित्यका अध्ययन किया था। प्रारम्भमें

यह शैव थे, किन्तु बादमे जैन धर्मानुयायी हो गये थे। अपने समयके ज्योतिर्विदोंमे इनकी अच्छी ख्याति थी।

भट्टवोसरि—इनके गुरुका नाम दामनन्दि आचार्य था। इन्होने आय-ज्ञानतिलक नामक एक विस्तृत ग्रन्थकी रचना प्राकृत भाषामे की है। मूल गाथाओंकी विवृत्ति संक्षिप्त रूपसे सस्कृतमे स्वय ग्रन्थकारने लिखी है। ग्रन्थके पुष्पकालिका वाक्यमे "**इति दिगम्बराचार्यपण्डितदामनन्दि शिष्यभट्टवोसरिविरचिते सायश्रीटीकायज्ञानतिलके कालप्रकरणम्**" कहा है। इस ग्रन्थका रचनाकाल विषय और भाषाकी दृष्टिसे ईस्वी सन् १०वी शताब्दी मालूम पड़ता है। जिस प्रकार मल्लिषेणने ग्रन्थके प्रारम्भमे सुग्रीवादि मुनीन्द्रो द्वारा प्रतिपादित आयज्ञानको कहा है इसी प्रकार इन्होने आयकी अधिष्ठात्री देवी पुलिन्दिनीकी स्तुतिमे—"**सुग्रीवपूर्वमुनिसूचित-मन्त्रबीजैः तेषां वचांसि न कदापि मृषा भवन्ति**" कहा है। इससे स्पष्ट है कि मल्लिषेणके समयके पूर्वमे ही इस ग्रन्थकी रचना हुई होगी। प्रश्न-शास्त्रकी दृष्टिसे यह ग्रन्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमे ध्वज, धूम, सिंह, गज, खर, श्वान, वृष और ध्वाक्ष इन आठ आयो द्वारा प्रश्नोके फलका सुन्दर वर्णन किया गया है।

इन प्रधान ज्योतिर्विदोके अतिरिक्त भोजराज, ब्रह्मदेव, आदि और भी दो-चार ज्योतिषी हुए है, जिन्होने इस युगमे ज्योतिष साहित्यकी श्रीवृद्धि करने-मे पर्याप्त सहयोग प्रदान किया है। इस कालमे ऐसे भी अनेक ज्योतिषके ग्रन्थ लिखे गये है, जिनके रचयिताओंके सम्बन्धमें कुछ भी ज्ञात नही है।

उत्तर मध्यकाल (ई० १००१-१६००): सामान्य परिचय

इस युगमे ज्योतिषशास्त्रके साहित्यका बहुत विकास हुआ है। मौलिक ग्रन्थोके अतिरिक्त आलोचनात्मक ज्योतिषके अनेक ग्रन्थ लिखे

गये हैं। भास्कराचार्यने अपने पूर्ववर्त्ती आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, लल्ल आदिके सिद्धान्तोंकी आलोचना की और आकाशनिरीक्षण द्वारा ग्रहमानकी स्थूलता ज्ञातकर उसे दूर करनेके लिए बीज संस्कारकी व्यवस्था बतलायी। ईस्वी सन्‌की १२वी सदीमे गोल विषयके गणितका प्रचार बहुत हुआ था, इस समय गोल विषयके गणितसे अनभिज्ञ ज्योतिषी मूर्ख माना जाता था। भास्कराचार्यने समीक्षा करते हुए बताया है—

वादी व्याकरणं विनैव विदुषां धृष्टः प्रविष्टः सभां
जल्पन्नल्पमतिः स्मयात्पटुबटुभ्रभंगवक्त्रोक्तिभिः।
ह्रीणः सन्नुपहासमेति गणको गोलानभिज्ञस्तथा
ज्योतिर्वित्सदसि प्रगल्भगणकप्रश्नप्रपञ्चोक्तिभिः॥

अर्थात्—जिस प्रकार तार्किक व्याकरण ज्ञानके विना पण्डितोंकी सभामें लज्जा और अपमानको प्राप्त होता है, उसी प्रकार गोलविषयक गणितके ज्ञानके अभावमे ज्योतिषी ज्योतिर्विदोकी सभामे गोल गणितके प्रश्नोका सम्यक् उत्तर न दे सकनेके कारण लज्जा और अपमानको प्राप्त करता है।

उत्तरमध्यकालमे पृथ्वीको स्थिर और सूर्यको गतिशील स्वीकार किया गया है। भास्करने बताया है कि जिस प्रकार अग्निमें उष्णता, जलमें शीतलता, चन्द्रमें मृदुता स्वाभाविक है उसी प्रकार पृथ्वीमें स्वभावतः स्थिरता है। पृथ्वीकी आकर्षण शक्तिकी चर्चा भी इस समयके ज्योतिष शास्त्रमें होने लग गई थी। इस युगके ज्योतिष साहित्यमें आकर्षण शक्तिकी क्रियाको साधारणतः पतन कहा गया है। और बताया है कि पृथ्वीमें आकर्षण शक्ति है, इसीलिये अन्य द्रव्य गिराये जानेसे पृथ्वीपर आकर गिरते है। केन्द्राभिकर्षिणी और केन्द्रापसारिणी ये दो शक्तियाँ प्रत्येक वस्तुमें मानी हुई है तथा यह भी स्वीकार किया गया है कि प्रत्येक पदार्थमें आकर्षण शक्ति होनेसे ही उपर्युक्त दोनों प्रकारकी क्रियात्मक शक्तियाँ अपने कार्यको सुचारु रूपसे करती है।

भास्करने पृथ्वीका आकार कदम्बकी तरह गोल बताया है, कदम्बके ऊपरके भागमें केशरकी तरह ग्रामादि स्थित है। इनका कथन है कि यदि पृथ्वीको गोल न माना जाय तो शृंगोन्नति, ग्रहयुती, ग्रहण, उदयास्त, एवं छाया आदिके गणित द्वारा साधित ग्रह दृक् तुल्य सिद्ध नहीं हो सकेंगे। उदयान्तर, चरान्तर और भुजान्तर संस्कारोंकी व्यवस्था कर ग्रह गणितमें सूक्ष्मताका प्रचार भी इन्हींके द्वारा हुआ है।

उत्तरमध्यकालकी प्रमुख विशेषता ग्रह गणितके सभी अंगोंके संशोधनकी है। लम्बन, नति, आयनवलन, आक्षवलन, आयनदृक्कर्म, आक्षदृक्कर्म, भूभाविम्ब साधन, ग्रहोंके स्पष्टीकरणके विभिन्न गणित और तिथ्यादिके साधनमें विभिन्न प्रकारके संस्कार किये गये, जिससे गणित द्वारा साधित ग्रहोंका मिलान आकाश निरीक्षण द्वारा प्राप्त ग्रहोंसे हो सके।

इस युगकी एक अन्य विशेषता यन्त्र निर्माणकी भी है। भास्कराचार्य और महेन्द्रसूरिने अनेक यन्त्रोंके निर्माणकी विधि और यन्त्रों द्वारा ग्रहवेधकी प्रणालीका निरूपण सुन्दर ढंगसे किया है। यद्यपि इस कालके प्रारम्भमें ग्रह गणितका बहुत विकास हुआ, अनेक करण ग्रन्थ तथा सारणियाँ लिखी गयीं, पर ई० सन् की १५वीं शताब्दीसे ही ग्रहवेधकी परिपाटीका ह्रास होने लग गया है। यों तो प्राचीन ग्रन्थोंको स्पष्ट करने और उनके रहस्योंको समझानेके लिये इस युगमें अनेक टीकाएँ और भाष्य लिखे गये, पर आकाश निरीक्षणकी प्रथा उठ जानेसे मौलिक साहित्यका निर्माण न हो सका। ग्रहलाघव, करणकुतूहल, और मकरन्द जैसे सुन्दर करण-ग्रन्थोंका निर्मित होना भी इस युगके लिये कम गौरवकी बात नहीं है।

फलित ज्योतिषमें जातक, मुहूर्त्त, सामुद्रिक, रमल और प्रश्न इन अंगोंके साहित्यका निर्माण भी उत्तरमध्यकालमें कम नहीं हुआ है। मुसलिम संस्कृतिके अति निकट सम्पर्कके कारण रमल और ताजिक इन दो अंगोंका तो नया जन्म माना जायगा। ताजिक शब्दका अर्थ ही अरबदेशसे प्राप्त शास्त्र है। इस युगमें इस विषयपर लगभग दो दर्जन ग्रन्थ लिखे

गये है । इस शास्त्रमे किसी व्यक्तिके नवीन वर्ष और मासमे प्रवेश करनेकी ग्रह स्थितिपरसे उसके समस्त वर्ष और मासका फल बताया जाता है । बलभद्र कृत ताजिक ग्रन्थमे कहा है--

यवनाचार्येण पारसीकभाषायां प्रणीतं ज्योतिःशास्त्रैकदेशरूपं वार्षिकादिनानाविधफलादेशफलकशास्त्रं ताजिक लवाच्यं तदनन्तरभूतैः समरसिंहादिभिः ब्राह्मणैः तदेव शास्त्रं संस्कृतशब्दोपनिबद्धं ताजिकशब्दवाच्यं । अतएव तैस्ता एव इक्कबालादयो यावन्यः संज्ञा उपनिबद्धाः ।

अर्थात्--यवनाचार्यने फारसी भाषामें ज्योतिष शास्त्रके अंगभूत वर्ष, मासके फलको नाना प्रकारसे व्यक्त करनेवाले ताजिक शास्त्रकी रचना की थी । इसके पश्चात् अमरसिंह आदि विद्वानोने सस्कृत भाषामें इस शास्त्रकी रचना की और इक्कबाल, इन्दुवार, इशराफ आदि यवनाचार्य द्वारा प्रतिपादित योगोंकी संज्ञाएँ ज्यो की त्यों रखीं ।

कुछ विद्वानोंका मत है कि ईस्वी सन् १३००मे तेजसिंह नामके एक प्रकाण्ड ज्योतिषी भारतमे हुए थे, उन्होंने वर्ष प्रवेश कालीन लग्नकुण्डली द्वारा ग्रहोका फल निकालनेकी एक प्रणाली निकाली थी । कुछ कालके पश्चात् इस प्रणालीका नाम आविष्कर्त्ताके नामपर ताजिक पड़ गया । ग्रन्थान्तरोंमें यह भी लिखा मिलता है कि--

गर्गाद्यैर्यवनैश्च रोमकमुखैः सत्यादिभिः कीर्तितं ।
शास्त्रं ताजिक संज्ञकं ..... ॥

अर्थात्--गर्गाचार्य, यवनाचार्य, सत्याचार्य और रोमकने जिस फलादेश सम्बन्धी शास्त्रका निरूपण किया था, वह ताजिक शास्त्र था । अतएव यह स्पष्ट है कि ताजिक शास्त्रका विकास स्वतन्त्र रूपसे भारतीय ज्योतिषतत्त्वोके आधारपर हुआ है । हाँ, यवनोके सम्पर्कसे उसमें संशोधन और परिवर्द्धन अवश्य किये गये है, पर तो भी उसकी भारतीयता अक्षुण्ण बनी हुई है ।

प्रश्न अंगके साहित्यका निर्माण भी इस युगमें अधिक रूपसे हुआ। आचार्य दुर्गदेवने सं० १०८९में रिष्टसमुच्चय नामक ग्रन्थमें अंगुलिप्रश्न, अलक्तप्रश्न, गोरोचनप्रश्न, प्रश्नाक्षरप्रश्न, शकुनप्रश्न, अक्षरप्रश्न, होरा-प्रश्न और लग्नप्रश्न इन आठ प्रकारके प्रश्नोंका अच्छा प्रतिपादन किया है। इसके अतिरिक्त पद्मप्रभ सूरिने वि० स० १२९४में भुवनदीपक नामक एक छोटा-सा ग्रन्थ १७० श्लोकोंका बनाया है, जो प्रश्न शास्त्रका उत्कृष्ट ग्रन्थ है। ज्ञानप्रदीपिका नामका एक प्रश्न ग्रन्थ भी निराला है, इसमें अनेक गूढ और मानसिक प्रश्नोंके उत्तर देनेकी प्रक्रियाका वर्णन किया गया है। लग्नको आधार मानकर भी कई प्रश्न ग्रन्थ लिखे गये हैं, जिनका फल प्रायः जातक ग्रन्थोंके मूलाधारपर स्थित है। ईस्वी सन्‌की १५वी और १६वी शताब्दीमें भी कुछ प्रश्न ग्रन्थोंका निर्माण हुआ है।

रमल——यह पहले ही लिखा जा चुका है कि रमलका प्रचार विदेशियोंके ससर्गसे भारतमें हुआ है। ईस्वी सन् ११वीं और १२वी शताब्दीकी कुछ फारसी भाषामें रची गई रमलकी मौलिक पुस्तकें खुदाबख्शखाँ लाइब्रेरी पटनामें मौजूद है। इन पुस्तकोंमें कर्त्ताओंके नाम नहीं है। संस्कृत भाषामें रमलकी पाँच-सात पुस्तकें प्रधान रूपसे मिलती है। 'रमलनवरत्नम्' नामक ग्रन्थमें पाशा बनानेकी विधिका कथन करते हुए बताया है कि——

वेदतत्त्वोपरिकृतं रम्लशास्त्रं च सूरिभिः।
तेषां भेदाः षोड़शैव न्यूनाधिक्यं न जायते॥

अर्थात्——अग्नि, वायु, जल और पृथ्वी इन चार तत्त्वोंपर विद्वानोंने रमल शास्त्र बनाया है तथा इन चार तत्त्वोंके सोलह भेद कहे हैं अतः रमलके पाशेमें सोलह शकल बताई गई है।

ई० १२४६में सिंहासनारूढ़ होनेवाले नासिरुद्दीनके दरबारमें एक रमल शास्त्रके अच्छे विद्वान् थे। जब नासिरुद्दीनकी मृत्युके बाद बलबन शासक बन बैठा था, उस समय तक वह विद्वान् उनके दरबारमें रहा था।

इसने फारसीमें रमल साहित्यका सृजन भी किया था। सन् १३१४में सीताराम नामके एक विद्वान्ने रमलसार नामका एक ग्रन्थ संस्कृतमें रचा है, यद्यपि इनका यह ग्रन्थ अभी तक मुद्रित हुआ मिलता नहीं है, पर इसका उल्लेख मद्रास यूनीवर्सिटीके पुस्तकालयके सूचीपत्रमें है।

किवदन्ती ऐसी भी है कि बहलोल लोदीके साथ भी एक अच्छा रमल शास्त्रका वेत्ता रहता था, यह मूक प्रश्नोंका उत्तर देनेमें सिद्धहस्त बताया गया है। रमल नवरत्नके मंगलाचरणमें पूर्वके रमल शास्त्रियोंको नमस्कार किया गया है।—

नत्वा श्रीरमलाचार्यान् परमाद्यसुखाभिधैः।
उद्धृतं रमलाम्भोधेर्नवरत्नं सुशोभनम्॥

अर्थात्—प्राचीन रमलाचार्योंको नमस्कार करके परमसुख नामक ग्रन्थकर्त्ताने रमलशास्त्र रूपी समुद्रमेंसे सुन्दर नवरत्नको निकाला है।

इस ग्रन्थका रचनाकाल १७वीं शताब्दी है। अतः यह स्वयं सिद्ध है कि उत्तर मध्यकालमें रमलशास्त्रके अनेक ग्रन्थोंका निर्माण हुआ है।

मुहूर्त्त—यों तो उदयकालमें ही मुहूर्त्त सम्बन्धी साहित्यका निर्माण होने लग गया था तथा आदिकाल और पूर्वमध्यकालमें संहिता शास्त्रके अन्तर्गत ही इस विषयकी रचनाएँ हुई थीं। पर उत्तर मध्यकालमें इस अंगपर स्वतन्त्र रचानएँ दर्जनोंकी संख्यामें हुई हैं। शक संवत् १४२०में नन्दिग्रामवासी केशवाचार्य कृत मुहूर्त्त तत्त्व, शक संवत् १४९३में नारायण कृत मुहूर्त्त मार्त्तण्ड, शक संवत् १५२२में रामभट्ट कृत मुहूर्त्त चिन्तामणि, शक संवत् १५४९में विट्ठल दीक्षित कृत मुहूर्त्त कल्पद्रुम आदि मुहूर्त्त सम्बन्धी रचनाएँ हुई हैं। इस युगमें मानवके सभी आवश्यक कार्योंके लिये शुभाशुभ समयका विचार किया गया है।

शकुनशास्त्र—इसका विकास भी स्वतन्त्र रूपसे इस युगमें अधिक हुआ है। वि० सं० १२३२में अल्लिलपट्टणके नरपति नामक कविने नरपति जयचर्या

नामक एक शुभाशुभ फलका बोध करानेवाला अपूर्व ग्रन्थ रचा है। इस ग्रन्थमे प्रधानरूपसे स्वर विज्ञान द्वारा शुभाशुभ फलका निरूपण किया गया है। वसन्तराज नामक कविने अपने नामपर वसन्तराज शकुन नामका एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ रचा है। इस ग्रन्थमे पत्येक कार्यके पूर्वमे होनेवाले शुभाशुभ शकुनोका प्रतिपादन आकर्षक ढगसे किया गया है। इन ग्रन्थोके अतिरिक्त मिथिलाके महाराज लक्ष्मणसेनके पुत्र वल्लालसेनने श० स० १०९२मे अद्भुतसागर नामका एक सगह ग्रन्थ रचा है, जिसमें अपने समयके पूर्ववर्त्ती ज्योतिर्विदोकी संहिता सम्बन्धी रचनाओंका सग्रह किया है। कई जैन मुनियोने शकुनके ऊपर वृहद् परिमाणमे रचनाएँ लिखी है। यद्यपि शकुन शास्त्रके मूलतत्त्व आदिकालके ही थे, पर इस युगमे उन्ही तत्त्वोकी विस्तृत विवेचनाएँ लिखी गई है।

उत्तरमध्यकालमे भारतीय ज्योतिषने अनेक उत्थान और पतनोको देखा है। विदेशियोके सम्पर्कमे होनेवाले संशोधनोको अपनेमे पचाया है और प्राचीन भारतीय ज्योतिपकी गणित विषयक स्थूलताओको दूरकर सूक्ष्मताका प्रचार किया है।

यदि संक्षेपमे उत्तरमध्यकालके ज्योतिष-साहित्यपर दृष्टिपात किया जाय तो यही कहा जा सकता है कि इस कालमे गणित ज्योतिषकी अपेक्षा फलित ज्योतिषका साहित्य अधिक फलाफूला है। गणित ज्योतिषमें भास्करके समान अन्य दूसरा विद्वान् नही हुआ, जिससे विपुल परिमाणम इस विषयकी सुन्दर रचनाएँ नही हो सकी।

उत्तर मध्यकालके ग्रन्थ और ग्रन्थकारोंका परिचय

सिद्धान्त ज्योतिषका विकास इस कालमें विशेष रूपसे हुआ है। यद्यपि देशकी राजनैतिक परिस्थिति साहित्यके सृजनके लिये पूर्वमध्यकाल-के समान अनुकूल नही थी, फिर भी भास्कर आदिने गणित साहित्यके

निर्माणमे अपूर्व कौशल दिखलाया है। यहाँ इस युगके प्रमुख ज्योतिर्विदोका परिचय दिया जाता है—

भास्कराचार्य—वराहमिहिर और ब्रह्मगुप्तके बाद इनके समान प्रतिभाशाली, सर्वगुणसपन्न दूसरा ज्योतिर्विद नही हुआ। इनका जन्म ईस्वी सन् १११४मे विज्जडविड नामक ग्राममें हुआ था। इनके पिताका नाम महेश्वर उपाध्याय था। इन्होने एक स्थानपर लिखा है—

आसीन्महेश्वर इति प्रथितः पृथिव्यामाचार्यवर्यपदवीं विदुषां प्रपन्नः। लब्धाववोधकलिकां तत एव चक्रे तज्जेन बीजगणितं लघुभास्करेण।

इससे स्पष्ट है कि महेश्वर इनके पिता और गुरु दोनों ही थे। इनके द्वारा रचित लीलावती, बीजगणित, सिद्धान्तशिरोमणि, करणकुतूहल और सर्वतोभद्र ग्रन्थ है।

ब्रह्मगुप्तके ब्रह्मस्फुटसिद्धान्त और पृथूदक स्वामीके भाष्यको मूल मानकर इन्होने अपना सिद्धान्त शिरोमणि बनाया है; तथा आर्यभट्ट, लल्ल, ब्रह्मगुप्त आदिके मतोकी समालोचना की है। शिरोमणिमें अनेक नये विषय भी आये है, प्राचीन आचार्योके गणितोमे संशोधनकर बीज संस्कार निर्धारित किये। इन्होने सिद्धान्त शिरोमणिपर वासना भाष्य भी लिखा है, जिससे इनके सरल और सरस गद्यका भी परिचय मिल जाता है। ज्योतिषी होनेके साथ-साथ भास्कराचार्य ऊँचे दर्जेके कवि भी थे। इनकी कविताशैली अनुप्रासयुक्त है, ऋतु वर्णनमें यमक और श्लेषकी सुन्दर बहार दिखलाई पड़ती है। गणितमें वृत्त, पृष्ठघनफल, गुणोत्तरश्रेणी, अंकपाश, करणीवर्ग, वर्गप्रकृति, योगान्तर भावना द्वारा कनिष्ठ-ज्येष्ठानयन एवं सरल कल्पना द्वारा एक और अनेक वर्ण मानायन आदि विषय इनकी विशेषनाके द्योतक है। सिद्धान्तमें भगणोपपत्ति लघुज्याप्रकारसे ज्यानयन, चन्द्रकलाकर्ण-साधन, भूभानयन, सूर्यग्रहणका गणित, स्पष्ट शर द्वारा स्पष्ट क्रान्तिका साधन आदि बातें इनकी पूर्वाचार्योंकी अपेक्षा नवीन है। इन्होने फलितका भी कोई ग्रन्थ लिखा था, पर आज वह उप-

लब्ध नही है, कुछ उद्धरण इनके नामसे मुहूर्त्त चिन्तामणिकी पीयूषधारा टीकामे मिलते है ।

दुर्गदेव—ये दिगम्बर जैन धर्मानुयायी थे । इनका समय ईस्वी सन् १०३२ माना जाता है । यह ज्योतिष शास्त्रके मर्मज्ञ विद्वान् थे । इन्होने अर्घकाण्ड और रिट्ठसमुच्चय नामक दो ग्रन्थ लिखे है । रिट्ठसमुच्चयके अन्तमे लिखा है—

रइयं बहुसत्थत्थं उवजीवित्ता हु दुग्गएवेण ।
रिट्ठं समुच्चयसत्थं वयणेण संजमदेवस्स ॥

अर्थात्—इस शास्त्रकी रचना दुर्गदेवने अपने गुरु सयमदेवके वचनानुसार की है । ग्रन्थमे एक स्थानपर संयमदेवके गुरु संयमसेन और उनके गुरु माधवचन्द्र बताये गये है । दुर्गदेवने रिट्ठसमुच्चयमे जैन शौरसेनी प्राकृतमें २६१ गाथाओका शकुन और शुभाशुभ निमित्तोंका संकलन रूपमें रचा है । इस ग्रन्थकी रचना कुम्भनगर अनंगामें की गयी है । लेखकने रिट्ठो—रिष्टोके पिण्डस्थ, पदस्थ और रूपस्थ नामक तीन भेद किये है । प्रथम श्रेणीमें अँगुलियोका टूटना, नेत्रज्योतिकी हीनता, रसज्ञानकी न्यूनता, नत्रोसे लगातार जलप्रवाह एवं अपनी जिह्वाको न देख सकना आदिको परिगणित किया है । द्वितीय श्रेणीमें सूर्य और चन्द्रमाका अनेक रूपोंमें दर्शन, प्रज्वलित दीपकको शीतल अनुभव करना, चन्द्रमाको त्रिभंगी रूपमें देखना, चन्द्रलाञ्छनका दर्शन न होना इत्यादिको लिया है । तृतीयमें निजच्छाया, परच्छाया तथा छाया पुरुषका वर्णन है और आगे जाकर छायाका अंगविहीन दर्शन आदि विषयोपर तथा छायाका सछिद्र और टूटे-फूटे रूपमे दर्शन आदिपर अनेकों मत दिये है । अनन्तर ग्रन्थकर्त्ताने स्वप्नोंका कथन किया है जिन्हें उसने देवेन्द्र कथित तथा सहज इन दो रूपोंमें विभाजित किया है । अरिष्टोंकी स्वाभाविक अभिव्यक्ति करते हुए प्रश्नारिष्टके आठ भेद—अंगुलिप्रश्न, अलक्तप्रश्न, गोरोचना प्रश्न प्रश्नाक्षरप्रश्न—अलिङ्गित, दग्ध, ज्वलित और शान्त, एवं शकुनप्रश्न

बताये है। प्रश्नाक्षरारिष्टका अर्थ बतलाते हुए लिखा है कि मंत्रोच्चारणके अनन्तर पृच्छकसे प्रश्न कराके प्रश्न वाक्यके अक्षरोंको दूना और मात्राओं-को चौगुना कर योगफलमे सातसे भाग देना चाहिये। यदि शेष कुछ न रहे तो रोगीकी मृत्यु और शेष रहनेसे रोगीका चंगा होना फल जानना चाहिए। सक्षेपमे यह कहा जा सकता है कि इस ग्रन्थमे आचार्यने बाह्य और आन्तरिक शकुनोके द्वारा आनेवाली मृत्युका निश्चय किया है। ग्रन्थका विषय रुचिकर है।

उदयप्रभदेव—इनके गुरुका नाम विजयसेन सूरि था। इनका समय ईस्वी सन् १२२० बताया जाता है। इन्होने ज्योतिष विषयक आरम्भ-सिद्धि अपर नाम व्यवहारचार्या नामक ग्रन्थकी रचना की है। इस ग्रन्थपर वि० सं० १५१४मे रत्नशेखर सूरिके शिष्य हेमहस गणिने एक विस्तृत टीका लिखी है। इस टीकामे इन्होने मुहूर्त्त सम्बन्धी साहित्यका अच्छा संकलन किया है। लेखकने ग्रन्थके प्रारम्भमे ग्रन्थोक्त अध्यायोका संक्षिप्त नामकरण निम्न प्रकार दिया है—

दैवज्ञदीपकालिकां व्यवहारचर्यामारम्भसिद्धिमुदयप्रभदेवएनाम् शास्ति-क्रमेण तिथिवारभयोगराशिगोचर्यकार्यगमवास्तुविलग्नभिः

हेमहंस गणिने व्यवहारचर्या नामकी सार्थकता दिखलाते हुए लिखा है—

व्यवहार शिष्टजनसमाचारः शुभतिथिवारभादिषु शुभकार्यकरणादि-रूपस्तस्य चर्या ॥

अर्थात् इस ग्रन्थमें प्रत्येक कार्यके शुभाशुभ मुहूर्त्तोका वर्णन है। मुहूर्त्त अंगकी दृष्टिसे ग्रन्थ मुहूर्त्त चिन्तामणिके समान उपयोगी और महत्त्वपूर्ण है। उपर्युक्त ११ अध्यायोमे सभी प्रकारके मुहूर्त्तोका वर्णन किया है। ग्रन्थको आद्योपान्त देखनेपर लेखककी ग्रहगणित विषयक योग्यता भी ज्ञात हो जाती है। हेमहंस गणिने टीकाके मध्यमें प्राकृत की ग्रह गणित विषयक गाथाएँ उद्धृत की है, जिनसे पता लगता है कि इनके समक्ष

कोई प्राकृतका ग्रहगणितसम्बन्धी ग्रन्थ था । इस ग्रन्थमें अनेक विशेषताएँ है ।

मल्लिषेण––यह संस्कृत और प्राकृत दोनो भाषाओके प्रकाण्ड विद्वान् थे । इनके पिताका नाम जिनसेन सूरि था, यह दक्षिण भारतके धारवाड़ जिलेके अन्तर्गत गदग तालुका नामक स्थानके रहनेवाले थे । इनका समय ईस्वी सन् १०४३ माना गया है । इनका ज्योतिषका ग्रन्थ 'आय-सद्भाव' नामक है । ग्रन्थके आदिमें लिखा है––

सुग्रीवादिमुनीन्द्रैः रचितं शास्त्रं यदायसद्भावम् ।
तत्सम्प्रत्यार्थाभिर्विरच्यते मल्लिषेणेन ॥
ध्वजधूमसिंहमण्डलवृषखरगजवायसाभवन्त्यायाः
ज्ञायन्ते ते विद्भिरर्हकोत्तरगणनया चाष्टौ ॥

इन उद्धरणोसे स्पष्ट है कि इनके पूर्वमे भी सुग्रीव आदि जैन मुनियोके द्वारा इस विषयकी ओर रचनाएँ भी हुई थी, उन्हीके सारांशको लेकर इन्होने 'आयसद्भाव'की रचना की है । इस ग्रन्थके प्रारम्भमें आयकी अधिष्ठात्री देवी पुलिन्दिनीको माना है और उसका स्मरण भी किया है । इस ग्रन्थमें कुल १९५ आर्याएँ तथा अन्तमे एक गाथा इस तरह १९६ पद्य है । ग्रन्थके अन्तमे ग्रन्थकर्त्ताने कहा है कि इस ग्रन्थके द्वारा भूत, भविष्यत् और वर्त्तमान इन तीनों कालोका ज्ञान हो सकता है । तथा अन्यको इस विद्याको न देनेके लिये जोर दिया है––

अन्यस्य न दातव्यं मिथ्यादृष्टेस्तु विशेषतोऽविधेयम् ।
शपथं च कारयित्वा जिनवरदेव्याः पुरः सम्यक् ॥

ग्रन्थकर्त्ताने इसमें ध्वज, धूम, सिंह, मण्डल, वृष, खर, गज और वायस इन आठों आयोंका स्वरूप तथा उनके फलाफलका सुन्दर विवेचन किया है ।

राजादित्य––इनके पिताका नाम श्रीपति और माताका नाम वसन्ता

था। इनका जन्म कोडिमण्डलके 'यूविनबाग' नामक स्थानमे हुआ था। इनके नामान्तर, राजवर्म, भास्कर और वाचिराज बताये जाते है। यह विष्णुवर्धन राजाकी सभाके प्रधान पडित थे, अत इनका समय ईस्वी सन् ११२०के लगभग है। यह कवि होनेके साथ-साथ गणित ज्योतिषके माने हुए विद्वान थे। कर्णाटक कविचरितेके लेखकका कथन है कि कन्नड़ साहित्यमे गणितका ग्रन्थ लिखनेवाला यह सबसे पहला विद्वान था। इनके द्वारा रचित व्यवहार गणित, क्षेत्रगणित, व्यवहाररत्न और जैनगणित-सूत्रटीकोदाहरण, चित्रह सुगे और लीलावती ये गणित ग्रन्थ प्राप्य है। इनके ये समस्त ग्रन्थ कन्नड़ भाषामे है। इनके ग्रन्थोमे अकगणितके सभी विषयके अतिरिक्त बीजगणित और रेखागणितके भी अनेक विषय आये है। इन सब गणितोका ग्रहगणितमे अत्यधिक उपयोग होता है। इनके गुरुका नाम शुभचन्द्रदेव बताया जाता है।

बल्लालसेन—मिथिलाके महाराज लक्ष्मणसेनके पुत्र थे। इन्हें ज्योतिष-शास्त्रसे बहुत प्रेम था। राज्याभिषेकके आठ वर्ष बाद ईस्वी सन् ११६८मे संहितारूप अद्भुत-सागर नामक ग्रन्थकी रचना की है। इस ग्रन्थमे गर्ग, वृद्धगर्ग, वराह, पराशर, देवल, वसन्तराज, कश्यप, यवनेश्वर, मयूरचित्र, ऋषिपुत्र, राजपुत्र, ब्रह्मगुप्त, महबलभद्र, पुलिश, सूर्यसिद्धान्त विष्णुचन्द्र, और प्रभाकर आदिके वचनोका सग्रह है। ग्रन्थ बहुत बड़ा है। लगभग ७-८ हजार श्लोक प्रमाणमे पूरा किया गया है। सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, भृगु, शनि केतु, राहु, ध्रुव, ग्रहयुद्ध, सवत्सर, ऋक्ष, परिवेष, इन्द्रधनुष, गान्धर्व नगर, निर्घात, दिग्दाह, छाया, तमोधूमनीहार, उल्का, विद्युत, वायु, मेघ, प्रवर्षण, अतिवृष्टि, कबन्ध, भूकम्प, जलाशय, देवप्रतिमा, वृक्ष, गृह, वस्त्रोपानहासनाद्य, गज, अश्व, विडाल आदि अनेक अद्भुत वार्त्ताओका निरूपण इस ग्रन्थमे विस्तारसे किया गया है। वास्तवमे यह ग्रन्थ यथार्थ नाम अपना सिद्ध कर रहा है। इस ग्रन्थकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ज्योतिष विद्याके ज्ञानके अतिरिक्त इससे

अनेक इतिहासकी बातें भी ज्ञात की जा सकती है। ज्योतिषका इतिहास लिखनेमें इससे बहुत बड़ी सहायता मिलती है। इस ग्रन्थमें पद्योंके अतिरिक्त बीच-बीचमें गद्य भी दिया गया है।

पद्मप्रभसूरि——नागौरकी तापगच्छीय पट्टावलीसे पता चलता है कि यह वादिदेव सूरिके शिष्य थे। इन्होंने भुवन-दीपक या ग्रहभावप्रकाश नामक ज्योतिषका ग्रन्थ लिखा है। इस ग्रन्थपर सिंहतिलकसूरिने जो सफल टीकाकार और ज्योतिषके मर्मज्ञ थे वि० सं० १३२६में 'एक विवृत्ति' नामक टीका लिखी है। इनकी तिलक नामकी टीका श्रीपतिके पाटी गणितपर बहुत महत्त्वपूर्ण है। "जैन साहित्यनो इतिहास" नामक ग्रन्थमें इनके गुरुका नाम विबुधप्रभ सूरि बताया है। इनके द्वारा रचित मुनिसुव्रत चरित, कुन्थुचरित और पार्श्वनाथस्तवन भी कहे जाते है। भुवन दीपकका रचनाकाल वि० सं० १२९८ है। यह ग्रन्थ छोटा होते हुए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें ३६ द्वार-प्रकरण है। राशिस्वामी, उच्चनीचत्व, मित्रशत्रु, राहुका गृह, केतुस्थान, ग्रहोंके स्वरूप, द्वादश भावोंसे विचारणीय बातें, इष्टकालज्ञान, लग्न-सम्बन्धी विचार, विनष्टग्रह, राजयोगोंका कथन, लाभालाभ विचार, लग्नेशकी स्थितिका फल, प्रश्न द्वारा गर्भविचार, प्रश्न द्वारा प्रसव ज्ञान, यमजविचार, मृत्युयोग, चौर्यज्ञान, द्रेष्काणादिके फलोंका विचार विस्तारसे किया है। इस ग्रन्थमें कुल १३० श्लोक है। इसकी भाषा संस्कृत है, ज्योतिषकी ज्ञातव्य सभी बातें इस ग्रन्थके द्वारा जानी जा सकती है।

नरचन्द्र उपाध्याय——यह कासद्रुहगच्छके सिंहसूरिके शिष्य थे। इन्होंने ज्योतिषशास्त्रके अनेक ग्रन्थोंकी रचना की है। वर्त्तमानमें इनके बेडाजातकवृत्ति, प्रश्नशतक, प्रश्नचतुर्विंशतिका, जन्मसमुद्रसटीक, लग्नविचार ज्योतिषप्रकाश उपलब्ध है। इनके सम्बन्धमें एक स्थानपर कहा गया है——

देवानन्दमुनीश्वर पदपंकजसेवकैः षट्चरणः।
ज्योतिःशास्त्रमकार्षीत् नरचन्द्राख्यो मुनिप्रवरः॥

इस श्लोक द्वारा देवानन्द नामक मुनि इनके गुरु मालूम पड़ते है। भिन्न दिगम्बर समुदायमें "नारचन्द्र" नामक ज्योतिष ग्रन्थ जो उपर्युक्त ग्रन्थोंसे है, नरचन्द्र द्वारा रचित माना जाता है। इनके सम्बन्धमें एक स्थानपर यह भी उल्लेख मिलता है--

श्रीकाशहृदगणेशोद्योतन सूरीष्टसिंहसूरिभृतः।
नरोचन्द्रोपाध्यायः शास्त्रं चन्द्रेऽर्थ बहुलमिदम् ॥

नरचन्द्रने सं० १३२४में माघ सुदी ८ रविवारको बेडाजातक वृत्तिकी रचना १०५० श्लोक प्रमाणमे की है। इनकी ज्ञानदीपिका नामक एक अन्य रचना भी ज्योतिषकी बतायी जाती है। बेडाजातकवृत्तिमें लग्न और चन्द्रमासे ही समस्त फलोंका विचार किया गया है। यह जातक ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है। प्रश्नचतुर्विंशतिकाके प्रारम्भमें ज्योतिषका महत्त्वपूर्ण गणित लिखा है। यह ग्रन्थ अत्यन्त गूढ़ और रहस्यपूर्ण है।

पञ्चवेदयामगुण्ये रविभुक्तदिनान्विते
त्रिंशदभुक्ते स्थितं यत्तत् लग्नं सूर्योदयर्क्षतः ॥

उपर्युक्त श्लोकमे अत्यन्त कौशलके साथ दिनमान सिद्ध किया है। ज्योति-प्रकाश फलित ज्योतिषका मुहूर्त्त और सहिता विषयक सुन्दर ग्रन्थ है। इसके दूसरे भागमें जन्मकुण्डलीके फलका बड़ी सरलतासे विचार किया है। फलित ज्योतिषका आवश्यक ज्ञान केवल ज्योतिषप्रकाश द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

अट्ठकवि या अर्हद्दास--यह जैन ब्राह्मण थे। इनका समय ईस्वी सन् १३००के लगभग माना जाता है। अर्हद्दासके पिता नागकुमार थे। यह कन्नड भाषाके प्रकाण्ड विद्वान थे, इन्होंने कन्नड़में अट्ठमत नामक एक ज्योतिषका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा है। शक संवत्की चौदहवी शताब्दि-में भास्कर नामके आन्ध्रकविने इस ग्रन्थका तेलगू भाषामें अनुवाद किया है। 'अट्ठमतमें वर्षाके चिन्ह, आकस्मिक लक्षण, शकुन, वायु चन्द्र, गोप्रवेश,

भूकम्प, भूजातफल, उत्पातलक्ष्य, परिवेषलक्षण, इन्द्रधनुर्लक्षण, प्रथम-गर्भलक्षण, द्रोणसंख्या, विद्युल्लक्षण, प्रतिसूर्यलक्षण, संवत्सरफल, ग्रहद्वेष, मेघोंके नाम, कुल-वर्ण, ध्वनिविचार, देशवृष्टि, मासफल, राहुचक्र, नक्षत्र-फल, संक्रान्तिफल आदि विषयोंका प्रतिपादन किया गया है।

महेन्द्रसूरि—यह भृगुकर निवासी मदनसूरिके शिष्य फीरोजशाह तुगलकके प्रधान सभापण्डित थे। इन्होंने नाड़ीवृत्तके धरातलमें गोलपृष्ठस्थ सभी वृत्तोंका परिणमन करके यन्त्रराज नामक ग्रह गणितका उपयोगी ग्रन्थ बनाया है। इनके शिष्य मलयेन्दुसूरिने सोदाहरण टीका लिखी है। इस ग्रन्थकी प्रशंसा करते हुए स्वयं ग्रन्थकारने लिखा है—

यथा भटः प्रौढरणोत्कटोऽपि शस्त्रैर्विमुक्तः परिभूतिमेति।
तद्वन्महाज्योतिषनिस्तुषोऽपि यंत्रेण हीनो गणकस्तथैव॥

इस ग्रन्थमें अनेक विशेषताएँ हैं, परमक्रान्ति २३ अंश ३५ कला मानी गयी है। इस ग्रन्थकी रचना शक सं० १२९२में हुई है। इसमें गणिताध्याय, यन्त्रघटनाध्याय, यन्त्ररचनाध्याय, यन्त्रशोधनाध्याय और यन्त्रविचारणाध्याय ये पाँच अध्याय हैं। क्रमोत्क्रमज्यानयन, भुजकोटिज्या का चापसाधन, क्रान्ति-साधन, द्युज्याखण्डसाधन, द्युज्याफलानयन, सौम्य यन्त्रके विभिन्न गणितोंका साधन, अक्षांशसे उन्नतांश साधन, ग्रन्थके नक्षत्र ध्रुवादिसे अभीष्ट वर्षके ध्रुवादिका साधन, नक्षत्रोंके दृक्कर्मसाधन, द्वादश राशियोंके विभिन्न वृत्त सम्बन्धी गणितोंका साधन, इष्टशंकुसे छायाकरणसाधन, यंत्रशोधन प्रकार और उसके अनुसार विभिन्न राशि और नक्षत्रोंके गणितका साधन, द्वादश भाव और नवग्रहोंके स्पष्टीकरणका गणित एवं विभिन्न यन्त्रों द्वारा सभी ग्रहोंके साधनका गणित बहुत सुन्दर ढंगसे इस ग्रन्थमें बनाया गया है। इसपरसे पञ्चाङ्ग बहुत सरलतासे बनाया जा सकता है।

मकरन्द—इन्होंने सूर्यसिद्धान्तके अनुसार तिथ्यादि साधन रूप सारणी

अपने नामसे (मकरन्द) बनारसमें शक स० १४००में तैयार की है। ग्रन्थके आदिमें लिखा है—

श्रीसूर्यसिद्धान्तमतेनसम्यक् विश्वोपकाराय गुरूपदेशात्।
तिथ्यादिपत्रं वितनोति काश्यां आनन्दकन्दो मकरन्दनामा॥

मकरन्दके ऊपर दिवाकर ज्योतिषी द्वारा लिखा गया विवरण है। इनकी इस सारणी द्वारा पञ्चाङ्ग अनेक ज्योतिषी बनाते है। इस समय ग्रहलाघव सारणी और मकरन्द सारणीका खूब प्रचार है। मकरन्द सारणीका जान वेन्टली साहबने अंग्रेजीमें भी अनुवाद किया है। यह ग्रन्थ ज्योतिषियोके लिये बडा उपयोगी है।

केशव—इनके पिताका नाम कमलाकर और गुरुका नाम वैद्यनाथ था। इनका जन्म पश्चिमी समुद्रके किनारे नन्दिग्राममें ईस्वी सन् १४५६में हुआ था। यह ज्योतिष शास्त्रके बड़े भारी विद्वान थे। इन्होने ग्रहकौतुक, वर्षग्रहसिद्धि, तिथिसिद्धि, जातकपद्धति, जातकपद्धतिविवृत्ति, ताजिकपद्धति, सिद्धान्तवासना पाठ, मुहूर्त्ततत्त्व, कायस्थादि धर्म पद्धति, कुण्डाष्टकलक्षण, एव गणितदीपिका इत्यादि अनेक ग्रन्थ बनाये है। इनके पुत्र गणेशदैवज्ञने इनकी प्रशसा करते हुए लिखा है—

सोमाय ग्रहकौतुकं खगकृतिं तच्चालनाख्यं तिथेः।
सिद्धिं जातकपद्धतिं सविवृतिं तत्ताजके पद्धतिम्।
सिद्धान्तेऽप्युपपत्तिपाठनिचयं मौहूर्त्ततत्त्वाभिधम्
कायस्थादिजधर्मपद्धतिमुखं श्रीकेशवार्योऽकरोत्॥

इससे सिद्ध होता है कि केशव ज्योतिषशास्त्रके पूर्ण पण्डित थे। ग्रहगणित और फलित इन दोनो विषयोंका इन्हे अच्छा ज्ञान था।

गणेश—इनके पिताका नाम केशव और माताका नाम लक्ष्मी था। इनका जन्म ईस्वी सन् १५१७ माना जाता है। यह अपूर्व प्रतिभा सम्पन्न ज्योतिषी थे, इन्होने १३ वर्षकी उम्रमें ग्रहलाघव जैसे अपूर्वकरण ग्रन्थकी

रचना की थी। इनके द्वारा रचित अन्य ग्रन्थोंमें लघुतिथि चिन्तामणि, बृहत्तिथिचिन्तामणि, सिद्धान्तशिरोमणि टीका, लीलावती टीका, विवाह वृंदावन टीका, मुहूर्त्ततत्त्वटीका, श्रद्धादिनिर्णय, छन्दार्णवटीका, सुधी-रञ्जनी-तर्जनीयन्त्र, कृष्णजन्माष्टमी निर्णय, होलिका निर्णय आदि बताये जाते है।

ग्रहलाघवमें ज्या-चापके बिना अंकों द्वारा ही सारा ग्रह गणित किया गया है। इसमें कल्पादिसे अहर्गणके तीन खण्ड कर ध्रुवक्षेप द्वारा ग्रहसिद्ध किये गये है। वर्त्तमानमें जितने कर्ण ग्रन्थ उपलब्ध है, उनमें सबसे सरल और प्रामाणिक ग्रह लाघव ही माना जाता है। यद्यपि इसके ग्रहगणितमें कुछ स्थूलता है, पर काम चलाने लायक यह अवश्य है।

ढुण्ढिराज—यह पार्थपुराके रहनेवाले नृसिंह दैवज्ञके पुत्र और ज्ञान राजके शिष्य थे। इनका समय ईस्वी सन् १५४१ है। इन्होंने जातकाभरण नामक फलित ज्योतिषका एक सुन्दर ग्रन्थ बनाया है। यह ग्रन्थ फलित ज्योतिषमें अपने ढंगका निराला है, जन्मपत्रीका फलादेश इसमें बहुत सुन्दर ढंगसे बताया गया है। जातकाभरणकी श्लोक संख्या दो हजार है, केवल इस ग्रन्थके सम्यक अध्ययनसे फलित ज्योतिषका अच्छा ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

नीलकण्ठ—इनके पिताका नाम अनन्तदैवज्ञ और माताका नाम पद्मा था। इनका जन्म समय ईस्वी सन् १५५६ बताया जाता है। इन्होंने अरबी और फारसीके ज्योतिष ग्रन्थोंके आधारपर ताजिक नीलकण्ठी नामक एक फलित ज्योतिषका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ बनाया है। विदेशी भाषाके साहित्य-से केवल शरीरभर ग्रहण किया है, आत्मा भारतीय ज्योतिषकी है। नीलकण्ठीमें तीन तन्त्र—संज्ञातन्त्र, वर्षतन्त्र और प्रश्नतन्त्र है। इसमें इक्कवाल, इन्दुवार, इत्थशाल, इशराफ, नक्त, यमया, मणऊ, कबूल, गैर-कंबूल, खल्लासर, रद्द, युफाली, कुत्थ, दुत्थोत्थदवीर, तुम्बी, रकुत्थ और युरफा ये सोलह योग अरबी ज्योतिषसे लिये गये प्रतीत होते है। इन

योगों द्वारा वर्षकुण्डलीमें प्राणियोके शुभाशुभका निर्णय किया जाता है।

रामदैवज्ञ—यह अनन्तदैवज्ञके पुत्र और नीलकण्ठके भाई थे। इनका जन्म समय ईस्वी सन् १५६५ माना जाता है। इन्होने शक संवत् १५२२में मुहूर्त्तचिन्तामणि नामक एक महत्त्वपूर्ण मुहूर्त्त ग्रन्थ बनाया है। इस समय सर्वत्र इसीके आधारपर विवाह, द्विरागमन, यात्रा, यज्ञोपवीत आदि सस्कारोके मुहूर्त्त निकाले जाते है। यह ग्रन्थ श्रीपति द्वारा रचित रत्नमालाका एक संस्कृत रूप है। इन्होने अकबरकी आज्ञासे शक संवत् १५१२में एक रामविनोद नामका करण ग्रन्थ भी बनाया है। रामदैवज्ञने टोडरमलको प्रसन्न करनेके लिये टोडरानन्द नामक एक संहिता विषयक ज्योतिषका ग्रन्थ बनाया है, लेकिन आज यह ग्रन्थ उपलब्ध नही है।

मल्लारि—इनके पिताका नाम दिवाकर नन्दन और बड़े भाइयोंका नाम कृष्णचन्द्र और विष्णुचन्द्र था। इन्होने अपने पितासे ही ज्योतिष शास्त्रका अध्ययन किया था। इनकी ग्रहलाघवके ऊपर उपपत्ति सहित एक सुन्दर टीका है। इस टीका द्वारा इनकी गोल और गणित सम्बन्धी विद्वत्ताका पता सहजमे लग जाता है। वक्र केन्द्राश निकालनेके लिये की गयी समीकरणकी कल्पना इनकी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। बापूदेवशास्त्रीने सिद्धान्तशिरोमणिके स्पष्टाधिकारकी टिप्पणीमे वक्र केन्द्राश निकालनेके लिये मल्लारिकी कल्पनाका प्रयोग किया है।

नारायण—यह टापर ग्रामनिवासी अनन्तनन्दनके पुत्र थे। इनका समय ईस्वी सन् १५७१ माना गया है। इन्होने शक संवत् १४९३में विवाहादि अनेक मुहूर्त्तोसे युक्त मुहूर्त्तमार्तण्ड नामक मुहूर्त्त ग्रन्थ बनाया था। ग्रन्थके देखनेसे इनकी ज्योतिष सम्बन्धी निपुणताका पता सहजमें लग जाता है। इस ग्रन्थमें अनेक विशेषताएँ है, इसकी रचना शार्दूल विक्रीडित छन्दोंमें हुई है।

इस नामके एक दूसरे विद्वान् ईस्वी सन् १५८८में हो गये है। इन्होंने केशवपद्धतिके ऊपर टीका लिखी है तथा एक बीजगणित भी बनाया है।

इसमे अवगरूप प्रकृतिका रूप क्षेपीय कनिष्ठ, ज्येष्ठ द्वारा आसन्न मूल निकाला गया है, जिससे ग्रन्थकर्त्ताकी गणित विषयक योग्यताका अनुमान लगाया जा सकता है। कारण सूत्र इस प्रकार है—

मूलं ग्राह्यं यस्य च तद्रूपक्षेपजे पदे तत्र।
ज्येष्ठं ह्रस्वपदेनोद्धरेद्वेन्मूलमासन्नम् ॥

रंगनाथ—इनका जन्म काशीमें ईस्वी सन् १५७५मे हुआ था। इनके पिताका नाम वल्लाल और माताका गोजि था। इन्होने सूर्यसिद्धान्तकी गूढ़ार्थ प्रकाशिका नामक टीका लिखी है। इस टीकासे इनकी ज्योतिष विषयक विद्वत्ताका पता लग जाता है। इन्होने उस टीकामे अनेक नवीन बातें लिखी हैं।

इन प्रधान ज्योतिर्विदोके अतिरिक्त इस युगमें शतानन्द, केशवार्क, कालिदास, महादेव, गगाधर, भक्तिलाभ, हेमतिलक, लक्ष्मीदास, ज्ञानराज, अनन्तदैवज्ञ, दुर्लभराज, हरिभद्रसूरि, विष्णुदैवज्ञ, सूर्यदैवज्ञ, जगदेव, कृष्णदैवज्ञ, रघुनाथशर्मा, गोविन्ददैवज्ञ, विश्वनाथ, नृसिंह, विट्ठलदीक्षित, शिवदैवज्ञ, समन्तभद्र, बलभद्रमिश्र और सोमदैवज्ञ भी हुए है। इन्होने स्वतन्त्र मौलिक ग्रन्थ लिखकर तथा पूर्वाचार्योंके ग्रन्थोंकी टीकाएँ लिखकर ज्योतिष शास्त्रको समृद्धशाली बनाया है। गोविन्ददैवज्ञने मुहूर्त्तचिन्तामणिकी पीयूषधारा टीका लिखकर इस ग्रन्थको सदाके लिये अमर बना दिया है। यह केवल टीका ही नहीं है बल्कि मुहूर्त्त सम्बन्धी साहित्यका एक संग्रह है। इसी प्रकार नृसिंहदैवज्ञने सूर्यसिद्धान्त और सिद्धान्तशिरोमणिकी सौरभाष्य और वासना वार्तिक नामकी टीकाएँ रची। इन टीकाओंसे तद्विषयक एक नया साहित्य ही खड़ा हो गया। उत्तरमध्यकालके अन्तिमके ज्योतिषियोंमें ग्रहवेधकी प्रणाली उठती हुई-सी नजर आती है। नवीन ग्रह-गणित संशोधक भी इस कालमे भास्करके बाद इने-गिने ही हुए है। जातक और मुहूर्त विषयक साहित्य इस कालमें

खूब पल्लवित हुआ है। मुहूर्त्त अंगपर स्वतन्त्र रूपमें पूर्वमध्यकालके ज्योतिर्विदोंने नाम मात्रको लिखा था किन्तु इस कालमें यह अंग खूब पुष्ट हुआ है।

अर्वाचीन काल (ई० १६०१ से १९५१ तक): सामान्य परिचय

अर्वाचीन कालके प्रारम्भमें मुसलिम संस्कृतिके साथ-साथ पाश्चात्य सभ्यताका प्रचार भी भारतमें हुआ। यों तो उत्तरमध्यकालमें ही ज्योतिषियोंने नाकाशावलोकन त्यागकर पुस्तकोंका पल्ला पकड़ लिया था और पुस्तकीय ज्ञान ही ज्योतिष माना जाने लगा था। सच बात तो यह है कि भास्कराचार्यके बाद मुसलिम राज्योंके कारण हिन्दूधर्म, सम्पत्ति, साहित्य और ज्योतिष आदि विषयोंकी उन्नतिपर आपत्तिके पहाड़ गिरे जिससे उक्त विषयोंका विकास रुक गया। कुछ धर्मान्ध साम्प्रदायिक पक्षपाती मुसलिम बादशाहोंने सम्प्रदायकी तेज शराबके नशेमें चूर होकर भारतीय ज्ञान-विज्ञानको हिन्दू समाजकी बपौती समझकर नष्ट-भ्रष्ट करनेमें जरा भी संकोच नहीं किया। विद्वानोंको राजाश्रय न मिलनेसे ज्योतिषके प्रसार और विकासमें कुछ कम बाधाएँ नहीं आईं। नवीन संशोधन और परिवर्द्धन तो दरकिनार रहा, पुरातन ज्योतिष ज्ञान भाण्डारका संरक्षण भी कठिन हो गया। यद्यपि कुछ हिन्दू, मुसलिम विद्वानोंने इस युगमें फलित ग्रन्थोंकी रचनाएँ की, लेकिन आकाश निरीक्षणकी प्रथा उठ जानेसे वास्तविक ज्योतिष तत्त्वोंका विकास नहीं हो सका।

शकुन, प्रश्न, मुहूर्त्त, जन्मपत्र एवं वर्षपत्रके साहित्यकी अवश्य वृद्धि हुई है। कमलाकर भट्टने सूर्यसिद्धान्तका प्रचार करनेके लिये 'सिद्धान्त तत्त्वविवेक' नामक गणित ज्योतिषका महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ रचा है। इस अर्वाचीन कालके प्रारम्भमें प्राचीन ग्रन्थोंपर टीका-टिप्पण बहुत लिखे गये।

ई० सन् १७८०में आमेराधिपति महाराज जयसिंहका ध्यान ज्योतिष-की ओर विशेष आकृष्ट हुआ और उन्होंने काशी, जयपुर एव दिल्लीमें वेधशालाएं बनवाई, जिनमे पत्थरोंकी ऊँची और विशाल दीवालोंके रूपमे बड़े-बड़े यन्त्र बनवाये। स्वय महाराज जयसिंह इस विद्याके प्रेमी थे, इन्होंने योरोपकी प्रचलित तारासूचियोमे कई भूलें निकाली तथा भारतीय ज्योतिषके आधारपर नवीन सारणियाँ तैयार कराई।

सामन्त चन्द्रशेखरने अपने अद्वितीय बुद्धिकौशल द्वारा ग्रहवेध कर प्राचीन गणित ज्योतिषके ग्रन्थोमे सशोधन किया तथा अपने सिद्धान्तों द्वारा ग्रहोकी गतियोके विभिन्न प्रकार बतलाये।

इधर अंग्रेजी सभ्यताके सम्पर्कसे भारतमे अंग्रेजी भाषाका प्रचार हो गया। इस भाषाके प्रचारके साथ-साथ अंग्रेजी आधुनिक भूगोल और गणित विषयक विभिन्न ग्रन्थोके पठन-पाठनकी प्रथा भी प्रचलित हुई। सन् १८५७के पश्चात् तो आधुनिक नवीन आविष्कृत विज्ञानोंका प्रभाव भारतके ऊपर विशेष रूपसे पड़ा है। फलतः अंग्रेजी भाषाके जानकार सस्कृतके विद्वानोने इस भाषाके नवीन गणित ग्रन्थोका अनुवाद संस्कृतमें कर ज्योतिषकी श्रीवृद्धि की है। बापूदेव शास्त्री और पं० सुधाकर द्विवेदीने इस ओर विशेष प्रयत्न किया है। आप महानुभावोके प्रयासके फलस्वरूप ही रेखागणित, बीजगणित और त्रिकोणमितिके ग्रन्थोसे आजका ज्योतिष धनी कहा जा सकेगा। केतक नामक विद्वान्ने केतकी ग्रह गणितकी रचना अंग्रेजी ग्रह गणित और भारतीय गणित सिद्धान्तोंके समन्वयके आधारपर की है। दीर्घवृत्त, परिवलय, अतिपरिवलय इत्यादिके गणित-का विकास इस नवीन सभ्यताके सम्पर्ककी मुख्यदेन माना जायगा।

पृथ्वी, चन्द्रमा, सूर्य, सौर-चक्र, बुध, शुक्र, मंगल, अवान्तर ग्रह, बृहस्पति, यूरेनस्, नेपच्यून, नभस्तूप, आकाशगंगा और उल्का आदिका वैज्ञानिक विवेचन पश्चिमीय ज्योतिषके सम्पर्कसे इधर तीस-चालीस वर्षोंके बीचमें विशेष रूपसे हुआ है। डा० गोरखप्रसादने

आधुनिक वैज्ञानिक अन्वेषणोंके आधारपर इस विषयकी एक विशालकाय सौर परिवार नामकी पुस्तक लिखी है, जिसमें सौर-जगत्के सम्बन्धमें अनेक नवीन बातोंका पता लगता है। श्री० बा० सम्पूर्णानन्दजीने ज्योति-विनोद नामक पुस्तकमें कापर्निकस, जिओईनो, गैलिलिओ और केप्लर आदि पाश्चात्य ज्योतिषियोंके वैज्ञानिक विवेचनोंके अनुसार ग्रह, उपग्रह और अवान्तर ग्रहोंका स्वरूप बतलाया है। श्रीमहावीरप्रसाद श्रीवास्तवने सूर्य सिद्धान्तका आधुनिक सिद्धान्तोंके आधारपर विज्ञान भाष्य लिखा है, जिससे संस्कृतज्ञ ज्योतिषके विद्वानोंका बहुत उपकार हुआ है। अभिप्राय यह है कि आधुनिक युगमें पाश्चात्य ज्योतिषके सम्पर्कसे गणित ज्योतिषके सिद्धान्तोंका वैज्ञानिक विवेचन प्रारम्भ हुआ है। यदि भारतीय ज्योतिषी आकाश निरीक्षणको अपना कर नवीन ज्योतिषके साथ तुलना करें तो पूर्वमध्यकालसे चली आयी ग्रह गणितकी सारणियोंकी स्थूलता दूर हो जाय और भारतीय ज्योतिषकी महत्ता अन्य देशवासियोंके समक्ष प्रकट हो जाय।

आधुनिककाल या अर्वाचीन : प्रमुख ज्योतिर्विदोंका परिचय

मुनीश्वर—यह रंगनाथके पुत्र थे। इनका समय ईस्वी सन् १६०३ माना जाता है। इन्होंने शक संवत् १५६८ भाद्रपद शुक्ला पंचमी सोम-वारके भगणादिको सिद्ध कर सिद्धान्त सार्वभौम नामका एक ज्योतिष ग्रन्थ बनाया है। इन्होंने भास्कराचार्यके सिद्धान्त शिरोमणि और लीलावती नामक ग्रन्थोंपर विस्तृत टीकाएँ लिखी हैं। यह काव्य, व्याकरण, कोश और ज्योतिष आदि अनेक विषयोंके प्रकाण्ड विद्वान् थे।

दिवाकर—इनके पिताका नाम नृसिंह था। इनका जन्म ईस्वी सन् १६०६में हुआ था। इन्होंने अपने चाचा शिवदैवज्ञसे ज्योतिषशास्त्रका अध्ययन किया था। यह अत्यन्त प्रसिद्ध ज्योतिषी, काव्य, व्याकरण,

न्याय आदि शास्त्रोंमें प्रवीण और अनेक ग्रन्थोंके रचयिता थे। १९ वर्षकी अवस्थामें इन्होंने फलित विषयक जातकपद्धति नामक एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा है। मकरन्द विवरण, केशवीय पद्धतिकी प्रौढ मनोरमा नामकी महत्त्वपूर्ण टीका और अपने द्वारा रचित पद्धतिप्रकाशके ऊपर सोदाहरण टीका भी इन्होंने रची है।

कमलाकर भट्ट—यह दिवाकरके भाई थे। इन्होंने अपने भाई दिवाकरसे ही ज्योतिषशास्त्रका अध्ययन किया था। यह गोल और गणित दोनों ही विषयोंके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इन्होंने प्रचलित सूर्यसिद्धान्तके मतानुसार 'सिद्धान्ततत्त्वविवेक' नामक ग्रन्थ शक सं० १५८०में काशीमें बनाया है। सौरपक्षकी श्रेष्ठता परम्परागत मानकर अन्य ब्रह्मपक्ष आदिको इन्होंने नहीं माना, इसी कारण भास्कराचार्यका स्थान-स्थानपर खूब खण्डन किया है। इन्होंने तत्त्वविवेकके आदिमें लिखा है—

प्रत्यक्षागमयुक्तिशालि तदिदं शास्त्रं विहायान्मया।
यत्कुर्वन्ति नराधमास्तु तदसत् वेदोक्तिशून्या भृशम्॥

कमलाकरने ज्योतिषके अनेक सिद्धान्तोंको तत्त्वविवेकमें बड़ी कुशलताके साथ रखा है, यदि यह निष्पक्ष होकर इन सिद्धान्तोंकी समीक्षा करते तो वास्तवमें 'सिद्धान्त तत्त्वविवेक' एक अद्वितीय ग्रन्थ होता।

नित्यानन्द—यह इन्द्रप्रस्थपुरके निवासी गौड़ ब्राह्मण थे। इनके पिताका नाम देवदत्त था। सन् १६३९में इन्होंने सायन गणनाके अनुसार 'सिद्धान्तराज' नामक महत्त्वपूर्ण ज्योतिषका ग्रन्थ बनाया। इन्होंने चन्द्रमाके स्पष्ट करनेकी सुन्दर रीति बतायी है। सिद्धान्तराजमें मीमांसाध्याय, मध्यमाधिकार, स्पष्टाधिकार, त्रिप्रश्नाधिकार, चन्द्रग्रहणाधिकार, सूर्यग्रहणाधिकार, शृङ्गोन्नत्याधिकार, भग्रहयुत्याधिकार, भग्रहोंके उन्नतांशसाधनाधिकार, भुवनकोश, गोलबन्धाधिकार, एवं यन्त्राधिकार हैं ग्रहगणितकी दृष्टिसे यह महत्त्वपूर्ण है।

महिमोदय—इनके गुरुका नाम लब्धिविजय सूरि था और इनका समय

वि० सं० १७२२ बताया गया है। यह गणित और फलित दोनों प्रकारके ज्योतिषके मर्मज्ञ विद्वान् थे। इनके द्वारा रचित ज्योतिष रत्नाकर, गणित साठसौ, पञ्चाङ्गानयन विधि ग्रन्थ कहे जाते हैं। ज्योतिषरत्नाकर ग्रन्थ फलितका है और अवशेष दोनों ग्रन्थ गणितके है। ज्योतिषरत्नाकरमें संहिता, मुहूर्त्त और जातक इन तीनों ही अंगोपर प्रकाश डाला गया है। छोटा होते हुए भी ग्रन्थ उपयोगी है। पञ्चाङ्गानयनविधिके नामसे ही इसका विषय प्रकट हो जाता है। इस ग्रन्थमें अनेक सारणियाँ हैं, जिनसे पञ्चाङ्गके गणितमें पर्याप्त सहायता मिलती है। यदि सूक्ष्मताकी तहमें प्रवेश किया जाय तो इस गणितमें संस्कारकी आवश्यकता प्रतीत होगी। इसके गणित द्वारा आगत ग्रहोंमें दृग्गणितैक्य नहीं होगा। गणित साठ सौ गणितका ग्रन्थ है।

मेघविजयगणि--यह ज्योतिषशास्त्रके प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनका समय वि० सं० १७३७के आसपास माना जाता है। इनके द्वारा रचित मेघमहोदय या वर्षप्रबोध, उदयदीपिका, रमलशास्त्र और हस्त सञ्जीवन आदि मुख्य है। वर्षप्रबोधमें १३ अधिकार और ३५ प्रकरण है। इसमें उत्पात प्रकरण, कर्पूरचक्र, पद्मिनीचक्र, मण्डलप्रकरण, सूर्य और चन्द्र-ग्रहणका फल, प्रत्येक महीनेकी वायु विचार, संवत्सरका फल, ग्रहोके राशियों-पर उदयास्त और वक्री होनेका फल, अयन-मास-पक्ष-विचार, संक्रान्तिफल, वर्षके राजा, मन्त्री, धान्येश, रसेश आदिका निरूपण, आय व्यय विचार, सर्वतोभद्रचक्र, शकुन आदि विषयोंका सुन्दर वर्णन है। हस्त सञ्जीवनमें तीन अधिकार है, प्रथम अधिकार दर्शनाधिकार है, जिसमें हाथ कैसे देखना, हाथ ही परसे मास, दिन, घटी, पल आदिका शुभाशुभ फल रेखा और लग्न चक्र बनाकर कहना; द्वितीय अधिकार स्पर्शनाधिकार है, जिसमें हाथको स्पर्श करनेसे ही समस्त शुभाशुभ फलोंका निरूपण, जैसे इस वर्षमें कितनी वर्षा होगी, बिना किसी मन्त्रादिकके इस समय कितना दिन या रात गत है; इसका ज्ञान कर लेना; तृतीय विमर्शनाधिकारमें रेखाओं परसे ही आयु,

सन्तान, स्त्री भाग्योदय, जीवनकी प्रमुख घटनाएं, सांसारिक सुख आदि बातोंका ज्ञान गवेषणापूर्ण रीतिसे बताया गया है। इनके फलित ग्रन्थोंको देखनेसे संहिता और सामुद्रिक शास्त्र सम्बन्धी प्रकाण्डविद्वत्ताका पता सहजमें लग जाता है।

उभयकुशल—इनका समय वि० सं० १७३७ के लगभग माना जाता है। यह फलित ज्योतिषके अच्छे ज्ञाता थे, इन्होंने विवाह-पटल, चमत्कार-चिन्तामणि टवा नामक दो ज्योतिषग्रन्थोंकी रचना की है। यह मुहूर्त्त और जातक दोनों अंगोंके ज्ञाता थ।

लब्धिचन्द्रगणि—यह खरतर गच्छीय कल्याणनिधानके शिष्य थे। इन्होंने वि० सं० १७५१के कार्त्तिक मासमें जन्मपत्री पद्धति नामक एक व्यवहारोपयोगी ज्योतिषका ग्रन्थ बनाया है। इस ग्रन्थमें इष्टकाल, भयात, भभोग, लग्न एवं नवग्रहोंका स्पष्टीकरण आदि गणितके विषय भी है। जन्मपत्रीके सामान्य फलका वर्णन भी इस ग्रन्थमें किया है।

बाघजी मुनि—यह पार्श्वचन्द्र गच्छीय शाखाके मुनि थे। इनका समय वि० सं० १७८३ माना जाता है, इन्होंने तिथिसारिणी नामक एक ज्योतिष-का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा है। इसके अतिरिक्त इनके दो तीन फलित ज्योतिषके भी मुहूर्त्त सम्बन्धी ग्रन्थोंका पता लगता है। तिथिसारिणीमें पंचाङ्ग बनानेकी प्रक्रिया है। यह मकरन्द सारिणीके समान उपयोगी है।

यशस्वतसागर—इनका दूसरा नाम जसवन्त सागर भी बताया जाता है। यह ज्योतिष न्याय, व्याकरण और दर्शन शास्त्रके धुरन्धर विद्वान थे। इन्होंने ग्रहलाघवके ऊपर वार्तिक नामकी टीका लिखी है। वि० सं० १७६२में जन्म-कुण्डली विषयको लेकर 'यशोराज पद्धति' नामक एक व्यवहारोपयोगी ग्रन्थ लिखा है। यह ग्रन्थ जन्मकुण्डलीकी रचनाके नियमोंके सम्बन्धमें विशेष प्रकाश डालता है, उत्तरार्द्धमें जातक पद्धतिके अनुसार संक्षिप्त फल बतलाया है।

जगन्नाथ सम्राट्—यह तैलङ्ग ब्राह्मण, जयपुर नरेश जयसिंह महा-

राजके सभापण्डित थे। इन्होंने महाराज जयसिंहकी आज्ञासे अरबी भाषामें लिखित 'इजास्ती' नामक ज्योतिष ग्रन्थका संस्कृतमें अनुवाद किया है। इसके अतिरिक्त युक्लेदके रेखागणितका भी अरबीसे संस्कृतमें अनुवाद किया है। इस रेखागणितमें १५ अध्याय हैं। रेखागणितके अनुवादका समय शक सं० १६४० है। कुछ लोगोंका कहना है कि रेखागणितके मूल रचयिता युक्लेद नहीं थे, किन्तु मिलिटस नगर निवासी थेलस है। रेखागणितके प्रथम अध्यायमें ४८, द्वितीयमें १४, तृतीयमें ३७, चतुर्थमें १६, पाँचवेंमें २५, छठवेंमें ३३, सातवेंमें ३९, आठवेंमें २५, नौवेंमें ३८, दशवेंमें १०९, ग्यारहवेंमें ४१, बारहवेंमें १५, तेरहवेंमें २१, चौदहवेंमें १० और पन्द्रहवेंमें ६ क्षेत्र हैं। इसमें प्रतिज्ञा या साध्य शब्दके स्थानपर क्षेत्र शब्दका प्रयोग किया गया है।

बापूदेवशास्त्री—इनका जन्म ईस्वी सन् १८२१में पूना नगरमें हुआ था। इनके पिताका नाम सीताराम था। भारतीय ज्योतिष और यूरोपियन गणित इन दोनोंके यह अद्वितीय विद्वान् थे। वर्त्तमानमें नवीन गणितकी जागृतिके मूल कारण शास्त्रीजी हैं। इनके त्रिकोणमिति, बीजगणित और अव्यक्त गणितके तीन ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। शास्त्रीजीने अनेक वर्षों तक गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेजमें अध्यापकी की और सैकड़ों देशदेशान्तरके शिष्योंको विद्यादान देकर अपनी कीर्त्ति रूपी चन्द्रिकाका विस्तार किया। सिद्धान्त शिरोमणिके संशोधनके बाद शास्त्रीजीका नाम 'संशोधक' प्रसिद्ध हो गया। वास्तवमें यह थे भी सच्चे संशोधक। गणित विषयक यूरोपके उच्च सिद्धान्तोंका इन्होंने भारतीय सिद्धान्तोंके साथ सामञ्जस्य बहुत कुछ किया है। ईस्वी सन् १८९०में इनका स्वर्गवास हो गया है।

नीलाम्बरझा—ईस्वी सन् १८२३में प्रतिष्ठित और विद्वान् मैथिल ब्राह्मण कुलमें आपका जन्म हुआ था। यह पटनाके निवासी और अलवरके राजा श्री शिवदाससिंहके आश्रित थे। इन्होंने क्षेत्रमिति और त्रिकोणमितिके आधारपर 'गोलप्रकाश' नामक ग्रन्थ बनाया है। इस ग्रन्थमें

प्राचीन सिद्धान्तोके अनेक प्रकार, उपपत्ति और बहुतसे प्रश्नोके उत्तर बड़ी उत्तमता और नवीन रीतिसे दिखलाये है। वास्तवमें इस ग्रन्थसे इनकी ज्योतिष विषयक प्रगाढ विद्वत्ता प्रकट होती है।

सामन्त चन्द्रशेखर—इनका जन्म उड़ीसाके अन्तर्गत कटकसे २५ कोस खण्ड द्वारा राज्यमे सन् १८३५मे हुआ था। यह व्याकरण, स्मृति, पुराण, न्याय, काव्य और ज्योतिषके मर्मज्ञ विद्वान् थे। पन्द्रह वर्षकी अवस्थामें इनको ज्योतिष गणना करनेकी योग्यता प्राप्त हो गयी थी। लेकिन थोड़े ही दिनोमे इन्हे ज्ञात हुआ कि जिस ग्रह या नक्षत्रको गणनानुसार जिस स्थान-पर होना चाहिये, वह उस स्थानपर नही है अतएव इन्होने नियमित रूपसे आकाशका अवलोकन करना प्रारम्भ किया। इस कार्यके लिये यन्त्रोकी आवश्यकता थी, पर यन्त्र मिलना असम्भव था। इसलिये इन्होने प्राचीन ग्रन्थोके आधारपर कुछ यन्त्र बनाये। यद्यपि ये यन्त्र अनगढ और स्थूल थे, किन्तु यह अपनी प्रतिभाके बलपर इनसे सूक्ष्म काम कर लेते थे। वेध द्वारा ग्रहोको निश्चित कर इन्होने 'सिद्धान्त दर्पण' नामक ज्योतिषका महत्त्व-पूर्ण ग्रन्थ बनाया है। इस ग्रन्थको देखकर इनके ज्योतिष ज्ञानकी जितनी प्रशंसा की जाय, थोडी है।

सुधाकर द्विवेदी—इनका जन्म काशीमे ईस्वी सन् १८६०मे हुआ था। यह ज्योतिष ज्ञानके सिवा अन्य विषयोंके भी अद्वितीय विद्वान् थे। फ्रेंच, अंग्रेजी, मराठी, हिन्दी आदि विभिन्न भाषाओके साहित्यके ज्ञाता थे। वर्त्तमान ज्योतिष शास्त्रके ये उद्धारक हैं। इन्होंने प्राचीन जटिल गणित ज्योतिष विषयक ग्रन्थोको भाष्य, उपपत्ति, टीका आदि लिखकर प्रकाशित किया। चलनकलन, दीर्घवृत्त, गणकतरंगिणी, प्रतिभाबोधक, पञ्च-सिद्धान्तिकाकी टीका, सूर्यसिद्धान्तकी सुधावर्षिणी टीका, ग्रहलाघवकी उपपत्ति, ब्रह्मस्फुट सिद्धान्तका तिलक इत्यादि अनेक रचनाएँ इनकी मिलती है। बृहत्संहिताका संशोधन कर प्रामाणिक संस्करण इन्होंने प्रकाशित कराया था। इस कालमें प्राचीन ज्योतिष शास्त्रका उद्धार करने-

वाला सुधाकरजी जैसा अन्य नही हुआ है। इनकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी।

इन उपर्युक्त प्रसिद्ध ज्योतिर्विदोके अतिरिक्त इस युगमे, रङ्गनाथ, शकरदैवज्ञ, शिवलाल पाठक, परमानन्द पाठक, लक्ष्मीपति, बबुआज्योतिषी, मथुरानाथ शुक्ल, परमसुखोपाध्याय, बालकृष्ण ज्योतिषी, कृष्णदेव, शिवदैवज्ञ, दुर्गाशकर पाठक, गोविन्दाचारी, जयराम ज्योतिषी, सेवारामशर्मा, लज्जाशङ्कर शर्मा, नन्दलाल शर्मा, देवकृष्ण शर्मा, गोविन्ददेव शास्त्री, केतक, दुर्गा प्रसाद द्विवेदी, रामयत्न ओझा, मानसागर, विनयकुशल, हीरकलश, मेघराज, सूरचन्द्र, जयविजय, जयरत्न, जिनपाल, जिनदत्तसूरि, श्यामा चरण ओझा, हृषीकेश उपध्याय आदि अन्य ज्योतिषी लब्ध प्रतिष्ठित हुए है। इन्होने भी अनेक प्रकारसे ज्योतिष शास्त्रकी अभिवृद्धिमे सहायता प्रदानकी है। वर्तमान ज्योतिषयोमे श्रीरामव्यास पाण्डेय, सूर्यनारायण व्यास, श्रीनिवास पाठक, विन्देश्वरी प्रसाद आदि उल्लेखनीय है।

समीक्षा

यदि समग्र भारतीय ज्योतिष शास्त्रके इतिहासपर दृष्टिपात किया जाय तो अवगत होगा कि प्राचीन कालमे भारत कितना सभ्यता और सस्कृतिमे आगे बढा हुआ था। प्राचीन ऋषियोने अपने दिव्य ज्ञान और योग जन्य शक्तिसे ग्रह और नक्षत्रोके सम्बन्धमे सब कुछ जान लिया था। वे आँखोसे राशि, नक्षत्र, ताराव्यूह, चन्द्र, सूर्य और मगलादि ग्रहोकी गति, स्थिति और सचार आदिको देखकर योगके बलमे अपने शरीर स्थित सौर मण्डलसे तुलना कर आन्तरिक ग्रहोकी गति स्थिति तथा उसके द्वारा होनेवाले फलाफलका निरूपण करते रहे। ज्योतिषका पूर्ण ज्ञान उन्हे वैदिककालमे ही था, पर उसकी अभिव्यक्ति साहित्यके रूपमे क्रमशः हुई है। पृथ्वीकी आकर्षण शक्तिके विषयमे भारतियोने न्यूटन और गैलेलिओसे सैकड़ों वर्ष पहले ज्ञात कर लिया था। भास्कराचार्यने 'सिद्धान्तशिरोमणि'के गोलाध्यायमे कहा है--

आकृष्टशक्तिश्च महीतया यत्
स्वस्थगुरुस्वाभिमुखं स्वशक्त्या ।
आकृष्यते तत्पततीत भाति
समे समन्तात्क्व पतात्वियं खे ॥

अर्थात् पृथ्वीमे आकर्षण शक्ति है, इससे वह अपने आसपासके पदार्थोंको खीचा करती है । पृथ्वीके समीपमे आकर्षण शक्ति अधिक होती है और जिस प्रकार दूरी बढती जाती है, वैसे ही वह घटती जाती है। भास्कराचार्यने इसके कारणका विवेचन करते हुए लिखा है कि किसी स्थानपर भारी और हल्की वस्तु पृथ्वीपर छोडी जाय तो दोनो समान कालमे पृथ्वीपर गिरेगी; यह न होगा कि भारी वस्तु पहले गिरे और हल्की बादको । अतएव ग्रह और पृथ्वी आकर्षण शक्तिके प्रभावसे भ्रमण करते है ।

पृथ्वीकी गोलाईका कथन करते हुए प्राचीन आचार्योंने लिखा है कि "गोलेकी परिधिका १००वॉ भाग समतल दिखाई पडता है, पृथ्वी एक बहुत बडा गोला है तथा मनुष्य बहुत ही छोटा है, अत. उसकी पीठपर स्थित उसे वह सम-चपटी जान पड़ती है । यह एक आश्चर्यकी बात है कि भारतीय ऋषि-महर्षि दूरबीनके बिना केवल अपनी आँखोसे देखकर ही आकाशकी सारी स्थितिको जान गये थे । फलित ज्योतिषका अनुभव उन्होने अपने दिव्य ज्ञानसे किया । यद्यपि बेबलोनिया और यूनानके सम्पर्कसे फलित और गणित दोनो ही प्रकारके भारतीय ज्योतिषमे अनेक नयी बातोंका समावेश हुआ, परन्तु मूलतत्त्व ज्योके त्यो अविकृत रहे । ताजिक पद्धतिका श्रीगणेश यवनोके कारण ही हुआ है ।

अर्वाचीन ज्योतिषमें जो शिथिलता आयी है, उसका कारण दिव्य ज्ञानवाले ऋषियोकी कमी है । आज हमारे देशमे न तो बड़ी-बडी वेधशालाएँ है और न योग क्रियाके जानकार ऋषि-महर्षि ही । इसलिये नवीन विवृत्तियाँ ज्योतिषमे नही हो रही है ।

द्वितीयाध्याय

भारतीय-ज्योतिषके सिद्धान्त

यह पहले ही कहा जा चुका है कि भारतीय ज्योतिषका मुख्य प्रयोजन आत्मकल्याणके साथ लोक व्यवहार सम्पन्न करना है। लोक व्यवहारके निर्वाहके लिये ज्योतिषके क्रियात्मक दो सिद्धान्त है—गणित और फलित। गणित ज्योतिषके शुद्ध गणितके अतिरिक्त करण, तन्त्र और सिद्धान्त ये तीन भेद एव फलितके जातक, ताजिक, मुहूर्त्त, प्रश्न एव शकुन ये पाँच भेद किये गये है। यों तो भारतीय ज्योतिषके सिद्धान्तोका वर्गीकरण और भी अनेक भेद-प्रभेदोमे किया जा सकता है, परन्तु मूल विभागोका उक्त वर्गीकरण ही अधिक उपयुक्त है। प्रस्तुत ग्रन्थको अधिक लोकोपयोगी बनानेके खयालसे इसमे गणित ज्योतिषके सिद्धान्तोपर कुछ न लिखकर फलित ज्योतिषके प्रत्येक अंगपर प्रकाश डालनेका प्रयत्न किया जायगा। यद्यपि भारतीय ज्योतिषके रहस्यको हृदयङ्गम करनेके लिये गणित ज्योतिषका ज्ञान अनिवार्य है, पर साधारण जनताके लिये आवश्यक नही। क्योंकि प्रामाणिक ज्योतिर्विदो द्वारा निर्मित तिथिपत्रों—पञ्चाङ्गों-परसे कतिपय फलितमे सम्बद्ध गणितके सिद्धान्तो द्वारा अपने शुभाशुभका ज्ञान किया जा सकता है। अतएव यहाँपर प्रयोजनीभूत आवश्यक ज्योतिष तत्त्वोका निरूपण किया जा रहा है। हर एक व्यक्तिके लिये यह जरूरी नही कि वह ज्योतिषी हो, किन्तु मानव मात्रको अपने जीवनको व्यवस्थित करनेके नियमोको जानना वाजिब ही नही, अनिवार्य है।

फलित ज्योतिषके ज्ञानके लिये तिथि, नक्षत्र, योग, करण और वारके सम्बन्धमे आवश्यक जानकारी प्राप्त कर लेना चाहिये। अतएव जातक

अंगपर लिखनेके पूर्व उपर्युक्त पाँचोकी संक्षिप्त परिचयके साथ आवश्यक परिभाषाएँ दी जाती है:—

तिथि—चन्द्र और सूर्यके अन्तरांशोपरसे तिथिका मान निकाला जाता है। प्रतिदिन १२ अंशोका अन्तर सूर्य और चन्द्रमाके भ्रमणमे होता है, यही अन्तरांशका मध्यम मान है। अमावास्याके बाद प्रतिपदासे लेकर पूर्णिमा तककी तिथियाँ शुक्लपक्षकी और पूर्णिमाके बाद प्रतिपदासे लेकर अमावास्या तककी तिथियाँ कृष्णपक्षकी होती है। ज्योतिषशास्त्रमें तिथियोंकी गणना शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे आरम्भ होती है।

तिथियोंके स्वामी—प्रतिपदाका स्वामी अग्नि, द्वितीयाका ब्रह्मा, तृतीयाकी गौरी, चतुर्थीका गणेश, पञ्चमीका शेषनाग, षष्ठीका कार्त्तिकेय, सप्तमीका सूर्य, अष्टमीका शिव, नवमीकी दुर्गा, दशमीका काल, एकादशीके विश्वेदेवा, द्वादशीका विष्णु, त्रयोदशीका काम, चतुर्दशीका शिव, पौणमासीका चन्द्रमा और अमावास्याके पितर है।

अमावास्याके तीन भेद है—सिनीवाली, दर्श और कुहू। प्रातःकालसे लेकर रात्रि तक रहनेवाली अमावास्याको सिनीवाली, चतुर्दशीसे विद्धको दर्श एव प्रतिपदासे युक्त अमावास्याको कुहू कहते है।

तिथियोंकी संज्ञाएँ—१।६।११ नन्दा, २।७।१२ भद्रा, ३।८।१३ जया, ४।९।१४ रिक्ता और ५।१०।१५ पूर्णा संज्ञक है।

पक्षरन्ध्र—४।६।८।९।१२।१४ तिथियाँ पक्ष रन्ध्र संज्ञक है।

मासशून्य तिथियाँ—चैत्रमे दोनो पक्षोकी अष्टमी और नवमी, वैशाखमें दोनों पक्षोकी द्वादशी, ज्येष्ठमे कृष्णपक्षकी चतुर्दशी और शुक्लपक्षकी त्रयोदशी, आषाढ़में कृष्णपक्षकी षष्टी और शुक्लपक्षकी सप्तमी, श्रावणमें दोनो पक्षोंकी द्वितीया और तृतीया, भाद्रपदमे दोनों पक्षोकी प्रतिपदा और द्वितीया, आश्विनमे दोनों पक्षोकी दशमी और एकादशी, कार्त्तिकमें कृष्ण पक्षकी पंचमी और शुक्लपक्षकी चतुर्दशी, मार्गशीर्षमें दोनो पक्षोकी सप्तमी और अष्टमी, पौषमे दोनों पक्षोकी चतुर्थी और

पंचमी, माघमें कृष्णपक्षकी पंचमी और शुक्लपक्षकी षष्ठी एवं फाल्गुनमें कृष्णपक्षकी चतुर्थी और शुक्लपक्षकी तृतीया मासशून्य सज्ञक है।

सिद्धा तिथियाँ—मंगलवारको ३।८।१३, बुधवारको २।७।१२, बृहस्पतिवारको ५।१०।१५, शुक्रवारको १।६।११ एवं शनिवारको ४।९।१४ तिथियाँ सिद्धि देनेवाली सिद्धा सज्ञक है।

दग्ध, विष और हुताशन संज्ञक तिथियाँ—रविवारको द्वादशी, सोमवारको एकादशी, मंगलवारको पचमी, बुधवारको तृतीया, बृहस्पतिवारको षष्ठी, शुक्रको अष्टमी और शनिवारको नवमी दग्धा सज्ञक; रविवारको चतुर्थी, सोमवारको षष्ठी, मंगलवारको सप्तमी, बुधवारको द्वितीया, बृहस्पतिवारको अष्टमी, शुक्रवारको नवमी और शनिवारको सप्तमी विष संज्ञक एवं रविवारको द्वादशी, सोमवारको षष्ठी, मगलवारको सप्तमी, बुधवारको अष्टमी, बृहस्पतिवारको नवमी, शुक्रवारको दशमी और शनिवारको एकादशी हुताशन सज्ञक है।

दग्ध-विष-हुताशनयोगसज्ञाबोधकचक्र

रविवार	सोमवार	मगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	वार
१२	११	५	३	६	८	९	दग्ध
४	६	७	२	८	९	७	विष
१२	६	७	८	९	१०	११	हुताशन

नक्षत्र—कई ताराओंके समुदायको नक्षत्र कहते है। आकाश मण्डलमे जो असंख्यात तारिकाओंसे कही अश्व, शकट, सर्प, हाथ आदिके आकार बन जाते है, वे ही नक्षत्र कहलाते है। जिस प्रकार लोक व्यवहारमे एक

स्थानसे दूसरे स्थानकी दूरी मीलो या कोशोमे नापी जाती है, उसी प्रकार आकाश मण्डलकी दूरी नक्षत्रोसे ज्ञात की जाती है। तात्पर्य यह है कि जैसे कोई पूछे कि अमुक घटना सड़कपर कहाँ घटी, तो यही उत्तर दिया जायगा कि अमुक स्थानसे इतने कोश या मील चलनेपर; उसी प्रकार अमुक ग्रह आकाशमे कहाँ है, तो इस प्रश्नका भी वही उत्तर दिया जायगा कि अमुक नक्षत्रमे। समस्त आकाश मण्डलको ज्योतिषशास्त्रने २७ भागोमे विभक्त कर प्रत्येक भागका नाम एक-एक नक्षत्र रखा है। सूक्ष्मता-से समझानेके लिये प्रत्येक नक्षत्रके भी चार भाग किये गये है, जो चरण कहलाते है। २७ नक्षत्रोके नाम निम्न है—(१) अश्विनी (२) भरणी (३) कृत्तिका (४) रोहिणी (५) मृगशिर (६) आर्द्रा (७) पुनर्वसु (८) पुष्य (९) आश्लेषा (१०) मघा (११) पूर्वाफाल्गुनी (१२) उत्तराफाल्गुनी (१३) हस्त (१४) चित्रा (१५) स्वाति (१६) विशाखा (१७) अनुराधा (१८) ज्येष्ठा (१९) मूल (२०) पूर्वाषाढ़ा (२१) उत्तराषाढा (२२) श्रवण (२३) धनिष्ठा (२४) शतभिषा (२५) पूर्वाभाद्रपद (२६) उत्तराभाद्रपद (२७) रेवती।

अभिजित्को भी २८वाँ नक्षत्र माना गया है। ज्योतिर्विदोका अभि-मत है कि उत्तराषाढाकी आखिरी १५ घटियाँ और श्रवणके प्रारम्भकी चार घटियाँ, इस प्रकार १९ घटियोके मानवाला अभिजित् नक्षत्र होता है।

नक्षत्रोंके स्वामी—अश्विनीका अश्विनी कुमार, भरणीका काल, कृत्तिकाका अग्नि, रोहिणीका ब्रह्मा, मृगशिरका चन्द्रमा, आर्द्राका रुद्र, पुन-र्वसुका अदिति, पुष्यका बृहस्पति, आश्लेषाका सर्प, मघाका पितर, पूर्वाफा-ल्गुनीका भाग, उत्तराफाल्गुनीकी अर्य्यमा, हस्तका सूर्य, चित्राका विश्वकर्मा, स्वातिका पवन, विशाखाका शक्राग्नि, अनुराधाका मित्र, ज्येष्ठाका इन्द्र, मूलका निर्ऋति, पूर्वाषाढ़ाका जल, उत्तराषाढ़ाका विश्वदेव, अभिजित्का ब्रह्मा श्रवणका विष्णु, धनिष्ठाका वसु, शतभिषाका वरुण,

पूर्वाभाद्रपदका अजैकपाद, उत्तराभाद्रपदका अहिर्बुध्न्य एवं रेवतीका पूषा स्वामी है।

पंचक संज्ञक नक्षत्र—धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती इन नक्षत्रोंमे पंचक दोष माना जाता है।

मूल संज्ञक नक्षत्र—ज्येष्ठा, आश्लेषा, रेवती, मूल, मघा और अश्विनी ये नक्षत्र मूल संज्ञक हैं। इनमे यदि बालक उत्पन्न होता है तो २७ दिनके पश्चात् जब वही नक्षत्र आ जाता है तब शान्ति करायी जाती है। इन नक्षत्रोंमें ज्येष्ठा और मूल गड़ान्त मूल संज्ञक, आश्लेषा सर्पमूल सज्ञक है।

ध्रुव-चर-उग्र-मिश्र-लघु-मृदु-तीक्ष्णसंज्ञक नक्षत्र—उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी ध्रुव संज्ञक, स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा चर या चल सज्ञक; विशाखा और कृत्तिका मिश्र सज्ञक, हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित् क्षिप्र या लघु संज्ञक; मृगशिर, रेवती, चित्रा और अनुराधा मृदु या मैत्र सज्ञक एव मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा और आश्लेषा तीक्ष्ण या दारुण सज्ञक है।

अधोमुख संज्ञक—मूल, आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी और मघा अधोमुख सज्ञक है।

ऊर्ध्वमुखसंज्ञक—आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा ऊर्ध्व-मुख सज्ञक है।

तिर्यङ्मुखसंज्ञक—अनुराधा, हस्त, स्वाति, पुनर्वसु, ज्येष्ठा और अश्विनी तिर्यङ् मुख संज्ञक है।

दग्धसंज्ञकनक्षत्र—रविवारको भरणी, सोमवारको चित्रा, मङ्गल-वारको उत्तराषाढा, बुधवारको धनिष्ठा, बृहस्पतिवारको उत्तराफाल्गुनी, शुक्रवारको ज्येष्ठा एवं शनिवारको रेवती दग्ध संज्ञक है।

मासशून्य नक्षत्र—चैत्रमे रोहिणी और अश्विनी; वैशाखमें चित्रा

और स्वाति; ज्येष्ठमे उत्तराषाढ़ा और पुष्य; आषाढमे पूर्वाफाल्गुनी और धनिष्ठा; श्रावणमे उत्तराषाढा और श्रवण; भाद्रपदमे शतभिषा और रेवती; आश्विनमे पूर्वाभाद्रपद; कार्त्तिकमे कृत्तिका और मघा; मार्गशीर्षमे चित्रा और विशाखा; पौषमे आर्द्रा, अश्विनी और हस्त; माघमें श्रवण और मूल एवं फाल्गुनमे भरणी और ज्येष्टा शून्य नक्षत्र है ।

योग—सूर्य और चन्द्रमाके स्पष्ट स्थानोको जोडकर तथा कलाएं बनाकर ८००का भाग देनेपर गत योगोकी संख्या निकल आती है । शेषसे यह अवगत किया जाता है कि वर्त्तमान योगकी कितनी कलाएँ बीत गई है । शेषको ८००मेसे घटानेपर वर्तमान योगकी गम्य कलाएँ आती है । इन गत या गम्य कलाओको ६०से गुणा कर सूर्य और चन्द्रमाकी स्पष्ट दैनिक गतिके योगमे भाग देनेपर वर्तमान योगकी गत और गम्य घटिकाएँ आती है । अभिप्राय यह है कि जब अश्विनी नक्षत्रके आरम्भसे सूर्य और चन्द्रमा दोनो मिलकर ८०० कलाएं आगे चल चुकते है तब एक योग बीतता है, जब १६०० कलाएं आगे चलते है तब दो; इसी प्रकार जब दोनो १२ राशियाँ—२१६०० कलाएँ अश्विनीसे आगे चल चुकते है तब २७ योग बीतते है । २७ योगोके नाम ये है—(१) विष्कम्भ (२) प्रीति (३) आयुष्मान् (४) सौभाग्य (५) शोभन (६) अतिगण्ड (७) सुकर्मा (८) धृति (९) शूल (१०) गण्ड (११) वृद्धि (१२) ध्रुव (१३) व्याघात (१४) हर्षण (१५) वज्र (१६) सिद्धि (१७) व्यतीपात (१८) वरीयान् (१९) परिघ (२०) शिव (२१) सिद्ध (२२) साध्य (२३) शुभ (२४) शुक्ल (२५) ब्रह्म (२६) ऐन्द्र (२७) वैधृति ।

योगोंके स्वामी—विष्कभका स्वामी यम, प्रीतिका विष्णु, आयुष्मान्का चन्द्रमा, सौभाग्यका ब्रह्मा, शोभनका बृहस्पति, अतिगडका चन्द्रमा, सुकर्माका इन्द्र, धृतिका जल, शूलका सर्प, गण्डका अग्नि, वृद्धिका सूर्य, ध्रुवका भूमि, व्याघातका वायु, हर्षणका भग, वज्रका वरुण, सिद्धिका गणेश,

व्यतीपातका रुद्र, वरीयान्का कुबेर, परिघका विश्वकर्मा, शिवका मित्र, सिद्धका कार्त्तिकेय, साध्यकी सावित्री, शुभकी लक्ष्मी, शुक्लकी पार्वती, ब्रह्मका अश्विनीकुमार, ऐन्द्रका पितर एवं वैधृतिकी दिति हैं।

करण--तिथिके आधे भागको करण कहते है अर्थात् एक तिथिमे दो करण होते है। ११ करणोके नाम निम्न है--(१) वव (२) बालव (३) कौलव (४) तैतिल (५) गर (६) वणिज (७) विष्टि (८) शकुनि (९) चतुष्पद (१०) नाग (११) किस्तुघ्न। इन करणोमें पहलेके ७ करण चरसंज्ञक और अन्तिम ४ करण स्थिर मज्ञक है।

करणोंके स्वामी--ववका इन्द्र, बालवका ब्रह्मा, कौलवका सूर्य, तैतिलका सूर्य, गरकी पृथ्वी, वणिजकी लक्ष्मी, विष्टिका यम, शकुनिका कलियुग, चतुष्पादका रुद्र, नागका सर्प एवं किस्तुघ्नका वायु है।

विष्टि करणका नाम भद्रा है, प्रत्येक पञ्चाङ्गमें भद्राके आरम्भ और अन्तका समय दिया रहता है।

वार--जिस दिनकी प्रथम होराका जो ग्रह स्वामी होता है, उस दिन उसी ग्रहके नामका वार रहता है। अभिप्राय यह है कि ज्योतिष शास्त्रमें शनि, बृहस्पति, मगल, रवि, शुक्र, बुध और चन्द्रमा ये ग्रह एक दूसरेसे नीचे-नीचे माने गये है। अर्थात् सबसे ऊपर शनि उससे नीचे बृहस्पति, उससे नीचे मगल, मगलसे नीचे रवि, इत्यादि क्रमसे ग्रहोंकी कक्षाएँ हैं। एक दिनमे २४ होराएँ होती है--एक-एक घण्टेकी एक-एक होरा होती है दूसरे शब्दोंमें यह कहा जा सकता है कि घण्टेका दूसरा नाम होरा है। प्रत्येक होराका स्वामी अधः कक्षाक्रमसे एक-एक ग्रह होता है। सृष्टि आरम्भमें सबसे पहले सूर्य दिखलायी पड़ता है, इसलिये पहली होराका स्वामी माना जाता है। अतएव पहले वारका नाम इतवार या रविवार है। इसके अनन्तर उस दिनकी २री होराका स्वामी उसके पासवाला शुक्र, ३रीका बुध, ४थीका चन्द्रमा ५वींका शनि, ६वींका बृहस्पति, ७वींका मंगल, ८वींका रवि, ९वीका शुक्र, १०वींका बुध, ११वींका चन्द्रमा, १२वींका

शनि १३वींका बृहस्पति, १४वींका मंगल, १५वींका रवि, १६वींका शुक्र, १७वींका बुध, १८वींका चन्द्रमा, १९वींका शनि, २०वींका बृहस्पति, २१वींका मंगल २२वींका रवि, २३वींका शुक्र और २४वींका बुध स्वामी होता है। पश्चात् दूसरे दिनकी पहली होराका स्वामी चन्द्रमा पड़ता है, अतः दूसरा वार सोमवार या चन्द्रवार माना जाता है। इसी प्रकार तीसरे दिनकी पहली होराका स्वामी मंगल, चौथे दिनकी पहली होराका स्वामी बुध, पाँचवे दिनकी पहली होराका स्वामी बृहस्पति, छठवें दिनकी पहली होराका स्वामी शुक्र एवं सातवें दिनकी पहली होराका स्वामी शनि होता है। इसीलिये क्रमशः मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि ये वार माने जाते हैं।

वार-संज्ञाएँ—बृहस्पति, चन्द्र, बुध और शुक्र ये वार सौम्य संज्ञक एवं मंगल, रवि और शनि ये वार क्रूर संज्ञक माने गये हैं।

रविवार स्थिर, सोमवार चर, मंगलवार उग्र, बुधवार सम, गुरुवार लघु, शुक्रवार मृदु एवं शनिवार तीक्ष्ण संज्ञक है।

नक्षत्रोंके चरणाक्षर

चू चे चो ला=अश्विनी, ली लू ले लो=भरणी, आ ई उ ए=कृत्तिका, ओ वा वी वू=रोहिणी, वे वो का की=मृगशिर, कू घ ङ छ=आर्द्रा, के को हा ही=पुनर्वसु, हू हे हो डा=पुष्य, डी डू डे डो=आश्लेषा, मा मी मू मे=मघा, मो टा टी टू=पूर्वाफाल्गुनी, टे टो पा पी=उत्तराफाल्गुनी, पू ष ण ठ=हस्त, पे पो रा री=चित्रा, रू रे रो ता=स्वाति, ती तू ते तो=विशाखा, ना नी नू ने=अनुराधा, नो या यी यू=ज्येष्ठा, ये यो भा भी=मूल, भू धा फा ढा=पूर्वाषाढा, भे भो जा जी=उत्तराषाढा, खी खू खे खो=श्रवण, गा गी गू गे=धनिष्ठा, गो सा सी सू=शतभिषा, से सो दा दी=पूर्वाभाद्रपद, दू थ झ ञ=उत्तराभाद्रपद, दे दो चा ची=रेवती।

अक्षरानुसार राशिज्ञान

१ मेष	=चू चे चो ला ली लू ले लो आ	आ ला	
२ वृष	=ई उ ए ओ वा वी वू वे वो	उ वा	
३ मिथुन	=का की कू घ ङ छ के को हा	का छा	
४ कर्क	=ही हू हे हो डा डी डू डे डो	डा हा	
५ सिंह	=मा मी मू मे मो टा टी टू टे	मा टा	
६ कन्या	=ठो पा पी पू ष ण ठ पे पो	पा ठा	
७ तुला	=रा री रू रे रो ता ती तू ते	रा ता	
८ वृश्चिक	=तो ना नी नू ने नो या यी यू	नो या	
९ धनु	=ये यो भा भी भू धा फा ढा भे	भू धा फा ढा	
१० मकर	=भो जा जी खी खू खे खो गा गी	खा जा	
११ कुम्भ	=गू गे गो सा सी सू से सो दा	गो सा	
१२ मीन	=दी दू थ झ ञ दे दो चा ची	दा च	

राशि ज्ञान करनेकी संक्षिप्त अक्षरविधि यह है।

राशियोंका परिचय

आकाशमें स्थित भचक्रके ३६० अंश अथवा १०८ भाग होते हैं। समस्त भचक्र १२ राशियोंमें विभक्त है, अतः ३० अंश अथवा ९ भागकी एक राशि होती है।

मेष—पुरुष जाति, चर संज्ञक, अग्नितत्त्व, पूर्व दिशाकी मालिक, मस्तकका बोध करानेवाली, पृष्ठोदय, उग्र प्रकृति, लाल-पीले वर्णवाली, क्रान्तिहीन, क्षत्रियवर्ण, सभी समान अंगवाली, और अल्प सन्तति है। यह पित्त प्रकृति कारक है, इसका प्राकृतिक स्वभाव साहसी, अभिमानी और मित्रों पर कृपा रखनेवाला है।

वृष—स्त्री राशि, स्थिर संज्ञक, भूमितत्त्व, शीतल स्वभाव, कान्ति-रहित, दक्षिण दिशाकी स्वामिनी, वात प्रकृति, रात्रिबली, चार चरण

वाली, श्वेतवर्ण, महाशब्दकारी, विषमोदयी, मध्यम सन्तति, शुभकारक, वैश्यवर्ण, और शिथिल शरीर है। यह अर्द्धजल राशि कहलाती है। इसका प्राकृतिक स्वभाव स्वार्थी, समझबूझकर काम करनेवाला और सांसारिक कार्योंमें दक्ष होता है। इससे मुख और कपोलोंका विचार किया जाता है।

मिथुन—पश्चिम दिशाकी स्वामिनी, वायु तत्त्व, तोतेके समान हरित-वर्ण वाली, पुरुष राशि, द्विस्वभाव, विषमोदयी, उष्ण, शूद्रवर्ण, महाशब्द-कारी, चिकनी, दिन-बली, मध्यम सन्तति, और शिथिल शरीर है। इसका प्राकृतिक स्वभाव विद्याध्ययनी और शिल्पी है। इससे शरीरके कन्धों और बाहुओंका विचार किया जाता है।

कर्क—चर, स्त्री जाति, सौम्य और कफ प्रकृति, जलचारी, समोदयी, रात्रिबली, उत्तर दिशाकी स्वामिनी, रक्त-धवल मिश्रितवर्ण, बहुचरण एवं सन्तानवाली है। इसका प्राकृतिक स्वभाव सासारिक उन्नतिमे प्रयत्नशीलता, लज्जा, कार्यस्थैर्य, और समयानुयायिताका सूचक है। इससे बक्षस्थल और गुर्देका विचार किया जाता है।

सिंह—पुरुष जाति, स्थिर संज्ञक, अग्नितत्त्व, दिन-बली, पित्त प्रकृति, पीत वर्ण, उष्ण स्वभाव, पूर्व दिशाकी स्वामिनी, पुष्ट शरीर, क्षत्रिय वर्ण, अल्पसन्तति, भ्रमणप्रिय और निर्जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वरूप मेष राशि जैसा है, पर तो भी इसमें स्वातन्त्र्य प्रेम और उदारता विशेष रूपसे वर्तमान है। इससे हृदय का विचार किया जाता है।

कन्या—पिगल वर्ण, स्त्री जाति, द्विस्वभाव, दक्षिण दिशाकी स्वामिनी, रात्रिबली, वायु और शीत प्रकृति, पृथ्वी तत्त्व, और अल्प सन्तानवाली है। इसका प्राकृतिक स्वभाव मिथुन जैसा है, पर विशेषता इतनी है कि अपनी उन्नति और मानपर पूर्ण ध्यान रखनेकी यह कोशिश करती है। इससे पेटका विचार किया जाता है।

तुला—पुरुष जाति, चर संज्ञक, वायुतत्त्व, पश्चिम दिशाकी स्वामिनी,

अल्पसन्तानवाली, श्यामवर्ण, शीर्षोदयी, शूद्र संज्ञक, दिन-बली, क्रूर स्वभाव और पाद जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वभाव विचारशील, ज्ञानप्रिय, कार्य सम्पादक और राजनीतिज्ञ है। इससे नाभिके नीचेके अगोंका विचार किया जाता है।

वृश्चिक—स्थिर संज्ञक, शुभ्रवर्ण, स्त्री जाति, जलतत्त्व, उत्तर दिशाकी स्वामिनी, रात्रिबली, कफ प्रकृति, बहु सन्तति, ब्राह्मण वर्ण, और अर्द्ध जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वभाव दम्भी, हठी, दृढप्रतिज्ञ, स्पष्टवादी और निर्मल है। इससे जननेन्द्रियका विचार किया जाता है।

धनु—पुरुष जाति, काञ्चन वर्ण, द्विस्वभाव, क्रूर संज्ञक, पित्त प्रकृति, दिन-बली, पूर्व दिशाकी स्वामिनी, दृढ़ शरीर, अग्नि तत्त्व, क्षत्रिय वर्ण, अल्प सन्तति एव अर्द्ध जल राशि है। इसका प्राकृतिक स्वभाव अधिकार प्रिय, करुणामय, और मर्यादाका इच्छुक है। इससे पैरोंकी सन्धि तथा जंघाओंका विचार किया जाता है।

मकर—चर सज्ञक, स्त्री जाति, पृथ्वीतत्त्व, वात प्रकृति, पिगल वर्ण, रात्रिबली, वैश्यवर्ण, शिथिल शरीर, और दक्षिण दिशाकी स्वामिनी है। इसका प्राकृतिक स्वभाव उच्च दशाभिलाषी है। इससे घुटनोका विचार किया जाता है।

कुम्भ—पुरुष जाति, स्थिरसंज्ञक, वायुतत्त्व, विचित्र वर्ण, शीर्षोदय, अर्द्धजल, त्रिदोष प्रकृति, दिन-बली, पश्चिम दिशाकी स्वामिनी, उष्ण स्वभाव, शूद्र वर्ण, क्रूर एवं मध्यम सन्तानवाली है। इसका प्राकृतिक स्वभाव विचारशील, शान्तचित्त, धर्मभीरु और नवीन बातोंका आविष्कारक है। इससे पेटके भीतरी भागोंका विचार किया जाता है।

मीन—द्विस्वभाव, स्त्री जाति, कफ प्रकृति, जलतत्त्व, रात्रि-बली, विप्रवर्ण, उत्तर दिशाकी स्वामिनी, और पिगल रंग है। इसका प्राकृतिक स्वभाव उत्तम, दयालु और दानशील है। यह सम्पूर्ण जलराशि है। इससे पैरोंका विचार किया जाता है।

राशि स्वरूपका प्रयोजन

उपर्युक्त बारह राशियोंका जैसा स्वरूप बतलाया है, इन राशियोंमें उत्पन्न पुरुष और स्त्रियोंका स्वभाव भी प्रायः वैसा ही होता है। जन्म-कुण्डलीमें राशि और ग्रहोके स्वरूपके समन्वय पर से ही फलाफलका विचार किया जाता है। दो व्यक्तियोंकी या वर-कन्याकी शत्रुता और मित्रता अथवा पारस्परिक स्वभाव मेलके लिये भी राशि स्वरूप उपयोगी है।

शत्रुता और मित्रताकी विधि

पृथ्वीतत्त्व और जलतत्त्ववाली राशियोके व्यक्तियोमें तथा अग्नितत्त्व और वायुतत्त्ववाली राशियोके व्यक्तियोमें परस्पर मित्रता रहती है। पृथ्वी और अग्नितत्त्व; जल और अग्नितत्त्व एवं जल और वायुतत्त्ववाली राशियोके व्यक्तियोमे परस्पर शत्रुता रहती है।

राशियोंके स्वामी

मेष और वृश्चिकका मंगल, वृष और तुलाका शुक्र, कन्या और मिथुनका बुध, कर्कका चन्द्रमा, सिंहका सूर्य, मीन और धनुका बृहस्पति, मकर और कुम्भका शनि, कन्याका राहु एवं मिथुनका केतु है।

शून्य संज्ञक राशियाँ—चैत्रमें कुम्भ, वैशाखमे मीन, ज्येष्ठमें वृष, आषाढ़में मिथुन, श्रावणमें मेष, भाद्रपदमें कन्या, आश्विनमें वृश्चिक, कार्त्तिकमें तुला, मार्गशीर्षमें धनु, पौषमे कर्क, माघमे मकर एवं फाल्गुनमें सिह शून्य संज्ञक है।

राशियोंका अंग विभाग

द्वादश राशियाँ काल पुरुषका अंग मानी गई है। मेषको सिरमें, वृषको मुखमें, मिथुनको स्तनमध्यमें, कर्कको हृदयमे, सिहको उदरमे, कन्याको कमरमें, तुलाको पेड़ूमें, वृश्चिकको लिगमें, धनुको जंघामें, मकरको दोनों घुटनोंमें, कुम्भको दोनों जाँघोंमें एवं मीनको दोनों पैरोंमें माना है।

आवश्यक परिभाषाएँ

६० प्रतिपल =	१ विपल	६० प्रति विकला =	१ विकला
६० बिपल =	१ पल	६० विकला =	१ कला
६० पल =	१ घटी या दण्ड	६० कला =	१ अंश
२४ मिनट =	१ घटी	३० अंश =	१ राशि
२½ पल =	१ मिनट	१२ राशि =	१ भगण
२½ विपल =	१ सैकण्ड	८ यव =	१ अंगुल
२½ घटी =	१ घंटा	२४ अंगुल =	१ हाथ
६० घटी =	एक अहोरात्र	४ हाथ =	१ दण्ड या बाँस
		२००० बाँस =	१ कोश

जातक

जातक अंगमें प्रधान रूपसे जन्मपत्रीके निर्माण द्वारा व्यक्तिकी उत्पत्ति-के समयके ग्रह-नक्षत्रोंकी स्थितिपरसे जीवनका फलाफल निकाला गया है।

जन्मकुण्डलीका गणित प्रधान रूपसे इष्टकालपर आश्रित है। इष्टकाल जितना सूक्ष्म और शुद्ध होगा, जन्मपत्रीका फलादेश भी उतना ही प्रामाणिक निकलेगा। इष्टकाल—सूर्योदयसे लेकर जन्म समय या अभीष्ट समय तकके कालको इष्टकाल कहते हैं।

जहाँका इष्टकाल बनाना हो उस स्थानका सूर्योदय बनाकर प्रचलित स्टैण्डर्ड टायमको इष्ट स्थानीय (लोकल) सूर्य घड़ीका टायम बना लें।

स्थानीय सूर्योदय निकालनेकी विधि—पञ्चाङ्गमें प्रति दिनकी सूय-क्रान्ति लिखी रहती है। जिस दिनका सूर्योदय बनाना हो उस दिनकी क्रान्ति और इष्ट स्थानीय अक्षांशका फल आगवाली चरसारणीमें देखकर निकाल लेना चाहिये, और जो मिनट, सैकण्ड रूप फल आवे उसे उत्तरा क्रान्ति होनेपर ६ घण्टेमें जोड़ देने और दक्षिणा क्रान्तिमें ६ घण्टेमेंसे घटा देनेपर सूर्यास्तका समय निकलता है। इसे १२ घण्टेमेंसे घटानेपर सूर्योदय होता है; सूर्यास्तकालको ५से गुणा करदेनेपर घटचादि दिनमान होता है।

चर सारणी—सिनट, सैकण्ड रूप फल

क्रान्त्यंश

अक्षांश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	४	८	१३	१७	२१	२५	२९	३४	३८	४२	४६	५०	५४	५८	०	४	८	१२	१६	२०	२४	२८	३२	३६
२	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	८	१७	२५	३३	४१	४९	५७	६५	७३	८१	८९	९७	०	८	१६	२४	३२	४०	४८	५६	६४	७२	८०	८८
३	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	१२	२५	३७	५०	२	१५	२७	४०	५२	५	१७	२९	४२	५४	७	१९	३२	४४	५७	९	२२	३४	४७	५९
४	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	१७	३४	५०	७	२३	४०	५७	१३	३०	४७	४	२१	३८	५५	१२	२९	४६	३	२०	३७	५४	१०	२७	४४
५	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	२१	४३	५	२७	४९	१२	३४	५७	२०	४२	६५	२७	४९	१२	३४	५७	२०	४२	६५	२७	४९	१२	३४	५७
६	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	२५	५०	१५	४०	५	३०	५५	२०	४५	१०	३५	०	२५	५०	१५	४०	५	३०	५५	२०	४५	१०	३५	०
७	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	२९	५७	२६	५४	२३	५१	२०	४८	१७	४५	१४	४३	१२	४१	१०	३९	८	३८	७	३६	५	३५	४	३४

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
२	२	४	६	८	१०	१२	१४	१६	१८	२०	२२	२४	२६	२८	३०	३२	३४	३६	३८	४०	४२	४४	४६	४८	५०	५२	५४	५६	५८	६०
३	३	६	९	१२	१५	१८	२१	२४	२७	३०	३३	३६	३९	४२	४५	४८	५१	५४	५७	६०	६३	६६	६९	७२	७५	७८	८१	८४	८७	९०
४	४	८	१२	१६	२०	२४	२८	३२	३६	४०	४४	४८	५२	५६	६०	६४	६८	७२	७६	८०	८४	८८	९२	९६	१००	१०४	१०८	११२	११६	१२०
५	५	१०	१५	२०	२५	३०	३५	४०	४५	५०	५५	६०	६५	७०	७५	८०	८५	९०	९५	१००	१०५	११०	११५	१२०	१२५	१३०	१३५	१४०	१४५	१५०
६	६	१२	१८	२४	३०	३६	४२	४८	५४	६०	६६	७२	७८	८४	९०	९६	१०२	१०८	११४	१२०	१२६	१३२	१३८	१४४	१५०	१५६	१६२	१६८	१७४	१८०
७	७	१४	२१	२८	३५	४२	४९	५६	६३	७०	७७	८४	९१	९८	१०५	११२	११९	१२६	१३३	१४०	१४७	१५४	१६१	१६८	१७५	१८२	१८९	१९६	२०३	२१०
८	८	१६	२४	३२	४०	४८	५६	६४	७२	८०	८८	९६	१०४	११२	१२०	१२८	१३६	१४४	१५२	१६०	१६८	१७६	१८४	१९२	२००	२०८	२१६	२२४	२३२	२४०
९	९	१८	२७	३६	४५	५४	६३	७२	८१	९०	९९	१०८	११७	१२६	१३५	१४४	१५३	१६२	१७१	१८०	१८९	१९८	२०७	२१६	२२५	२३४	२४३	२५२	२६१	२७०
१०	१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	९०	१००	११०	१२०	१३०	१४०	१५०	१६०	१७०	१८०	१९०	२००	२१०	२२०	२३०	२४०	२५०	२६०	२७०	२८०	२९०	३००
११	११	२२	३३	४४	५५	६६	७७	८८	९९	११०	१२१	१३२	१४३	१५४	१६५	१७६	१८७	१९८	२०९	२२०	२३१	२४२	२५३	२६४	२७५	२८६	२९७	३०८	३१९	३३०
१२	१२	२४	३६	४८	६०	७२	८४	९६	१०८	१२०	१३२	१४४	१५६	१६८	१८०	१९२	२०४	२१६	२२८	२४०	२५२	२६४	२७६	२८८	३००	३१२	३२४	३३६	३४८	३६०
१३	१३	२६	३९	५२	६५	७८	९१	१०४	११७	१३०	१४३	१५६	१६९	१८२	१९५	२०८	२२१	२३४	२४७	२६०	२७३	२८६	२९९	३१२	३२५	३३८	३५१	३६४	३७७	३९०
१४	१४	२८	४२	५६	७०	८४	९८	११२	१२६	१४०	१५४	१६८	१८२	१९६	२१०	२२४	२३८	२५२	२६६	२८०	२९४	३०८	३२२	३३६	३५०	३६४	३७८	३९२	४०६	४२०
१५	१५	३०	४५	६०	७५	९०	१०५	१२०	१३५	१५०	१६५	१८०	१९५	२१०	२२५	२४०	२५५	२७०	२८५	३००	३१५	३३०	३४५	३६०	३७५	३९०	४०५	४२०	४३५	४५०
१६	१६	३२	४८	६४	८०	९६	११२	१२८	१४४	१६०	१७६	१९२	२०८	२२४	२४०	२५६	२७२	२८८	३०४	३२०	३३६	३५२	३६८	३८४	४००	४१६	४३२	४४८	४६४	४८०
१७	१७	३४	५१	६८	८५	१०२	११९	१३६	१५३	१७०	१८७	२०४	२२१	२३८	२५५	२७२	२८९	३०६	३२३	३४०	३५७	३७४	३९१	४०८	४२५	४४२	४५९	४७६	४९३	५१०
१८	१८	३६	५४	७२	९०	१०८	१२६	१४४	१६२	१८०	१९८	२१६	२३४	२५२	२७०	२८८	३०६	३२४	३४२	३६०	३७८	३९६	४१४	४३२	४५०	४६८	४८६	५०४	५२२	५४०
१९	१९	३८	५७	७६	९५	११४	१३३	१५२	१७१	१९०	२०९	२२८	२४७	२६६	२८५	३०४	३२३	३४२	३६१	३८०	३९९	४१८	४३७	४५६	४७५	४९४	५१३	५३२	५५१	५७०
२०	२०	४०	६०	८०	१००	१२०	१४०	१६०	१८०	२००	२२०	२४०	२६०	२८०	३००	३२०	३४०	३६०	३८०	४००	४२०	४४०	४६०	४८०	५००	५२०	५४०	५६०	५८०	६००
२१	२१	४२	६३	८४	१०५	१२६	१४७	१६८	१८९	२१०	२३१	२५२	२७३	२९४	३१५	३३६	३५७	३७८	३९९	४२०	४४१	४६२	४८३	५०४	५२५	५४६	५६७	५८८	६०९	६३०
२२	२२	४४	६६	८८	११०	१३२	१५४	१७६	१९८	२२०	२४२	२६४	२८६	३०८	३३०	३५२	३७४	३९६	४१८	४४०	४६२	४८४	५०६	५२८	५५०	५७२	५९४	६१६	६३८	६६०
२३	२३	४६	६९	९२	११५	१३८	१६१	१८४	२०७	२३०	२५३	२७६	२९९	३२२	३४५	३६८	३९१	४१४	४३७	४६०	४८३	५०६	५२९	५५२	५७५	५९८	६२१	६४४	६६७	६९०
२४	२४	४८	७२	९६	१२०	१४४	१६८	१९२	२१६	२४०	२६४	२८८	३१२	३३६	३६०	३८४	४०८	४३२	४५६	४८०	५०४	५२८	५५२	५७६	६००	६२४	६४८	६७२	६९६	७२०
२५	२५	५०	७५	१००	१२५	१५०	१७५	२००	२२५	२५०	२७५	३००	३२५	३५०	३७५	४००	४२५	४५०	४७५	५००	५२५	५५०	५७५	६००	६२५	६५०	६७५	७००	७२५	७५०
२६	२६	५२	७८	१०४	१३०	१५६	१८२	२०८	२३४	२६०	२८६	३१२	३३८	३६४	३९०	४१६	४४२	४६८	४९४	५२०	५४६	५७२	५९८	६२४	६५०	६७६	७०२	७२८	७५४	७८०
२७	२७	५४	८१	१०८	१३५	१६२	१८९	२१६	२४३	२७०	२९७	३२४	३५१	३७८	४०५	४३२	४५९	४८६	५१३	५४०	५६७	५९४	६२१	६४८	६७५	७०२	७२९	७५६	७८३	८१०
२८	२८	५६	८४	११२	१४०	१६८	१९६	२२४	२५२	२८०	३०८	३३६	३६४	३९२	४२०	४४८	४७६	५०४	५३२	५६०	५८८	६१६	६४४	६७२	७००	७२८	७५६	७८४	८१२	८४०
२९	२९	५८	८७	११६	१४५	१७४	२०३	२३२	२६१	२९०	३१९	३४८	३७७	४०६	४३५	४६४	४९३	५२२	५५१	५८०	६०९	६३८	६६७	६९६	७२५	७५४	७८३	८१२	८४१	८७०
३०	३०	६०	९०	१२०	१५०	१८०	२१०	२४०	२७०	३००	३३०	३६०	३९०	४२०	४५०	४८०	५१०	५४०	५७०	६००	६३०	६६०	६९०	७२०	७५०	७८०	८१०	८४०	८७०	९००

२७	२८	२९	३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६
२ २	२ ७	२ २	२ २	२ २	२ २	२ २	२ २	२ २	२ २
४ ५	४ ५	४ ५	४ ५	४ ५	४ ५	४ ५	४ ५	४ ५	४ ५
६ ७	६ ७	६ ७	६ ७	६ ७	६ ७	६ ७	६ ७	६ ७	६ ७
८ ९	८ ९	८ ९	८ ९	८ ९	८ ९	८ ९	८ ९	८ ९	८ ९
१० ११	१० ११	१० ११	१० ११	१० ११	१० ११	१० ११	१० ११	१० ११	१० ११
१२ १३	१२ १३	१२ १३	१२ १३	१२ १३	१२ १३	१२ १३	१२ १३	१२ १३	१२ १३
१४ १५	१४ १५	१४ १५	१४ १५	१४ १५	१४ १५	१४ १५	१४ १५	१४ १५	१४ १५
१६ १७	१६ १७	१६ १७	१६ १७	१६ १७	१६ १७	१६ १७	१६ १७	१६ १७	१६ १७
१८ १९	१८ १९	१८ १९	१८ १९	१८ १९	१८ १९	१८ १९	१८ १९	१८ १९	१८ १९
२० २१	२० २१	२० २१	२० २१	२० २१	२० २१	२० २१	२० २१	२० २१	२० २१
२२ २३	२२ २३	२२ २३	२२ २३	२२ २३	२२ २३	२२ २३	२२ २३	२२ २३	२२ २३
२४ २५	२४ २५	२४ २५	२४ २५	२४ २५	२४ २५	२४ २५	२४ २५	२४ २५	२४ २५
२६ २७	२६ २७	२६ २७	२६ २७	२६ २७	२६ २७	२६ २७	२६ २७	२६ २७	२६ २७
२८ २९	२८ २९	२८ २९	२८ २९	२८ २९	२८ २९	२८ २९	२८ २९	२८ २९	२८ २९
३० ३१	३० ३१	३० ३१	३० ३१	३० ३१	३० ३१	३० ३१	३० ३१	३० ३१	३० ३१
३२ ३३	३२ ३३	३२ ३३	३२ ३३	३२ ३३	३२ ३३	३२ ३३	३२ ३३	३२ ३३	३२ ३३
३४ ३५	३४ ३५	३४ ३५	३४ ३५	३४ ३५	३४ ३५	३४ ३५	३४ ३५	३४ ३५	३४ ३५
३६ ३७	३६ ३७	३६ ३७	३६ ३७	३६ ३७	३६ ३७	३६ ३७	३६ ३७	३६ ३७	३६ ३७
३८ ३९	३८ ३९	३८ ३९	३८ ३९	३८ ३९	३८ ३९	३८ ३९	३८ ३९	३८ ३९	३८ ३९
४० ४१	४० ४१	४० ४१	४० ४१	४० ४१	४० ४१	४० ४१	४० ४१	४० ४१	४० ४१
४२ ४३	४२ ४३	४२ ४३	४२ ४३	४२ ४३	४२ ४३	४२ ४३	४२ ४३	४२ ४३	४२ ४३
४४ ४५	४४ ४५	४४ ४५	४४ ४५	४४ ४५	४४ ४५	४४ ४५	४४ ४५	४४ ४५	४४ ४५
४६ ४७	४६ ४७	४६ ४७	४६ ४७	४६ ४७	४६ ४७	४६ ४७	४६ ४७	४६ ४७	४६ ४७
४८ ४९	४८ ४९	४८ ४९	४८ ४९	४८ ४९	४८ ४९	४८ ४९	४८ ४९	४८ ४९	४८ ४९
५० ५१	५० ५१	५० ५१	५० ५१	५० ५१	५० ५१	५० ५१	५० ५१	५० ५१	५० ५१
५२ ५३	५२ ५३	५२ ५३	५२ ५३	५२ ५३	५२ ५३	५२ ५३	५२ ५३	५२ ५३	५२ ५३
५४ ५५	५४ ५५	५४ ५५	५४ ५५	५४ ५५	५४ ५५	५४ ५५	५४ ५५	५४ ५५	५४ ५५
५६ ५७	५६ ५७	५६ ५७	५६ ५७	५६ ५७	५६ ५७	५६ ५७	५६ ५७	५६ ५७	५६ ५७
५८ ५९	५८ ५९	५८ ५९	५८ ५९	५८ ५९	५८ ५९	५८ ५९	५८ ५९	५८ ५९	५८ ५९
६० ६१	६० ६१	६० ६१	६० ६१	६० ६१	६० ६१	६० ६१	६० ६१	६० ६१	६० ६१
६२ ६३	६२ ६३	६२ ६३	६२ ६३	६२ ६३	६२ ६३	६२ ६३	६२ ६३	६२ ६३	६२ ६३
६४ ६५	६४ ६५	६४ ६५	६४ ६५	६४ ६५	६४ ६५	६४ ६५	६४ ६५	६४ ६५	६४ ६५
६६ ६७	६६ ६७	६६ ६७	६६ ६७	६६ ६७	६६ ६७	६६ ६७	६६ ६७	६६ ६७	६६ ६७
६८ ६९	६८ ६९	६८ ६९	६८ ६९	६८ ६९	६८ ६९	६८ ६९	६८ ६९	६८ ६९	६८ ६९
७० ७१	७० ७१	७० ७१	७० ७१	७० ७१	७० ७१	७० ७१	७० ७१	७० ७१	७० ७१
७२ ७३	७२ ७३	७२ ७३	७२ ७३	७२ ७३	७२ ७३	७२ ७३	७२ ७३	७२ ७३	७२ ७३
७४ ७५	७४ ७५	७४ ७५	७४ ७५	७४ ७५	७४ ७५	७४ ७५	७४ ७५	७४ ७५	७४ ७५
७६ ७७	७६ ७७	७६ ७७	७६ ७७	७६ ७७	७६ ७७	७६ ७७	७६ ७७	७६ ७७	७६ ७७
७८ ७९	७८ ७९	७८ ७९	७८ ७९	७८ ७९	७८ ७९	७८ ७९	७८ ७९	७८ ७९	७८ ७९
८० ८१	८० ८१	८० ८१	८० ८१	८० ८१	८० ८१	८० ८१	८० ८१	८० ८१	८० ८१
८२ ८३	८२ ८३	८२ ८३	८२ ८३	८२ ८३	८२ ८३	८२ ८३	८२ ८३	८२ ८३	८२ ८३
८४ ८५	८४ ८५	८४ ८५	८४ ८५	८४ ८५	८४ ८५	८४ ८५	८४ ८५	८४ ८५	८४ ८५
८६ ८७	८६ ८७	८६ ८७	८६ ८७	८६ ८७	८६ ८७	८६ ८७	८६ ८७	८६ ८७	८६ ८७
८८ ८९	८८ ८९	८८ ८९	८८ ८९	८८ ८९	८८ ८९	८८ ८९	८८ ८९	८८ ८९	८८ ८९
९० ९१	९० ९१	९० ९१	९० ९१	९० ९१	९० ९१	९० ९१	९० ९१	९० ९१	९० ९१
९२ ९३	९२ ९३	९२ ९३	९२ ९३	९२ ९३	९२ ९३	९२ ९३	९२ ९३	९२ ९३	९२ ९३
९४ ९५	९४ ९५	९४ ९५	९४ ९५	९४ ९५	९४ ९५	९४ ९५	९४ ९५	९४ ९५	९४ ९५
९६ ९७	९६ ९७	९६ ९७	९६ ९७	९६ ९७	९६ ९७	९६ ९७	९६ ९७	९६ ९७	९६ ९७
९८ ९९	९८ ९९	९८ ९९	९८ ९९	९८ ९९	९८ ९९	९८ ९९	९८ ९९	९८ ९९	९८ ९९
१०० १०१	१०० १०१	१०० १०१	१०० १०१	१०० १०१	१०० १०१	१०० १०१	१०० १०१	१०० १०१	१०० १०१

उदाहरण—वि० स० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीयाके दिन विश्व-पञ्चाङ्गमें सूर्यकी उत्तरा क्रान्ति १२ अंश ५४ कला है। आगामें इस दिनका सूर्योदय निकालना है। आगे दी गई अक्षांश-देशान्तर बोधक सारणीमें आराका अक्षांश २५°/३०′ दिया गया है। इन दोनोंपरसे चर सारणीके अनुसार मिनट, सैकण्ड रूप फल निकालना है।

सारणीमें २५ अंश अक्षांशका १२ अंशके क्रान्तिवाले कोठेमें २२ मिनट ४५ सैकण्ड फल दिया है, यहाँ अभीष्ट अक्षांश २५°/३०′ है अतः २५ और २६ अंश अक्षांशवाले १२ अंशके क्रान्तिके कोठोंका अन्तर किया—

२३।४८—२६ अंश अक्षांशका फल
२२।४५—२५ अंश अक्षांशका फल

१।३ इस मिनटादि अन्तरके सैकण्ड बनाये
१×६०=६०+३=६३ सैकण्ड। यहाँ अनुपात किया कि ६० कलाका फल ६३ सैकण्ड है तो ३० कलाका कितना ?

$$\frac{६३ \times \overset{१}{\cancel{३०}}}{\underset{२}{\cancel{६०}}} = \frac{६३}{२} = ३१\frac{१}{२}$$

२२।४५
३१½ से० इसे २५ अंश अक्षांशके फलमें जोड़ा तो— ०।३१
२३।१६

यहाँ २३।१६ फल १२ अंश क्रान्तिका आया है;
किन्तु १२।५४ का निकालनेके लिये क्रिया की—

२४।४३—१३ अंश क्रान्तिके कोठेका फल
२२।४५—१२ अंश क्रान्तिके कोठेका फल

१।५८ मिनटादि फल एक अंशका
१×६०=६०+५८=११८ सैकण्ड

अनुपात किया कि ६० कलाका फल ११८सैकण्ड है तो ५४ कलाका कितना ?

$$\therefore \quad \frac{११८ \times ५४}{६०} = ५\frac{३१}{६०} = १०६\frac{१}{६} \text{ सैकण्ड}$$

१०६ सै०=१ मिनट ५६ सैकण्ड, पहलवाले फलमें जोड़ा तो

$$\begin{array}{r} २३।१६ \\ १।५६ \\ \hline २५।१२; \end{array}$$

२५ मिनट १२ सैकण्ड फलको उत्तरा क्रान्ति होनेके कारण ६ घंटेमें जोड़ा तो—६।०।०

$$\begin{array}{r} २५।१२ \\ \hline ६।२५।१२ \end{array}$$

सूर्यास्तका समय अर्थात् ६ बजकर २५ मिनट १२ सैकण्डपर आरामें सूर्यास्त होगा। इसे १२ घंटेमेंसे घटाया—१२।०।०

$$\begin{array}{r} ६।२५।१२ \\ \hline ५।३४।४८ \end{array}$$

सूर्यास्त काल ६।२५।१२ सूर्यास्त×५=३२ घटी ६ पल दिनमान आरा नगरका हुआ। (६०।०।०—३२।६) —२७।५४ रात्रिमान आराका।

स्टैण्डर्ड टायमको लोकल टायम बनानेकी विधि—स्टैण्डर्ड टायम (Standard time) प्रायः समस्त भारतमें एक ही होता है। क्योंकि ये प्रचलित घड़ियाँ एक ही साथ मिलाई जाती है, इनमें हर जगह एक ही साथ १२ बजते है और एक ही साथ दो। लेकिन धूपघड़ीका समय प्रत्येक स्थानका भिन्न-भिन्न होता है। आरामें धूपघड़ीके अनुसार जिस समय १२ बजते है उस समय आगरेमें ११ बजकर ३५ मिनट ही समय होता है। इस अन्तरको दूर करनेके लिये ज्योतिषमें दो संस्कारोंकी व्यवस्था की गई है। एक वेलान्तर और दूसरा देशान्तर।

जब स्थानीय धूपघड़ीमें १२ बजते है तब मध्याह्न कालमें सूर्य ठीक सिरके ऊपर नहीं रहेगा, कुछ पूर्व या पश्चिमकी ओर रहेगा। वर्ष में केवल चार बार ही सूर्यघड़ीमें १२ बजनेपर सूर्य ठीक सिरके ऊपर आवेगा,

अवशेष दिनोंमें मध्यम मध्याह्न और स्पष्ट मध्याह्नका अन्तर जाननेके लिये वेलान्तर संस्कार किया जाता है।

स्टैण्डर्ड टायमसे लोकल टायम (स्थानीय समय) ज्ञात करनेके लिये देशान्तर संस्कार करना पड़ता है। स्टैण्डर्ड टायम भारतवर्षमे ८२°/३०′ रेखाश (तूलांश) का है। इससे अधिक (Longitude)मे एक अंश अन्तरमें ४ मिनटके हिसाबसे स्टैण्डर्ड टायममें धन अथवा ऋण—स्टैण्डर्ड टायमके रेखांशसे इष्ट स्थानका रेखांश अधिक हो तो धन और कम हो तो ऋण करदेनेसे इष्ट स्थानीय समय आ जाता है। लेकिन यहाँ वेलान्तर संस्कार करना भी आवश्यक है।

नवम्बर मासमे मध्यम मध्याह्न और स्पष्ट मध्याह्नका अन्तर १६ मिनटके लगभग हो जाता है। यदि ज्योतिषी इष्टकालमें इन दोनों संस्कारोंको न करे तो बड़ी भारी भूल रह जायगी। आगे दी गई वेलान्तर सारणीमें जहाँ धन लिखा हो वहाँ उन महीनोकी उन तारीखोमे जोड़ना और जहाँ ऋण हो, वहाँ घटाना चाहिये।

उदाहरण—वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको दिनके २ बजकर २५ मिनटपर आरामें किसी बालकका जन्म हुआ है। इस स्टैण्डर्ड टायमका आराकी धूपघड़ीके अनुसार समय निकालना है।

आराका रेखाश (Longitude) आगेवाली अक्षाश-देशान्तर बोधक सारणीमें ८४°/४०′ दिया है और स्टैण्डर्ड टायमका रेखांश ८२°/३०′ है, दोनोंका अन्तर किया—(८४°/४०′—८२°/३०′)= २°/१०′ अन्तर हुआ। इसे ४ मिनट प्रति अंशके हिसाबसे गुणा किया तो ८ मिनट ४० सैकण्ड हुआ।

स्टैण्डर्ड टायमके रेखांशसे आराका रेखांश अधिक है, अतएव स्टैण्डर्ड टायममें इस आगत फलको जोड़ना चाहिये। २।२५।०

८।१०

२।३३।१० हुआ। वेलान्तर

संस्कार करनेके लिये आगे दी गई वेलान्तर सारणीमें जन्मदिन—२४ अप्रैलका फल देखा तो २ मिनट धन फल मिला; इस फलको भी इस संस्कृत समयमें जोड़ दिया तो— २।३३।१०

०।२।०

२।३५।१० अर्थात २ बजकर ३५ मिनट १०सैकण्ड बालकका आराका जन्म-समय हुआ। इष्टकाल बनानेके लिये इसी समयको वास्तविक जन्म-समय मानेगे।

अक्षांश और देशान्तर बोधक सारणी

क्रम सं०	नाम नगर	प्रान्त	अक्षाश	रेखाश
१	अकालकोट	बम्बई	१७.३१	७६.१५
२	अकोला	बरार	२०.४२	७२.२
३	अगरतल्ला	बंगाल	२३.५०	९१.२३
४	अछनेरा	यू० पी०	२७ १२	७२.४५
५	अजन्ता	हैदराबाद	२०.३३	७५.४८
६	अजमेर	अजमेर	२६.७२	७४.४२
७	अजयगढ	सी० पी०	२४.५३	८०.१३
८	अटक	पंजाब	३३.५३	७२.१७
९	अण्डमन	अण्डमन	१२.०	९२.४०
१०	अनन्तापुर	मैसूर	१४.५	७५.१७
११	अमरावती	बरार	२०.५६	७७.४७
१२	अम्बर	राजपूताना	२६.५९	७५.५३
१३	अम्बाला	पंजाब	३०.२१	७६.५२
१४	अमरोहा	यू० पी०	२८.५४	७८.३१
१५	अमृतसर	पंजाब	३१.३७	७४.४८
१६	अयोध्या	यू० पी०	२६.४८	८२.१९

१७	अरान्तक	मद्रास	१०.१०	७९.२
१८	अलमोड़ा	यू० पी०	२९.३५	७९.४१
१९	अलवर	राजस्थान	२७.३४	७६.३८
२०	अलीगढ	यू० पी०	२७.५५	७८.६
२१	अलीपुर	बंगाल	२२.३२	८४.२४
२२	अलीबाग	बम्बई	१८ ३९	७२.५५
२३	अलीराजपुर	सी० पी०	२२ ११	७४.२४
२४	अवध	यू० पी०	२६.४५	८२.०
२५	अवर	राजपूताना	२४.३६	७२.४५
२६	अवोर	आसाम	२८ २०	९५.०
२७	असय्य	हैदराबाद	२०.१५	७५.५८
२८	अहमदनगर	बम्बई	१९.५	७४ ५५
२९	अहमदाबाद	,,	२३.०	७२.४०
३०	अहमादपुर	पजाब	२९ ६	७१.१६
३१	आगरा	यू० पी०	२८.०	७८.१५
३२	आजमगढ	,,	२६ ३	८३.१३
३३	आरकट	मद्रास	१२.५५	७९.२४
३४	आरनी	,,	१२.४०	७९.१९
३५	आरा	विहार	२५.३०	८४ ४०
३६	आसनसोल	बगाल	२३ ४२	८७.१
३७	आसाम	आसाम	२६.०	९३.०
३८	इटारसी	सी० पी०	२२.३६	७०.५१
३९	इन्द्रवती	मद्रास	१९.३	८१.०
४०	इन्दौर	मध्यभारत	४२.४४	७५.५०
४१	इलाहाबाद	यू० पी०	२५.२२	८१.५०
४२	उज्जैन	ग्वालियर स्टेट	२३.९	७५.४३

४३	उटकमण्ड	मद्रास	११.२४	७६.४४
४४	उदयपुर	राजस्थान	२४.३५	७३.४३
४५	उरई	यू० पी०	२५ ५१	७९.३०
४६	औरंगाबाद	हैदराबाद	२०.०	७५.३०
४७	कटक	बिहार	२०.५८	८५.५४
४८	कटनी	मी० पी०	२३.४७	८०.२७
४९	काठियावाड	गुजरात	२२.०	७१ ०
५०	कन्नौज	यू० पी०	२७.३	७९ ५८
५१	करनाल	पंजाव	२९ ४२	७७ २
५२	कर्नाटक	दक्षिण भारत	१३.०	७८.०
५३	करौंची	सिन्ध	२४.५१	६७.४
५४	करीमनगर	हैदराबाद	१८.२८	७९.६
५५	करूर	मद्रास	१० ५८	७८.७
५६	करौली	राजपूताना	२६.३०	७७.४
५७	कल्याण	बम्बई	१९ १४	७३.१०
५८	कलकत्ता	बंगाल	२२.३४	८८.२४
५९	कलिंगपट्टम	मद्राम	१८.२०	८४.१०
६०	कसौली	पंजाव	१८ २०	८४.१०
६१	कांगरा	पंजाव	३०.५३	७७.१
६२	काञ्जीवरम्	मद्रास	१२.५०	७९.४५
६३	काथर	विहार	२५.३०	८७.४०
६४	कादिरी	मद्रास	१४.७	७८.१२
६५	कानपुर	यू० पी०	२४.२८	८०.२४
६६	कामबेलपुर	पंजाब	३३.४७	७२.२३
६७	काम्बे	बम्बई	२२.१९	७२.३८
६८	कारकल	मद्रास	१०.३४	७९.४०

६९	कालका	पंजाब	३०.५०	७६.५९
७०	कालाबाघ	,,	३२ ७८	७१.३६
७१	काश्मीर	काश्मीर	३४ ०	७७.०
७२	कावली	मद्रास	१८ १५	८०.३
७३	कालीकट	,,	११.१५	७५.५९
७४	कालेमियर	,,	१० १८	७९.५२
७५	किशनगंज	बिहार	२६ १०	८७.२
७६	किसनगढ़	जैसलमेर	२७ ५३	७०.४७
७७	किसनगढ़	राजस्थान	२६ ३४	७४.५५
७८	कुन्दापुर	मद्रास	१३ ३८	७४ ४४
७९	कुड्प्पा	,,	१४ ३०	७८.४५
८०	कुद्दालोर	मद्रास	११ ३०	७९.४५
८१	कुन्नूर	,,	११.५०	७६.५०
८२	कुमता	बम्बई	१४.२६	७४.२७
८३	कुमिल्ला	बंगाल	२३ २५	९१.१३
८४	कुरनूल	मद्रास	१५ ५०	७८ ५
८५	कुर्ग	दक्षिण भारत	१२.२०	७६.१०
८६	कृष्णराजधाम	मैसूर	१२.२०	७६.३२
८७	केनेनूर	मद्रास	११ ५२	७५ २५
८८	कोकोनाड़ा	मद्रास	१६ ५७	८२.१५
८९	कोचीन	,,	९ ५८	७६.१७
९०	कोटा राज्य	राजस्थान	२५.१०	७५.५२
९१	कोटद्वार	यू० पी०	२९ ४३	७८.३३
९२	कोलार	मैसूर	१३.९	७८.११
९३	कोलूर	मद्रास	१३.५३	७४.५३
९४	कोल्हापुर	बम्बई	१६.४२	७४.१६

९५	कोहिमा	आसाम	२५.३८	९४.१०
९६	क्वामटोर	मद्रास	११.०	७७.०
९७	खण्डवा	सी० पी०	२१.५०	७६.२३
९८	खदरो	बम्बई	२६.९	६८.४७
९९	खनियाधाना	सी० पी०	२५.१	७८.७
१००	खुरजा	यू० पी०	२८.१५	७७.५०
१०१	खुलना	बंगाल	२२.४९	८९.३७
१०२	खेरकी	बम्बई	११ ३३	७३.५४
१०३	खेरलू	बरौदा	२३.५४	७२.४०
१०४	खैरपुर	बम्बई	२७.२८	६८ ४४
१०५	गढवाल	यू० पी०	३०.५५	७९.३८
१०६	गया	विहार	२४.४५	८५.०
१०७	ग्वालियर	ग्वालियर स्टेट	२६.१४	७८.१०
१०८	गाजियाबाद	यू० पी०	२८.४०	७७ २८
१०९	गाजीपुर	,,	२५.३४	८३.३५
११०	गुजरात	गुजरात	२३ ०	७२.३०
१११	गुजरानवाला	पंजाब	३२.१०	७४.१४
११२	गोआ	बम्बई	१५.३०	७३ ५७
११३	गोण्डा	यू० पी०	२७.२८	२२.१
११४	गोरखपुर	,,	२६.४५	८३.२४
११५	गोलका	बंगाल	२३.५०	८९.४६
११६	गोलकुण्डा	हैदराबाद	१७ २३	७८.२७
११७	गोहाटी	आसाम	२६.११	९१.४७
११८	चकराता	यू० पी०	३०.४३	७७.५४
११९	चटगाँव	बगाल	२२.२१	९२.५३
१२०	चतरापुर	मद्रास	१९.२१	८५.३

१२१	चन्द्रनगर	बंगाल	२२.५२	८८.२५
१२२	चाईबासा	विहार	२२ ३३	८५.५१
१२३	चाँदपुर	बंगाल	२३.१२	९०.४०
१२४	चाँदवाड़ी	विहार	२२ ४६	८६ ४८
१२५	चाँदा	सी० पी०	१९.५७	७९ २१
१२६	चाँदोद	बम्बई	२० २०	७४.१९
१२७	चिकमागालूर	मैसूर	१३ १८	७५ ४९
१२८	चिकाकोल	मद्रास	१८.१७	८३ ५७
१२९	चित्तूर	मद्रास	१३.१३	७९ ८
१३०	चित्तौर	राजपूताना	२४.५४	७४.५२
१३१	चिदम्बरम	मद्रास	११.२४	७९ ४४
१३२	चिलास	काश्मीर	३५ २६	७४.१५
१३३	चुनार	यू० पी०	२५.८	८२ ५६
१३४	छपरा	विहार	२५.४७	८४.४७
१३५	छोटानागपुर	विहार	२३.०	८५.०
१३६	जगन्नाथगंज	बंगाल	२४.३९	८९.५०
१३७	जनकपुर	सी० पी०	२३.४३	८१.५०
१३८	जबलपुर	सी० पी०	२३ १०	७९.५९
१३९	जमालपुर	विहार	२५.१९	८६.३२
१४०	जयनगर	विहार	२६.३५	८६.९
१४१	जामपुर (जम्बू)	पंजाब	२९.३९	७०.३८
१४२	जाम्मू	काश्मीर	३२.४४	७५.५४
१४३	जालना	हैदराबाद	१९ ५१	७५ ५६
१४४	जालन्धर	पंजाब	३१.१९	७५.१८
१४५	जालपागोड़ी	बंगाल	२६.३२	८८.४६
१४६	जालियानवाला	पंजाब	३२.४०	७३.३९

१४७	जालौन	यू० पी०	२६ ८	७९.२३
१४८	जूनागढ	काठियावाड़	२१ ३१	७०.३६
१४९	जैकोबाबाद	बम्बई	२८ १०	६८.३९
१५०	जैपुर राज्य	राजस्थान	२६ ५५	८५ ५२
१५१	जेसलमेर राज्य	राजस्थान	२६ ५५	७० ५७
१५२	जैसूर	बगाल	२३ १०	८९.१०
१५३	जोधपुर राज्य	राजस्थान	२६ १८	७३.४
१५४	जौनपुर	यू० पी०	२५.४६	८२.४४
१५५	झालरापाटन	राजपूताना	२४.३२	७६ १२
१५६	झाँसी	यू० पी०	२५.२७	७८ ३७
१५७	टाटानगर	विहार	२२.५०	८६.१०
१५८	टौक राज्य	राजस्थान	२६ ११	७५ ५०
१५९	ट्रावकौर	ट्रावंकोर स्टेट	९ ०	७७.०
१६०	डलहौजी	पजाब	३२ ३२	७६ ०
१६१	डालटेनगंज	विहार	२४.२	८४.१०
१६२	डिबरूगढ	ग्रामाम	२७ २९	९४.५८
१६३	डीमापुर	ग्रासाम	२५ ५१	९३ ४८
१६४	डेराइस्माइलखाँ	पंजाब	३१ ४९	७०.५२
१६५	डेरागजीखाँ	पजाब	३०.५	७०.५२
१६६	ढाका	बगाल	२३.४३	९०.२६
१६७	तिरुपती	मद्रास	१३.४०	७९.२०
१६८	त्रिचनापल्ली	मद्रास	१०.५०	७८.४६
१६९	तेंजौर	मद्रास	१० ४७	७९.१०
१७०	दरभगा	विहार	२६.१०	८५.५७
१७१	दानापुर	विहार	२५.५८	८५.५
१७२	दार्जिलिंग	बंगाल	२७ ३	८८ १८

१७३	दिनासपुर	बगाल	२५ ३७	८८.४०
१७४	दिल्ली	दिल्ली	२८.३८	७७.१२
१७५	दुमका	विहार	२४ ३०	८७ २०
१७६	दुमदुम	गाल	२२ ३८	८८ २८
१७७	देमन	बम्बई	२२ २५	७२.५३
१७८	देवघर	विहार	२४.३०	८६.४५
१७९	देहरादून	यू० पी०	३०.२०	७८.५
१८०	दौलताबाद	हैदराबाद	१९.५७	७५.१५
१८१	धारनपुर	बम्बई	२० ३२	७३.१३
१८२	धारवाड़	बम्बई	१५ २७	७५.५
१८३	धूलिया	बम्बई	२० ५८	७४.४७
१८४	धूबड़ी	आसाम	२६ २	९०.०
१८५	धौलपुर राज्य	राजस्थान	२६.४२	७७.५३
१८६	नागपुर	सी० पी०	२१.१	७९.९
१८७	नारसिंहपुर	सी० पी०	२२.५७	७९.१५
१८८	नारायणगंज	बगाल	२३.२७	९० ३२
१८९	नासिक	बम्बई	२०.२	७३.५०
१९०	नीमच	ग्वालियर	२४ २७	७४.५२
१९१	नेलौर	मद्रास	१४ २७	८२.२
१९२	नैनीताल	यू० पी०	२९ २३	७९ ३०
१९३	पटना	विहार	२५ ३७	८५.१३
१९४	पटियाला	पंजाब	३० २०	७६.२५
१९५	पलामू	विहार	२३ ५२	८४.१७
१९६	पाटन	बड़ौदा	२३ ५२	७२.१०
१९७	पालघाट	मद्रास	१०.४६	७६.४२
१९८	पाण्डुचेरी	मद्रास	११.५६	७९.५३

१९९	पानीपत	पंजाब	२९.२३	७७.१
२००	पीलीभीत	यू० पी०	२८.३८	७९.५१
२०१	पुर्लिया	विहार	२३.२०	८५ २५
२०२	पुरी	यू० पी०	३०.९	७८ ४९
२०३	पुरी	विहार	१९ ४८	८५.५२
२०४	पुडुकोट्टे	मद्रास	१०.२३	७८ ५२
२०५	पूर्णिया	विहार	२५.४९	८७.३१
२०६	पूना	बम्बई	१९ ०	७२ ५५
२०७	पेशावर	सीमाप्रान्त	३४ १५	७६.२५
२०८	प्रतापगढ	राजपूताना	२४.२	७४.४०
२०९	फतेहगढ़	यू० पी०	२७.२३	७९.४०
२१०	फतेहपुर	राजपूताना	२८ ०	७५ २
२११	फतेहपुर सीकरी	यू० पी०	२७.६	७७.४२
२१२	फरीदकोट	पंजाब	३०.४०	७४.५७
२१३	फरीदपुर	बगाल	२३.३६	८९.५३
२१४	फरुखाबाद	यू० पी०	२७.२४	७९.३७
२१५	फलटन	बम्बई	१८.०	७४ २९
२१६	फिरोजपुर	पजाब	३०.५५	७४.४०
२१७	फैजाबाद	यू० पी०	२६.४७	८२.१२
२१८	बक्सर	विहार	२५.३४	८४.१
२१९	बखसार	राजपूताना	२४.४३	७१.९
२२०	बघेलखण्ड	सी० पी०	२४.१०	८२.०
२२१	बड़ौच	बम्बई	२१.४५	७३.०
२२२	बडौदा	बम्बई	२२.०	७३.३०
२२३	बद्रीनाथ	यू० पी०	३०.४४	७९.३२
२२४	बनारस	यू० पी०	२५.१५	८३.०

२२५	बम्बई	बम्बई	१८.५५	७२.५४
२२६	बर्द्धमान	बंगाल	२३ १६	८७.५४
२२७	बर्धा	सी० पी०	२४.४५	७८.३९
२२८	बरहमपुर	बंगाल	२४ ५	८८ १०
२२९	बरहमपुर	मद्रास	१९.१८	८४.४८
२३०	बरार	सी० पी०	२१ ०	७७.०
२३१	बरौदा	सी० पी०	२२.१४	७९.२
२३२	बरेली	यू० पी०	२८.१५	७९ ३०
२३३	बलिया	यू० पी०	२४.४४	८४.११
२३४	बलैरी	मद्रास	१५ ४५	७४.३०
२३५	बस्तर	सी० पी०	१९.०	८१.०
२३६	बस्ती	यू० पी०	२६.४८	८२.४६
२३७	बहराइच	यू० पी०	२७.३४	८१.३८
२३८	बाकरगंज	बंगाल	२२.२९	९० १८
२३९	बारकपुर	बंगाल	२२.४६	८८.२४
२४०	बारपेट	आसाम	२६.२०	९१.३
२४१	बारसी	बम्बई	१८ १३	७५.४४
२४२	बारौनी	सी० पी०	२२.३	७४.२७
२४३	बालसोर	बिहार	२१.३०	८६.५४
२४४	बालोचा	राजपूताना	२५.४९	७२.२१
२४५	बासवा	मद्रास	१८.५३	८४.३८
२४६	बासिईम	बरार	२०.५	७७.१०
२४७	बिमलीपट्टम	मद्रास	१७.५३	८३.३०
२४८	बिलासपुर	सी० पी०	२२.५	८२.१३
२४९	बिलोचिस्तान	सीमाप्रान्त	२८.०	६५.०
२५०	बीकानेर	राजस्थान	२१.४३	७३.२

२५१	बीजापुर	बम्बई	१६.५०	७५.४७
२५२	बुकुर	बम्बई	२७.४०	६८.५६
२५३	बुन्देलखण्ड	सी० पी०	२४ ८०	८० ०
२५४	बुरहानपुर	सी० पी०	२१.१७	७६ १६
२५५	बुलसार	बम्बई	२० ३६	७२ ५९
२५६	बून्दी	राजस्थान	२५.२७	७५ ४१
२५७	बेतिया	विहार	२६.४८	८४.३३
२५८	बेरहमपुर	बंगाल	२४.६	८८.१९
२५९	बेल्लरे	मद्रास	१५.९	७६ ५५
२६०	बेलगाँव	बम्बई	१५.४५	७४.३०
२६१	बेंगलोरु	मैसूर	१२.१८	७७.३८
२६२	बोगरा	बंगाल	२४.५१	८८ २६
२६३	बौनीगढ	विहार	२१.४५	८५ ०
२६४	बौब्बली	मद्रास	१८ ३४	८३.४५
२६५	भटिण्डा	पंजाब	३०.११	७५.०
२६६	भण्डारा	सी० पी०	२१ ९	७८.४२
२६७	भदौरा	सी० पी०	२४ ४८	७० २६
२६८	भरतपुर राज्य	राजस्थान	२७.१५	७७ ३०
२६९	भागलपुर	विहार	२५.१५	८७ २
२७०	भावनगर	बम्बई	२१.४५	७२.११
२७१	भुसावल	बम्बई	२१.२	७५.४७
२७२	भेलसा	ग्वालियर स्टेट	२३.३२	७७.५१
२७३	भोपाल	भोपाल स्टेट	२३.१६	७७.३६
२७४	मऊ	यू० पी०	२५.१५	७९.११
२७५	मछलीपट्टम्	मद्रास	१६.१	८१.१२
२७६	मथुरा	यू० पी०	२७.३०	७७.४४

२७७	मदारीपुर	बंगाल	२३ १४	९०.१५
२७८	मद्रास	मद्रास	१३.४	८०.१७
२७९	मदुरा	मद्रास	९ ५४	७८ १०
२८०	मधुपुर	विहार	२४.१८	८६.३७
२८१	मधुबनी	विहार	२६ २१	८६ ७
२८२	मनीपुरी	आसाम	२५ ०	८५ ३०
२८३	महाबलेश्वर	बम्बई	१७ ५९	७३.४३
२८४	महोबा	यू० पी०	२५ १८	७९ ५५
२८५	माणिकपुर	यू० पी०	२५ ४	८१.८
२८६	मालिकपुर	बरार	२०.५३	७६ १७
२८७	मालवा	मध्यभारत	२३.४०	७५.३०
२८८	मिर्जापुर	यू० पी०	२५ ७	८२.२
२८९	मुकामा	विहार	२५ २४	८५.५५
२९०	मुगलपुरा	पंजाब	३१ ३१	७४ २४
२९१	मुंगेर	विहार	२५.२३	८६.३०
२९२	मुजफ्फरगढ	पजाब	३०.५	७१ १४
२९३	मुजफ्फरनगर	यू० पी०	२० २८	७७.४४
२९४	मुजफ्फरपुर	विहार	२६ ७	८५ ३७
२९५	मुर्शिदाबाद	बंगाल	२४ ११	८८.१९
२९६	मुरादाबाद	यू० पी०	२८.५१	७८.४९
२९७	मुरार	ग्वालियर	२६.१३	७८.११
२९८	मुलतान	पजाब	३०.१२	७१ ३१
२९९	मेदनीपुर	बंगाल	२२ २५	८७.२१
३००	मेरठ	यू० पी०	२९.१	७७.४५
३०१	मेगलूर	मद्रास	१२.५२	७४.५३
३०२	मैनपुरी	यू० पी०	२७ १४	७९.३

३०३	मैसूरु	मैसूरु	१२.१८	७६.४२
३०४	मोतिहारी	बिहार	२६.४०	८४.५७
३०५	रतलाम	मध्यभारत	२३.३१	७५.७
३०६	राजकोट	बम्बई	२२.१८	७०.५६
३०७	राजनादगाँव	सी० पी०	२१ ५	८१.५
३०८	रानीगंज	बंगाल	२३.३६	८७.९
३०९	रामपुर	यू० पी०	२८.४८	७९.५
३१०	रायगढ	सी० पी०	२१ ५४	८३.२६
३११	रायपुर	सी० पी०	२१.१५	८१.४१
३१२	रायबरेली	यू० पी०	२६.१४	८१.१६
३१३	रावलपिण्डी	पंजाब	३३.३७	७३ ६
३१४	राँची	बिहार	२३.२३	८५ २३
३१५	रुड़की	यू० पी०	२९.५२	७७.५३
३१६	रुहेलखण्ड	यू० पी०	२८.३०	७९.०
३१७	लखनऊ	यू० पी०	२६.५५	८०.५९
३१८	ललितपुर	सी० पी०	२४.२२	७८ २८
३१९	लश्कर	ग्वालियर	२६.१०	७८ १०
३२०	लारकन	बम्बई	२७.३३	६८.१५
३२१	लाहौर	पंजाब	३१.२७	७४.२६
३२२	लुधियाना	पंजाब	३०.५५	७५.५४
३२३	लोदराना	पंजाब	२९.३२	७१.४७
३२४	विजगापट्टम्	मद्रास	१७.४२	८३.२०
३२५	विजयनगरम्	मद्रास	१५.२०	७६.३०
३२६	ब्यावर	मारवाड़	२६.६	७४.२१
३२७	शाहजहाँपुर	यू० पी०	०७.५४	७९ २७
३२८	शिमला	पजाब	३१ ६	७७ १३

३२९	शिवपुरी	ग्वालियर	२५.४०	७७.४४
३३०	श्रीनगर	काश्मीर	३४ ६	७४.५१
३३१	सतारा	बम्बई	१७ ४१	७४.१
३३२	ससराम	विहार	२४.७७	८४.३
३३३	सहारनपुर	यू० पी०	२९ ५८	७७.२३
३३४	सागर	सी० पी०	२३.७०	७८.५०
३३५	सांगली	बम्बई	१६ ५२	७४.३६
३३६	स्यालकोट	पजाब	३२.३१	७४.३६
३३७	सिरोही	राजस्थान	२४.५३	७२.५४
३३८	सिलहट	आसाम	२४.५३	९१.५४
३३९	सिलीगुड़ी	बगाल	२६.४२	८८ २५
३४०	सिवान	यू० पी०	२६ २	८४.७
३४१	सिवनी	सी० पी०	२२ ६	७९ २५
३४२	सीतापुर	यू० पी०	२७ ३२	८० ४३
३४३	सीतामढी	विहार	२६.३५	८५.३२
३४४	सुन्दरवन	बगाल	२२.०	८९.०
३४५	सुलतानपुर	यू० पी०	२६ १६	८२.७
३४६	सूरत	बम्बई	२१ १२	७२.५२
३४७	सोमनाथ	बम्बई	२१.४	७०.२६
३४८	शोलापुर	,,	१७.४०	७५.५६
३४९	हुब्बली	बम्बई	१५.२०	७२ १२
३५०	हैदराबाद	दक्षिण भारत	१७.२०	७८.३०
३५१	होशंगाबाद	सी० पी०	२२.४६	७०.४५

नोट—यहाँ २२.६ का अर्थ २२ अंश ६ कला तथा ७९.२५ का अर्थ ७९ अंश २५ कला है। अर्थात् जो नगरोंके अक्षांश और रेखांशोंके अंक दिये गये है, वे अंश और कला है।

वेलान्तर सारणी

	जनवरी मि०	फरवरी मि०	मार्च मि०	अप्रैल मि०	मई मि०	जून मि०	जुलाई मि०	अगस्त मि०	सितंबर मि०	अक्तूबर मि०	नवम्बर मि०	दिसंबर मि०
१	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
२	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
३	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
४	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
५	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
६	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
७	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
८	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
९	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
१०	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
११	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
१२	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
१३	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
१४	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
१५	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
१६	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
१७	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
१८	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
१९	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
२०	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
२१	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
२२	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
२३	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
२४	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
२५	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
२६	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
२७	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
२८	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
२९	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
३०	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+
३१	—	—	—	+	+	—	—	—	+	+	+	+

जनवरी
फरवरी
मार्च
अप्रैल
मई
जून
जुलाई
अगस्त
सितंबर
अक्टूबर
नवम्बर
दिसंबर

इष्टकाल बनानेके नियम—स्थानीय सूर्योदय, सूर्यास्त और दिनमान बनानेके पश्चात् जन्म समयको स्थानीय धूपघडीके अनुसार बना लेना चाहिये। अनन्तर निम्न चार नियमोमेसे जहाँ जिसका उपयोग हो, उसके अनुसार घटयादि रूप इष्टकाल निकाल लेना चाहिये—

१—सूर्योदयसे लेकर १२ बजे दिनके भीतरका जन्म हो तो जन्म समय और सूर्योदयकालका अन्तर कर शषको ढाई गुना ($२\frac{१}{२}$) करनेसे घटयादि इष्टकाल होता है। जैसे मान लिया कि आरा नगरमे वि० स० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको प्रात काल ८ बजकर १५ मिनट पर किसीका जन्म हुआ है। पहले इस स्टैण्डर्ड टायमको स्थानीय समय बनाना है। अतः आराके रेखाश और स्टैण्डर्ड टायमके रेखाशका अन्तर कर लिया तो—(८४।४०)—(८२।३०)=(२+१०) इसे ४ मिनटसे गुणा किया तो—८ मिनट ४० सैकण्ड आया। स्टैण्डर्ड टायमके रेखाशसे आराका रेखांश अधिक है, इसलिये इस फलको स्टैण्डर्ड टायममें जोड़ा—

८।१५।१०
८।४०

८।२३।४० देशान्तर सस्कृत समय

२४ अप्रैलको वेलान्तर सारणीमे दो मिनट धन सस्कार लिखा है, अतः उसे जोड़ा तो—(८।२३।४०) (०।२।०)=८।२५।४० आराका समय हुआ; यही बालकका जन्म समय माना जायगा। उपर्युक्त नियमके अनुसार इष्टकाल बनानेके लिये आराका सूर्योदय इस जन्म दिनका निकालना है; पहले उदाहरणमे इस दिनका सूर्योदय ५।३४।४८ बजे आया है। अतएव—

८।२५।४० जन्म समयमें से
५।३४।४८ सूर्योदयको घटाया

२।५०।५२—इसे ढाई गुना किया—(२।५०।५२)×$\frac{५}{२}$=७।७।१० घटयादि इष्टकाल हुआ।

२--यदि १२ बजे दिनमें सूर्यास्तके अन्दरका जन्म हो तो जन्म समय और सूर्यास्तकालका अन्तर कर शेषको ढाई गुना कर दिनमानमेंसे घटानेपर इष्टकाल होता है। उदाहरण--वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको २ बजकर २५ मिनटपर आरामें जन्म हुआ है। समय शुद्ध करनेके लिये देशान्तर और वेलान्तर दोनों संस्कार किये--
(२।२५)+(०।८।४० देशान्तर)+(०।२।० वेलान्तर)=२।३५।४० आराका जन्म समय। सूर्यास्त पहले उदाहरणमें ६।२५।१२ और दिनमान ३२ घटी ६ पल निकाला गया है अत. ६।२५।१२ सूर्यास्तमेंसे

२।३५।४० जन्म समयको घटाया

३।४९।३२ इसे ढाई गुना किया

(३।४९।३२)×$\frac{५}{२}$=९।३३।५० फल आया, इसे दिनमानमेंसे घटाया--

३२।६ दिनमानमेंसे

९।३३।५० को घटाया

२२।३२।१० इष्टकाल हुआ।

३--सूर्यास्तसे १२ बजे रात्रिके भीतरका जन्म हो तो जन्म समय और सूर्यास्त कालका अन्तर कर शेषको ढाई ($२\frac{१}{२}$) गुना कर दिनमानमें जोड़ देनेसे इष्टकाल होता है। उदाहरण--वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको रातके १० बजकर ४५ मिनट पर जन्म आरा नगरमें किसी बच्चेका हुआ है। पूर्ववत् यहाँपर भी देशान्तर और वेलान्तर संस्कार किये--(१०।४५)+(०।८।४०)+(०।२।०)=१०।५५।४०
जन्म समय--१०।५५।४० जन्म समयमेंसे

६।२५।१२ सूर्यास्तकालको घटाया

४।३०।२८ इसे ढाई गुना किया--(४।३०।२८)×$\frac{५}{२}$

११।१६।१० फल आया; इसे दिनमानमें जोड़ा--- ३२।६।० दिनमान

११।१६।१० फल

इष्टकाल घटयादि हुआ। ४३।२२।१०

४--यदि रातके १२ बजेके पश्चात् और सूर्योदयके पहलेका जन्म हो तो सूर्योदयकाल और जन्म समयका अन्तर कर शेषको ढाई ($२\frac{१}{२}$) गुनाकर ६० घटीमे से घटाने पर इष्टकाल होता है। उदाहरण--वि०स० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको रातके ४ बजकर १५ मिनट पर जन्म हुआ है। अतएव (४।१५।०)+(०।८।४० देशान्तर)+(०।२।० वेलान्तर)=४।२५।४० सस्कृत जन्म समय हुआ।

५।३४।४८ सूर्योदयमेसे

४।२५।४० जन्म समयको घटाया

१। ९।८ (१।९।८)×$\frac{५}{२}$=२।५२।५० फल ;

६०। ०। ० मेसे घटाया

२।५२।५०

५७। ७।१० इष्टकाल हुआ।

५--सूर्योदयसे लेकर जन्म समय तक जितने घटा, मिनट और सैकण्ड हो उन्हे ढाई गुना कर देने से घटयादि इष्टकाल होता है। उदाहरण--वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको दिनके ४ बजकर १५ मिनटपर आरामें जन्म हुआ है। अतएव--

(४।१५।०)+(०।८।४० देशान्तर)+(०।२।० वेलान्तर)=४।२५।४० जन्म समय। सूर्योदय ५।३४।४८ पर होता है, इसलिये गणना करने पर सूर्योदयसे लेकर जन्म समय तक १० घटे ५० मिनट ५२ सैकण्ड हुए। इनको ढाई गुना किया--(१०।५०।५२)×$\frac{५}{२}$=२७।७।१० घटयादि इष्टकाल हुआ।

भयात और भभोग साधन

यदि पञ्चाङ्ग अपने यहाँका नही हो तो पञ्चाङ्गके तिथि, नक्षत्र योग और करणके घटी, पलोंमें देशान्तर संस्कार करके अपने स्थान--जहाँकी जन्मपत्री बनानी हो, वहाँके नक्षत्रादिका मान निकाल लेना चाहिये।

यदि इष्टकालसे जन्मनक्षत्रके घटी, पल कम हो तो जन्मनक्षत्र गत और आगामी नक्षत्र जन्मनक्षत्र कहलाता है तथा जन्मनक्षत्रके घटी, पल इष्टकालके घटी, पलोसे अधिक हों तो जन्मनक्षत्रसे पहलेका नक्षत्र गत और वर्तमान नक्षत्र जन्मनक्षत्र कहलाता है। गत नक्षत्रके घटी, पलोको ६०मेसे घटानेपर जो शेष आवे उसे दो जगह रखना चाहिए। एक स्थानपर इष्टकालको जोड़ देनेसे भयात और दूसरे स्थानपर जन्म-नक्षत्र जोड़ देनेपर भभोग होता है।

उदाहरण—वि०स० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीयाको आरामें दिनके २ बजकर २५ मिनटपर किसी तच्चेका जन्म हुआ है। इस समयका पूर्व नियमके अनुसार इष्टकाल २२।३२।१० है। इस दिन भरणी नक्षत्रका मान बनारसके विश्वपञ्चाङ्गमे ६।२७ लिखा है। पहले इस नक्षत्र-मानको आराका बना लेना है।

८४।४० आरा रेखाशमे से
८३। ० बनारसका रेखाश घटाया

१।४० इसे ४ मिनटसे गुणा किया अर्थात् अंशोको गुणा करनेपर मिनट और कलाओको गुणा करनेपर सैकण्ड होते है। (१।४०)×४=६।४० यह मिनटादि है, इसे घटयादि बनानेकी विधि यह है कि मिनटोंको २½से गुणा करनेपर पल और सैकण्डोंको २½से गुणा करनेपर विपल होते है। अतएव—(६।४०)×½=१६।४० पलादिमान। यह बनारससे आराका देशान्तर संस्कार धनात्मक हुआ। क्योंकि बनारसके रेखाश से आराका रेखाश अधिक है। इस संस्कार द्वारा तिथि, नक्षत्र, योग आदिका मान आरामे निकाला जायगा—

६।२७।० बनारस मे भरणीका प्रमाण
१६।४० देशान्तर सस्कार
६।४३।४० भरणी नक्षत्र आरामे हुआ।

प्रस्तुत उदाहरणमें इष्टकाल २२।३२।१० है, इसके घटी, पल जन्म-

नक्षत्र भरणीके घटी, पलोंसे अधिक है, अतएव भरणी गत नक्षत्र और कृत्तिका जन्मनक्षत्र माना जायगा।

६०। ०। ० मेरु	५।११।० बनारसमें कृत्तिकाका मान
६।४३।४० भरणीके मानको घटाया।	१६।४० देशान्तर
५३।१६।२०—इसे दो स्थानोंमें रखा।	५।२७।५० आरामें कृत्तिका नक्षत्रका मान

५३।१६।२० मे	५३।१६।२० मे
२२।३२।१० इष्टकाल जोड़ा	५।२७।४० जन्मनक्षत्र कृत्तिका जोड़ा
१५।४८।३० भयात	५८।४४। ० भभोग[1]

लग्न निकालनेकी प्रक्रिया

जन्म समयमें क्रान्तिवृत्तका जो प्रदेश—स्थान क्षितिजवृत्तमें लगता है, वही लग्न कहलाता है। दूसरे शब्दोंमें यह भी कहा जा सकता है कि दिनका उतना अंश जितनेमें किसी एक राशिका उदय होता है, लग्न कहलाता है। अहोरात्रमें बारह राशियोंका उदय होता है, इसलिये एक दिन-रातमें बारह लग्नोंकी कल्पना की गई है। 'फलदीपिका'में 'राशिनामुदयो लग्नं' अर्थात् एक राशिके उदयकालको लग्न बतलाया है। लग्न साधनके लिये अपने स्थानका उदयमान जानना आवश्यक है। अतः चरखण्डाओंका साधन निम्न प्रकार करना चाहिये।

सायन मेष संक्रान्ति या सायन तुला संक्रान्तिके दिन मध्यान्हकालमें १२ अंगुल शंकुकी छाया जितनी हो, उतना ही अपने स्थानकी पलभाका प्रमाण समझना चाहिये। इस पलभाको तीन स्थानोंमें रखकर प्रथम

---

[1] **भभोगका मान ६७ घटी तक हो सकता है। ६७ घटीसे अधिक होनेपर ही इसमें ६०का भाग देना चाहिये। भयात सदा भभोगसे कम आता है।**

स्थानमें १० से, दूसरेमें ८ से और तीसरे स्थानमें $\frac{१०}{३}$ से गुणा करनेपर तीन राशियोंके चरखण्ड होते हैं। इनको मेषादि तीन राशियोंमें ऋण, कर्कादि तीन राशियोंमें धन, तुलादि तीन राशियोंमे धन एव मकरादि तीन राशियोंमें ऋण करनेसे उदयमान आता है।

आराकी पलभा ५ अंगुल ४३ प्रत्यंगुल है। इसे तीन स्थानोंमें रखकर क्रिया की तो—

$(५।४३)\times १०=५७।१०$

$(५।४३)\times ८=४५।४४$

$(५।४३)\times \frac{१०}{३}=१९।३$

इन चरखण्डोंका बेधोपलब्ध पलात्मक राशि-मानमें संस्कार किया तो आराका उदयमान आया—

मेष	२७९—५७।१०	=	२२१।५०	=	मीन
वृष	२९९—४५।४४	=	२५३।१६	=	कुम्भ
मिथुन	३२२—१९।३	=	३०२।५७	=	मकर
कर्क	३२२+१९।३	=	३४१।३	=	धनु
सिह	२९९+४५।४४	=	३४४।४४	=	वृश्चिक
कन्या	२७९+५७।१०	=	३३६।१०	=	तुला

प्रत्येक नगरकी पलभा अपने स्थानके अक्षाशोंपरसे आगे दी गई सारणी परसे ज्ञात की जा सकती है।

पलभा ज्ञान सारणी

अक्षाश	पलभा (अंगुलात्मक)	अक्षाश	पलभा (अंगुलात्मक)
५	१। ३। ०	९	१।५४। ०
६	१।१५। ०	१०	२। ६।५४
७	१।२८।२३	११	२।१९।५५
८	१।४१।१०	१२	२।३३।०

१३	२।४६।१२	२६	५।५१। ७
१४	२।५९।२८	२७	६। ६।५०
१५	३।१२।५४	२८	६।२२।४८
१६	३।२६।२४	२९	६।३९। ४
१७	३।४०। ५	३०	६।५५।४१
१८	३।५३।५६	३१	७।१२।३६
१९	४। ७।५५	३२	७।२९।५३
२०	४।२२। १	३३	७।४७।३१
२१	४।३६।२०	३४	८। ५।३८
२२	४।५०।५२	३५	८।२४। ७
२३	५। ५।३८	३६	८।४३। ५
२४	५।२०।३१	३७	९। २।३५
२५	५।३५।४२	३८	९।२२।३०

उदाहरण—आराका अक्षांश २५।३० है, पलभा सारणीमे २५ अक्षांश-की पलभा ५।३५।४२ लिखी है। ३० कलाकी पलभा निकालनेके लिए २५ अंश और २६ अंशके पलभा कोष्ठकोंका अन्तर कर अनुपात द्वारा ३० कलाकी पलभा निकालकर २५ अक्षांशकी पलभामें जोड़ देनेसे आराकी पलभा आ जायगी।

५।५१। ७—२६ अंशकी पलभामेसे

५।३५।४२—२५ अंशकी पलभाको घटाया

१५।२५—एक अंश अर्थात् ६० कलाकी पलभा हुई, इसे ३०से गुणा कर ६०का भाग देनेपर ३० कलाकी पलभा आ जायगी।

१५।२५ × ३०=४५०।७५०÷६०=७।४२

५।३५।४२—२५ अंशकी पलभामें

७।४२—३० कलाकी पलभा जोड़ी

५।४३।२४ आराकी पलभा हुई।

अब जिस समयका लग्न बनाना हो उस समयके स्पष्ट सूर्यमे तात्कालिक स्पष्ट अयनांश जोड़ देनेसे तात्कालिक सायन सूर्य होता है। इस तात्कालिक सायन सूर्यके भुक्त या भोग्य अंशादिको स्वदेशीय उदयमानसे गुणा करके ३०का भाग देनेपर लब्ध पलादि भुक्त या भोग्यकाल होता है—भुक्तांशको स्वोदयसे गुणा कर ३०का भाग देनेपर भुक्तकाल और भोग्यांशको स्वोदयसे गुणाकर ३०का भाग देनेपर भोग्यकाल आता है। इस भुक्त या भोग्यकालको इष्ट घटी, पलोमे घटानेसे जो शेष रहे उसमे भुक्त या भोग्य राशियोके उदयमानोंको जहाँतक घटा सकें, घटाना चाहिये। शेषको-३०से गुणाकर अशुद्धोदय मान—जो राशि घटी नही है उसके उदयमानसे भाग देनेपर जो अंशादि लब्ध आयें, उनको क्रमसे अशुद्ध[1] राशिमे घटाने और शुद्ध राशिमें जोड़नेसे सायन स्पष्ट लग्न होता है। इसमेंसे अयनांश घटानेपर स्पष्टलग्न आता है।

सूर्य स्पष्ट प्रायः पञ्चाङ्गोमे प्रतिदिनका दिया रहता है। यद्यपि यह सूर्य स्पष्ट जन्म समयके इष्टकालका नही होता है, लेकिन लग्न बनानेका काम साधारणतया इससे चलाया जा सकता है। यहाँ सिर्फ विचार इतना ही करना है कि यदि दिनका जन्म हो तो पहले दिनका सूर्य स्पष्ट और रातका जन्म हो तो उसी दिनका सूर्य स्पष्ट काममे लाना चाहिये। इस सूर्य स्पष्टमें अयनाश जोड़कर सायन सूर्य बना लेना चाहिये, तब पूर्वोक्त नियमानुसार क्रिया करनी चाहिये।

उदाहरण—वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला द्वितीया सोमवारको आरामे २३ घटी २२ पल इष्टकालपर किसी बालकका जन्म हुआ है। इस इष्टकालका लग्न निकालनेके लिये इस दिनका सूर्य स्पष्ट ०।१०।२८।५७ लिया। इसमें अयनांश अर्थात्—

---

[1]**जो राशि घट न सके उसे अशुद्ध और जिस राशि तकके उदयमान इष्टकालके पलोंमें घट जायँ वह शुद्ध राशि कहलाती है।**

२३ अंश ४६ कला जोड़ा तो--

०।१०।२८।५७ सूर्य स्पष्ट

२३।४६। ० अयनांश

१।४।१४।५७ सायन सूर्य

यहाँ वृषराशिके सूर्यका भुक्तांश ४।१४।५७ है और भोग्यांश--

=१।०।०।०--एक राशिमेंसे

०।४।१४।५७--भुक्तांश घटाया

२५।४५। ३ भोग्यांश

वृष राशिका भोग्यांश होनेसे, आराके वृषराशिके उदयमानसे गुणा किया--

२५।४५।३×२५४=६५४०।४२।४२ इस संख्याकी प्रथम अंक राशिमें ३०से भाग दिया तो २१८।०।४२।४२। यहाँ पहली अंकराशि पल है, आगेवाली राशियाँ विपलादि हैं। गणित क्रियामें केवल पलोंका उपयोग होता है, इसलिये और राशियोंका त्याग कर दिया तो--२१८ ही राशि रह गई।

इष्टकाल २३।२२के पल बनाये--×६०

१३८०
२२
१४०२ पल हुए, इनमेंसे
२१८ भोग्य पल घटाये
११८४
३०३ मिथुन
८८१
३४१ कर्क
५४०

यहाँ वृषराशिके उदयमानसे गुणाकर फल निकाला गया था, अतः उससे आगेवाली राशियोंके उदयमान घटाये हैं।

५४०
३४४ सिह { यहाँ सिहतक राशियोके उदयमान इष्टकालके पलोमेसे घट गये है, अतः सिंह शुद्ध और कन्या अशुद्ध कहलायेगी।
१९६

१९६×३०=५८८०, इसमे अशुद्ध राशिके उदयमानसे भाग दिया— ३३६)५८८०(१७ अश

३३६ { सिह राशि घट गई थी, अतएव लग्नके राशि स्थानमें ५ माना जायगा।
२५२०
२३५२

१६८×६०=

३३६)१००८०(३० कला

१००८

०

५।१७।३०।० सायन लग्नमेसे
२३।४६।० अयनांश घटाया
४।२३।४४।० यह स्पष्ट लग्न है

अयनांश निकालनेकी विधि

अयनांश निकालनेकी कई विधियाँ प्रचलित है। वर्तमानमें साधारणतया ज्योतिर्विद ग्रहलाघव, मकरन्द और सूर्यसिद्धान्त इन तीन ग्रन्थोंके आधारपरसे निकालते है। किन्तु मुझे ग्रहलाघव द्वारा निकाला गया अयनांश ठीक जँचता है। वेध क्रिया द्वारा भी लगभग इतना ही अयनांश आता है। ग्रहलाघवकी विधि निम्न प्रकार है—

इष्ट शक वर्ष, जो पञ्चाङ्गमे लिखा रहता है, उसमेंसे ४४४ घटाकर शेषमें ६०का भाग देनेसे अयनांश होता है।

उदाहरण—शक सं० १८६६—४४४=१४२६÷६०=२३।४६

मकरन्द-विधि—इष्ट शक वर्षमेंसे ४२१ घटाकर शेषको दो स्थानोंमें रखे; एक स्थानमें १०से भाग देकर लब्धिको द्वितीय स्थानमेंसे घटावे।

जो शेष आवे उसमे ६० का भाग देनेसे अयनाश आता है।

उदाहरण—शक सं० १८६६—४२१=१४४५,

१४४५÷१०=१४४।३०

१४४५। ० मेसे

१४४।३० को घटाया

१३००।३० शेष रहा,

१३००।३०÷६०=२१।४०

२१।४० अयनाश हुआ।

लग्न निकालनेकी सुगम विधि—सारणी द्वारा जिस दिनका लग्न बनाना हो, उस दिनके सूर्यके राशि और अंश पञ्चाङ्गमे देखकर लिख लेने चाहिये। आगे दी गई लग्न सारणीमे राशिका कोष्ठक बाई ओर और अंशका कोष्ठक ऊपरी भागमें है। सूर्यके जो राशि, अंश लिखे है उनका फल लग्न सारणीमें अर्थात् सूर्यकी राशिके सामने और अंशके नीचे जो अंक संख्या मिले उसे इष्टकालके घटी, पलोमे जोड़ दे; वही योग या उसके लगभग जिस कोष्ठकमे मिले, उसके बाई ओर राशिका अंक और ऊपर अशका अक होगा, यही राश्यादि लग्न मान होगा। त्रैराशिक द्वारा कला विकलाका प्रमाण भी निकाल लेना चाहिये।

उदाहरण—वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला २ सोमवारको २३ घटी २२ पल इष्टकालका लग्न बनाना है। इस दिन पञ्चाङ्गमे सूर्य ०।१०।२८।५७ लिखा है। इसको एक स्थान पर लिख लिया। लग्न सारणीमें शून्य राशि अर्थात् मेष राशिके सामने और १० अंशके नीचे ४।७।४२ संख्या लिखी है, इसे इष्टकालमें जोड़ा—

२३।२२।० इष्टकालमें

४।७।४२ फलको जोड़ा

२७।२९।४२

इस योगको पुनः लग्न सारणीमें देखा पर २७।२९।४२तो कहीं

नही मिले; किन्तु सिंह राशिके २३ वें अंशके कोष्ठकमें २७।२४।५९ संख्या मिली। इसी राशिके २४वें अंशके कोष्ठकमें २७।३६।६ अंक संख्या है; यह अंक संख्या अभीष्ट योगकी अंक संख्यासे अधिक है, अतः २३ अंश सिंहराशिके ग्रहण करना चाहिये। अतएव लग्नका मान ४।२३ राश्यादि हुआ। कला, विकला निकालनेके लिये २३ वें और २४ वें कोष्ठकके अंकोंका एवं पूर्वोक्त योगफल और २३वें अंशके कोष्ठकके अंकोंका अन्तर कर लेना चाहिये। द्वितीय अन्तरकी संख्याको ६०से गुणाकर गुणनफलमें प्रथम अन्तर-संख्याका भाग देनेपर कलाएँ आयेंगी; शेषको पुनः ६०से गुणाकर उसी संख्याका भाग देनेसे विकला आयेंगी। प्रस्तुत उदाहरणमें—

२७।३६।६—२४ अंशके को०मेंसे
२७।२४।५९—२३ अंशके को०को घटाया
११।७ इसे एक जातीय किया

११।७×६०=
६६०+७=
=६६७

२७।२९।४२ योगफलमेंसे
२७।२४।५९—२३ अंशके को०को घटाया
४।४३ इसे एक जातीय किया

४।२३×६०
=२४०+४३

२८३, २८३×६०=१६९८०÷६६७=२५।२७, अतएव लग्नमान ४।२३° ।२५'।२७" हुआ।

इसी प्रकार अन्य उदाहरणोंका गणित किया जा सकता है। यद्यपि यह गणित प्रक्रिया सरल है, लेकिन स्वदेशीय उदयमान द्वारा साधित गणित क्रियाकी अपेक्षा स्थूल है।

लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे. ०	२ ५० ९	२ ५७ ४७	३ ५ २५	३ १३ ५	३ २० ४८	३ २८ ३२	३ ३६ १८	४ ४४ ६	४ ५२ ०	४ ५९ ४८	४ ७ ४२	४ १५ ३९	४ २३ ४७	४ ३१ ३९
वृ. १	६ ५४ ५९	७ ३ ५२	७ १२ ४९	७ २१ ४७	७ ३० ५२	८ ३९ ५९	७ ४९ ११	७ ५८ २४	८ ७ ४०	८ १७ १	८ २६ २५	८ ३५ ४३	८ ४५ २४	८ ५४ ५९
मि. २	११ ४६ ४१	११ ५७ १६	१२ ७ ५५	१२ १८ ३७	१२ २९ ४२	१२ ४० ९	१२ ५१ १९	१३ १ ५१	१३ १२ ४७	१३ २३ ४५	१३ ३४ ४५	१३ ४५ ४८	१३ ५६ ५२	१४ ८ ०
क. ३	१७ २१ १३	१७ ३२ ४४	१७ ४४ १६	१८ ५५ ४९	१८ ७ २२	१८ १८ ५६	१८ ३० २९	१८ ४२ ३	१८ ५३ ३८	१९ ५ ११	१९ १६ ४४	१९ २८ २०	१९ ३९ ५२	१९ ५१ २५
सिं. ४	२३ ६ ३४	२३ १८ ५७	२३ २९ २७	२३ ४० ३९	२३ ५१ ५९	२४ ३ १९	२४ १४ ३९	२४ २५ ५५	२४ ३७ १२	२४ ४८ २८	२४ ५९ ४४	२५ १० ५८	२५ २२ १२	२५ ३३ २५
क. ५	२८ ४२ ३६	२८ ५३ ४०	२९ ४ ४८	२९ १५ ४७	२९ २६ ५०	२९ ३७ ५९	२९ ४८ ६७	३० ० ०	३० ११ ५३	३० २२ १	३० ३३ ८	३० ४४ १३	३० ५५ ४	३१ ६ २०

सारणी

	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
मे०	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	६	६	६	६	६	६
	३९	४७	५५	४	१२	२०	२९	३७	४५	५४	२	११	१९	२८	३७	४६
	४१	४९	५७	९	२३	३९	१	२१	५८	३५	४६	२०	५८	३८	२२	९
बृ०१	९	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११
	४	१४	२४	३३	४३	५३	३	१३	२३	३४	४४	५४	४	१५	२५	३६
	३७	१९	४	५३	४६	४२	४३	४५	५१	०	१४	३०	४९	१३	३९	९
मि०२	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५	१५	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१७
	१९	३०	४१	५२	४	१५	२६	३८	४९	०	१२	२३	३५	४६	५८	९
	९	२०	३२	४९	५	२४	४४	६	२९	५३	१७	४५	१३	४२	११	४२
क०२	२०	२०	२०	२०	२०	२१	२१	२१	२१	२१	२१	२२	२२	२२	२२	२२
	२	१४	२६	३७	४९	०	१२	२३	३५	४६	५८	९	२०	३२	४३	५५
	५८	३०	३	३७	६	३७	८	३७	१७	३५	४	३०	५६	२२	३७	११
मि०४	२५	२५	२६	२६	२६	२६	२६	२७	२७	२८	२७	२७	२७	२८	२८	२८
	४४	५५	७	१८	२९	४०	५१	२	१३	२४	३६	४७	५८	९	२०	३१
	३८	४९	०	१०	२५	३६	४९	५१	५३	५९	६	१२	१७	२२	२७	३२
क०५	३१	३१	३१	३१	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३३	३३	३३	३३	३३	३४
	१७	२८	३९	५०	१	१२	२३	३५	४६	५७	९	१९	३०	४१	५२	४
	२४	२८	३३	३७	४३	४८	५४	०	७	१९	१०	२६	३५	४९	२९	११

लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु. ६	३४	३४	३४	३४	३५	३५	३५	३५	३५	३५	३६	३६	३६	३६
	१५	२६	३७	४९	०	११	२२	३४	४५	५६	८	१९	३०	४२
	२२	३४	४८	२	१६	३१	४६	५	२१	४१	६	२०	३३	३
वृ. ७	३९	४०	४०	४०	४०	४०	४१	४१	४१	४१	४१	४२	४२	४२
	५७	८	२०	३१	४३	५४	६	१७	२९	४१	५२	४	१५	२७
	२	३५	८	४०	१६	४०	५२	५६	३१	४	३८	११	४३	१६
ध. ८	४५	४५	४६	४६	४६	४६	३६	३६	४७	४७	४७	४७	४७	४८
	४०	५२	३	२४	२५	३६	४७	५८	८	१९	३०	४१	५२	२
	५१	०	७	१२	१५	१५	१३	८	४१	५१	१८	२३	४	४४
म. ९	५०	५१	५१	५१	५१	५१	५१	५२	५२	५२	५२	५२	५२	५२
	५५	५	१४	२४	३३	४२	५२	१	१०	२०	२९	३८	४७	५६
	२२	१	३६	१७	३५	५९	१९	३६	४९	१	८	१३	११	८
कु. १०	५५	५५	५५	५६	५५	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५७
	२०	२८	३६	५४	५२	०	७	१५	२३	३१	३९	४६	५४	२
	१७	२१	१३	२१	१८	१२	५३	५४	४२	२८	१२	५४	३४	१३
मी. ११	५९	५९	५९	५९	५९	५०	५०	०	०	०	०	०	०	०
	८	१६	२३	३०	३८	४५	५२	०	७	१४	२१	२९	३६	४३
	५२	११	१७	१८	६	१०	८२	०	१८	४०	५४	१२	४३	४९

सारणी

	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
तु. ६	३६	३७	३७	३७	३७	३७	३८	३८	३८	३८	३८	३८	३९	३९	३९	३९
	५३	४	१६	२७	३९	५०	१	१३	२४	३६	४७	५९	१०	२२	३३	४५
	२५	४९	१३	३८	३	३०	५६	२५	४३	२३	५२	२३	५४	२५	५५	२९
वृ. ७	४२	४२	४३	४३	४३	४३	४३	४३	४४	४४	४४	४४	४४	४५	४५	४५
	३८	५०	१	१३	२४	३६	४७	५९	१०	२१	३३	४४	५५	७	१८	२९
	४७	१८	४९	१८	४७	१५	४३	७	३१	५४	३६	३६	५४	१३	३६	३९
ध. ८	४८	४८	४८	४८	४८	४९	४९	४९	४९	४९	४९	५०	५०	५०	५०	५०
	१३	२३	३४	४४	५५	५	१५	२५	३६	४६	५६	६	१६	२६	३५	४५
	१९	५१	२१	४७	१०	२९	४६	५९	९	१५	१७	१८	१४	६	५५	४१
म. ९	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५३	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५५	५५
	५	१३	२२	३१	४०	४८	५७	५	१४	२२	३०	३९	४७	५५	४	१२
	१	५१	३८	२२	२	३९	१४	४७	२	३८	५९	२०	३७	५१	३	५१
कु. १०	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५६	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५९
	९	१७	२४	३२	३९	४८	५५	२	९	१७	२४	३२	३९	४६	५४	१
	५०	१७	५९	३२	५८	२८	४९	३३	५४	११	४४	७	२४	५१	२	३२
मी. ११	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२
	५१	५८	५	१३	२०	२७	३५	४२	५०	५७	४	११	२०	२७	३५	४२
	८	२८	५८	९	३१	५३	१६	४०	५	२७	११	३२	२०	२८	०	३४

लग्नशुद्धिका विचार

जन्मकुण्डलीका सारा फल लग्नके ऊपर आश्रित है, यदि लग्न ठीक न बना हो तो उस कुण्डलीका फल सत्य नही हो सकता है। यद्यपि शहरोंमें घड़ियाँ रहती है, परन्तु उन घड़ियोके समयका कुछ ठीक नही; कोई घड़ी तेज रहती है तो कोई सुस्त। इसके अतिरिक्त जब लग्न एक राशिके अन्त और दूसरी राशिके आदिमें आता है, उस समय उसमें सन्देह हो जाता है। प्राचीन आचार्योंने लग्नके शुद्धाशुद्ध विचारके लिये निम्न नियम बतलाये है, इन निमयोके अनुसार लग्नकी जाँच कर लेना अत्यावश्यक है।

१—प्राणपद एवं गुलिकके साधन द्वारा इष्टकालके शुद्धाशुद्धका निर्णयकर गणितागत लग्नके साथ तुलना करनी चाहिये।

२—इष्टकाल, सूर्य स्थित नक्षत्र, जन्मकालीन चन्द्रमा, मान्दि एवं स्त्री-पुरुष-जन्म योग द्वारा लग्नका विचार करना चाहिये।

३—प्रसूतिका-गृह, प्रसूतिका वस्त्र एवं उपसूतिका-संख्या आदि उत्पत्ति कालीन वातावरणके निर्णय द्वारा लग्नका निर्णय करना चाहिए।

४—जातकके शारीरिक चिन्ह, गठन, रूप-रंग इत्यादि शरीरकी बनावट द्वारा लग्नका निर्णय करना। जिन्हे ज्योतिष शास्त्रकी लग्न-प्रणालीका अनुभव होता है, वे जातकके शरीरके दर्शन मात्रसे लग्नका निर्णय कर लेते है।

प्राणपद साधन और उसके द्वारा लग्नशुद्धि

यद्यपि कुछ विशेषज्ञोंका मत है कि प्राणपद द्वारा इष्टकालकी शुद्धि नही करनी चाहिये; क्योकि पराशर आदि प्राचीन ज्योतिर्विदोने प्राणपद-को एक अप्रकाशक ग्रहके रूपमें मानकर उसका द्वादश भावोंमें फल बतलाया है। इसके द्वारा इष्टकालकी शुद्धि करनेकी जो प्रक्रिया प्रचलित है, वह

आर्ष नही है। इस सम्बन्धमे मेरा यह मत है कि यह प्रणाली आर्ष हो या नही, किन्तु इष्टकालका शोधन इसके द्वारा उपयुक्त है। ज्योतिष शास्त्रकी प्रत्यक्ष गणित क्रिया ही इसमें प्रमाण है।

१५ पल समयको प्राण कहते है, इस प्रकार एक घटीमें चार प्राण होते है। क्रिया करनेके लिये इष्टकालकी घटियोको चारसे गुणा करना चाहिये और पलोंमे १५का भाग देकर लब्धिको चतुर्गुणित[1] घटी संख्यामें जोड़ देना चाहिये। इस योगफलमें १२का भाग देनेपर जो शेष बचे वही प्राणपदकी राशि होगी, शेष पलोंको २से गुणा करनेपर अंश होंगे।

प्राणपद साधनका दूसरा नियम यह है कि इष्टकालको पलात्मक बनाकर १५का भाग देने पर लब्ध राशि और शेषमे२ का गुणा करनेपर अंश होगे। पर यहाँ इतनी विशेषता और समझनी चाहिये कि राशि संख्या यदि १२से अधिक हो तो उसमें १२का भाग देकर लब्धको छोड़ शेषको राशि संख्या मानना चाहिये। यह प्राणपद साधनकी मध्यम विधि है। स्पष्ट करनेके लिये यदि सूर्य चर[2] राशि मे हो तो उसके राशि, अंशमे प्राणपदके राशि, अंशोंको जोड़ देनेसे स्पष्ट प्राणपद होता है और सूर्य स्थिर या द्विस्वभाव राशिमें हो तो उससे पंचम या नवम राशियोमे जो चर राशि हो उस राशि और सूर्यके अंशोमें गणितागत मध्यम प्राणपदके राशि अंशोंको जोड़ देनेसे स्पष्ट प्राणपद होता है।

यदि गणितागत लग्नके अंश और प्राणपदके अंश बराबर हों तो लग्नको शुद्ध समझना चाहिये। अंशोमें अतुल्यता होनेपर इष्टकालको

---

[1] **घटी चतुर्गुणा कार्या तिथ्याप्तैश्च पलैर्युता। दिनकरेणापहृतं शेष प्राणपदं स्मृतम्॥ शेषात्पलान्ताद् द्विगुणीविधाय राश्यंशसूर्यर्क्ष नियोजिताय। तत्रापि तद्राशिचरान् क्रमेण लग्नांशप्राणांशपदैक्यता स्यात्॥--**

[2] **चर--मेष, कर्क, तुला, मकर; स्थिर--वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ और द्विस्वभाव--मिथुन, कन्या, धनु, मीन,**

संशोधित करना—कुछ पल घटाना या बढ़ाना चाहिये। लेकिन यह संशोधन भी इस प्रकारका हो जिससे लग्नांशोंमें न्यूनता न आये।

उदाहरण—इष्टकाल २३ घटी २२ पल है और सूर्य ०।१० है २३।२२—इष्टकालके पल बनाये—

६०=

१३८०+२२=१४०२ पलात्मक इष्टकाल

१४०२÷१५=९३लब्धि ७ शेष। शेषको २से गुणा किया तो ७×२=१४ हुआ। ९३÷१२=७ लब्धि ९ शेष आया। यहाँ लब्धिका त्याग कर दिया तो गणितागत मध्यम प्राणपद ९ राशि १४ अंश हुआ।

सूर्य मेष राशिके १० अंशपर है। मेष राशि चर है, अतः सूर्यके राशि, अंशोमें ही आगत प्राणपदको जोड़ा।

०।१० सूर्यके राशि अंशमें ९।१४ प्राणपदको जोड़ा तो=

९।२४ स्पष्ट प्राणपद हुआ

पहले इसी इष्टकालका लग्नांश २३ आया है और प्राणपदका अंश २४ है। ये दोनों अंशात्मक मान मिलते नही है अतः इष्टकालको कुछ कम या अधिक करना चाहिये जिससे लग्नांश मिल जाय। प्राणपदाश संख्यामे एक अंश अधिक ह, इसलिये इष्टकालको कुछ कम करना होगा। यदि इष्टकालमें ½ पल कम कर दिया जाय तो प्राणपदांश लग्नांशसे मिल जायगा; क्योकि एक पलमें दो अंश होते है, अतः इष्टकाल २३ घटी २१½ मानना होगा। इस इष्टकाल पर से पूर्वोक्त प्रक्रियाके अनुसार लग्नके राश्यादि निकाल लेने चाहिये। प्राणपदसे लग्न निश्चय करनेमें एक रहस्यपूर्ण बात यह है कि प्राणपदकी राशि या उससे पाँचवी, सातवी और नौवी लग्नकी राशि आती हो अथवा प्राणपदकी सातवी राशिसे पाँचवीं और नौवी लग्नकी राशि हो तो मनुष्यका जन्म समझना चाहिये। यदि प्राणपदकी राशिसे दूसरी, छठवी और दसवी राशि लग्न-राशि हो तो पशु जन्म; प्राणपदकी राशिसे तीसरी, सातवी और ग्यारहवी राशि लग्न-

राशि हो तो पक्षी जन्म एवं प्राणपदकी राशिसे चौथी, आठवीं और बारहवी राशि लग्न-राशि हो तो कीट, सर्पादिका जन्म समझना चाहिये।

लड़के या लड़कीकी जन्मकुण्डली बनाते समय प्राणपदसे मनुष्य जन्म सिद्ध न हो तो उस इष्टकालको कुछ घटा बढ़ाकर शुद्ध करना चाहिये।

गुलिक साधन

अपने स्थानके दिनमानमे आठका भाग देकर प्रत्येक भागमें एक-एक अधिपतिकी कल्पना की जाती है और जिस भागका अधिपति शनि होता है—शनिके खण्डको, गुलिक कहते है। प्रतिदिनके खण्डोके अधिपतियो-की गणना उस दिनके वाराधिपतिसे क्रमशः की जाती है। जैसे मगलवारके दिन गुलिक बनाना हो तो पहले खण्डका अधिपति मंगल, दूसरेका बुध, तीसरेका बृहस्पति, चौथेका शुक्र, पाँचवेका शनि, छठवेका रवि और सातवेंका चन्द्रमा होगा। आठवे खण्डका कोई अधिपति नही होता है। इस दिन शनिका पाँचवाँ खण्ड है, अतः पाँचवाँ गुलिक कहलायगा।

रातमे जन्म होनेपर रात्रिमानके समान आठ भागोमेसे थप्रम भाग—खण्डका वाराधिपतिसे पचम ग्रह अधिपति होता है। इसी प्रकार क्रमशः आगे गणना करनेपर जिस खण्डका अधिपति शनि होगा, वही गुलिक खण्ड कहलायेगा। जैसे—सोमवारकी रात्रिको गुलिक जाननेके लिये रात्रिमानमे आठका भाग देकर पृथक्-पृथक् खण्ड निकाल लिये। यहाँ प्रथम खण्डका स्वामी चन्द्रमासे पंचम ग्रह शुक्र होगा। द्वितीय खण्डका शनि, तृतीयका रवि, चतुर्थका चन्द्रमा, पंचमका मंगल, षष्ठका बुध और सप्तमका बृहस्पति होगा। यहाँ सुविधाके लिये नीचे गुलिक चक्र दिया जाता है जिससे प्रतिदिनके दिवाखण्ड और रात्रिखण्डके गुलिकका बिना गणना किये ज्ञान हो सके।

गुलिक ज्ञापक चक्र

रवि	सोम	मगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	वार
७	६	५	४	३	२	१	दिनके इष्टकाल मे गुलिक खण्ड
३	२	१	७	६	५	४	रात्रिक इष्टकाल मे गुलिक खण्ड

गुलिक इष्ट बनानेकी प्रक्रिया यह है कि जिस दिनका गुलिक बनाना हो उस दिन दिनका जन्म होनेपर दिनमानमें और रातका जन्म होनेपर रात्रिमानमें आठका भाग देनेसे जो लब्ध आवे, उसमें गुलिक-ज्ञापक चक्रमें लिखित उस दिनके अंकसे गुणा कर देनेपर इष्टकाल हो जाता है। इस गुलिक इष्टकालपरसे लग्न साधनकी प्रक्रियाके अनुसार लग्न बनाना चाहिये, यही गणितागत गुलिक लग्न होगा।

उदाहरण—वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ल द्वितीया सोमवारको दिनके २-४५ मिनटपर जन्म हुआ है। इस दिनका गुलिक इष्टकाल—

सोमवारके दिनमान ३२ घटी ६ पलमें आठका भाग दिया—
३२।६÷८=४।०।४५ एक खण्डका मान हुआ। इसे गुलिक-ज्ञापक चक्रमें अंकित सोमवारकी अंक संख्या ६ से गुणा किया—

४।०।४५×६=२४।४।३० गुलिक इष्टकाल हुआ। लग्न बनानेके लिये सोमवारके सूर्यके राश्यंश (०।१०) लग्न सारणीमें देखे तो ४।७।४२ फल मिला। २४।४।३० इष्टकालमें

४।७।४२ प्राप्त फलको जोड़ा

२८।१२।१२ इसे पुनः लग्न सारणीमें देखा तो ४।२७ लग्न आया। अर्थात् सिंह राशिके २७ वें अंशपर गुलिक लग्न है।

गुलिक लग्नका उपयोग

गुलिक लग्नसे पूर्व साधित जन्म लग्न राशि पहली, तीसरी, पाँचवीं,

सातवी, नौवी और ग्यारहवी हो तो मनुष्यका जन्म समझना चाहिये तथा गणितागत लग्नको शुद्ध मानना चाहिये ।

लग्नके शुद्धाशुद्ध अवगत करनेके अन्य उपाय

(१) इष्टकालमे २ का भाग देनेसे जो लब्ध आवे, उसमे सूर्य जिस नक्षत्रमे हो उस नक्षत्रकी सख्याको मिला दे । इस योगमे २७का भाग देनेसे जो शेष रहे उसी सख्यक नक्षत्रकी राशिमे लग्न होता है ।

उदाहरण---२३।२२ इष्टकाल है और सूर्य अश्विनी नक्षत्रमे है ।

२३।२२÷२=११।४१, यहाँ अश्विनी नक्षत्रसे सूर्य नक्षत्र तक गणना की तो १सख्या आई, इसे फलमें जोडा--११।४१+१।०=१२।४१ ÷२७=० लब्ध, १२।४१ शेष रहा । अश्विनीसे १२वी सख्या तक गणना करने पर उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र आया । उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रकी सिह राशि है, यही लग्न राशि पहले भी आई है, अत यह लग्न शुद्ध है ।

(२) इष्टकालको ६ से गुणाकर गुणनफलमे जन्म दिनके सूर्यके अश जोड़ दे । इस योगफलमे ३०का भाग देकर लब्धि ग्रहण कर लेनी चाहिये तथा १५से अधिक शेष रहनेपर लब्धिमे एक और जोड देना चाहिये । यदि ३०से भाग न जाय तो लब्धि एक मान लेनी चाहिये । सूर्य राशिकी अगली राशिसे भागफलके अकोको गिन लेनेसे जो राशि आवे वही लग्नकी राशि होगी । यदि यह गणितागत लग्नसे मिल जाय तो लग्नको शुद्ध समझना चाहिये ।

उदाहरण---इष्टकाल २३।२२×६=१४०।१२

१४०।१२ इसमे

१०। ० सूर्यके अश जोडे

१५०।१२÷३०=५ लब्धि, ०।१२ शेष ।

सूर्य मेष राशिपर है, उससे अगली राशि वृष है, अत वृषसे पाँच अक आगे गिननेपर कन्या राशि आती है । प्रस्तुत उदाहरणका लग्न सिह आया है, इसका निर्णय पहले दो-तीन नियमोसे भी किया गया है,

अत यहाँ पर एक घटाकर लग्न निकालना चाहिये । ज्योतिषके गणितमें कभी-कभी एक घटाकर या एक जोड़कर भी क्रियाकी जाती है ।

(३) यदि दिनमे दिनमानके अर्द्ध भागमे पहले जन्म हो तो जन्म-कालीन रविगत नक्षत्रसे सातने नक्षत्रकी राशि; दिनके अवशेष भागमें जन्म हो तो रविगत नक्षत्रसे १२वे नक्षत्रकी राशि एव रात्रिके पूर्वार्द्धमें जन्म होनेसे १७वे नक्षत्रकी राशि और शेष रात्रिमे जन्म होने से२४ वे नक्षत्रकी राशि लग्न-राशि होती है ।

उदाहरण––इष्टकाल २३।२२ घटयात्मक है । दिनमान ३२।६ है, इसका आधा १६।३ हुआ; प्रस्तुत इष्टकाल दिनके पूर्वार्द्धसे आगेका है, अतः रवि नक्षत्रसे १२वें नक्षत्रकी राशि लग्नकी राशि होनी चाहिये । रवि नक्षत्र यहाँ अश्विनी है, अश्विनीसे १२वाँ नक्षत्र उत्तराफाल्गुनी आता है, इस नक्षत्रकी राशि सिह है, यही लग्नकी राशि हुई ।

(४) चन्द्रमासे पचम या नवम स्थानमे लग्न राशिका होना संभव है । चन्द्रमाके नवमाशके सप्तम स्थानसे नवम और पचम स्थानमे लग्न राशिका होना सभव है । च द्रमा जिस स्थानमे हो उस स्थानके स्वामीसे विषम स्थानोमे लग्नका होना सभव है । लग्नमे भी चन्द्रमा रह सकता है ।

नवग्रह स्पष्ट करनेकी विधि

जिस इष्टकालकी जन्मपत्री बनानी हो, उसके ग्रह स्पष्ट अवश्य कर लेने चाहिये । क्योकि ग्रहोके स्पष्ट मानके ज्ञान बिना अन्य फलादेश ठीक नही घट सकता है । यहाँ ग्रह स्पष्टीकरणका तात्पर्य ग्रहोके राश्यादि मानसे है । दूसरी बात यह है कि कुडलीके द्वादशभावोमें ग्रहोका स्थापन ग्रहमान––राश्यादि ग्रहके ज्ञात हो जाने पर ही सम्यक हो सकता है । अतएव प्रत्येक जन्मकुण्डलीमे जन्माङ्ग चक्रके पूर्व ग्रहस्पष्ट चक्र लिखना अनिवार्य है । चन्द्रमाको छोड़ शेष आठ ग्रहोके स्पष्ट करनेकी विधि एक-सी है ।

पञ्चाङ्गोंमें ग्रहस्पष्टकी पंक्ति लिखी रहती है। लेकिन किसीमें अष्टमी, अमावास्या और पूर्णिमाकी पक्ति रहती है और किसीमें मिश्रमानकालिक या प्रातःकालिक। जिस पचाङ्गमे दैनिक मिश्रमानकालिक या प्रातःकालिक ग्रहस्पष्टकी पक्ति रहती है, उसके अनुसार मिश्रगान और इष्टकाल अथवा प्रातःकाल और इष्टकालका अन्तर कर दैनिक[1] गतिसे गुणाकर ६०का भाग देनेसे जो अंश, कला, विकला रूप फल आये उसे मिश्रमान कालिक या प्रातःकालिक ग्रहस्पष्ट पक्तिमे ऋण, धन करनेपर इष्टकालिक ग्रहस्पष्ट आ जाते है। परन्तु जिस पञ्चाङ्गमें साप्ताहिक ग्रहस्पष्ट पक्ति दी हो उसके अनुसार यदि अपने इष्ट समयसे पक्ति आगेकी हो तो पक्तिके वार,[2] घटी, पलोंमेसे इष्टकालके वार, घटी, पल घटानेसे शेष तुल्य ऋणचालन होता है। यदि पक्ति पीछेकी हो और इष्टकाल आगेका हो तो इष्टकालके वार, घटी, पलोंमेसे पक्तिके वार, घटी, पलोंको घटानेपर धन चालन होता है। इस ऋण या धन-चालनको पञ्चाङ्गमे दी गयी ग्रहगतिसे गुणा करनेपर अंशादि आये उन्हें धन या ऋण चालनके अनुसार पञ्चाङ्ग स्थित ग्रहमानमे जोड़ने या घटानेसे स्पष्ट ग्रह आते है।

वक्रीग्रह, राहु एवं केतुके लिये सर्वदा ऋणचालनमें आगत अंशादि फलको जोड़ने और धनचालनमें आगत अंशादि फलको घटानेसे स्पष्ट-मान होता है।

उदाहरण—वि० सं० २००१ वैशाख शुक्ला २ सोमवारको २३।२२ इष्टकालके ग्रहस्पष्ट करने है। पञ्चाङ्गमे वैशाख शुक्ला पचमी शुक्रवारके ५।५१ इष्टकालकी ग्रहस्पष्ट पक्ति लिखी है। यहाँ इष्टकाल सोमवारका

---

[1]—दो दिनके स्पष्ट ग्रहोंका अन्तर करने पर दैनिक गति आती है।

[2]—वार गणना रविवारसे ली गई है, अर्थात् रविवारकी १ संख्या सोमवारकी २ मंगलकी ३ इत्यादि।

है और ग्रहपक्ति शुक्रवारकी है, अतः इष्टकालसे ग्रहपक्ति आगेकी हुई तथा ग्रह पक्तिमेंसे इष्टकालको घटाना है, इसलिये यहाँ ऋणसंस्कार हुआ—

६।५।५१ पक्तिके वारादि, २।२३।२२ इष्टकालके वारादि।

ग्रहपंक्ति वै० शु० ५ शुक्रवार इष्टकाल ५।५१

सूर्य	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	ग्रह
०	२	०	३	११	२	३	९	राशि
१३	२३	२२	२४	२७	०	८	८	अंश
४३	०	१६	१६	२०	२३	५८	५४	कला
२२	३३	५	४४	१०	४६	५०	५०	विकला
५८	३४	१७	३	७४	५	३	३	कला वि० गति
१२	२४	३९ व	४	१२	४४	११	११	

६।५।५१ पक्ति के वारादिमेंसे २।२३।२२ इष्टकालके वारादिको घटाया तो ३।४२।२९ ऋण चालन आया।

सूर्यसाधन

चालन	सूर्यगति
३	५८।१२
४२	१७४।३६—तीनके अंकका गुणनफल
	२४३६।५०४ ब्यालीसके अंकका गुणनफल
२९	१६८२।३४८ उन्तीसके अंकका गुणनफल
	१७४।२४७२।२१८६।३४८÷ ६० (६० से भाग देकर आग ५ शेष ४८। आगकी राशियोंमें जोडा)

१७४।२४७२।२१९१÷६०
३६। शेष ३१
१७४।२५०८÷६०।३१।४८
४१ शेष ४८
२१५÷६०।४८।३१।४८
३'।३५'।४८"।३१'"।४८""

प्रक्रिया यह है कि गुणा करते समय एक-एक अंक दाहिनी ओर बढ़ाकर रखते जायँगे और सब कलादिको जोड़ देगे। फिर सब अंकोंसे ६०का भाग देते हुए लब्धिको बाईं ओरकी संख्यामें जोड़नेसे अंशादि फल होगा।

०।१३।४३।२२ पंक्तिके सूर्यमेंसे
३।३५।४८ आगतफलको घटाया } ऋण चालन होनेसे फलको घटाया है।
०।१० ७।३४ स्पष्ट सूर्य हुआ

मंगल साधन

चालन

३ | ३४।२८ मंगल गति,
४२ | १०२।८८
१४२८।११७६
९८६।८१२
२९ | १०२।१५१२।२१६२।८१२÷६०
१३ शेष ३२
१०२।१५१२।२१७५÷६०।३२
३६ शेष १५
१०२।१५४८।१५।३२
१०२।१५४८।१५।३२
÷६०
२५ ४८ शेष
१२७÷६०।४८।१५।३२

० , ,, ,,, ,,,,

२।७।४८।१५।३२ यहाँ केवल विकला तक ही फल इष्ट है।

२।२३।०।३२ पंक्तिके मंगलमेंसे

२।७।४८ आगत फलको घटाया

२।२१।५२।४४ स्पष्ट मंगल

बुध साधन

३ | १७।३९ बुध गति

४२ | ५१।११७

७१४।१६३८

४९३।११३१

२९ | ५१।८३१।२१३१।११३१ (पूर्ववत् ६०का भाग देनेके पश्चात् अंशादि फल निकाला)

० , , ,,, ,,,,

१।५।२६।४८।५१ बुध फल आया। यह बुध वक्री है, अतः ऋण चालन होनेसे इस फलको पंक्तिके बुधमें जोडा--

०।२२।१६।५

१।५।२६

०।२३।२१।३१ स्पष्ट बुध हुआ

इसी तरह चन्द्रमाके सिवा अन्य सभी ग्रहोंका स्पष्टीकरण किया जाता है।

चन्द्र स्पष्टकी विधि

भयातकी घटियोंको ६०से गुणाकर पल जोडनेसे पलात्मक भयात और भभोगकी घटियोंको ६०से गुणाकर पल जोड़ देनेसे पलात्मक भभोग होता है। पलात्मक भयातको ६०से गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग दें; शेषको पुनः ६०से गुणाकर उसी पलात्मक भभोगका भाग दे; तीसरी बार शेषको फिर ६०से गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग दे, तो लब्ध

वर्तमान नक्षत्रके भुक्त घटी, पल होगे। अश्विनी नक्षत्रसे गत नक्षत्र तक गिनकर ६०से गुणाकर भुक्त घटी, पलादिमे जोड़ दे और इस योग-फलको २ से गुणा कर गुणनफल मे ९ से भाग देने पर लब्ध अश, कला, विकला फल होगा। यदि अंश संख्या ३०से अधिक आवे तो ३० का भाग देकर राशि बना लेना चाहिये।

उदाहरण--भयात १६।३९ और भभोग ५८।४४ है।

१६।३९

६०

९६०+३९=९९९ पलात्मक भयात

५८।४४

६०

३४८०+४४=३५२४ पलात्मक भभोग

९९९×६०=५९९४०÷३५२४=१७।०।३२ अर्थात् १७ घटी ० पल ३० विपल लब्धि हुई। यहाँ जन्म नक्षत्र कृत्तिका है, अत उसके पहले का नक्षत्र भरणी हुआ। अश्विनीसे गणना करने पर भरणी तक दो संख्या हुई अतः २×६०=१२०

(१२०)+(१७।०।३२)=१३७।०।३२ इसे दोसे गुणा किया--

१३७।०।३२×२=२७४।१।४

२७४।१।४÷९=३०।२६।४७ अंशात्मक लब्धि हुई अतः अशोमे ३०का भाग दिया तो १।०।२६।४७ राश्यादि चन्द्र स्पष्ट हुआ।

चन्द्र गति साधन

२८८०००० में पलात्मक भभोगसे भाग देनेपर लब्ध चन्द्रमाकी गति-की कलाएँ आयेंगी; शेषमे ६०का गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग देनेपर लब्ध गतिकी विकलाएँ आवेंगी।

उदाहरण--पलात्मक भभोग ३५२४ है।

२८८०००० ÷ ३५२४=८१७ लब्धि, शेष ८९२×६०=५३५२०÷ ३५२४=१५ लब्धि, शे० ५६०, अतएव चन्द्रस्पष्ट गति ८१७।१५ हुई।

चन्द्र सारणी द्वारा चन्द्र स्पष्ट करनेकी विधि

जिस नक्षत्रका जन्म हो उसके पहलेके नक्षत्रके नीचेकी राश्यादि अंक संख्या 'सत्ताईस नक्षत्रोपरि स्पष्ट राश्यादि चन्द्रसारणी'में देखकर लिख लेना चाहिये। पश्चात् भयातकी घटियोंकी राश्यादि अंक संख्याको 'भयात गतघटीपर चन्द्रसारणी'में देखकर लिख लेना चाहिये। अनन्तर आगेवाले कोष्ठकके साथ अन्तर कर अनुपातसे पलोंका फल निकालना चाहिये अथवा अन्तरको पलोंसे गुणाकर ६०का भाग देनेसे अंशादि लब्ध उसे पहलेवाले फलमें जोड देनेपर भयातका अंशादि फल आ जायगा; पुन नक्षत्र और इस भयातके फलको जोड़ देनेसे चन्द्र स्पष्ट हो जायगा। यहाँ स्मरण रखनेकी एक बात यह है कि १३ अंश २० कलाका विभाजन भभोगमें करना चाहिये। कारण भभोग ६० घटीसे प्रायः सर्वदा ही ज्यादा या कम होता है अत भयातके पलोंको १३ अंश २० कलासे गुणाकर भभोगके पलोंका भाग देकर जो अंशादि फल आये उसे नक्षत्र फलमें जोडनेसे स्पष्ट चन्द्रमा होता है।

उदाहरण--भयात १६।३९ कृत्तिका, भभोग ५८।४८ यहाँ जन्म नक्षत्रके पहलेका नक्षत्र भरणी है अत भरणीके नीचेकी अंक संख्या ०।२६।४०।० है। पलात्मक भयात ९९९ और पलात्मक भभोग ३५२४ है। अतएव १३ अंश २० कला $= १३\frac{२०}{६०} = १३ + \frac{१}{३} = \frac{४०}{३} \times \frac{९९९}{३५२४} =$

$\frac{४१२२०}{८८१} = \frac{४०}{३} \times \frac{९९९}{३५२४} = \frac{३३३०}{८८१} = ३\frac{६८७}{८८१} \times \frac{६०}{१} = ४७\frac{१३}{८८१} +$

$\frac{६०}{१} = \frac{७८०}{८८१} = ०$, ७८०--०, ३।४७।० अंशादि

०।२६।४०।० भरणीकी अंक संख्या
०। ३।४७।० भयातका फल
१। ०।२७।० स्पष्ट चन्द्रमा

नक्षत्रोपरि स्पष्ट राश्यादि चन्द्र सारणी

अ०	भ०	कृ०	गे०	मृ०	आ०	पु०	पु०	अ०	म०	पू०	उ०	ह०
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
०	०	१	१	२	२	३	३	४	४	५	५	६
१३	२६	१०	२३	६	२०	३	१६	२९	१३	२६	१०	२३
२०	०	८	२०	०	०	२०	०	०	२०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
चि०	स्वा०	वि०	अनु०	ज्ये०	मू०	पू०	उ०	अ०	ध०	श०	पू०	उ०	ह०
१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७
३	४	५	६	७	७	८	०	०	१०	१०	११	११	०
०	२०	१३	२९	०	१३	२६	१०	२३	६	२०	३	१६	२९
२०	०	०	२०	०	२०	०	२०	०	२०	०	२०	०	२०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

भयात गतघटी पर चन्द्र सारणी

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	१	१	१	१	२	२	२	२	२	३	३	३	३	४	४	४	४	४	५	५	५	५	६	६	६	६
१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०

३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
६	७	७	७	७	८	८	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१३	१३
१३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०	३३	४६	०	१३	२६	४०	५३	६	२०
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०

सर्वक्षपर गतिका स्पष्ट

५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	६४	६५	६६	६७
८८८	८७२	८५७	८४२	८२७	८१३	८००	७८६	७७४	७६१	७५०	७३८	७२७	७१६
४८	४०	८	६	३४	३३	०	५४	१२	५७	०	३०	१८	२८

नवग्रह स्पष्ट चक्र

सूर्य	चन्द्र	मगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	
०	१	२	०	३	११	२	३	९	रा०
१०	०	२१	२३	२४	२३	७	९	९	ग्र०
७	३४	५२	२१	७	२०	७	५	५	क०
•३४	३४	४४	३१	३२	१०	४५	१५	१५	वि०

सारणी द्वारा चन्द्रगति स्पष्ट करनेका नियम भभोगकी घटियोके नीचेकी अंक संख्या देखकर लिख लेनी चाहिए। पश्चात् आगेवाले कोष्ठक के साथ अन्तर कर पलोसे गुणाकर साठका भाग दे। जो लब्ध आये उसे पूर्वोक्त फलमें जोड़ या घटा देनेसे चन्द्रकी स्पष्टगति आ जाती है।

उदाहरण—भभोग ५८।४४ है। 'सर्वर्क्षपर गतिका स्पष्ट' नामक चक्रमे ५८के नीचे अक सख्या ८२७।३४ है। आगेकी कोष्ठक सख्या ८१३।३३ है, दोनो सख्याओका अन्तर किया—

८२७।३४
८१३।३३
१४। १ इसे ४४से गुणा किया
१४।१ को एक जातीय बनाया तो १४।१

$$\frac{६०}{८४०+१=८४१}$$

८४१×४४=३७००४÷६०=६१६ विकला
६१६÷६०=१०।१६ इसे पहलेवाले फलमेसे घटाया अत

८२७।३४
१०।१६
८१७।१८ चन्द्रकी गति

अन्य ग्रहोकी गति पञ्चाङ्गमे लिखी रहती है अतः उसीको जन्मपत्रीमे लिख देते है। जिन पञ्चाङ्गोंमे दैनिक ग्रहस्पष्ट रहते हैं उनमें दो दिनके ग्रहोका

अन्तर कर निकाल लेना चाहिये । परन्तु चन्द्रमाकी स्पष्ट गति उपर्युक्त विधिसे ही निकालना चाहिये ।

जन्मपत्रीमें नवग्रह स्पष्ट चक्र लिखनेके पश्चात् जो लग्न आया हो उसीको पहले रखकर द्वादश कोठोंमें अंक स्थापित कर दे पश्चात् जो ग्रह जिस राशिपर हो उसे वहाँ स्थापित कर देना चाहिये, उदाहरण—यहाँ लग्न ४।२३।२५।२।७ आया है, अत लग्न स्थानमें ५का अंक रखा जायगा । भारतीय पद्धतिके अनुसार जन्मपत्री लिखनेकी प्रक्रिया निम्न प्रकार है ।

आदित्याद्या ग्रहास्सर्वे सनक्षत्राणि सराशयः ।
सर्वान् कामान् प्रयच्छन्तु यस्यैषा जन्मपत्रिका ॥१॥
स्वस्तिश्रीसौख्यधात्री सुतजयजननी तुष्टिपुष्टिप्रदात्री ।
माङ्गल्योत्साहकर्त्री गतभवसदसत्कर्मणां व्यञ्जयित्री ॥
नानासम्पद्विधात्री धनकुलयशसामायुषां वर्द्धयित्री ॥
दुष्टापद्विघ्नहर्त्री गुणगणवसतिर्लिख्यते जन्मपत्री ॥

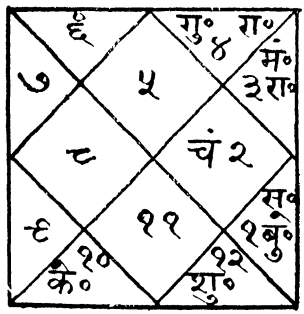
श्रीमान् नृपति विक्रम सवत् २००१, शक सवत् १८६६, वैशाख मास, कृष्णपक्ष सोमवारको द्वितीया तिथिमे, जिसका घटयादि मान विश्वपञ्चाङ्गके अनुसार आरामे देशान्तर सस्कृत ४५ घटी ९ पल, भरणी नक्षत्रका मान ६ घटी ४३ पल तदुपरि कृत्तिका नक्षत्र, आयुष्मान योगका मान १७ घटी ८ पल; बालव नाम करणका मान घटयादि १६।४७; जन्म समयका सस्कृत इष्टकाल २३।२२।२३ है । इस दिन दिनमान घटयादि ३२।६ रात्रिमान २७।५४ उभयमान ६०।० मे आरा नगरनिवासी श्रीमान् चित्रगुप्तवशमे श्रेष्ठ बाबू हनूमानदासके पुत्र बाबू हरिप्रसादके चिरजीवि पुत्र हरिमोहन सेनकी वैदिक विधिपूर्वक परिणीता भार्या मोहनदेवीकी दक्षिण । कूक्षिसे पुत्र उत्पन्न हुआ होरा शास्त्रानुसार भयात १६।३९ भभोग ५८।४४ है; अतएव कृत्तिका नक्षत्रके द्वितीय चरणमे जन्म हुआ और इसका राशि नाम 'ई' अक्षरपर ईश्वरदेव रखा गया । यह पुत्र गुरजन और पुण्यके प्रसादसे दीर्घजीवि हो ।

संस्कृत भाषामें लिखनेकी विधि

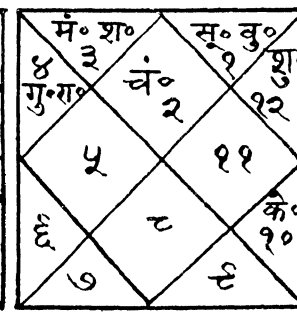
अथ श्रीमन्नृपतिविक्रमार्कराज्यात् २००१ मवत्सरे १८६६ शाके वसन्ततौ शुभे वैशाखमासे कृष्णपक्षे चन्द्रवासरे द्वितीयाया तिथौ घटचादय ४५।९ भरणीनक्षत्रे घटचादय ६।४३ तदुपरि कृत्तिकानक्षत्रे, आयुष्मान्-योगे घटचादय १७।८ बालवकरणे घटचादय. १६।४७ अत्र सूर्योदयादिष्ट-काल. घटचादय. २३।२२।२३ मेषराशिस्थिते सूर्ये वृषराशिस्थिते चन्द्रे एव पुण्यतिथौ पञ्चाङ्गशुद्धौ शुभग्रहनिरीक्षितकल्याणवत्यायां वेलाया सिंहलग्नोदये दिनप्रमाण घटचादय. १८।५४ रात्रिप्रमाण घटचादय ३२।६ उभयप्रमाणं ६०।० आरा नगरे चित्रगुप्तवंशावतंसस्य श्रीमत हनूमानदासस्य पुत्र हरिप्रसाद तस्य पुत्र. बाबू हरिमोहनसेनस्य गृहे सुशीलवतीभार्यायां दक्षिणकुक्षौ द्वितीयपुत्रमजीजनत । अत्रावकहोटा-चक्रानुसारेण भयातम् १६।३९ भभोग. ५८।४४ तेन कृत्तिकानक्षत्रस्य द्वितीयचरणे इकाराक्षरे जायमानत्वात् ईश्वरदेव इति राशि नाम प्रति-ष्ठितम् । अथ च देवगुरुप्रसादादीर्घायुर्भूयात् ।

इसके पश्चात् जो पहले नवग्रहस्पष्ट चक्र लिखा गया है, उसे लिखना चाहिये, पश्चात् जन्मकुण्डली चक्रको अंकित करना । पहले उदाहरणा-नुसार जन्मकुण्डली चक्र निम्न प्रकार हुआ—

जन्मकुण्डली चक्र



चन्द्रकुण्डली चक्र



द्वादश भाव स्पष्ट करनेकी विधि

भाव स्पष्ट करनेके लिये प्रथम दशम भावका साधन किया जाता है। इस भावका गणित करनेके लिये नतकाल जाननेकी आवश्यकता होती है, क्योंकि दशम भावकी साधनिकाके लिये नतकाल ही इष्टकाल होता है। नतकाल ज्ञात करनेके निम्न चार प्रकार हैं--

१--दिनार्धसे पहलेका इष्टकाल हो तो इष्टकालको दिनार्धमेंसे घटानेसे पूर्वनत होता है।

२--दिनार्धके बादका इष्टकाल हो तो दिनमानमेंसे इष्टकाल घटाकर जो अवशेष बचे, उसको दिनार्धमें घटानेसे पश्चिमनत होता है।

३--रात्रि अर्धसे पहलेका इष्टकाल हो तो दिनमानको इष्टकालमें घटानेसे जो शेष आवे उसमें दिनार्ध जोडनेसे पश्चिमनत होता है।

४--रात्रि अर्धके बादका इष्टकाल हो तो ६० घटीमेंसे इष्टकालको घटानेसे जो शेष आवे उसमें दिनार्ध जोड़नेसे पूर्वनत होता है।

यदि पश्चिमनत हो तो भोग्य प्रकारसे और पूर्वनत हो तो भुक्त प्रकारसे लोकोदय मान द्वारा लग्न साधनके समान दशम भावका साधन करना चाहिये।

उदाहरण--इष्टकाल २३।२२, दिनमान ३२।६, रात्रिमान २७।५४ है। दिनमान ३२।६ का आधा किया तो दिनार्ध=३२।६÷२=१६।३; इस उदाहरणमें इष्टकाल दिनार्धके बादका है अतः नतकाल साधनके द्वितीय नियमानुसार--

३२।६ दिनमानमेंसे
२३।२२ इष्टकालको घटाया

८।४४ शेष, इसे दिनार्धमेंसे घटाया तो (१६।३)-(८।४४) ७।१९ पश्चिमनत हुआ।

उदाहरण (२) इष्टकाल ६।४५, दिनमान ३२।६, रात्रिमान २७।५४ दिनार्ध १६।३ है।

इस उदाहरणमे इष्टकाल दिनार्धसे पहलेका है; अतः १६।३ दिनार्धमेसे ६।४५ इष्टकालको घटाया तो ९।१८ पूर्वनत हुआ।

उदाहरण (३) इष्टकाल ४२।४८, दिनमान ३२।६, रात्रिमान २७।५४ दिनार्ध १६।३ रात्र्यर्ध १३।५७ है।

इस उदाहरणमे पहले यह विचार करना होगा कि यह इष्टकाल रातका है या दिनका ? प्रस्तुत उदाहरणमे दिनमान ३२।६ है और इष्टकाल ४२।४८ है, अतः दिनमानसे इष्टकाल अधिक होनेके कारण रातका इष्टकाल कहलायेगा। अब रातमे रात्र्यर्धसे पहलेका है या रात्र्यर्धके बादका ? इस निश्चयके लिये दिनमानमे रात्र्यर्ध जोड़कर इष्टकालसे मिलान करना चाहिये। अतः ३२।६ दिनमानमे रात्र्यर्धको जोडा तो—(३२।६)+(१३।५७)=४६।३ रात्र्यर्ध तकका मिश्रकाल। प्रस्तुत उदाहरणका इष्टकाल रात्र्यर्धके पहलेका है, अत. ४२।४८ इष्टमेसे

३२। ६ दिनमान घटाया

१०।४२ शेष

१६। ३ दिनार्धमे
१०।४२ शेषको जोडा
२६।४५ पश्चिमनत

उदाहरण (४) इष्टकाल ५२।४५, दिनमान ३२।६, रात्रिमान २७।५४, दिनार्ध १६।३, अर्ध रात्रितकका मिश्रकाल ४६।३ है।

इस उदाहरणमें अर्ध रात्रिके बादका इष्टकाल है अतः नतकाल साधनके चतुर्थ नियमानुसार ६०। ० मे

७२।४५ इष्ट घटाया

७।१५ अवशेष

७।१५ अवशेषमे
१६। ३ दिनार्ध जोड़ा
२३।१८ पूर्वनत हुआ।

दशम साधनका उदाहरण

सूर्य ०।१०। ७।३४ (प्रथम उदाहरणमे पश्चिमनत होनेसे भोग्य
अयनांश ०।२३।४६। ० प्रकारसे साधन करना होगा)

१। ३।५३।३४ सायन सूर्य।

भोग्याश निकालनेके लिये सूर्यके इन भुक्ताशोको ३० अशमेसे घटाया—

३०। ०। ०
३।५३।३४
२४। ६।२६

२४।६।२६ भोग्याशको लकोदय राशिमानसे गुणा करना है। लंकोदयका प्रमाण निम्न प्रकार है।

मेष	=	२७८	=	मीन
वृष	=	२९९	=	कुम्भ
मिथुन	=	३२३	=	मकर
कर्क	=	३२३	=	धनु
सिंह	=	२९९	=	वृश्चिक
कन्या	=	२७८	=	तुला

प्रस्तुत उदाहरणमे सूर्य वृष राशिका है, अत वृषके राशिमानसे भोग्याशोको गुणा किया—

२४।६।२६ × २९९ = २४७।१६।३।३४ {इस गुणनफलके दो अंकोमे ६० का भाग और तीसरेमे ३०का भाग दिया गया है।

नतकाल ७।१९ के पल बनाये; ७×६०+१९=४३९ नतपल

४३९ नतकालके पलोंमेंसे

२४०।१६ भोग्य पलादिको घटाया

१९८।४४ यहाँ मिथुन राशिके पल नही घटते है, अतः मिथुन राशि ही अशुद्ध कहलायेगी—

१९८।४४×३०=५९६२।० इसमें अशुद्ध राशिमानका भाग दें—

५९६२।०÷२२३=१८।२९।२१ अंशादि हुआ। उदाहरणमें वृष-राशिका मान घट गया था, अतः इस अंशादिमे दो राशि और जोड़ी—

१८।२९।२१

२। ०। ०। ०

२।१८।२९।२१ सायन दशम

२।१८।२९।२१ सायन दशममेंसे

०।२३।४६। ० अयनांश घटाया

१।२४।४३।२१ दशम स्पष्ट

भुक्तांश साधन द्वारा दशमका उदाहरण

सायन सूर्य १।३।५३।३४, पूर्वनत १७।९ है। सायन सूर्य वृषराशिका होनेसे भुक्तांशोंको वृषके लंकोदय मानसे गुणा किया—भुक्तांश ३।५३।३४×२९९=३८।२३।६।३६ भुक्त पल हुआ

१७।९ नतकालके पल बनाये; १७×६०+९=१०२९ नतपल

१०२९ नतकालके पलोंमें

२७८।० मेषका मान घटाया

७१२।०

२७८।० मीनका मान घटाया

४३४।३७

२९२। ० कुम्भका मान घटाया

१३५।३७ इसमेंसे मकरका राशिमान नहीं घटा है, अतः मकर अशुद्ध हुई।

{भुक्तांशपरसे लग्न या दशमका साधन करते समय उलटा राशिमान घटाया जाता है)

१३५।३७×३०=४०६८।३० इसमें अशुद्ध राशिभानका भाग दिया ४०६८।३०÷३२३=१२।३५।३९ अंशादि; इसमें शुद्ध राशियाँ जहाँ-तक घट सकी है, उस राशि पर्यन्त संख्याको इस पलमे जोड़ा—

१२।३५।३९	
११। ०। ०। ०	
११।१२।३५।३९	सायन दशममेंसे
०।२३।४६। ०	अयनाश घटाया
१०।१८।४९।३९	स्पष्ट दशम

दशम भाव साधन करनेके अन्य नियम

१—नतकालको इष्टकाल मानकर जिस दिनका दशम भाव साधन करना हो, उस दिनके सूर्यके राशि, अंश पञ्चाङ्गमे देखकर लिख लेने चाहिये। आगे दी गई दशमसारणीमे राशिका कोष्ठक बाई ओर और अंशका कोष्ठक ऊपरी भागमे है। सूर्यके जो राशि अंश लिखे है उनका फल दशमसारणीमें—सूर्यकी राशिके सामने और अंशके नीचे जो अंक संख्या मिले, उसे पश्चिमनत हो तो नतरूप इष्टकालमें जोड़ देनेसे और पूर्वनत हो तो सारणीके अंकोमे घटा देनेसे जो अंक आवें उनको पुनः दशम-सारणीमें देखे तो बाई ओर राशि और ऊपर अंश मिलेगे। ये राशि, अंश ही दशमके रश्यादि होगे। कला, विकला फल त्रैराशि द्वारा निकलता है।

२—इष्टकालमेंसे दिनार्ध घटाकर जो आये वह दशम भावका इष्ट होगा। यदि इष्टकालमेसे दिनार्ध न घट सके तो इष्टकालमें ६० घटी जोड़कर दिनार्ध घटानेसे दशमका इष्टकाल होता है। इष्टकालपरसे प्रथम नियमके अनुसार दशमसारणी द्वारा दशमसाधन करना चाहिये।

३—लग्नसारणी द्वारा लग्न बनाने समय सूर्यफलमे इष्टकाल जोड़नेसे जो घटयादि अंक आये, उसमें १५ घटी घटानेसे शेष अंक दशमसारणीमें जिस राशि, अंशका फल हो, वही दशम लग्न होगा।

४—लग्नके राशि अंशो द्वारा फल लेकर—लग्न राशिके सामने और अशके नीचे जो अंक संख्या 'लग्नसे दशम भाव साधन सारणी'में मिले वही दशम भाव होगा।

उदाहरण (१)—पश्चिम नतकाल ७।१९, सूर्य ०।१० इस सूर्यके राशि, अंशोको दशम सारणीमे देखा तो शून्य राशि और दस अंशके सामने का फल ५।७।५१ मिला। पश्चिमनत होनेके कारण इसे इष्टकाल स्वरूप नतमें जोडा—५।७।५१ आगत फल

७।१९। ० नत-इष्टकाल

१२।२६।५१ इसे पुनः दशमसारणीमे देखा तो इस संख्याके लगभग १ राशि २३ अशका फल मिला, अतः दशम भाव १।२३ हुआ।

उदाहरण (२)—इष्टकाल १०।१५, दिनमान ३२।६, दिनार्ध १६।३, सूर्य ०।१० है।

यहाँ इष्टकालमेसे दिनार्ध घटाना है, लेकिन इष्टकाल कम होनेके कारण दिनार्ध घटता नही है, अतः ६० जोड़कर घटाया—६०+(१०।१५)

७०।१५ योगफलमेसे

१६। ३ दिनार्ध घटाया

५४।१२ दशम साधनका इष्टकाल। पूर्ववत् सूर्यके राश्यादिको दशम-सारणीमें देखा तो फल ५।७।५१ मिला। ५। ७।५१ आगतफलमें

५४।१२। ० इष्टकालको जोड़ा

५९।१९।५१ इसे दशमसारणी-में देखा तो ११।२ आया, यही दशम भाव हुआ।

उदाहरण (३)—लग्नमान ४।२३।२५।२७ है। इसके राशि अंशों-को 'लग्नसे दशम भाव साधन सारणी'में देखा तो ४ राशिके सामने और २३ अंशके नीचे १।२२।३०।१५ फल प्राप्त हुआ, यही दशम भाव हुआ।

दशम लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मेष ०	३ ३२ ४६	३ ४२ ११	३ ५१ ३६	४ १ ४	४ १० ३२	४ २० २	४ २९ ३३	४ ३९ ५	४ ४८ ४४	४ ५८ १४	५ ७ ५१	५ १७ २९	५ २७ १०	५ ३८ ३१
वृष १	८ २६ ०	८ ३६ १३	८ ४६ २९	८ ५६ ४३	९ ७ ४	९ १७ २४	९ २७ ४७	९ ३८ १०	९ ४८ ३५	९ ५९ २	१० ९ ३१	१० २० २०	१० ३० ३४	१० ४१ ७
मिथुन २	१३ ४३ ४६	१३ ५४ ३८	१४ ५ ३१	१४ १६ २५	१४ २७ १८	१४ ३८ १२	१४ ४९ ६	१५ ० ०	१५ १० ५४	१५ २१ ३८	१५ ३२ ४१	१५ ४३ ३५	१५ ५४ २८	१६ ५ २२
कर्क ३	१९ ८ १८	१९ १८ ५३	१९ २९ २६	१९ ३९ ५८	१९ ५० २९	२० ० ५७	२० ११ २४	२० २१ ४९	२० ३२ १३	२० ४२ ३६	२० ५२ ५६	२१ ३ १७	२१ १३ ३१	२१ २३ ४६
सिंह ४	२४ १३ २६	२४ २३ ९	२४ ३२ ५०	२४ ४२ ३१	२४ ५२ ९	२५ १ ४६	२५ ११ १६	२५ २० ५५	२५ ३० २७	२५ ३९ ५८	२५ ४९ २८	२५ ५८ ५५	२६ ८ २३	२६ १७ ४९
कन्या ५	२८ ५५ ४४	२९ ४ ५५	२९ १४ ७	२९ २३ १८	२९ ३२ २८	२९ ४१ ३९	२९ ५० ४९	३० ० ०	३० ९ १०	३० १८ २१	३० २७ ३२	३० ३६ ४२	३० ४५ ५३	३० ५५ ४

सारणी

	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२
०मे०	८	८	८	८	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७
	१५	५	५५	४५	३५	२६	१८	८	५५	४६	३५	३६	३६	१५	१५	२६	३५	४६	५६	६६
	४९	३९	३१	२६	२१	१९	१९	२०	२३	३०	३५	४३	५५	३	५३	३५	४१	५०	५९	१९
वृ०१	१३	१३	१३	१३	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	११	११	११	११	११	११	११	११	१०
	३२	२२	११	०	४९	३८	२७	१७	६	५५	४५	३३	२२	१४	३	५४	४४	३३	२३	१२
	५४	३	१४	२२	३३	४५	५७	६८	५५	४८	४३	२६	११	५७	३६	१६	५८	४८	३९	३०	१९
मि०२	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६
	५९	४७	३६	२५	१५	४	५३	४२	३२	२१	१०	५९	४८	३७	२७	१८	८	५७	४७	३७	२७
	४१	३	२४	२४	३	१७	३४	४९	३	१५	२७	३८	४८	५७	६	१४	४७	५८	६८	७८	१८
क०२	२४	३	५३	४४	५५	६	१७	३४	३३	२३	१३	२३	२३	२३	२३	२२	२२	२२	२१	२१	२१
	३	५३	४४	३४	२४	१४	३४	४४	५४	४	५४	३४	२४	१४	४	५४	५४	४४	३४	२४	१४
	४१	५५	४५	३४	२९	१९	२५	३९	४१	४१	३८	३४	२९	२१	१२	५१	४१	३१	२१	११	१
सिं०४	२८	२८	२८	२८	२८	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२६	२६	२६	२६	२७	२७	२६	२६	२६	२६
	४६	३६	२८	१८	९	०	५१	४१	३२	२३	१४	४	२८	३६	४५	५५	५५	४५	३६	२६	१६
	३२	१९	७	३	५३	५४	१०	३५	३७	१९	१	६१	२१	५९	५७	४७	३७	२७	१७	८	३८
क०५	३३	३३	३३	३३	३२	३२	३२	३२	३२	३२	३१	३१	३१	३१	३१	३१	३१	३१	३१	३१	३१
	२३	१४	४	५५	४५	३६	२७	१८	८	५०	४१	३१	२२	११	५	५०	४०	२९	२०	१०	०
	२२	०	३९	१८	५९	४१	३३	२३	१३	५०	४६	३५	२५	१६	७	५७	४७	३८	२८	१८	८

दशम लग्न

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तुला ६	३३	३३	३३	३४	३४	३४	३४	३४	३४	३४	३५	३५	३५	३५
	३२	४२	५१	१	१०	२०	२९	३९	४८	५८	७	१७	२७	३६
	४६	११	३६	४	३२	२	३३	५	४४	१४	५१	२१	१०	५१
वृश्चिक ७	३८	३८	३८	३८	३९	३९	३९	३९	३९	३९	४०	४०	४०	४०
	२६	३६	४६	५६	७	१७	२७	३८	४८	५०	९	२०	३०	४१
	०	१३	२८	४३	४	२४	४७	१०	३५	२	४१	२०	३४	७
धनु ८	४३	४३	४४	४४	४४	४४	४४	४५	४५	४५	४५	४५	४५	४६
	४३	५४	५	१६	२७	३८	४९	०	१०	२१	३२	४३	५४	५
	४६	३८	३१	२५	१८	१२	६	०	५४	४८	४१	३५	२८	२२
मकर ९	४९	४९	४९	४९	४९	५०	५०	५०	५०	५०	५०	५१	५१	५१
	८	१८	२९	३९	५०	०	११	२१	३२	४२	५२	३	१३	२३
	१८	५३	२६	५८	२९	५७	२४	४९	१३	३६	५६	१७	३१	४८
कुम्भ १०	५४	५४	५४	५४	५४	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५५	५६	५६
	१३	२३	३२	४२	५२	१	११	२०	३०	३९	४९	५८	८	१७
	३६	९	५०	३०	९	४६	४६	५५	२७	५८	२८	५६	२३	४९
मीन ११	५८	५९	५९	५९	५९	५९	५९	०	०	०	०	०	०	०
	५५	४	१४	२३	३२	४१	५०	०	९	१८	२७	३६	४५	५५
	४४	५५	७	१७	२८	३९	४९	०	१०	२१	३२	४२	५३	४

सारणी

	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
तु०६	३५ ४६ ३४	३५ ५६ १०	३६ ३ ५	३६ १५ ५३	३६ २५ ४३	३६ ३५ ३५	३६ ४५ ३०	३६ ५५ २३	३७ ५ २०	३७ १५ १९	३७ २५ २९	३७ ३५ २६	३७ ४५ २६	३७ ५५ २१	३८ ५ ३९	३८ ५५ ४८
वृ०७	४० ५१ ४२	४१ ५१ १९	४१ ५१ ५७	४१ ५१ ३६	४१ ५१ १६	४१ ५१ ५८	४१ ५१ ४३	४२ ५२ २६	४२ ५२ ११	४२ ५२ ५७	४२ ५२ ४५	४२ ५२ ४३	४३ ५३ २२	४३ ५३ १४	४३ ५३ ३	४३ ५४ ५४
ध०८	४६ १६ १४	४६ २७ ६	४६ ३७ ५७	४६ ४८ ४८	४६ ५९ ३८	४७ १० २७	४७ २१ १५	४७ ३२ ३	४७ ४२ ४९	४७ ५३ ३४	४८ ४ १७	४८ १५ २	४८ २६ ४३	४८ ३६ २४	४८ ४७ ३	४८ ५७ ४१
म०९	५१ ३३ ५९	५१ ४४ ११	५१ ५४ २०	५२ ४ २८	५२ १४ ३४	५२ २४ ३८	५२ ३४ ११	५२ ४४ ४१	५२ ५४ ३९	५२ ६ ३८	५३ १४ २९	५३ २४ २५	५३ ३४ १७	५३ ४४ ७	५३ ५३ ५५	५४ ३ ४१
कु०१०	५६ २७ १४	५६ ३६ ३७	५६ ४५ ५९	५६ ५६ २१	५६ ४ ४१	५७ १४ १	५७ २३ १९	५७ ३२ ३७	५७ ४१ १४	५७ ५१ १०	५८ ० २५	५८ ९ ३९	५८ १८ ५३	५८ २८ ६	५८ ३७ १९	५८ ४६ ३२
मी.११	१ ४ १६	१ १३ २८	१ २२ ४०	१ ३१ ५३	१ ४१ ७	१ ५० २१	१ ५९ ३५	२ ८ ५०	२ १८ ६	२ २७ २३	२ ३६ ४१	२ ४५ ५९	३ ५५ १८	३ ३४ ३९	३ १४ ०	३ २३ २२

लग्नसे दशमभाव

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मेष ०	८	८	८	८	८	८	८	८	८	९	९	९	९	९
	२३	२४	२५	२५	२६	२७	२८	२८	२९	०	०	१	२	३
	५६	३७	१८	५९	४०	२१	२	४३	२४	५	४०	२८	१५	५
	२६	५६	२६	३८	४३	४२	४७	२२	२८	५२	११	५९	२६	३
वृष १	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९
	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८
	४३	२३	२९	१९	१०	१	५२	४२	३३	२४	६८	६	८	९
	३९	२१	६	२४	४२	२४	६	५४	४४	३०	१८	२	५४	५४
मिथुन २	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११
	१५	१६	१७	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२९	०
	४६	५२	५७	३	९	१५	२०	२९	३१	२७	४१	५१	५	९
	४८	४२	५८	२	२७	३	३८	१३	५१	२४	२०	२३	१२	८
कर्क ३	११	११	११	११	११	११	११	११	०	०	०	०	०	०
	२१	२२	२३	२४	२६	२७	२८	२९	१	२	३	४	६	७
	१४	१७	४१	५५	९	२३	३६	५०	४	१८	३२	४७	२	१९
	०	४५	३६	२३	१६	२४	४१	२६	५३	१९	७	५१	२२	४१
सिंह ४	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	२७	२८	२९	०	१	२	४	५	६	७	८	९	१०	१२
	९	१८	५७	३७	४६	५५	४	१४	२३	३२	२२	६	२०	३५
	२५	३९	५२	६	१९	३३	४८	२	१६	३०	५४	३२	५	८
कन्या ५	१	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
	२९	०	१	२	३	४	५	६	७	८	१०	११	१२	१३
	३८	४१	४३	४५	४७	५०	५२	५४	५९	५९	१	३	५	७
	२	८	१०	१२	१	०	५	८	३	७	१३	२१	३५	५२

साधन सारणी

	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
०मे०	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९
	३	४	५	६	६	७	८	९	१०	११	११	१२	१३	१४	१५	१५
	४६	३६	२३	१०	५७	४४	३१	१८	५	८	४२	३२	२४	२४	६	५८
	३८	४९	१०	४६	४६	४८	४०	५१	१	१४	५०	४३	४८	५०	१	४८
वृ०१	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
	२९	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
	१०	११	१२	१३	१३	१५	१६	१७	१८	१८	२०	२१	२४	२३	३५	४१
	५४	५४	५४	५४	५४	५०	५४	५४	५४	५४	५४	५४	३४	३०	४०	१७
मि०२	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११
	१		४	५	६	७	८	१०	११	१२	१३	१५	१६	१७	१८	२०
	३२	४६	०	१४	२८	४१	५५	९	२३	३७	५१	४	१८	३२	४६	०
	५३	३७	३८	२४	१०	५५	५५	४०	२९	१७	२	५७	४२	२७	२१	१३
क०३	०	८	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
	८	९	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६
	३१	४५	०	९	१८	२७	३७	४६	५५	४	१४	२३	३२	४१	५०	०
	१५	४२	१३	३५	३९	५२	६	१९	३५	४८	१२	१६	२९	४३	५६	१२
सि०४	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८
	४४	३५	४४	१०	१२	१४	१६	१८	२७	३०	३२	३४	३६	३८	४०	५२
	१२	१२	१९	२०	५५	४	८	९	१०	१५	५५	७	२	५	८	१
क०५	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
	१०	१२	१४	१६	१४	२१	२१	२९	२७	३०	३२	३५	३७	४०	४२	४३
	८	१	०	७	१४	२२	३०	३२	१	५	८	९	१०	२५	५०	५९

लग्नसे दशमभाव

	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तुला ६	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
	०	१	२	३	४	५	६	८	९	१०	११	१२	१३	१४
	४५	४	१०	५२	५४	५९	५९	१	२	५	८	१५	२३	३४
	७	५	८	१३	१५	१९	२२	२	५	१४	३८	५५	१७	१२
वृश्चिक ७	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
	४	५	६	७	८	९	११	१२	१३	१४	१६	१७	१८	१९
	१०	१९	२९	३८	४३	५३	३	२०	३५	४९	४	१६	३०	४४
	९	५	३	२	०	१	५	१३	२५	३५	४५	८	३	१०
धनु ८	५	५	५	५	५	५	५	५	५	६	६	५	५	५
	१०	११	१३	१४	१५	१६	१८	१०	२०	२१	२२	२४	२५	२६
	३९	५३	६	२०	३४	४८	२	१५	२९	४३	५७	११	१४	१९
	१४	१	५	३	१५	२२	११	३	२९	१०	१५	२५	४८	३७
मकर ९	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६
	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७
	३८	३०	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०	५२
	१	२	५	२	१	०	३	१	५०	२२	११	८	१५	३०
कुम्भ १०	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७
	११	१२	१३	१४	१४	१५	१६	१७	१८	१८	१९	२०	२१	२१
	४०	५	२२	०	५६	४३	३०	२१	१४	५९	३८	२४	५	४६
	५१	३२	३२	३३	३०	२२	७	५	९	१०	५२	८	३	१५
मीन ११	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८
	३	४	४	५	६	६	७	८	९	९	१०	१०	११	१२
	२४	५	५९	२८	९	५०	३२	१२	३	३४	१५	५६	२७	१३
	३९	१२	५	३	०	८	७	६	१	५	३	४५	४७	३६

साधन सारणी

	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु०६	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
	३	१	०	२९	२८	२७	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२०
	१	२२	५३	४२	३३	२४	१५	६	५७	४८	३९	३०	२१
	७	३	५	८	२	५६	४२	३५	२४	१४	७	२२	१५
वृ०७	७	६	५	५	५	५	५	५	४	४	४	४	४
	९	८	६	५	४	३	२	०	२९	२८	२७	२६	२५
	२५	११	५३	४३	३०	१६	२	४८	३४	१९	७	५५	४४
	०	१५	१	३	५	४	७	२१	१८	१५	१२	५७	४६
ध०८	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	५
	१३	१२	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	२	१
	४०	३६	३४	३२	२६	२१	१५	१०	४	५८	५३	४२	३०
	०	४५	३	८	५	३०	२०	१२	१५	३	५	४२	३७
म०९	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	६
	११	१०	९	८	७	६	५	४	३	२	१	०	२९
	७	१०	२०	२९	३८	४६	५७	६५	७५	८४	९३	१२	१
	५०	५०	४५	४०	३५	२७	२१	१३	९	४	३	७	४५
कु.१०	८	८	८	८	७	७	७	७	७	७	७	७	७
	२	११	०	२९	२८	२७	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२०
	३	२१	४०	५९	१८	३७	३४	३३	२८	२७	२४	२१	१८
	४	१६	१५	३०	१२	१०	८	६	४	३	२	१	४८
मी.११	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८
	२३	२२	२१	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३	१२
	१५	४५	५३	१२	३१	५७	३	२८	४६	२४	२०	४०	५९
	४	३	५	१	५९	५३	३	७	५	८	२	३५	२६

	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९
तु०६	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	४	४	४
	१५	१६	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२६	२७	२८	२९	०	१	३
	४२	५०	१	१०	५९	२८	३८	४८	५६	९	१५	२४	३३	४२	५२	१
	३	०	१	८	१५	२२	८	९	३५	४२	५६	२	८	५	३	७
वृ०७	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	६
	२०	२२	३०	२४	२५	२७	२८	२९	०	२	३	४	५	६	८	९
	५८	१२	२५	३८	५५	७	१९	३४	४८	२	१६	३०	४३	५३	११	२५
	१	२	५	३	५७	१२	२५	१८	२१	७	४	५	३	१	१५	०
ध०८	५	५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६
	२	२८	२९	०	१	२	३	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
	२७	३०	३०	४२	४७	५३	५८	४	१०	१५	२१	२६	३२	३४	३६	४०
	३७	३७	४२	३	४	५	३	१५	१२	२०	३०	५	८	३	४५	०
म०९	६	६	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७
	२८	२९	०	०	१	२	३	४	५	५	६	७	८	९	१०	११
	१०	१	१	५२	४३	३३	२४	१५	६	५७	४६	३८	२९	२०	१०	७
	३२	४०	४५	५०	७	३	४	९	१३	२१	२७	३५	४०	४५	५०	५०
कु.१०	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८
	२२	२३	२४	२४	२५	२५	२६	२७	२७	२८	२९	२९	०	११	२	२
	३८	२९	१६	५९	१२	५६	३४	१५	५६	३७	१८	५९	४०	२१	३०	३
	२७	३७	४८	५९	१	२	३	६	८	१०	१२	५	३०	१५	१६	४
मी.११	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८
	१२	१३	१४	१५	१५	१६	१७	१७	१८	१९	१९	२०	२१	२१	२२	२३
	५९	४०	२०	०	३५	२४	५	४६	२८	९	५७	३१	१२	५३	४५	१५
	२६	१२	४२	३५	१	२	८	५	७	३	५३	५९	१	५	३	४

अन्यभाव साधन करनेकी प्रक्रिया

दशम भावकी राशिमें छः जोड़नेसे चतुर्थ भाव आता है। चतुर्थ भावमेंसे लग्नको घटानेसे जो शेष आवे उसमे छःका भाग देकर लब्धको लग्नमें जोड़नेसे लग्नकी सन्धि; लग्नकी सन्धिमे इस षष्ठ्यंशको जोड़नेसे द्वितीय भाव; द्वितीय भावमें इस षष्ठ्यंशको जोड़नेसे धनभावकी सन्धि; इस सन्धिमें षष्ठ्यंशको जोड़नेसे तृतीय—सहजभाव; सहजभावमें षष्ठ्यंश जोड़नेसे तृतीयभावकी सन्धि और इस सन्धिमे षष्ठ्यंश जोड़नेसे चतुर्थभाव होता है।

तीस अंशमेंसे इस षष्ठ्यंशको घटाकर शेषको चतुर्थभाव—सुहृद्भाव-में जोड़नेसे चतुर्थकी सन्धि; इस सन्धिमें उसी शेषको जोड़नेसे पञ्चम-भाव—पुत्रभाव; पुत्रभावमें इसी शेषको जोड़नेसे षष्ठ—रिपुभाव और इस षष्ठभावमे इसी शेषको जोड़नेसे—रिपुभावकी सन्धि होती है।

लग्नमें छः राशि जोड़नेसे सप्तमभाव, लग्नसन्धिमे छः राशि जोड़नेसे सप्तमभावकी सन्धि, द्वितीय भावमे छः राशि जोड़नेसे अष्टमभाव, द्वितीय भावकी सन्धिमें छः राशि जोड़नसे अष्टमभावकी सन्धि, तृतीयभावमें छः राशि जोड़नेसे नवमभाव, तृतीयभावकी सन्धिमे छः राशि जोड़नेसे नवमभावकी सन्धि, चतुर्थभावमे छः राशि जोड़नेसे दशमभाव, चतुर्थ-की सन्धिमें छः राशि जोड़नेसे दशम भावकी सन्धि, पचम भावमे छः राशि जोड़नेसे एकादशम भाव पंचम भावकी सन्धिमे छः राशि जोड़नेसे एकादशम भावकी सन्धि, षष्ठ भावमें छः राशि जोड़नेसे द्वादशम भाव और षष्ठ भावकी सन्धिमें छः राशि जोड़नेसे द्वादशम भावकी सन्धि होती है।

उदाहरण—

१।२४।४३।२१दशम भाव

६। ०। ०। ० जोड़ा

७।२४।४३।२१ चतुर्थ भावमेंसे
४।२३।२५।२८ लग्नको घटाया
३। १।१७।५८÷६=०।१५।१२।५९ षष्ठ्यंश
४।२३।२५।२७ लग्नमे
०।१५।१२।५९ षष्ठ्यंश जोड़ा
५। ८।३८।२६ लग्नकी सन्धिमें
०।१५।१२।५९ षष्ठ्यंश जोड़ा
५।२३।५१।२५ द्वितीय भावमें
०।१५।१२।५९ षष्ठ्यंश जोड़ा
६। ९। ४।२४ द्वितीय भावकी सन्धिमें
०।१५।१२।५९ षष्ठ्यंश जोड़ा
६।२४।१८।२३ तृतीय भावमें
०।१५।१२।५९ षष्ठ्यंश जोड़ा
८। ९।३०।२३ तृतीय भावकी सन्धिमें
०।१५। २।५९ षष्ठ्यंश जोड़ा
७।२४।४३।२१ चतुर्थ भाव
३० अंशमेंसे
१५।१२।५९ षष्ठ्यंशको घटाया
१४।४७। १ शेष
७।२४।४३।२१ चतुर्थ भावमें
०।१४।४७। १ शेषको जोड़ा
८। ९।३०।२२ चतुर्थ भावकी सन्धि
०।१४।४७। १ शेषको जोड़ा
८।२४।१७।२३ पञ्चम भाव
०।१४।४७। १ शेषको जोड़ा
९। ९। ४।२४ पञ्चम भावकी सन्धि

९। ९। ४।२४ पंचम भाव संधि
९।२३।५१।२५ षष्ठ भाव
०।१४।४७। १
१०। ८।३८।२६ षष्ठ भावकी सन्धि
०।१४।४७। १
१०।२३।२५।२७ सप्तम भाव

लग्न सन्धि ५।८।३८।२६+६ राशि=११।८।३८।२६ सप्तम भाव-सन्धि
द्वितीय भाव ५।२३।५१।२५+६ राशि=११।२३।५१।२५ अष्टम भाव
द्वितीय भावकी सन्धि ६।९।४।२४+६ राशि=०।९।४।२४ अष्टम भाव सं०

तृतीय भाव ६।२४।१७।२६+६ राशि=०।२४।१७।२३ नवम भाव
तृतीय भाव सन्धि ७।९।३०।२२+६ राशि=१।९।३०।२२ नवम भावकी सन्धि

चतुर्थ भाव ७।२४।४३।२१+६ राशि=१।२४।४३।२१ दशम भाव
चतुर्थ भावकी सन्धि ८।९।३०।२२+६ राशि=२।९।३०।२२ दशम भाव-की सन्धि

पंचम भाव ८।२४।१७।२३+६ राशि=२।२४।१७।२३ एकादशम भाव
पंचम भावसन्धि ९।९।४।२४+६ राशि=३।९।४।२४ एकादशम भाव सं०
षष्ठ भाव ९।२३।५१।२५+६ राशि=३।२३।५१।२५ द्वादशम भाव
षष्ठ भावकी सन्धि १०।८।३८।१६+६ राशि=४।८।३८।२६ द्वादशम भावकी सन्धि

द्वादश भावोंके नाम

तनु, धन, सहज, सुहृद, पुत्र, रिपु, स्त्री, आयु, धर्म, कर्म, आय और व्यय ये क्रमशः बारह भावोंके नाम हैं। द्वादश भाव स्पष्ट चक्र लिखते समय प्रत्येक भावके अनन्तर उसके सन्धि मानको रखते हैं।

द्वादश भाव स्पष्ट चक्र

त०	स०	ध०	स०	स०	स०	मु०	स०	पु०	स०	रि०	स०
४	५	५	६	६	७	७	८	८	९	९	१०
२३	८	२३	९	२४	९	२४	९	२४	९	२३	८
२५	३८	५१	४	१७	३०	४३	३०	१७	४	५१	३८
२७	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२२	२३	२४	२५	२६

स्त्री०	स०	आ०	स०	ध०	स०	क०	स०	आ०	स०	क०	सं०
१०	११	११	०	०	१	१	२	२	३	३	४
२३	८	२३	९	२४	९	२४	९	२४	९	२३	८
२५	३८	५१	४	१७	३०	४३	३०	१७	४	५१	३८
२७	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२२	२३	२४	२५	२६

चलितचक्र अवगत करनेका नियम

चलितचक्र ज्ञात करनेके लिये ग्रहस्पष्ट और भावस्पष्टके साथ तुलनात्मक विचार करना चाहिये। यदि ग्रहके राश्यादि भावके राश्यादिके तुल्य हों तो वह ग्रह उस भावमे और उसके राश्यादि भावसन्धिके राश्यादिके समान हो अथवा भावके राश्यादिसे आगे और भावसन्धिके राश्यादिसे पीछे हो तो भावसन्धिमें एवं आगेवाले या पीछेवाले भावके राश्यादिके समान हो तो आगे या पीछेके भावमे ग्रहको समझना चाहिये।

चलितचक्रकी जन्मपत्रीमें अत्यावश्यकता रहती है। चलितके बिना ग्रहोके स्थानका ठीक ज्ञान नही हो सकता है।

प्रस्तुत उदाहरणका चलितचक्र ज्ञात करनेके लिये सर्वप्रथम सूर्यके साथ विचार किया। नवग्रहस्पष्ट चक्रमे सूर्य ०।१०।७।३४ आया है और भावस्पष्टमें अष्टम—आयुभावकी सन्धि ०।९।४।२४ है, सूर्यके अंश सन्धिके अंशोसे आगे हे, अतः सूर्य नवम—धर्मभावमें माना जायगा।

चन्द्रमा १।०।२४।३४ है, धर्मभाव ०।२४।१७।३३ और इसकी सन्धि १।९।३०।२२ है, अतएव यहाँ चन्द्रमा नवमभावकी सन्धिमें माना जायगा। मंगल २।२१।५२।४४ है, आय भाव २।९।३०।२२से २।२४।१७।२३ तक है अतः मंगल आय भावमें, इसी प्रकार बुध नवममें, गुरु व्यय भावकी सन्धिमें, शुक्र अष्टमभावमें, शनि दशम भावकी सन्धिमे, राहु व्ययभावमें एव केतु रिपुभावमें माना जायगा।

दशवर्ग विचार

ग्रहोंके बलाबलका ज्ञान करनेके लिये दशवर्गका साधन किया जाता है। दशवर्गमे गृह, होरा, द्रेष्काण, सप्ताश, नवाश, दशांश, द्वादशांश, षोड़शाश, त्रिशांश और षष्ठ्यंश परिगणित किये गये है।

गृह—जो ग्रह जिस राशिका स्वामी होता है, वह राशि उस ग्रहका गृह कहलाती है। राशियोंके स्वामी निम्न प्रकार है—

मेष, वृश्चिकका मंगल; वृष, तुलाका शुक्र; मिथुन, कन्याका बुध; कर्कका चन्द्रमा; धनु, मीनका गुरु; सिहका सूर्य एवं मकर, कुम्भका स्वामी शनि होता है।

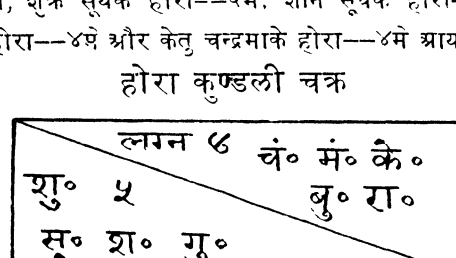
होरा—१५ अंशका एक होरा होता है, इस प्रकार एक राशिमें दो होरा होते हैं। विषम राशि—मेष, मिथुन आदिमें १५ अंशतक सूर्यका होरा और १६ अंशसे ३० अंशतक चन्द्रमाका होरा, समराशि—वृष, कर्क आदिमें १५ अंशतक चन्द्रमाका होरा और १६ अंशसे ३० अंशतक सूर्यका होरा होता है। जन्मपत्रीमें होरा लिखनेके लिये पहले लग्नमें देखना होगा कि किस ग्रहका होरा है; यदि सूर्यका होरा हो तो होरा-कुण्डलीकी ५ लग्न राशि और चन्द्रमाका होरा हो तो होराकुण्डलीकी ४ लग्नराशि होती है। होराकुण्डलीमें ग्रहोंके स्थापनके लिये ग्रहस्पष्टके राश्यादिसे विचार करना चाहिये। नीचे होराज्ञानके लिये होराचक्र दिया जाता है, इसमें सूर्य और चन्द्रमाके स्थानपर उनकी राशियाँ दी गई हैं।

मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	अ०
५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	१५ अश
४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	३० अ

उदाहरण——लग्न ४।२३।२५।२७ अर्थात् सिंह राशिके २३ अंश २५ कला २७ विकलापर है । सिंह राशिके १५ अंशतक सूर्यका होरा १६ अंशसे आगे ३० अंशतक चन्द्रमाका होरा होता है । अतः यहाँ चन्द्रमाका होरा हुआ और होरा लग्न ४ माना जायगा ।

ग्रह स्थापित करनेके लिये स्पष्ट ग्रहोंपरसे विचार करना है। पूर्वमें स्पष्ट सूर्य ०।१०।७।३४ अर्थात् मेष राशिका २० अंश ७ कला ३४ विकला है । मेषराशिमें १५ अंशतक सूर्यका होरा होता है, अतः सूर्य अपने होरा——५ में हुआ । चन्द्रमाका स्पष्टमान १।०।२४।३४——वृष राशिका ० अंश २४ कला ३४ विकला है; वृष राशिमें १५ अंशतक चन्द्रमाका होरा होता है । अतएव चन्द्रमा अपने होरा——४में हुआ । मंगलका स्पष्ट मान २।२१।५२।४४——मिथुन राशिका २१ अंश ५२ कला ४४ विकला है । मिथुन राशिमें १६ अंशसे ३० अंशतक चन्द्रमाका होरा होता है, अतः मंगल चन्द्रमाके होरा——४में हुआ । बुध ०।२३।२१।३१——मेष राशिका २३ अंश २१ कला ३१ विकला है । मेष राशिमें १६ अंशसे चन्द्रमाका होरा होता है अतः बुध चन्द्रमाके होरा——४में हुआ इसी प्रकार बृहस्पति सूर्यके होरा——५में, शुक्र सूर्यके होरा——५में, शनि सूर्यके होरा——५में, राहु चन्द्रमाके होरा——४थे और केतु चन्द्रमाके होरा——४में आया ।

होरा कुण्डली चक्र



द्रेष्काण—१० अंशका एक द्रेष्काण होता है, इस प्रकार एक राशिमें तीन द्रेष्काण—१ अंशसे १० अंशतक प्रथम द्रेष्काण, ११से २० अंशतक द्वितीय द्रेष्काण, और २१ अंशसे ३० अंशतक तृतीय द्रेष्काण समझना चाहिये।

जिस किसी राशिके प्रथम द्रेष्काणमें ग्रह हो तो उसी राशिका, द्वितीय द्रेष्काणमें उस राशिसे पंचम राशिका और तृतीय द्रेष्काणमें उस राशिसे नवम राशिका द्रेष्काण होता है। सरलतासे समझनेके लिये द्रेष्काण चक्र नीचे दिया जाता है—

द्रेष्काण-चक्र

मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मि०	अंश
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१०
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२०
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	३०

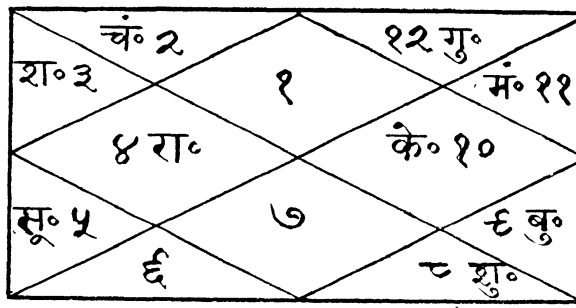
जन्मपत्रीमें द्रेष्काण कुण्डली बनानेकी प्रक्रिया यह है कि लग्न जिस द्रेष्काणमें हो, वही द्रेष्काण कुण्डलीकी लग्नराशि होगी। ग्रह स्थापन करनेके लिये ग्रह स्पष्ट मानके अनुसार प्रत्येक ग्रहका पृथक-पृथक द्रेष्काण निकालकर प्रत्येक ग्रहको उसकी द्रेष्काण राशिमें स्थापित करना चाहिये—

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ अर्थात् सिंह राशिके २३ अंश, २५ कला और २७ विकला है। यह लग्न सिंह राशिके तृतीय द्रेष्काण—मेष राशिकी हुई। अतएव द्रेष्काण कुण्डलीका लग्न मेष होगा।

ग्रहोंके विचारके लिये प्रत्येक ग्रहका स्पष्ट मान लिया तो सूर्य ०।१०।७।३४—मेष राशिका १० अंश, ७ कला और ३४ विकला है। मेषमें १० अंश बीत जानेके कारण सूर्य मेषके द्वितीय द्रेष्काण—सिंह राशिका माना जायगा। चन्द्रमा १।०।२४।३४—वृष राशिका ० अंश, २४ कला और ३४ विकला है। वृषमें १० अंशतक प्रथम द्रेष्काण वृष राशिका ही होता है। अतः चन्द्रमा वृष राशिमें लिखा जायगा। मंगल २।२१।५२।५४—मिथुन राशिका २१ अंश, ५२ कला और ५४ विकला है। मिथुन

राशिमे २१ अंशसे तृतीय द्रेष्काणका आरम्भ होता है, अतः मगल मिथुनके तृतीय द्रेष्काण कुम्भका लिखा जायगा। इसी प्रकार बुध धनु राशिका, गुरु मीन राशिका, शुक्र वृश्चिक राशिका, शनि मिथुन राशिका, राहु कर्क राशिका और केतु मकर राशिका माना जायगा।

द्रेष्काण-कुण्डली-चक्र



सप्तांश या सप्तामांश—एक राशिमे ३० अश होते है। इन अशोमे ७का भाग देनेसे ४ अंश १७ कला ८ विकलाका सप्तमाश होता है।

लग्न और ग्रहोके सप्तमांश निकलनके लिये समराशिमे उस राशिकी सप्तम राशिसे और विषम राशिमें उसी राशिसे सप्तमांशकी गणना की जाती है।

सप्तमांश बोधक चक्र

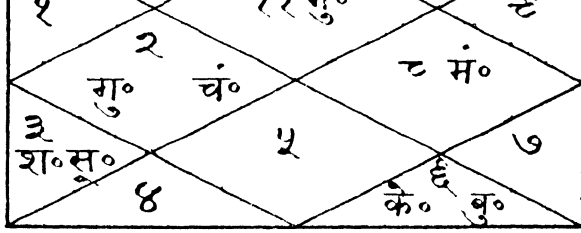
मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	अश कलादि
१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	४।१७। ८
२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	८।३४।१७
३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	१२।५१।२५
४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	१७। ८।३४
५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	२१।२५।४२
६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	२५।४२।५१
७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	३०। ०। ०

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७—सिह राशिके २३ अश, २५

कला २७ विकला है। सिंह राशिमें २१ अंश २५ कला ४२ विकला तकका पाँचवाँ सप्ताश होता है, पर हमारी अभीष्ट लग्न इससे आगे है अतः छठवाँ सप्ताश कुम्भ राशिका माना जायगा। इसलिये सप्ताश कुण्डलीकी लग्न कुम्भ होगी।

ग्रह स्थापनके लिये प्रत्येक ग्रहके स्पष्ट मानसे विचार करना चाहिये। सूर्य ०।१०।७।३४ है, शेष राशिमें ८ अंश ३४ कला १७ विकला तक द्वितीय सप्ताश होता है और इससे आगे १२ अंश ५१ कला २५ विकला तृतीय सप्ताश होता है। सूर्य यहाँपर तृतीय सप्ताश--मिथुन राशिका हुआ। चन्द्रमा १।०।२४।३४--वृष राशिके ० अंश, २४ कला और ३४ विकला-का है और वृष राशिका प्रथम सप्ताश ४ अंश, १७ कला ८ विकला तक है अतः चन्द्रमा वृषका प्रथम सप्ताश वृश्चिकका हुआ। इसी प्रकार मंगलकी सप्ताश राशि वृश्चिक, बुधकी कन्या, गुरुकी मिथुन, शुक्रकी कुम्भ, शनिकी मिथुन, राहुकी मीन और केतुकी कन्या हुई।

सप्तमांश कुण्डली चक्र



नवमांश--एक राशिके नौवे भागको नवमांश या नवांश कहते हैं, यह ३ अंश २० कलाका होता है। तात्पर्य यह है कि एक राशिमें नौ राशियोंके नवांश होते हैं, लेकिन बात जाननेकी यह रह जाती है कि ये नौ नवांश प्रति राशिमें किन-किन राशियोंके होते हैं। इसका नियम यह

है कि मेषमे पहिला नवांश मेषका, दूसरा वृषका, तीसरा मिथुनका, चौथा कर्कका, पाँचवाँ सिंहका, छठवाँ कन्याका, सातवाँ तुलाका, आठवाँ वृश्चिक-का और नौवाँ धनु राशिका होता है। इस नौवे नवांशमे मेष राशिकी समाप्ति और वृष राशिका प्रारंभ होजाता है, अतः वृष राशिमे प्रथम नवांश मेष राशिके अन्तिम नवांशसे आगेका होगा। इस प्रकार वृषमे पहला नवांश मकरका, दूसरा कुम्भका, तीसरा मीनका, चौथा मेषका, पाँचवाँ वृषका, छठवाँ मिथुनका, सातवाँ कर्कका, आठवाँ सिंहका और नौवाँ कन्याका नवांश होता है। मिथुन राशिमे पहला नवांश तुलाका, दूसरा वृश्चिकका, तीसरा धनुका, चौथा मकरका, पाँचवाँ कुम्भका, छठवाँ मीनका, सातवाँ मेषका, आठवाँ वृषका और नौवाँ मिथुनका नवांश होता है। इसी तरह आगे-आगे गिनकर अगली राशियोंके नवांश जान लेना चाहिये।

गणित विधिसे नवांश निकालनेका नियम यह है कि अभीष्ट संख्यामे राशि अंकको ९से गुणा करनेपर जो गुणनफल आवे, उसके अंशोमे ३।२०का भाग देकर जो नवांश मिले उसे जोड देनेसे नवांश आ जायगा। लेकिन १२से अधिक होनेपर १२का भाग देनेसे जो शेष रहे वही नवांश होगा।

नवांश बोधक-चक्र

मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	अंश० क०
१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	३।२०
२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	६।४०
३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	१०।०
४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	१३।२०
५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	८	१६।४०
६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	२०।०
७	४	१	१०	७	४	१	१०	७	४	१	१०	२३।२०
८	५	२	११	८	५	२	११	८	५	२	११	२६।४०
९	६	३	१२	९	६	३	१२	९	६	३	१२	३०।०

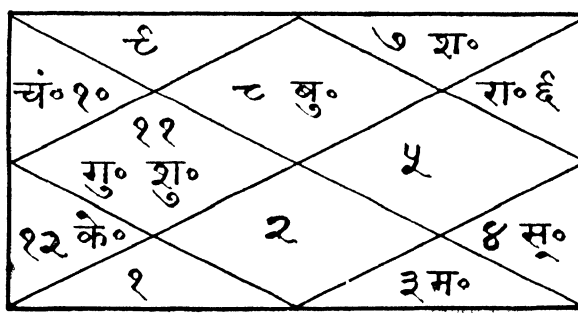
नवांश कुण्डली बनानेकी विधि––लग्न स्पष्ट जिस नवांशमें आया हो वही नवांश कुण्डलीका लग्न माना जायगा और ग्रह स्पष्ट द्वारा ग्रहोंका ज्ञानकर जिस नवांशका जो ग्रह हो, उस ग्रहको उस राशिमें स्थापन करनेसे जो कुण्डली बनेगी, वही नवांश कुण्डली होगी।

उदाहरण––लग्न ४।२३।२५।२७ है। इसे नवांश बोधक चक्रमें देखनेसे सिंहका आठवाँ नवांश हुआ अतएव नवांश कुण्डलीकी लग्न राशि वृश्चिक मानी जायगी, क्योंकि सिंहके आठवें नवमांशकी राशि वृश्चिक है।

ग्रहोंके स्थापनके लिये विचार किया तो सूर्य ०।१०।७।३४ है, इसे नवांश बोधक चक्रमें देखा तो यह मेषके चौथे नवांश––कर्क राशिका हुआ। अतः कर्कमें सूर्यको रखा जायगा। चन्द्रमा १।०।२४।३४ है, चक्रमें देखनेसे यह वृषके प्रथम नवांश मकर राशिका होगा। इसी प्रकार मंगल मिथुनका, बुध वृश्चिकका, गुरु कुम्भका, शुक्र कुम्भका, शनि तुलाका राहु कन्याका और केतु मीन राशिका लिखा जायगा।

चर राशिका पहला नवांश, स्थिर राशिका पाँचवाँ और द्विस्वभाव राशिका अंतिम नवांश वर्गोत्तम नवांश कहलाते हैं।

नवमांश कुण्डली चक्र



दशमांश विचार––एक राशिमें दस दशमांश होते हैं, अर्थात् ३ अंशका एक दशमांश होता है।

विषम राशिमे उसी राशिसे और सम राशिमे नवम राशिसे दशमाश-की गणना की जाती है। दशमाश कुण्डली बनानेका नियम यह है कि लग्न स्पष्ट जिस दशमाशमे हो, वही दशमाश कुण्डलीका लग्न माना जायगा। और ग्रह स्पष्ट द्वारा ग्रहोको ज्ञातकर जिस दशमाशका जो ग्रह हो उस ग्रहको उस राशिमे स्थापन करनेसे जो कुण्डली बनेगी, वही दशमांश कुण्डली होगी।

दशमाशका स्पष्ट बोध करनेके लिये आगे चक्र दिया जाता है।—

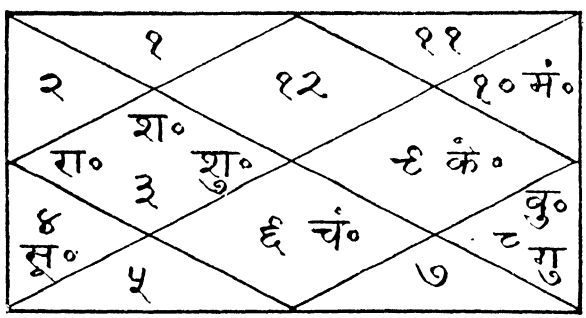
दशमांश चक्र

मे०	वृ०	मि०	कु०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	म० क० सख्या	
०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११		
१	१०	३	१२	५	२	७	४	९	६	११	८	३।०	प्रथम
२	११	४	१	६	३	८	५	१०	७	१२	९	६।०	द्वितीय
३	१२	५	२	७	४	९	६	११	८	१	१०	९।०	तृताय
४	१	६	३	८	५	१०	७	१२	९	२	११	१२।०	चतुर्थ
५	२	७	४	९	६	११	८	१	१०	३	१२	१५।०	पचम
६	३	८	५	१०	७	१२	९	२	११	४	१	१८।०	षष्ठ
७	४	९	६	११	८	१	१०	३	१२	५	२	२१।०	सप्तम
८	५	१०	७	१२	९	२	११	४	१	६	३	२४।०	अष्टम
९	६	११	८	१	१०	३	१२	५	२	७	४	२७।०	नवम
१०	७	१२	९	२	११	४	१	६	३	८	५	३०।०	दशम

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ है, इसे दशमाश चक्रमे देखा तो सिहमे आठवाँ दशमाश मीन राशिका मिला। अतः दशमाश कुण्डलीकी लग्न-राशि मीन होगी। ग्रहोके स्थापनके लिये सूर्य ०।१०।७।३४का दशमाश मेषका चौथा हुआ, अर्थात् सूर्यकी दशमाश कुण्डलीमे कर्क

राशिमे स्थिति रहेगी। इसी प्रकार चन्द्रमाकी दशमाश राशि कन्या, मगलकी मकर, बुधकी वृश्चिक, गुरुकी वृश्चिक, शुक्रकी मिथुन, शनिकी मिथुन, राहुकी मिथुन और केतुकी धनु होगी।

दशमांश कुण्डली—चक्र



द्वादशांश—एक राशिमे १२ द्वादशाश होते है अर्थात राशिके बारहवें भाग २½ अशका एक द्वादशाश होता है। द्वादशाश गणना अपनी राशिसे ली जाती है। जैसे मेषमे मेषसे, वृषमे वृषसे, मिथुनमे मिथुनसे, आदि। तात्पर्य यह है कि जिस राशिमे द्वादशाश जानना हो, उसमे पहला द्वादशाश अपना, दूसरा आगे वाली राशिका, इसी प्रकार १२द्वादशाश उस राशिके होगे।

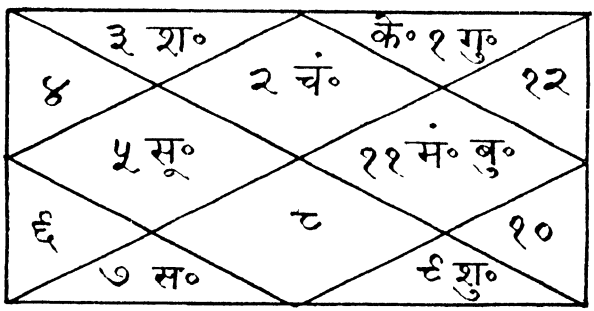
द्वादशांश कुण्डली बनानेकी विधि—नवाश, दशमाश आदिकी कुण्डलियोके समान है—अर्थात् लग्न स्पष्टमें द्वादशांश निकाल कर द्वादशाश कुण्डलीकी लग्न बना लेनी चाहिये, अनन्तर पहलेके समान सभी ग्रहोंकी राश्यादिके द्वादशाश निकाल कर ग्रहोको द्वादशांशकी राशिमे स्थापित कर देना चाहिये।

द्वादशांश बोधक चक्र

०मे०	१ वृ०	२ मि०	३ क०	४ सि०	५ क०	६ तु०	७ वृ०	८ ध०	९ म०	१० कु०	११ मी०	ऊँश०	म०
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	२।३०	१
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	५।०	२
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	७।३०	३
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	१०।०	४
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	१२।३०	५
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	१५।०	६
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	१७।३०	७
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२०।०	८
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२२।३०	९
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२५।०	१०
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२७।३०	११
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	३०।०	१२

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७, द्वादशांश बोधक चक्रमे देखने पर सिंहमे दशवाँ द्वादशांश वृष राशिका है। अतः द्वादशांश कुण्डलीकी लग्न वृष राशि होगी। ग्रह स्थापनमे पहलेके समान किया जायगा।

द्वादशांश कुण्डली



षोड़शांश—एक राशिमे १६ षोड़शाश होते है। एक षोड़शाश १ अंश ५२ कला ३० विकलाका होता है। षोड़शाशकी गणना चर राशियोमे मेषादिसे; स्थिर राशियोमे सिहादिसे और द्विस्वभाव राशियोमें धनु राशिसे की जाती है।

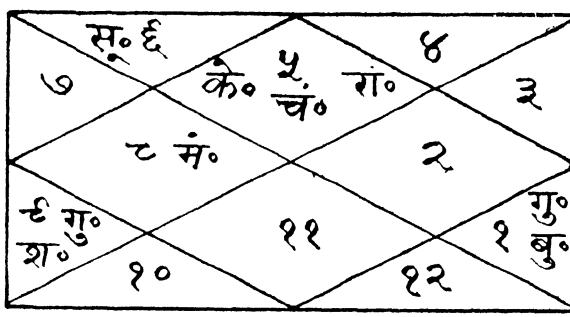
षोड़शाश कुण्डलीके बनानेकी विधि यह है कि लग्न स्पष्ट जिस षोड़शाशमे आया हो, वही षोडशाश कुण्डलीका लग्न माना जायगा और ग्रहोके स्पष्टके अनुसार ग्रह स्थापित किये जायँगे।

षोडशांश ज्ञात करनेका चक्र

चर	स्थिर	द्विस्वभाव	अंशादि
मे० क० तु० म०	वृ० सि० वृ० कु०	मि० के० ध० मी०	
१	५	९	१।५२।३०
२	६	१०	३।४५।०
३	७	११	५।३७।३०
४	८	१२	७।३०।०
५	९	१	९।२२।३०
६	१०	२	११।१५।०
७	११	३	१३।७।३०
८	१२	४	१५।०।०
९	१	५	१६।५२।३०
१०	२	६	१८।४५।०
११	३	७	२०।३७।३०
१२	४	८	२२।३०।०
१	५	९	२४।२२।३०
२	६	१०	२६।१५।०
३	७	११	२८।७।३०
४	८	१२	३०।०।०

उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ है, यहाँ लग्न सिह राशिकी होने-के कारण स्थिर कहलायेगी। सिहके २३ अश २५ कला, २७ विकलाका १३ वाँ षोड़शाश होगा, जिसकी राशि सिह है। अतः यहाँ षोड़शाश कुण्डलीकी लग्नराशि सिह होगी। ग्रहोके राश्यादिको भी षोड़शाश चक्रमे देखकर षोड़शांशकी राशिमे स्थापित कर देना चाहिये।

षोडशांश कुण्डली चक्र



त्रिशांश—विषम राशियो—मेष, मिथुन, सिह, तुला, धनु और कुम्भमे पहला ५ अश मगलका, दूसरा ५ अंश शनिका, तीसरा ८अंश बृहस्पतिका, चौथा ७ अश बुधका और पाँचवाँ ५ अंश शुक्रका त्रिशांश होता है। तात्पर्य यह है कि उपर्युक्त विषम राशियोंमें यदि कोई ग्रह एकसे पाँच अश पर्यन्त रहे तो मगलके त्रिशाशमे कहा जायगा। छठवेसे दसवें अंशतक रहे तो शनिके, ग्यारहवेसे अठारहवे अंशतक रहे तो बृहस्पतिके, उन्नीसवेसे पच्चीसवे अंशतक रहे तो बुधके और २६वेसे ३०वे अंशतक रहे तो शुक्रके त्रिशाशमे वह ग्रह कहा जायगा।

सम राशियो—वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीनमे पहला ५अंशतक शुक्रका, दूसरा ७अंशतक बुधका, तीसरा ८अंशतक

बृहस्पतिका, चौथा ७अंशतक शनिका और पाचवाँ ५अंशतक मंगलका त्रिंशांश है।

राशि पद्धतिके अनुसार विषम राशियोंमें ५ अंशतक मेषका, १०अंश तक कुम्भका, १८अंश तक धनुका, २५अंश तक मिथुनका, और ३०अंश तक तुलाका त्रिंशांश होता है।

त्रिंशांश कुण्डली भी पूर्ववत् बनायी जायगी।

विषम राशिका त्रिंशांश चक्र

मे०	मिथु०	सि०	तु०	धनु०	कुम्भ	अंश
१	१ मं०	१ मं०	१ मं०	१ मं०	१ मं०	५
११	११ शं०	११ शं०	११ शं०	११ शं०	११ शं०	१०
९	९ गु०	९ गु०	९ गु०	९ गु०	९ गु०	१८
३	३ बु०	३ बु०	३ बु०	३ बु०	३ बु०	२५
७	७ शु०	७ शु०	७ शु०	७ शु०	७ शु०	३०

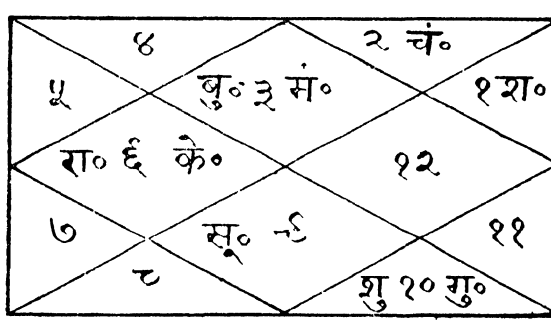
उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७—सिंह राशिके २३अंश, २५कला २७ विकला है, यह सिंह राशिके १८ अंशसे आगे और २५ अंशके पीछे है,

अतः मिथुनका त्रिशांश कहलायेगा। त्रिशांश कुण्डलीका लग्न मिथुन होगा। सूर्य ०।१०।७।३४–मेष राशिके १०अंशके ७ कला ३४ विकला है मेष राशिमे १०अंशसे आगे १८अंशतक धनु राशिका त्रिशांश होता है। अतः सूर्य धनु राशिका होगा।

समराशिका त्रिशांश चक्र

वृ०	क०	क०	वृ०	म०	मी०	अंश
२ शु०	२ शु०	२ शु०	२ शु०	२ शु०	२ शु०	१ से ५तक
६ बु०	६ बु०	६ बु०	६ बु०	६ बु०	६ बु०	६से १२तक
२१ गु०	१२ गु०	१२ गु०	१२ गु०	१२ गु०	१२ गु०	१३से २०तक
१० श०	१० श०	१० श०	१० श०	१० श०	१० श०	२१से २५तक
८ म०	८ म०	८ म०	८ म०	८ म०	८ म०	२६से ३०तक

त्रिशांश कुण्डली चक्र



षष्ठ्यंश—एक राशिमे ६० षष्ठ्यंश होते है अर्थात् ३० कलाका एक षष्ठ्यंश होता है।

जिस ग्रह या लग्नका षष्ठ्यंश साधन करना हो उस ग्रहकी राशिको छोड़कर अंशोकी कला बनाकर आगे वाली कलाओको उसमें जोड़ देना चाहिये। इन योगफल वाली कलाओमे ३० का भाग देनेसे जो लब्ध आवे उसमे एक और जोड़ दे। इस योगफलको आगे दिये गये षष्ठ्यंश चक्रमें देखनेसे षष्ठ्यंशकी राशि मिल जायगी। विषम राशि वाले ग्रह-का देवतांश विषम-देवताशके नीचे और सम राशि वालेका सम-देवताशके नीचे मिलेगा।

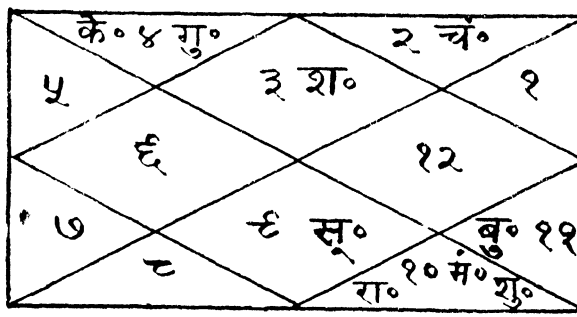
षष्ठ्यंश कुण्डली बनानेका उदाहरण—लग्न ४।२३।२५।२७ है। यहाँ राशि अकको छोड़कर अंशोकी कला बनाई तो—२३।२५

१३८०+२५=१४०५÷३०=४६ शेष २५

लब्ध ४६+१=४७वाँ षष्ठ्यंश हुआ, चक्रमे देखा तो सिंह राशिका ४७वाँ षष्ठ्यंश मिथुन है अतः षष्ठ्यंश कुण्डलीकी लग्न मिथुन होगी। इस चक्रसे बिना गणित किये भी षष्ठ्यंशका बोध कोष्ठकके अन्तमे दिये गये अंशादिके द्वारा किया जा सकता है। प्रस्तुत लग्न सिंहके २३अंश २५कला २३अंशसे आगे है। अतः २३।३० वाले कोष्ठकमे सिंहके नीचे मिथुन लिखा गया है अतः षष्ठ्यंश लग्न मिथुन होगा।

ग्रहोके स्थान पहलेके समान ही स्थापित करने चाहिये।

षष्ठ्यंश कुण्डली चक्र



षष्ट्यंश चक्र

विषय-देवताश	सं.	मे.	वृ.	मि.	क	सि.	क	तु.	वृ.	ध.	म	कु	मी.	अंश सम-देवताश
घोर	१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	०।३० इन्दुरेखा
राक्षस	२	३	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१।० भ्रमण
दव	३	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१।३० पयोधि
कुवेर	४	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२।० सुधा
यक्ष	५	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२।३० शीत
किन्नर	६	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	३।० क्रूर
भ्रष्ट	७	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	३।३० शुभाकर
कुलपात	८	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	४।० निर्मल
गरल	९	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	४।३० दण्डायुध
अग्नि	१०	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	५।० कालाग्नि
माया	११	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	५।३० प्रवीण
प्रतपुरोष	१२	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	६।० इन्द्रमुख
अपापनि	१३	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	६।३० दंष्ट्राकराल
देवगणेश	१४	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	७।० शीतल
काल	१५	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	७।३० मृदु

अहिमा	१६	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	८।० सौम्य
अमृत	१७	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	८।३० काल
चन्द्र	१८	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	९।० पातक
मृदुश	१९	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	९।३० वंशभ्रष्ट
कोमल	२०	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	१०।० कुलनाश
दम	२१	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	१०।३० विषदग्ध
ब्रह्मा	२२	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	११।० पूर्णचन्द्र
विष्णु	२३	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	११।३० अमृत
महेश्वर	२४	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	१२।० सुधा
देव	२५	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२।३० कण्टक
आदि	२६	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३।० यम
कविनाश	२७	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१३।३० घोर
क्षितीश्वर	२८	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१४।० दावाग्नि
कमलाकर	२९	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	१४।३० काल
मान्दी	३०	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	१५।० मृत्यु

मृत्युकर	३१	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	१५।३० मान्दी
काल	३२	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	१६। ० कमलाकर
दावाग्नि	३३	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	१६।३० क्षितीश
घोर	३४	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१७। ० कलिनाश
यम	३५	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	१७।३० आर्द्र
कण्टक	३६	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१८। ० वैद्य
सुधा	३७	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१८।३० महेश्वर
अमृत	३८	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	१९। ० विष्णु
पूर्णचन्द्र	३९	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	१९।३० ब्रह्मा
विषदग्ध	४०	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२०। ० पद्मभाग
कुलनाश	४१	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२०।३० कोमल
वंशक्षय	४२	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	२१। ० मृदंग
पातक	४३	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	२१।३० चन्द्र
काल	४४	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२२। ० अमृत
सौम्य	४५	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२२।३० अहिमा

१७

मृदु	४६	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२३। ०	काल
शीतल	४७	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२३।३०	देवगणेश
दष्ट्राकराल	४८	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	२४। ०	अपापति
इन्द्रमुख	४९	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	२४।३०	प्रेतपुशि
प्रवीण	५०	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२५। ०	माया
कालाग्नि	५१	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	२५।३०	अग्नि
दण्डायुध	५२	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	२६। ०	गरल
निर्मल	५३	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	२६।३०	कुलघ्न
शुभाकर	५४	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	२७। ०	भ्रष्ट
क्रूर	५५	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	२७।३०	किन्नर
शीतल	५६	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	२८। ०	यक्ष
सुधा	५७	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	२८।३०	कुवेर
पयोधि	५८	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	२९। ०	देव
भ्रमण	५९	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२९।३०	राक्षस
इन्द्रेखा	६०	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	३०। ०	घोर

ग्रहोंका निसर्ग-मैत्री विचार

सूर्यके मंगल, चन्द्रमा और बृहस्पति मित्र, शुक्र और शनि शत्रु एवं बुध सम है। चन्द्रमाके सूर्य और बुध मित्र; बृहस्पति, मंगल, शुक्र और शनि सम है; मंगलके सूर्य, चन्द्रमा एवं बृहस्पति मित्र; बुध शत्रु; शुक्र और शनि सम है; बुधके सूर्य और शुक्र मित्र; शनि, बृहस्पति और मगल सम एवं चन्द्रमा शत्रु हैं। बृहस्पतिके सूर्य, मंगल और चन्द्रमा मित्र; शनि सम एवं शुक्र और बुध शत्रु है; शुक्रके शनि, बुध मित्र; चन्द्रमा, सूर्य शत्रु और बृहस्पति, मंगल सम है: शनिके सूर्य, चन्द्रमा और मंगल शत्रु; बृहस्पति सम एवं शुक्र और बुध मित्र है।

निसर्ग मैत्री बोधक चक्र

ग्रह	मित्र	शत्रु	उदासीन–सम
सूर्य	चन्द्र, मगल गुरु	शुक्र, शनि	बुध
चन्द्र	रवि, बुध	×	गुरु, मगल, चन्द्र, शनि
मगल	रवि, चन्द्र गुरु	बुध	शुक्र, शनि
बुध	सूर्य शुक्र	चन्द्र	शनि, गुरु, मगल
बृहस्पति,	सूर्य, मगल चन्द्र	शुक्र बुध	शनि
शुक्र	शनि, बुध	सूर्य चन्द्र	गुरु, मगल
शनि	शुक्र बुध	सूर्य चन्द्र मगल	गुरु

तात्कालिक मैत्री विचार

जो ग्रह जिस स्थानमें रहता है, वह उससे दूसरे, तीसरे, चौथे, दसवें, ग्यारहवें और बारहवें भावके ग्रहोके साथ मित्रता रखता है—तात्का-

लिक मित्र होता है और अन्य स्थानो १, ५, ६, ७, ८, ९, के ग्रह शत्रु-होते है ।

जन्मपत्री बनाते समय निसर्ग मैत्री चक्र लिखनेके अनन्तर जन्म लग्न-कुण्डलीके ग्रहोका उपर्युक्त नियमके अनुसार तात्कालिक मैत्री चक्र भी लिखना चाहिए ।

पंचधा मैत्री विचार

नैसर्गिक और तात्कालिक मैत्री इन दोनोके सम्मिश्रणसे पाँच प्रकारके मित्र, शत्रु होते है--(१) अतिमित्र (२) अतिशत्रु (३) मित्र (४) शत्रु और (५) उदासीन-सम ।

तात्कालिक और नैसर्गिक दोनों जगह मित्र होनेसे अतिमित्र, दोनों जगह शत्रु होनेसे अतिशत्रु, एकमे मित्र और दूसरेमे सम होनेसे मित्र, एक-में सम और दूसरेमे शत्रु होनेसे शत्रु एव एकमें शत्रु और दूसरेमें मित्र होनेसे सम-उदासीन ग्रह होते है ।

जन्मपत्रीमे इस पञ्चधा मैत्रीचक्रको भी लिखना चाहिए ।

पारिजातादि विचार

पारिजातादि ज्ञात करनेके लिए पहले दशवर्ग चक्र बना लेना चाहिए । इस चक्रकी प्रक्रिया यह है कि पहले जो होरा, द्रेष्काण, सप्ताश आदि बनाए है उन्हें एक साथ लिख कर रख लेना चाहिए । इस चक्रमें जो ग्रह अपने वर्ग, अतिमित्रके वर्ग या उच्चके वर्ग में हो उसकी स्वर्क्षादि वर्गी सज्ञा होती है ।

जिस जन्मपत्रीमें दो ग्रह स्वर्क्षादि वर्गी हों उनकी पारिजात संज्ञा, तीनकी उत्तम, चारकी गोपुर, पांचकी सिंहासन, छःकी पारावत, सातकी देवलोक, आठकी ब्रह्मलोक, नौकी ऐरावत और दसकी श्रीधाम संज्ञा होती है । ये सब योग विशेष हैं आगे इनका फल लिखा जायगा ।

२	३	४	५	६	७	८	९	१०	वर्गैक्य
पारिजात	उत्तम	गोपुर	सिंहासन	पारावत	देवलोक	ब्रह्मलोक	ऐरावत	श्रीधाम	योग विशेष

कारकांश कुण्डली बनानेकी विधि

सूर्यादि ७ ग्रहोमे जिसके अंश सबसे अधिक हो वही आत्मकारक ग्रह होता है। यदि अश बराबर हो तो उनमे जिसकी कला अधिक हों वह; कलाकी भी समता होने पर जिसकी विकला अधिक हों वह आत्म-कारक होता है। विकलाओमें भी समानता होने पर जो बली ग्रह होगा, वही आत्म-कारक उस कुण्डलीमें माना जायगा। आत्म कारकसे अल्प-अंश वाला भ्रातृकारक, उससे न्यून अंश वाला मातृकारक, उससे न्यून अश वाला पुत्र कारक, उससे न्यून अशवाला जातिकारक और उससे न्यून अशवाला स्त्रीकारक होता है। किसी-किसी आचार्यके मतसे पितृकारक पुत्रकारकके स्थानमें माना गया है।

कारकाश कुण्डली निर्मणकी प्रक्रिया यह है कि आत्मकारक ग्रह जिस राशिके नवाशमे हो,उसको लग्न मान कर सभी ग्रहोको यथास्थान रख देनेसे जो कुण्डली होती है, उसीको कारकांश कुण्डली कहते है।

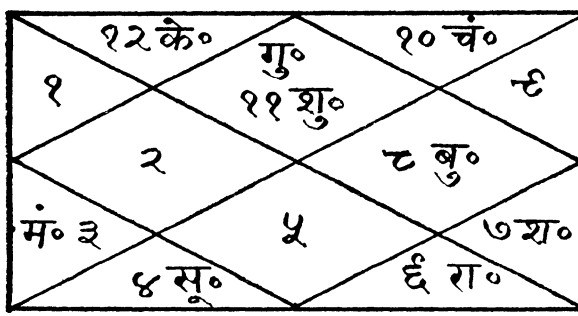
उदाहरण—ग्रह स्पष्ट चक्रमे सबसे अधिक अश बृहस्पतिके है, अतः बृह-स्पति आत्मकारक हुआ। इससे अल्प अंश वाला बुध अमात्य-कारक, इससे अल्प अंश वाला शुक्र भ्रातृकारक, इससे अल्प अंश वाला मंगल भ्रातृकारक इससे अल्प अंश वाला सूर्य पुत्रकारक, इससे अल्प अंश वाला चन्द्र जाति कारक और इससे अल्प अंश कला वाला शनि स्त्रीकारक होगा।

कुण्डली निर्माणके लिए विचार किया तो आत्म-कारक बृहस्पति कुम्भके नवाशमे है अतः कारकाश कुण्डलीकी लग्न राशि कुम्भ होगी।

जन्म कुण्डलीमें ग्रह जिस-जिस राशिमें है, उसी-उसी राशिमें उन्हें स्थापित कर देनेसे कारकांश कुण्डली बन जायगी।

स्वांश कुण्डलीके निर्माणकी विधि—स्वांश कुण्डलीका निर्माण प्रायः कारकांश कुण्डलीके समान होता है। इसमें लग्न राशि कारकांश कुण्डली-की ही मानी जाती है, किन्तु ग्रहोंका स्थापन अपनी-अपनी नवांश राशिमें किया जाता है। तात्पर्य यह है कि नवांश कुण्डलीमे ग्रह जिस-जिस राशिमें आये है स्वाश कुण्डलीमें भी उस-उस राशिमें रखे जायंगे। उदाहरण—स्वांश कुण्डलीकी लग्न ११ राशि होगी।

स्वांश कुण्डली चक्र



दशा विचार

अष्टोत्तरी, विशोत्तरि, योगिनी आदि कई प्रकारकी दशाएँ होती हैं। फल अवगत करनेके लिए प्रधान रूपसे विशोत्तरी दशाका ही ग्रहण किया गया है। जातक शास्त्रके मर्मज्ञोंने ग्रहोके शुभाशुभत्वका समय जाननेके लिए विशोत्तरीको ही प्रधान माना है। मार्केशका निर्णय भी विंशोत्तरी दशासे ही किया जाता है; अतः नीचे विंशोत्तरी दशा बनानेकी विधि लिखी जाती है।

विंशोत्तरी—इस दशामें १२० वर्षकी आयु मान कर ग्रहोंका विभाजन

किया गया है। सूर्यकी दशा ६ वर्ष, चन्द्रमाकी १० वर्ष, भौमकी ७ वर्ष, राहुकी १८ वर्ष, बृहस्पतिकी १६ वर्ष, शनिकी १९ वर्ष, बुधकी १७ वर्ष, केतुकी ७ वर्ष एवं शुक्रकी २० वर्षकी दशा बताई गई है।

जन्म नक्षत्रानुसार ग्रहोंकी दशा यह होती है। कृत्तिका, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराषाढ़ामे जन्म होनेसे सूर्यकी; रोहिणी, हस्त और श्रवणमे जन्म होनेसे चन्द्रमाकी; मृगशिर, चित्रा और धनिष्ठा नक्षत्रमें जन्म होनेसे मंगलकी; आर्द्रा, स्वाति और शतभिषामें जन्म होनेसे राहुकी; पुनर्वसु, विशाखा, और पूर्वाभाद्रपदमें जन्म होनेसे बृहस्पतिकी; पुष्य, अनुराधा और उत्तराभाद्रपदमें जन्म होनेसे शनिकी; आश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवतीमें जन्म होनेसे बुधकी; मघा, मूल और अश्विनीमें जन्म होनेसे केतुकी एवं भरणी, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाषाढ़ामें जन्म होनेसे शुक्रकी दशा होती है।

जन्म नक्षत्र द्वारा ग्रह दशा बोधक चक्र

आदित्य	चन्द्र	भौम	राह	जीव या गुरु	शनि	बुध	केतु	शुक्र	ग्र०
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
कृ.	रो.	मृ.	आद्रा	पुन:	पुष्य	आश्लि	म.	पू. फा.	नक्षत्र
उ फा.	ह	चि	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू. षा	
उ षा.	श्र.	ध.	श.	पू. भा	उ.भा.	रे.	आश्वि	भ.	

दशा जाननेकी सुगम विधि—कृत्तिका नक्षत्रसे जन्म नक्षत्र तक गिन कर ९ का भाग देनेसे एकादि शेषमें क्रमसे आ, चं, भौ, रा, जी, शं, बु, के और शु. की दशा होती है। उदाहरण—जन्म नक्षत्र मघा है। यहाँ कृतिकासे मघा तक गणनाकी तो ८ संख्या हुई; इसमें ९ का भाग दिया तो लब्ध कुछ नही मिला, शेष ८ ही रहे। आ, चं, भौ आदि क्रमसे आठ तक गिना तो आठवीं संख्या केतुकी हुई। अतः जन्म दशा केतुकी कहलायेगी।

दशा साधन

भयात और भभोगको पलात्मक बना कर जन्म नक्षत्रके अनुसार

जिस ग्रहकी दशा हो, उसके वर्षोंसे पलात्मक भयातको गुणाकर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे जो लब्ध आवे वह वर्ष और शेषको १२से गुणा कर पलात्मक भभोगसे भाग देनेसे जो लब्ध आवे वह मास, और शेषको पुनः ३० से गुणा कर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे जो लब्ध आवे वह दिन, शेषको पुनः ६० से गुणा कर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे जो लब्ध आवे वह घटी एवं शेषको पुनः ६० से गुणा कर पलात्मक भभोगका भाग देनेसे लब्ध पल आवेगें। यह वर्ष, मास, दिन, घटी और पल दशाके भुक्त वर्षादि कहलायेगे। इनको दशा वर्षमे घटानेसे भोग्य वर्षादि आ जायँगे।

विंशोत्तरी दशाका चक्र बनानेकी प्रक्रिया यह है कि पहले जिस ग्रहकी भोग्य दशा जितनी आई है, उसको रख कर फिर क्रमसे सब ग्रहोंको स्थापित कर देगें। बीच चक्रमें एक खाना संवत्के लिए रहेगा और नीचे एक खाना जन्म समयके राश्यादि सूर्यके लिए रहेगा। नीचे खानेके सूर्य स्पष्टको भोग्य दशाके मासादिमे जोड़ देना चाहिए और इस योगफलको नीचेके खानेमें जोड़ देना चाहिए और इस योगफलको नीचेके खानेके अगले कोष्ठकमे रखना चाहिए। मध्यमवाले कोष्ठकके संवत्को ग्रहोके वर्षोंमे जोड़ कर आगे रखना चाहिए।

उदाहरण—भयात १६ घटी ३९ पल। भभोग ५८।४४

६०	६०
९६०	३४८०
३९	४४
पलात्मक भयात ९९९	पलात्मक भभोग ३५२४

यहाँ जन्म नक्षत्र कृत्तिका है। जन्म नक्षत्र द्वारा ग्रह दशा बोधक चक्रमें कृत्तिका नक्षत्रकी जन्म दशा सूर्यकी लिखी गई है। इस ग्रहकी ६ वर्षकी दशा होती है, अतः पलात्मक भयातको ग्रह दशा वर्षसे गुणा किया—

९ ९ ९	३५२४ भभोग
६	
५ ९ ९ ४	

३५२४)५९९४(१ वर्ष
३५२४
२४७०
१२
३५२४)२९६४०(८ मास
२८१९२
१४४८
३०
३५२४)४३४४०(१२ दिन
३५२४
८२००
७०४८
११५२
६०
३५२४)६९१२०(१९ घटी
३५२४
३३८८०
३१७१६
२१६४×६०
३५२४)१२९८४०(३६ पल
१०५७२
२४१२०
२११४४
२९७६

सूर्यके भुक्त वर्षादि=१।८।१२।१९।३६
इसे ग्रह वर्षमें से घटाया तो—

६। ०। ०। ०। ० ग्रह वर्ष
१।८।१२।१९।३६ भुक्त वर्षादि
४।३।१७।४०।२४ भोग्य वर्षादि

विंशोत्तरी दशा चक्र

आदित्य	चन्द्रमा	भौम	राहु	जीव	शनि	बुध	केतु	शुक्र	ग्र०
४	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
३	०	०	०	०	०	०	०	०	मास
१७	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन
४०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटी
२४	०	०	०	०	०	०	०	०	पल
सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	संवत
२००१	२००५	२०१५	२०२२	२०४०	२०५६	२०७५	२०९२	२०९९	२११९
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	३	३	३	३	३	३	३	३	३
१०	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७
७	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४७	४७
३४	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८	५८

अन्तर्दशा निकालनेकी विधि

प्रत्येक ग्रहकी महा दशामें ९ ग्रहोंकी अन्तर्दशा होती है। जैसे सूर्यकी महादशामें पहली अन्तर्दशा सूर्यकी, दूसरी चन्द्रमाकी, तीसरी भौमकी, चौथी राहुकी, पाँचवी जीव-बृहस्पतिकी, छठवी शनिकी, सातवीं बुधकी, आठवी केतुकी और नौवीं शुक्रकी होती है। इसी प्रकार अन्य ग्रहोंमें समझना चाहिए। सारांश यह है कि जिस ग्रहकी दशा हो उससे आ, चं, भौ के क्रमानुसार अन्य नव ग्रहोंकी अन्तर्दशाएं होती हैं।

अन्तर्दशा निकालनेका सरल नियम यह है कि दशा दशाका परस्पर गुणाकर १० से भाग देनेसे लब्ध, मास और शेषको तीनसे गुणा करनेसे दिन होंगे।

अन्तर्दशा निकालनेका एक अन्य नियम यह भी है कि दशा दशा-का परस्पर गुणा करनेसे जो गुणनफल आवे उसमें इकाईके अंकको छोड़ शेष अक मास और इकाईके अकको तीनसे गुणा करने पर दिन आयंगे।

उदाहरण—सूर्यकी महादशामें अन्तर्दशा निकालनी है तो सूर्यके दशा वर्ष ६ का सूर्यके ही दशा वर्षोंसे गुणा किया तो

६×६=३६÷१०=३ शेष ६

६×३=१८ दिन अर्थात् ३ मास १८ दिन सूर्यकी दशा

सूर्यकी महादशामे चन्द्रमाकी अन्तर्दशा=६×१०=६०

६०÷१०=६ मास

सूर्यमे मगलकी—६×७=४२÷१०=४ शेष २×३=६ दिन =४ मास ६ दिन

सूर्यमें राहुकी—६×१८=१०८÷१०=१० शेष ८×३=२४= १० मास २४ दिन

सूर्यमें जीव—गुरुकी मं० दशा—६×१६=९६÷१०=९ शेष ६

६×३=१८ दिन, ९ मास १८ दिन

सूर्यमे शनिकी अन्तर्दशा—६×१९=११४÷१०=११ शष४

४×३=१२ दिन, ११ मास १२ दिन

सूर्यमे बुधकी अन्तर्दशा—६×१७=१०२÷१०=१० शेष२

२×३=६ दिन, १० मास ६ दिन

सूर्यमें केतुकी अन्तर्दशा—६×७=४२÷१०=४ शेष २×३ =६ ∴ ४मास ६ दिन

सूर्यमें शुक्रकी अन्तर्दशा—६×२०=१२०÷१०=१२

१२ मास अर्थात् १ वर्ष

चन्द्रमाकी अन्तर्दशामें नौ ग्रहोंकी अन्तर्दशा—

१०×१०=१००÷१०=१० मास=चन्द्रकी महादशामें चन्द्रकी अन्तर्दशा

१०×७=७०÷१०=७ मास=चन्द्रमे भौमकी अन्तर्दशा

१०×१८=१८०÷१०=१८ मास=१ वर्ष ६ मास=चन्द्रमें राहुकी अन्तर्दशा

१०×१६=१६०÷१०=१६ मास=१ वर्ष ४ मास=चन्द्रमें जीवान्तर

१०×१९=१९०÷१०=१९ मास=१ वर्ष ७ मास=चन्द्रमें शन्यन्तर

१०×१७=१७०÷१०=१७ मास=१ वर्ष ५ मास=चन्द्रमें बुधान्तर

१०×७=७०÷१०=७ मास=चन्द्रमें केत्वन्तर

१०×२०=२००÷१०=२० मास= १ वर्ष ८ मास=चन्द्रमें शुक्रान्तर

१०×६=६०÷१०=६ मास=चन्द्रमें आदित्यान्तर

ग्रहोकी अन्तर्दशाके चक्र नीचे दिए जाते है, इन चक्रों द्वारा बिना गणितके ही अन्तर्दशाका ज्ञान किया जा सकता है—

सूर्यान्तर दशा चक्र

आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	१	वर्ष
३	६	४	१०	९	११	१०	४	०	मास
१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०	दिन

चन्द्रान्तर दशा चक्र

च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	ग्र०
०	०	१	१	१	१	०	१	०	वर्ष
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

भौमान्तर दशा चक्र

भौ०	रा०	जा०	श०	बु०	क०	शु०	आ०	च०	ग्र०
०	१	०	१	०	०	१	०	०	वर्ष
४	०	११	१	११	४	२	४	७	मास
२७	१८	६	९	२७	२७	०	६	०	दिन

राह्वन्तर दशा चक्र

रा०	जी०	श०	बु०	क०	शु०	आ०	च०	भौ०	ग्र०
२	२	२	२	१	३	०	१	१	वर्ष
८	४	१०	६	०	०	१०	६	०	मास
१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	१८	दिन

जीवान्तर दशा चक्र

जी०	श०	बु०	क०	शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	ग्र०
२	२	२	०	२	०	१	०	२	वर्ष
१	६	३	११	८	९	४	११	४	मास
१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	दिन

शन्यन्तर दशा चक्र

श०	बु०	क०	शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	ग्र०
३	२	१	३	०	१	१	२	२	वर्ष
०	८	१	२	११	७	१	१०	६	मास
३	९	९	०	१२	०	९	६	१२	दिन

बुधान्तर दशा चक्र

बु०	क०	शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	ग्र०
२	०	२	०	१	०	२	२	२	वर्ष
४	११	१०	१०	५	११	६	३	८	मास
२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	दिन

केत्वन्तर दशा चक्र

के०	शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	०	१	०	वर्ष
४	२	४	७	४	०	११	१	११	मास
२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७	दिन

शुक्रान्तर दशा चक्र

शु०	आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	ग्र०
३	१	१	१	३	२	३	२	१	मर्ष
४	०	८	२	०	८	२	१०	२	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

जन्मपत्रीमें अन्तर्दशा लिखनेकी विधि

जन्म कुण्डलीमे जो महादशा आयी है पहले उसकी अन्तर्दशा बनायी जाती है। अन्तर्दशा चक्रोंमें जिस ग्रहका जो चक्र है पहले कोष्ठकमें विशोत्तरीके समान उस चक्रके वर्षादिको लिख देना, मध्यमें संवत्का कोष्ठक और अन्तमें सूर्यका कोष्ठक रहेगा। सूर्यके राशि और अंशको दशाके मास और दिनमें जोड़ना चाहिए। दिन संख्यामें तीस अधिक होने पर तीसका भाग देकर लब्धको मासमें जोड़ देना चाहिए और मास संख्यामे १२से अधिक होने पर १२ का भाग देकर लब्धको वर्षमें जोड़ देना चाहिए। नीचे और ऊपरके कोष्ठकके जोड़नेके अनन्तर मध्यवालेमें संवत्के वर्षोमें जोड़ कर रख लेना चाहिए।

*जिस ग्रहकी महादशा आयी है, उसका अन्तर निकालनेके लिए उसके भुक्त वर्षोको अन्तर्दशाके ग्रहोंके वर्षोमेंसे घटा कर तब अन्तर्दशा लिखनी चाहिए।

प्रस्तुत उदाहरणमें सूर्यकी दशा आयी है। और इसके भुक्त वर्षादि १।८।१२।१९।३६ है। सूर्यकी महादशामें पहला अन्तर सूर्यका ३ मास १८ दिन, चन्द्रमाका ६ माह, भौम का ४ मास ६ दिन; इन तीनोको जोड़ा—

३।१८ सूर्य
६। ० चन्द्र
४। ६ भौम
१।१ | २४

१।८।१२ मेसे
१।१।२४ को घटाया
६।१८

१०।२४ राहु
६।१८
४। ६ राहुका भोग्य हुआ।

यहाँ पर राहुके पहले तक सूर्यादि ग्रहोका काल शून्य माना जायगा और आगे चक्रके अनुसार वर्षादि लिखे जायँगे। आगे कुण्डलीमे सूर्य महादशाकी अन्तर्दशा लिखी जाती है।

सूर्यान्तर दशा चक्र

आ०	च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	१	वर्ष
०	०	०	४	९	११	१०	४	०	मास
०	०	०	६	१८	१२	६	६	०	दिन
सवत	सवत	संवत	संवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	संवत
२००१	२००१	२००१	२००१	२००१	२००२	२००३	२००३	२००४	२००५
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	०	०	०	४	२	१	११	३	३
१०	१०	१०	१०	१६	४	१६	२२	२८	२८

चन्द्रान्तर दशा चक्र

च०	भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	ग्र०
०	०	१	१	१	१	०	१	०	वर्ष
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	मास
०	०	०	०	०	०	०	०	०	दिन
सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत
२००५	२००६	२००६	२००८	२००९	२०११	२०१२	२०१३	२०१४	२०१५
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
३	१	८	२	६	१	६	१	९	३
२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८

विवरण—जिस प्रकार विशोत्तरी दशा निकालनेमें ऊपरके वर्षादि मानको नीचेके राश्यादिमे जोड़ा गया था। अर्थात् विकलाओको पलोंमें, कलाओको घटियोमे अशोको दिनोमे और राशियोको मासोमे जोड़ा था, इसी प्रकार अन्तर्दशा निकालते समय भी राशि और अशोको मास और दिनोमें जोड़ा गया है। जैसे चन्द्रान्तर्दशा चक्रमें १०।०में ३।२८को जोड़ा तो १।२८ आया है। यहाँ १३ महीने योग आनेके कारण इसमे १२का भाग दे दिया है और लब्ध एकको हासिलके रूपमें संवतके कोष्ठकमें खड़ी रेखाका चिन्ह बना देना चाहिये। इसी प्रकार आगे ७।०में १।२८को जोड़ा तो ७।२८ आया, ८।२८को ६।०मे जोड़ा तो २।२८ आया, एक हासिलको पुनः खड़ी रेखाके रूपमे ऊपर संवतके खानेमें +इस प्रकार लिख दिया। इस तरह आगे-आगे जोड़नेपर चन्द्रान्तर्दशाका पूरा चक्र बन जाता है।

संवतवाले कोष्ठकको भरते समय वर्षोको जोड़ा जाता है और हासिलवाली संख्या जो वर्षोकी मिलती है, उसको भी जोड़ दिया जाता है। अन्तर्दशाके समान ही प्रत्यन्तर और सूक्ष्मान्तर आदि दशाएँ लिखी जाती है।

प्रत्यन्तर दशा विचार

जिस प्रकार प्रत्येक ग्रहकी महादशामें नौग्रहोंकी अन्तर्दशा होती है, उसी प्रकार एक अन्तर्दशामें नौ ग्रहोकी प्रत्यन्तर दशा होती है; जैसे सूर्यकी महादशामें सूर्यकी अन्तर्दशा ३ मास १८ दिन है। इस तीन मास और १८ दिनमें उसी क्रम और परिमाणानुसार प्रत्यन्तर भी होता है। प्रत्यन्तर दशा निकालनेका नियम यह है कि महादशाके वर्षोंको अन्तर और प्रत्यन्तर दशाके वर्षोंसे गुणा कर ४०का भाग देनेपर जो दिनादि आवेंगे वही प्रत्यन्तर दशाके दिनादि होंगे।

उदाहरण—सूर्यकी महादशामें चन्द्रमाकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर दशा निकालनी है—

सूर्यकी महादशा ६ वर्ष×चं० की अन्तर्दशा १० वर्ष=६×१०=६०×१०=६००÷४०=१५ दिन चन्द्रमाका प्रत्यन्तर; ६०×७=४२०÷४०=१०, २०×३०=१० दि० ३० घटी मंगलका प्रत्यन्तर; ६०×१८=१०८०=१०८०÷४०=२७ दिन। राहुका प्रत्यन्तर; ६०×१६ =९६०÷४०=२४ दिन जीवप्रत्यन्तर; ६०×१९=११४०÷४०=२८ दिन, ३० घटी शनिका प्रत्यन्तर; ६०×१७=१०२०÷४०=२५ दिन, ३० घटी बुधका प्रत्यन्तर; ६०×७=४२०÷४०=१० दिन ३० घटी केतुका प्रत्यन्तर; ६०×२०=१२००÷४०=३० दिन १ मास, शुक्रका प्रत्यन्तर

६०×६=३६०÷४०=९ दिन आदित्यका प्रत्यन्तर=

सूर्यकी महादशामें—सूर्यकी अन्तर दशामें प्रत्यन्तर

सूर्य	च०	भौ०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
५	९	६	१६	१४	१७	१५	६	१८	दि०
२४	०	१८	१२	२४	६	१८	१८	०	घ०

सू० द० चन्द्रमाके अन्तरमें प्रत्यन्तर

चं०	मं०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	१	०	मा०
१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	९	दि०
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घ०

सू० द० मंगलकी अन्तर दशामें प्रत्यन्तर

म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
७	१८	१६	१९	१७	७	२१	६	१०	दि०
२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	१८	३०	घ०

सू० द० राहुकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	र०	च०	म०	ग्र०
१	१	१	१	०	१	०	०	०	मा०
१८	१३	२१	१५	१८	२४	१६	२७	१८	दि०
३६	१२	१८	५४	५४	०	१२	०	५४	घ०

सू० द० गुरुकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	रा०	ग्र०
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा०
८	१५	१०	१६	१८	१४	२४	१६	१३	दि०
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	घ०

सू० द० शनिकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	ग्र०
१	१	०	१	०	०	०	१	१	मा०
२४	१८	१९	२७	१७	२८	१९	२१	१५	दि०
९	२७	५७	०	६	३०	५७	१८	३६	घ०

सू० द० बुधकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	स०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा०
१३	१७	२१	१५	२५	१७	१५	१०	१८	दि०
२१	५२	०	१८	३०	५१	५४	४५	२७	घ०

सू० द० केतुकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
७	२१	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	दि०
२१	०	१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	घ०

सू० द० शुक्रकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर दशा

शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
२	०	१	०	१	१	१	१	०	मा०
०	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	दि०

चन्द्रमाकी दशा चन्द्रमाकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

चं०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	रा०	ग्र०
०	०	१	१	१	१	०	१	०	मा०
२५	१७	१५	१०	१७	१२	१७	२०	१५	दि०
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घ०

चं० द० मंगलकी दशामें प्रत्यन्तर

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	०	१	०	०	१	०	०	मा०
१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	१७	दि०
१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	३०	घ०

चं० द० राहुकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	र०	च०	म०	ग्र०
२	२	२	२	१	३	०	१	१	मा०
२१	१२	२५	१६	१	०	२७	१५	१	दि०
०	०	३०	३०	३०	०	०	०	३०	घ०

चं० द० बृहस्पतिकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
२	२	२	०	२	०	१	०	२	मास
४	१६	८	२८	२०	२४	१०	२८	१२	दि०

चं० द० शनिकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
३	२	१	३	०	१	१	२	२	मा०
०	२०	३	५	२८	१७	३	२५	१६	दिन
१५	४५	१५	०	३०	३०	१५	३०	०	घ०

चं० द० बुधकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	ग्र०
२	०	२	०	१	०	२	२	२	मा०
१२	२९	२५	२५	१२	२९	१६	८	२०	दि०
१५	४५	०	३०	३०	४५	३०	०	४५	घ०

चं० द० केतुकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	०	१	०	मा०
१२	५	१०	१७	१२	१	२८	३	२९	दि०
१५	०	३०	३०	१५	३०	०	१५	४५	घ०

चं० द० शुक्रकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

शु०	सू०	चं०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
३	१	१	१	३	२	३	२	१	मा०
१०	०	२०	५	०	२०	५	२५	५	दिन

चं० द० सूर्यकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	१	मा०
९	१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	दि०
०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	घ०

मंगलकी दशामें मंगलकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२	दि०
३४	३	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	घ०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प०

मं० द० राहुकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
१	१	१	१	०	२	०	१	०	मा०
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दि०
४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	घ०

मं० द० गुरुकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	ग्र०
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा०
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दि०
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घ०

मं० द० शनिकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

धु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
०	२	१	०	२	०	१	०	१	१	मा०
३	३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२३	दि०
१९	१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घ०
३	३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

मं० द० बुधकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	ग्र०
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा०
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	दि०
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घ०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प०

मंगलकी दशा--केतुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दि०
३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	४९	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

मंगलकी दशा--शुक्रके अंन्तरमें प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मा०
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

मंगलकी दशा सूर्यके अन्तरमें प्रत्यन्तर

सू०	च	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	दि०
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घ-

मंगलकी दशा चन्द्रमाके अन्तरमें प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	१	०	१	०	०	१	०	०मा
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	दि०
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घ०

राहुकी महादशा और राहु ही की अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

रा०	वृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	ग्र०
४	४	५	४	१	५	१	२	१	मा०
२५	९	३	१७	२६	१२	१८	२१	२६	दि०
४८	३६	५४	४२	४२	०	३६	०	४२	घ०

राहुकी दशा बृहस्पतिके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	रा०	ग्र०
३	४	४	१	४	१	२	१	४	मा०
२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	९	दि०
१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	३६	घं०

रा. द. शनिके अन्तरमें प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
५	४	१	५	१	२	१	५	४	मा०
१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	३	१६	दि०
२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४८	घ०

रा. द. बुधके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
४	१	५	१	२	१	४	४	४	मा०
१०	२३	३	१५	१६	२३	१७	२	२५	दि०
२	३३	०	५४	३०	३३	४२	२४	२१	घ०

रा. द. केतुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	२	०	१	०	१	१	१	१	म०
२२	३	१८	१	२२	२६	२०	२९	२३	दि०
३	०	५४	३०	३	४२	२४	५१	३३	घ०

रा. दशा—शुक्रके अन्तरमें प्रत्यन्तर

शु०	सू०	चं०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
६	१	३	२	५	४	५	५	२	मा०
०	२४	०	३	१२	२४	२१	३	३	दि०

रा. द.—रविकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा०
१६	२७	१८	१८	१३	२१	१५	१८	२४	दि०
१२	०	५४	३६	१२	१८	५४	५४	०	घ०

रा. द.—चन्द्रमाके अन्तरमें प्रत्यन्तर

चं०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	१	२	२	२	२	१	३	०	मा०
१५	१	२१	१२	२५	१६	१	०	२७	दि०
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घ०

रा. द.—मंगलकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्र०
०	१	१	१	१	०	२	०	१	मा०
२२	२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	दि०
३	४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	घ०

बृहस्पतिकी दशा—बृहस्पतिके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	ग्र०
३	४	३	१	४	१	२	१	३	मा०
१२	१	१८	१४	८	८	४	१४	२५	दि०
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	घ०

बृ. द. शनिके अन्तरमें प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	ग्र०
४	४	१	५	१	२	१	४	४	मा०
२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	१	दि०
२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	३६	घ०

गु. द. बुधके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	रा०	वृ०	श०	ग्र०
३	१	४	१	२	१	४	३	४	मा०
२५	१७	१६	१०	८	१७	२	१८	९	दि०
३६	३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	घ०

गु. द. केतुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	१	१	१	मा०
१०	२६	१६	२८	१९	२०	१४	२३	१७	दि०
३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	३६	घ०

गु. द. शुक्रके अन्तरमें प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
५	१	२	१	४	४	५	१	०	मा०
१०	१८	२०	२६	२४	८	२	१६	२६	दि०

गु. द. सूर्यके अन्तरमें प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा०
१४	२४	१६	१३	८	१५	१०	१६	१८	दि०
२४	०	४८	१२	२४	३६	४८	४८	०	घ०

गु. द. चन्द्रमाके अन्तरमें प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	व०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१०	०	२	२	२	२	०	२	०	मा०
१०	२८	१२	४	१६	८	२८	२०	२४	दि०

गु. द. मंगलके अन्तरमें प्रत्यन्तर

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	१	१	१	०	१	०	०	मा०
१८	२०	१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	दि०
३६	२४	४८	१२	३६	३६	०	४८	०	घ०

गु. द. राहुकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
४	३	४	४	१	४	१	२	१	मा०
९	२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	दि०
३६	१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	घ०

शनिकी दशा और शनिकी ही अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	मं०	रा०	वृ०	ग्र०
५	५	२	६	१	३	२	५	४	मा०
२१	३	३	०	२४	०	३	१२	२४	दि०
२८	२५	१०	३०	९	१५	१०	२७	२४	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

श. द. बुधके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
४	१	५	१	२	१	४	४	५	मा०
१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	३	दि०
१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	२५	घ०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प०

श. द. केतुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	ग्र०
०	२	०	१	०	१	१	२	१	मा०
२३	६	१९	३	२३	२९	२३	३	२६	दि०
१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	१०	३१	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

श. द. शुक्रके अन्तरमें प्रत्यन्तर

शु०	सू०	चं०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
६	१	३	२	५	५	६	५	२	मा०
१०	२७	५	६	२१	२	०	११	६	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

श. द. सूर्यके अन्तरमें प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा०
१७	२८	१९	२१	१५	२४	१८	१९	२७	दि०
६	३०	५७	१८	३६	९	२७	५७	०	घ०

श. द. चन्द्रमाके अन्तरमें प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	१	२	२	३	२	१	३	०	मा०
१७	३	२५	१६	०	२०	३	५	२८	दि०
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घ०

श. द. मंगलके अन्तरमें प्रत्यन्तर

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	ग्र०
०	१	१	२	१	०	२	०	१	मा०
२३	२९	२३	३	२६	२३	६	१९	३	दि०
१६	५१	१२	१०	३०	१६	३०	५७	१५	मा०
३०	००	००	३०	३०	३३	०	०	०	प०

श. द. राहुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	ग्र०
५	४	५	४	१	५	१	२	१	मा०
३	१६	१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	दि०
५४	४८	२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	घ०

श. द. गुरुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	ग्र०
४	४	४	१	५	१	२	१	४	मा०
१	२४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	दि०
३६	२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	घ०

बुधकी दशा और बुधकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
४	१	४	१	२	१	४	३	४	मा०
२	२०	२४	१३	१२	२०	१०	२५	१७	दि०
४९	३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	घ०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प०

बु. दशा केतुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	१	०	०	०	१	१	१	१	म०
२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	२०	दि०
४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	३४	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

बु. द. शुक्रके अन्तरमें प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
५	१	२	१	५	४	५	४	१	मा०
२०	२१	२५	२९	३	१६	११	२४	२९	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

बु. द. सूर्यके अन्तरमें प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मा०
१९	२५	१७	१५	१०	१८	१३	१७	२१	दि०
१८	३०	५१	५४	४८	२७	२१	५१	०	घ०

बु. दशा चन्द्रमाके अन्तरमें प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	०	२	२	२	२	०	२	०	मा०
१२	२९	१६	८	२०	१२	२९	२५	२५	दि०
३०	४५	३०	०	४५	१५	४५	०	३०	घ०

बु. दशा मंगलके अन्तरमें प्रत्यन्तर

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	१	१	१	०	१	०	०	मा०
२०	२३	१७	२६	२०	२०	२९	१९	२९	दि०
४९	३३	३६	३१	३४	४९	३०	५१	४५	घ०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प०

बु. द. राहुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
४	४	४	४	१	५	१	२	१	मा०
१७	२	२५	१०	२३	३	१५	१६	२३	दि०
४२	२४	२१	३	३३	०	५४	३०	३३	घं०

बु. द. गुरुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
३	४	३	१	४	१	२	१	४	मा०
१८	९	२५	१७	१६	१०	८	१७	२	दि०
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घ०

बु.द. शनिकी अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
५	४	१	५	१	२	१	४	४	मा०
३	१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	दि०
२५	१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

केतुकी दशा केतुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दि०
३४	३०	२१	१५	३	३	३६	१६	४९	घ०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	प०

के. द. शुक्रके अन्तरमें प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मा०
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दि०
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घ०

के. द. सूर्य के अन्तरमें प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	दि०
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घ०

के. द. चन्द्रमाके अन्तर्दशामें प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
०	०	१	०	१	०	०	१	०	मा०
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	दि०
३०	१५	३०	०	२५	४५	१५	०	३०	घ०

के. द. मंगलकी अन्तरमें प्रत्यन्तर

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२	दि०
३४	३	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	घ०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	प०

के. द. राहुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
१	१	१	१	०	२	०	१	०	मा०
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दि०
२४	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	घ०

के. द. गुरूके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मा०
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दि०
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घ०

के. द. शनिके अन्तरमें प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
२	१	०	२	०	१	०	१	१	मा०
३	२६	२३	६	१९	३	२३	२९	२३	दि०
१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घ०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	प०

के. द. बुधके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मा०
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	दि०
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घ०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	प०

शु. द. शुक्रके अन्तरमें प्रत्यन्तर

शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्र०
६	२	३	२	६	५	६	५	२	मा०
२०	०	१०	१०	०	१०	१०	२०	१०	दि०

शु. द. रविके अन्तरमें प्रत्यन्तर

सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
०	१	०	१	१	१	१	०	२	मा०
१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	दि०

शु. द. चन्द्रमाके अन्तरमें प्रत्यन्तर

च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्र०
१	१	२	२	३	२	१	३	१	मा०
२०	५	०	२०	५	२५	५	१०	०	दि०

शु. द. मंगलके अन्तरमें प्रत्यन्तर

म०	रा०	बृ०	श०	चु०	के०	श०	सू०	च०	ग्र०
०	२	१	२	१	०	२	०	१	मा०
२४	३	२६	६	२९	२४	४०	२१	५	दि०
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	घ०

शु. द. राहुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्र०
५	४	५	५	२	६	१	३	२	मा०
१२	२४	२१	३	३	०	२४	०	३	दि०

शु. द. बृहस्पतिके अन्तरमें प्रत्यन्र

बृ०	श०	बु	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्र०
४	५	४	१	५	१	२	१	४	मास
८	२	१६	२६	१०	१८	२०	२६	२४	दि०

शु. द. शनिके अन्तरमें प्रत्यन्तर

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्र०
६	५	२	६	१	३	२	५	५	मा०
०	११	६	१०	२७	५	६	२१	२	दि०
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	घ०

शु. द. बुधके अन्तरमें प्रत्यन्तर

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्र०
४	१	५	१	२	१	५	४	५	मा०
२४	२९	२०	२१	२५	२९	३	१६	११	दि०
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	घ०

शु. द. केतुके अन्तरमें प्रत्यन्तर

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्र०
०	२	०	१	०	२	१	२	१	मा०
२४	१०	२१	५	२४	३	२५	६	२९	दि०
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	घ०

अष्टोत्तरी दशा विचार

दक्षिण भारतमें अष्टोत्तरी दशाका विशेष प्रचार है। स्वरशास्त्रमें बताया गया है कि जिसका जन्म शुक्लपक्षमें हो उसका अष्टोत्तरी दशा द्वारा और जिसका जन्म कृष्णपक्षमें हो उसका विशोत्तरी दशा द्वारा शुभाशुभ फल जानना चाहिये। दशा द्वारा हमें किसी भी व्यक्तिके समयका परिज्ञान होता है।

अष्टोत्तरी (१०८ वर्षकी) दशामें सूर्य दशा ६ वर्ष, चन्द्र दशा १५ वर्ष, भौम दशा ८ वर्ष, बुध दशा १७ वर्ष, शनि दशा १० वर्ष, गुरु दशा १९ वर्ष, राहुदशा १२ वर्ष और शुक्र दशा २१ वर्षकी होती है।

जन्म नक्षत्र द्वारा दशा ज्ञात करनेकी यह विधि है कि अभिजित् सहित आर्द्रादि नक्षत्रोंको पापग्रहोंमें चार-चार और शुभग्रहोंमें तीन-तीन स्थापित करनेसे ग्रह दशा मालूम पड़ जाती है। सरलतासे अवगत करनेके लिये नीचे चक्र दिया जाता है।

जन्म नक्षत्रसे अष्टोत्तरी दशा ज्ञात करनेका चक्र

सू.	च.	म.	बु.	श.	गु.	रा.	शु.	ग्र
आर्द्रा	म.	ह.	अ.	पू. षा.	ध.	उ. फा	कृत्ति.	
पुन	पू. फा.	चि.	ज्ये.	उ. षा.	श.	रे	रो०	जन्म-
पुष्य	उ. फा	स्वा.		अभि.		अ.		
आश्ले		वि	म.	श्र.	प् भा	भा	मृ०	नक्षत्र

अष्टोत्तरी दशा स्पष्ट करनेकी विधि

भयातके पलोंको दशाके वर्षोंसे गुणाकर भभोगके पलोंका भाग-देनेसे विशोत्तरीके समान भुक्त वर्षादि मान आता है। इसे ग्रहवर्षोंमेंसे घटानेपर भोग्य वर्षादि मान निकलता है।

उदाहरण--भयात १६।३९ भभोग ५८।४४

६० ६०

९६०+३९= ३४८०+४४=

पलात्मक भयात=९९९ पलात्मक भभोग=३५२४

इस उदाहरणमें जन्म नक्षत्र कृत्तिका होनेके कारण शुक्रकी दशामें जन्म हुआ है, अतः शुक्रके दशा वर्षोंसे भयातके पलोंको गुणा किया ।

९९९ भयात | ३५२४ भभोग

२१ ग्रहवर्ष

२०९७९÷३५२४

३५२४)२०९७९(५ वर्ष

१७६२०

३३५९

१२

३५२४)४०३०८(११ मास

३५२४

५०६८

३५२४

१५४४×३०

३५२४)४६३२०(१३ दिन

३५२४

११०८०

१०५७२

५०८

शुक्र दशाके भुक्त वर्षादि ५।११।१३ ६, इन्हें समस्त दशाके वर्षोंमेंसे घटाया तो--

२१।०। ०

५।११।१३

१५। ०।१७ भोग्य वर्षादि

अष्टोत्तरी दशा चक्र

शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	ग्र०
१५	६	१५	८	१७	१०	१९	१२	वर्ष
०	०	०	०	०	०	०	०	मास
१७	०	०	०	०	०	०	०	दिन
सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवन	सवन	सवत	सवन
२००१	२०१६	२०२२	२०३७	२०४५	२०६२	२०७२	२००१	२०७३
सूय	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूय	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०
१०	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७	२७

अष्टोत्तरी अन्तर्दशा साधन

दशा दशाका परस्पर गुणाकर १०८का भाग देनेसे लब्ध वर्ष और शेषको, १२से गुणाकर १०८का भाग देनेसे लब्ध मास, शेषको पुनः ३०से गुणाकर १०८का भाग देनेसे लब्ध दिन एवं शेषको पुनः ६०से गुणाकर १०८ का भाग देनेसे लब्ध घटी होगी।

उदाहरण—शुक्रमे सूर्यका अन्तर निकालना है—

२१×६=१२६÷१०८=१ ल० वर्ष; १८ शेष

१८×१२=२१६÷१०८=२ मास अर्थात् १ वर्ष २ मास हुआ। यहाँ सरलताके लिये अन्तर्दशाके चक्र दिये जाते है—

अष्टोतरी अन्तर्दशा—सूर्यान्तर्दशा चक्र.

सू०	च०	भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	शु०	ग्र०
०	०	०	०	०	१	०	१	वष
४	१०	५	११	६	०	८	२	मास
०	०	१०	१०	२०	२०	०	०	दिन

चन्द्रान्तर्दशा चन्द्र

च०	भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	शु०	सू०	ग्र०
२	१	२	१	२	१	२	०	वर्ष
१	१	४	४	७	८	११	१०	मास
०	१०	१०	२०	२०	०	०	०	दिन

भौमान्तर्दशा चक्र

भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	शु०	सू०	च०	ग्र०
०	१	०	१	०	१	०	१	वर्ष
७	३	८	४	१०	६	५	१	मास
३	३	२६	२६	२०	२०	१०	१०	दिन
२०	२०	२४	४०	०	०	०	०	घटी

बुधान्तर्दशा चक्र

बु०	श०	गु०	रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	ग्र०
२	१	२	१	३	०	२	१	वर्ष
८	६	११	१०	३	११	४	३	मास
३	२६	२६	२०	२०	१०	१०	३	दिन
२०	४०	४०	०	०	०	०	२०	घटी

शन्यन्तर्दशा चक्र

श०	गु०	रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	ग्र०
१	१	१	१	०	१	०	१	वर्ष
११	८	१	११	६	४	८	६	मास
३	३	१	१०	२०	२०	२६	२६	दिन
२०	२०	०	०	०	०	४०	४०	घटी

गुर्वन्तर्दशा चक्र

गु०	रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	रा०	ग्र०
३	२	३	१	२	१	२	१	वर्ष
४	१	८	०	७	४	११	९	मास
३	१०	१०	२०	२०	२६	२६	३	दिन
२०	०	०	०	०	४०	४०	२०	घटी

राह्वन्तर्दशा चक्र

रा०	शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	श०	गु०	ग्र०
१	२	०	१	०	१	१	२	वर्ष
६	४	८	८	१०	१०	१	१	मास
०	०	०	०	२०	२०	१०	१०	दिन
०	०	०	०	०	०	०	०	घटी

शुक्रान्तर्दशा चक्र

शु०	सू०	च०	भौ०	बु०	श०	गु०	रा०	ग्र०
४	१	२	१	३	१	३	२	वर्ष
१	२	११	६	३	११	८	४	मास
०	०	०	२०	२०	१०	१०	०	दिन
०	०	०	०	०	०	०	०	घटी

योगिनी दशा—

योगिनी दशा ३६ वर्षमें पूर्ण होती है, इसलिये कुछ ज्योतिर्विद इसका फल ३६ वर्षकी आयु तक ही मानते हैं। लेकिन कुछ लोग ३६ वर्षके बाद इसकी पुनरावृत्ति मानते हैं। आजकल जन्मपत्रीमें विंशोत्तरी और योगिनी दशा नियमित रूपसे लगायी जाती है।

योगिनी दशाओंके मंगला, पिंगला, धान्या, भ्रामरी, भद्रिका, उल्का, सिद्धा और संकटा ये नाम बताये गये हैं। इनकी वर्ष संख्या भी क्रमशः

१, २, ३, ४, ५, ६, ७, और ८ है। इन दशाओंके स्वामी क्रमशः चन्द्र, सूर्य, गुरु, भौम, बुध, शनि, शुक्र होते है। संकटा दशाके पूर्वार्द्ध (१से ४ वर्ष तक) मे राहु और उत्तरार्द्ध (५से ८ वर्ष तक) मे केतु स्वामी होता है।

जन्म नक्षत्रसे योगिनी दशा निकालनेके लिये जन्म नक्षत्र सख्यामे तीन जोड़कर आठरो भाग देनेपर एकादि शेषमे क्रमश., मंगला, पिंगलादि दशा एवं शून्य शेषमे सकटा दशा समझनी चाहिये।

स्पष्ट दशा साधन करनेके लिये विशोत्तरी दशाके समान भयातके पलोंको दशाके वर्षोंसे गुणाकर भभोगके पलोंका भाग देनेपर दशाके भुक्त वर्षादि आयेगे। भुक्त वर्षादिको दशा वर्षमेसे घटानेपर भोग्य वर्षादि होंगे।

उदाहरण—भयात १६।३९=९९९ पल, भभोग ५८।४४= ३५२४ पल

इस उदाहरणमे जन्म नक्षत्र कृत्तिका है। अश्विनीसे कृत्तिका तक गणना करनेपर तीन सख्या हुई, अतः ३+३=६

६÷८=६ शे० यहाँ मगलाको आदि कर ६ तक गिना तो उल्काकी दशा आयी। बिना नक्षत्र गणना किये जन्म नक्षत्रसे योगिनी दशा जाननेके लिये नीचे चक्र दिया जाता है।—

जन्म नक्षत्रसे योगिनी दशा बोधक चक्र

म०	पि०	धा०	भ्रा०	उ०	अ०	सि०	स०	दशा
च.	सू.	गु.	म.	बु.	श.	शु.	रा. के.	स्वामी
१	२	३	४	५	६	७	८	वर्ष
आद्रा	पुन०	पु०	आश्ले०	म०	पू०	उ० फा०	ह०	
चि०	स्वा०	वि०	अनु०	ज्ये०			उ० षा०	जन्म
			पू०भा०		मू०	पू० षा०		नक्षत्र
श्र०	ध०	श०	अश्वि०	उ०भा०	रे०		मृ०	
				भ०	कृ०	रो०		

भयातके पलोंको उल्काके वर्षोंसे गुणा किया—

९९९ × ६ = ५९९४ ÷ ३५२४ पलात्मक भभोग

३५२४)५९९४(१ वर्ष
३५२४
२४७० × १२
३५२४)२९६४०(८
२८१९२
१४४८ × ३०
३५२४)४३४४०(१२ दिन
३५२४
८२००
७०४८

उल्का दशाके भुक्त वर्षादि १।८।१२ इसको ६ वर्षमेंसे घटाया तो ४।३।१८ उल्का दशाके भोग्य वर्षादि हुए।

योगिनी दशाका चक्र विशोत्तरी और अष्टोत्तरीके समान ही लगाया जाता है। आगे उदाहरणके लिये योगिनी दशा लिखी जा रही है।

योगिनी दशा चक्रम्

उ०	मि०	स०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	दशा
४	७	८	१	२	३	४	५	वर्ष
३	०	०	०	०	०	०	०	मास
१८	०	०	०	०	०	०	०	दिन
सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत	सवत
२००१	२००५	२०१२	२०२०	२०२१	२०२३	२०२६	२०३०	२०३५
सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य	सूर्य
०	३	३	३	३	३	३	३	३
१०	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८	२८

अन्तर्दशा साधन

दशा-दशाकी वर्ष संख्याको परस्पर गुणा कर ३६से भाग देनेपर अन्तर्दशाके वर्षादि आते हैं। मगलदशाकी अन्तर्दशा—

१×१=१÷३६=० शेष १×१२=१२÷३६=० शेष १२
१२×३०=३६०÷३६=१० दिन

मगलामे पिगलाका अन्तर=१×२=२÷३६=०।
२×१२=२४÷३६=०, शे० २४×३०=७२०÷३६०=२० दिन

मगलामे धान्याका अन्तर=१×३=३÷३६=० शेष ३×१२=
३६ ३६÷३६=१ मास

मगलामे भ्रामरीका अन्तर=१×४=४÷३६=० शेष ४×१२=
४८=४८÷३६=१ शेष १२×३०=३६०÷३६=१० १ मास
१० दिन

मगलामे भद्राका अन्तर=१×५=५÷३६=० शेष ५×१२
=६०
६०÷३६=१ शे० २४×३८=७२०÷३६=२० दिन=१ मास
२० दिन

मंगलमे उल्काका अन्तर=१×६=६÷३६=० शे० ६×१२
=७२, ७२÷३६=२ मास

मगलामें सिद्धाका अन्तर—१×७=७÷३६=० शेष ७×१२
=८४
८४÷३६=२ शेष १२×३०=३६०÷३६=१० २ मास १० दिन

मगलामे संकटाका अन्तर—१×८=८÷३६=० शेष ८×१२
=९६÷३६=२ शे० २४×३०=७२०÷३६=२० २ मास
२० दिन

मंगलामें अन्तर्दशा चक्र

म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	सि०	स०	दशा
०	०	०	१	१	१	०	०	वर्ष
०	०	१	१	१	२	२	२	मास
१०	२०	०	१०	२०	०	१०	२०	दिन

पिंगलामें अन्तर्दशा चक्र

पि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	सि०	स०	म०	द०
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
१	२	२	३	४	४	५	०	मास
१०	०	२०	१०	०	२०	१०	२०	दिन

धान्यामें अन्तर्दशा चक्र

धा०	भ्रा	भ०	उ०	सि०	स०	म०	पि०	द०
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
३	४	५	६	७	८	१	२	मा०
०	०	०	०	०	०	०	०	दिन

भ्रामरीमें अन्तर्दशा चक्र

भ्रा०	भ०	उ०	सि०	स०	म०	पि०	धा०	द०
०	०	०	०	०	०	०	०	वर्ष
५	६	८	९	१०	१	२	४	मास
१०	२०	०	१०	२०	१०	२०	०	दिन

भद्रिकामें अन्तर्दशा चक्र

भ०	उ०	सि०	स०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	द०
०	०	०	१	०	०	०	०	वर्ष
८	१०	११	१	१	३	५	६	मास
१०	०	२०	१०	२०	१०	०	२०	दिन

उल्कामें अन्तर्दशा चक्र

उ०	सि०	स०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	द०
१	१	१	०	०	०	०	०	वर्ष
०	२	४	२	४	६	८	१०	मास
०	०	०	०	०	०	०	१०	दिन

सिद्धामें अन्तर्दशा चक्र

सि०	स०	म०	पि०	ध०	भ्रा०	भ०	उ०	द०
१	१	०	०	०	०	०	१	वर्ष
४	६	२	४	७	९	११	२	मास
१०	२०	१	२०	०	१०	२०	०	दिन

संकटामें अन्तर्दशा चक्र

स०	म०	पि०	धा०	भ्रा०	भ०	उ०	सि०	द०
१	०	०	०	०	१	१	१	वर्ष
९	२	५	८	१०	१	४	६	मास
१०	२०	१०	०	२०	१०	०	२०	दिन

बल विचार

जन्मपत्रीका यथार्थ फल ज्ञात करनेके लिये षड् बलका विचार करना नितान्त आवश्यक है। क्योंकि ग्रह अपने बलाबलानुसार ही फल देते हैं। ज्योतिष शास्त्रमे ग्रहोके स्थानबल, दिग्बल, कालबल, चेष्टाबल, नैसर्गिक-बल और दृग्बल ये छः बल माने गये है।

स्थानबलमे उच्चबल, युग्मायुग्मबल, सप्तवर्गैक्यबल, केन्द्रबल, द्रेष्काणबल ये पाँच बल सम्मिलित है। इन पाँचों बलोंका योग करनेसे स्थानबल होता है।

उच्चबल साधन

स्पष्ट ग्रहमेसे ग्रहके नीचको घटाना चाहिये। घटानेसे जो आवे वह छ-राशिसे अधिक हो तो १२ राशिमे से उसे घटा लेना चाहिये। शेषकी विकला बना ले और उन विकलाओंमे १०८००से भाग देनेपर लब्ध कलाये आवेंगी। शेषको ६०से गुणाकर, गुणनफलमे १०८००से देनेपर लब्ध विकलाएँ होगी। इन कला, विकलाओंके अशादि बना ले।

उदाहरण--स्पष्ट सूर्य ०।१०।७।३४ है, इसमेंसे सूर्यके नीच राश्यांशको घटाया तो ६।०।७।३४ आया। यहाँ राशि स्थानमें घटानेसे अधिक होनेके कारण इसे १२ राशिमेसे घटाया--

१२। ०। ०। ०
६। ०। ७।३७

५।२९।५२।२६ शेष

५×३०=१५०+२९=१७९×६०=१०७४०+५२=१०७९२×६०=६४२५२०+२६=६४२५४६÷१०८००=५९ शेष ५३४६×६०=३२०७६०÷१०८००=२९ लब्धि, यहाँ शेषका त्याग कर दिया। अतः सूर्यका उच्चबल ०।५९।२९ हुआ।

चन्द्र स्पष्ट १। ०।२४।३४
नीच राश्यंश ७। ३। ०।२४

५।२७।२४।१० शेष

५×३०=१५०+२७=१७७×६०=१०६२०+२४=१०६४४
१०६४४×६०=६३८६४०+१०=६३८६५०÷१०८००=५९, शेष १४४०×६०=८६४००÷१०८००=८

अर्थात् ०।५९।८ चन्द्रमाका उच्चबल हुआ। इसी प्रकार अन्य

ग्रहोके उच्चबलका साधनकर जन्मपत्रीमें स्पष्ट उच्चबल चक्र लिखना चाहिये। नीचे प्रत्येक ग्रहके उच्च और नीच राश्यंश दिये जाते है।

उच्च-नीच राश्यंश बोधक चक्र

सूय	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	ग्रह
०	०	९	५	३	११	६	२	८	उच्च
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	०	९	राश्यश
६	७	३	११	९	५	०	८	२	नीच
१०	३	२८	१५	५	२७	२०	०	०	राश्यश

युग्मायुग्मबल साधन

चन्द्र और शुक्र सम राशि—वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर एवं मीन या सम राशिके नवांशमे हो तो १५ कला बल होता है। यदि ये ग्रह सम राशि और सम नवाश दोनोंमें हों तो ३० कलाबल होता है। और दोनोंमें न हों तो शून्यकलाबल होता है।

सूर्य, भौम, बुध, गुरु और शनि विषम राशि या विषम नवांशमे हो तो १५ कलाबल; दोनोमें हो तो ३० कलाबल और दोनोमे ही न हो तो शून्य कला युग्मायुग्मबल होता है।

उदाहरण—

सूर्य—जन्मकुण्डलीमे मेष राशि का, और नवाश कुण्डलीमे कर्क राशिका है। यहाँ मेष राशि विषम है और नवांश राशि सम है अतः सूर्यका युग्मायुग्मबल १५ कला हुआ।

चन्द्रमा—जन्मकुण्डलीमें वृष राशि और नवाश कुण्डलीमें मकर राशिमें है, ये दोनों ही राशियाँ विषम हैं अतः चन्द्रमाका युग्मायुग्म बल ३० कला हुआ।

भौम—जन्मकुण्डलीमें मिथुन राशि और नवाश कुण्डलीमे भी

मिथुन राशिका है। ये दोनों ही राशियाँ विषम है अतः ३० कला युग्मायुग्म बल भौमका हुआ।

बुध—जन्मकुण्डलीमें मेष राशि और नवांश कुण्डलीमे वृश्चिक राशिका है। मेष राशि विषम और वृश्चिक राशि सम है अतः १५ कला बल भौमका हुआ। इसी प्रकार समस्त ग्रहोका बल निकालकर चक्र बना देना चाहिए।

उदाहरण कुण्डलीका चक्र निम्न प्रकारसे है—

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	रा०	के०	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	०	अंश
१५	३०	३०	१५	१५	१५	३०	०	०	कला
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विकला

केन्द्रादि बल साधन

केन्द्र—प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम भावमें स्थित ग्रहोका बल एक अंश; पणफर—द्वितीय, पंचम, अष्टम और एकादश स्थानमे स्थित ग्रहोका बल ३० कला एव आपोक्लिम—तृतीय, षष्ठ, नवम और द्वादश भावमें स्थित ग्रहोका बल १५ कला होता है।

उदाहरण—इष्ट उदाहरणकी जन्म कुडलीमें सूर्य लग्नसे नवम स्थानमें, चन्द्रमा दशममें, भौम एकादशमें, बुध नवममे, गुरु द्वादशमे, शुक्र अष्टममे, और शनि एकादशमे है। उपर्युक्त नियमके अनुसार सूर्य-के आपोक्लिममें होनेसे उसका १५ कला बल, चन्द्रमाका केन्द्रमें होनेसे एक अंश बल, भौमका पणफरमे होनेसे ३० कला बल, बुधका आपोक्लिममे होनेसे १५ कला बल, गुरुका भी आपोक्लिममें होनेसे १५ कला बल; शुक्रका पणफरमें होनेसे ३० कला बल और शनिका भी पणफरमें होने से ३० कला बल होगा।

उदाहरण कुंडलीका केन्द्रादि बल-चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	रा०	ग्र०
०	१	०	०	०	०	०	अंश
१५	०	३०	१५	१५	३०	३०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

द्रेष्काण बल---साधन

पुरुष ग्रहों---सूर्य, भौम और गुरु का प्रथम द्रेष्काणमें १५ कला बल; स्त्रीग्रहों---शुक्र और चन्द्रमाका तृतीय द्रेष्काणमें १५ कला बल एवं नपुसक ग्रहो---बुध और शनिका द्वितीय द्रेष्काणमे १५ कला बल होता है। जिस ग्रहका जिस द्रेष्काणमें बल बतलाया गया है, यदि उसमें ग्रह न रहे तो शून्य बल होता है।

उदाहरण---अभीष्ट उदाहरण कुडलीमे पूर्वोक्त द्रेष्काण विचारके अनुसार सूर्य द्वितीय द्रेष्काणमें, चन्द्रमा प्रथममे, भौम तृतीयमें, बुध तृतीयमें, गुरु तृतीयमें, शुक्र तृतीयमें और शनि प्रथममे है। उपर्युक्त नियमानुसार सूर्यका शून्य-बल, चन्द्रमाका शून्य, भौमका शून्य, बुधका शून्य, गुरुका शून्य, शुक्रका १५ कला और शनिका शून्य बल हुआ।

द्रेष्काण बल चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	अंश
०	०	०	०	०	१५	०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

सप्त वर्ग बल साधन

सहल गृह, होरा, द्रेष्काण, नवांश, द्वादशांश, त्रिंशांश और सप्तांशका

साधन कर उक्त कुण्डली चक्र बनानेकी विधि उदाहरण सहित लिखी गई है। इन सातों वर्गोका साधन कर बल निम्न प्रकार सिद्ध करना चाहिए।

	अं०।क०।वि०
स्वगृही ग्रहका बल	०।३०।०
अतिमित्रगृही ग्रहका बल	०।२२।३०
मित्र " " "	०।१५।०
सम " " " "	०।७।३०
शत्रु " " " "	०।३ ।४५
अतिशत्रु " " "	०।१ ।५२।३०

सब ग्रहोंके बलको जोड़कर ६० से भाग देनेपर अंशात्मक ऐक्य बल होता है।

उदाहरण—सूर्य जन्मकुंडलीमें मेष राशिका है, अतः अति[1]मित्रके गृहमें होनेसे २२।३० बल गृहका प्राप्त हुआ।

चन्द्रमा—वृष राशिका होनेसे मित्र शुक्रके गृहमें है, इस कारण इसका गृह बल १५।० लिया जायगा।

भौम—मिथुन राशिका होनेसे मित्र बुधके गृहमें है, अतः इसका गृह बल १५।० ग्रहण करना चाहिए। इस तरह समस्त ग्रहोंका गृहबल निकाल लेना चाहिये।

होरा बल—सूर्य अपने होरामें है अतः इसका ३०।० बल; चन्द्रमा अपने होरामें है अतः इसका ३०।० बल; भौमका चन्द्रमाके गृहमें होनेके कारण २२।३० बल, बुधका अपने सम चन्द्रमाके गृहमें रहनेके कारण ७।३० बल, गुरुका अपने अतिमित्र सूर्यके गृहमें रहनेके कारण २२।३०

---

[1]**यहाँ मित्रामित्रकी गणना पंचधा मैत्री चक्रके अनुसार ग्रहण करनी चाहिये।**

बल, शुक्रका अपने सम सूर्यके गृहमें होनेके कारण ७।३० बल एवं शनिका अपने सम सूर्यके गृहमें रहनेके कारण ७।३० होराका बल होगा।

द्रेष्काण बल—द्रेष्काण कुंडलीमें अपनी राशिमें रहनेके कारण सूर्यका ३०।० बल, चन्द्रमाका सम संज्ञक—उदासीन शुक्रकी राशिमें रहनेके कारण ७।३० बल, भौमका उदासीन शनिकी राशिमें रहनेके कारण ७।३० बल, बुधका मित्र गुरुकी राशिमें रहनेके कारण १५।० बल, गुरुका अपनी राशिमें रहनेके कारण ३०।० बल, शुक्रका मित्र मंगलकी राशिमें रहनेके कारण १५।० बल और शनिका अतिमित्र बुधकी राशिमें रहनेके कारण २२।३० द्रेष्काण बल होगा।

सप्तांश बल—सप्तांश कुण्डलीमें सूर्यका शत्रु बुधकी राशिमें रहनेके कारण ३।४५ सप्तांश बल, चन्द्रमाका मित्र शुक्रकी राशिमें रहनेके कारण १५।० बल, मंगलका अपनी राशिमें रहनेके कारण ३०।० बल होगा। इसी प्रकार समस्त ग्रहोंका सप्तांश बल बना लेना चाहिये।

गृह, होरा, द्रेष्काण, सप्तांश बल साधनके समान ही नवांश, द्वादशांश और त्रिशांश कुण्डलीमें स्थित ग्रहोंका बल साधन भी कर लेना चाहिये। इन सातों बलोंके योगफलमें ६० का भाग देनेसे सप्तवर्गैक्य बल आयेगा।

पूर्वोक्त उच्चबल, सप्तवर्गैक्य बल, युग्मायुग्मबल, केन्द्रादिबल एवं द्रेष्काण बल इन पाचों बलोंका योग स्थानबल होता है। जन्मपत्रीमें स्थानबल चक्र लिखनेके लिए उपर्युक्त पांचों बलोंके योगका चक्र लिखना चाहिये।

दिग्बल साधन

शनिमेंसे लग्नको, सूर्य और मंगलमेंसे चतुर्थ भावको, चन्द्रमा और शुक्रमेंसे दशम भावको, बुध और गुरुमेंसे सप्तम भावको घटाकर शेषमें

राशि ६ का भाग देनेसे ग्रहोंका दिग्बल आता है। यदि शेष ६ राशिसे अधिक हो तो १२ राशिमें से घटाकर तब भाग देना चाहिए। दूसरा नियम यह भी है कि शेषकी विकलाओंमें १०८०० का भाग देनेमें कला, विकलात्मक, दिग्बल आ जाता है।

उदाहरण—सूर्य ०।१०।७।३४ मेंसे चतुर्थभाव ७।२४।४३।२१ जो भाव स्पष्टमें आया है, को घटाया तो—

०।१०।७।३४
७।२४।४३।२१
४।१५।२४।१३ शेष

४×३०=१२०+१५=१३५×६०=८१००+२४=
८१२४×६०= ४८७४४०+१३= ४८७४५३
४८७४५३÷१०८००=४५, शेष १४५३×६०=
८७१८०÷१०८००=८, यहाँ शेषका त्याग कर दिया गया अतः सूर्य-का दिग्बल ४५।८ हुआ।

चन्द्रमाका—१।०।२४।३४ चन्द्रस्पष्टमेंसे
१।२४।४३।२१दशम भावको घटाया
११।५।४१।१३

यहाँ ६ राशिसे अधिक होनेके कारण १२ राशिमेंसे घटाया।

१२।०।०।०
११।५।४१।१३
०।२४।१८।४७ शेष

०×३०=०+२४=२४५६०= १४४०+१८=१४५८
१४५८×६०=८७४८०+४७=८७५२७
८७५२७÷१०८००=८ शेष ११२७×६०=६७६२०
६७६२०+१०८००=६। यहाँ शेषका प्रयोजन न होनेसे त्याग कर दिया गया।

८।६ चन्द्रमाका बल हुआ। इसी प्रकार समस्त ग्रहोंका दिग्बल बनाकर जन्मपत्रीमें दिग्बल चक्र लिखना चाहिए।

कालबल साधन

नतोन्नतबल, पक्षबल, अहोरात्रत्रिभाग-बल, वर्षेशादिबल, इन चारों बलोंका योग कर देने पर काल-बल आता है।

नतोन्नतबल साधन—नत घटयादिकोंको दूना करनेसे चन्द्र। भौम और शनिका नतोन्नत बल एवं उन्नत घटयादिकोंको दूना करनेसे सूर्य गुरु एवं शुक्रका नतोन्नत बल होता है। बुधका सदा १ अंश नतोन्नत बल लिया जाता है। नत साधनकी प्रक्रिया पहले लिखी जा चुकी है, इसे ३० घटीमेंसे घटानेपर नतके समान पूर्व या पश्चिम उन्नत होता है।

उदाहरण—७।१९ पश्चिन नत है (इष्ट काल परसे प्रथम नत साधनके नियमानुसार आया है) इसे ३० घटीमेंसे घटाया तो—३०।०

७।१९

उन्नत-पश्चिम २२।४१

उपर्युक्त नियममें सूर्यका नतोन्नत बल उन्नत द्वारा बनाया जाता है अतः २२।४१×२=४५।२२ कलादि नतोन्नत बल सूर्य, गुरु और शुक्रका हुआ।

चन्द्र, भौम और शनिका—७।१९×२=१४।३८ कलादि बल हुआ। बुधका एक अंश माना जायगा। अतः इस उदाहरणका नतोन्नत बल-चक्र निम्न प्रकार बनेगा—

नतोन्नत बल चक्र

सू०	चं०	भौ०	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	१	०	०	०	अंश
४५	१४	१४	०	४५	४५	१४	कला
२२	३८	३८	०	२२	२२	३८	विकला

पक्षबल साधन—सूर्य चन्द्रमाके अन्तरके अंशोंमें ३ का भाग देनेसे शुभ ग्रहों—चन्द्र, बुध, गुरु और शुक्रका पक्षबल होता है, इसे ६० कलामें घटानेसे पापग्रहों-सूर्य, मंगल, शनि और पापयुक्त बुधका पक्षबल होता है।

उदाहरण—चन्द्रमा १।०।२४।३४ में से

सूर्य ०।१०।७ ।३४ को घटाया

२०।१७।०

३)२०।१७(६ कला
१८
२×६०
१२०
१७
३)१३७(४५ विकला
१२
१७
१५
२

६।४५ शुभग्रहोंका पक्षबल हुआ

६०।०
६।४५
५३।१५ अशुभ ग्रहोंका पक्ष बल होगा

पक्षबल चक्र

सू०	चं०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	अंश
५३	६	५३	५३	६	६	५३	कला
१५	४५	१५	१५	४५	४५	१५	विकला

दिवारात्रि त्र्यंशबल—दिनका जन्म हो तो दिनमानका त्रिभाग करे और रातका जन्म हो तो रात्रिमानका त्रिभाग करे। यदि दिनके

प्रथम भागमें जन्म हो तो बुधका, दूसरे भागमें सूर्यका और तीसरे भागमें शनिका एक अंश बल होता है। रातके प्रथम भागमें जन्म हो तो, सूर्यका, द्वितीय भागमें शुक्रका और तृतीय भागमें भौम एवं गुरुका सदा एक अंश बल होता है।

इससे विपरीत स्थितिमें शून्यबल समझना चाहिये। उदाहरण—दिनमान ३२।६ है और इष्टकाल २३।२२ है दिनमान ३२।६÷३= १०।४२; १०।४२ का एक भाग; १०।४२ से २१।२४ तक दूसरा भाग एवं २१।२४ से ३२।६ तक तीसरा भाग होगा। अभीष्ट इष्टकाल तृतीय भागका है अतः शनिका एक अंश बल होगा। गुरुका सर्वदा एक अंश बल माना जाता है अतः उसका भी एक अंश बल ग्रहण करना चाहिए। बल चक्र नियम इस प्रकार होगा—

दिवारात्रि त्रिभाग बल चक्र

सू०	चं०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	१	०	१	अंश
०	०	०	०	०	०	०	कला
०	०	०	०	०	०	०	विकला

वर्षेशादि बल—इष्ट दिनका कलियुगाद्यहर्गण लाकर उसमें ३७३ घटाकर शेषमें २५२० का भाग देने पर जो शेष आवे उसे दो जगह स्थापित करे। पहले स्थानमें ३६०का और दूसरे स्थानमें ३० का भाग दे। दोनों स्थानकी लब्धियोंको क्रमशः तीन और दोसे गुणा करे, गुणनफलमें एक जोड़ दे। इस योगफलमें ७ का भाग देने पर प्रथम स्थानके शेषमें वर्षपति और द्वितीय स्थानके शेषमें मासपति होता है।

कलियुगाद्यहर्गण साधन विधि—इष्ट शक वर्षमें ३१७९ जोड़ देनेसे कलिगत वर्ष होते हैं। कलिगत वर्षोंको १२ से गुणाकर चैत्रादि

गतमास जोड़ देना चाहिए। इस योगफलको तीन स्थानोंमें रखना चाहिये, प्रथम स्थानमें ७० से भाग देकर जो लब्ध आवे उसे द्वितीय स्थानमें जोड़ और इस योगफलमें ३३ का भाग देकर लब्धिको तृतीय स्थानमें जोड़ दे। पुनः इस योगफलको ३० से गुणाकर गत तिथि जोड़ दे। इस योगफलको दो स्थानोंमें स्थापित करे। प्रथम स्थानकी संख्याको ११ से गुणाकर ७०३ का भाग देकर लब्धिको द्वितीय स्थानकी संख्यामें घटानेसे कलियुगाद्यहर्गण होता है।

उदाहरण—वि० सं० २००१ शाक १८६६ के वैशाख मास कृष्ण पक्ष द्वितीया तिथि, सोमवारका जन्म है।

१८६६+३१७९=५०४५ कलियुगादि गतवर्ष

५०४५×१२=६०५४०+१=६०५४१ गतमास

६०५४१÷७०=८६४ शेष ६१

६०५४१	६०५४१+१८६०
८६४	=६२४०१
६१४०५	
÷३३	
=१८६०शेष २५	

६२४०१×३०=१८७२०३०×१६ (तिथि शुक्ल प्रतिपदासे जोड़नी चाहिए)

१८७२०४६×११=२०५९२५०६ १८७३०४६

२०५९२५०६÷७०३= २९२९२

२९२९२, शेष २४० १८४२७५४

कलियुगाद्यहर्गण

१८४२७५४–३७३=१८४२३८१÷२५२०=७३१, शेष २६१, यहाँ लब्धिका उपयोग न होनसे शेषको दो स्थानोंमें स्थापित किया।

२६१÷३६०=० २६१÷३०=८, शेष २१
शेष=२६१ मासेश ८×२=१६+१=१७
१७÷७=२, शेष ३

वर्षेश=०×३=०+१=१÷७=०, शेष १

दिनेश साधन–जिस दिनका इष्ट काल हो, वही दिनेश होता है। प्रस्तुत उदाहरणमें सोमवारका इष्टकाल है, अतः दिनेश चन्द्रमा होगा।

काल होरेश साधन–सूर्य दक्षिण गोलमें हो तो इष्टकालमें चर घटीको जोड़ना और उत्तर गोलमें हो तो इष्टकालमें से चर घटीको घटाना चाहिये। इस कालमें पूर्व देशान्तरको ऋण और पश्चिम देशान्तरको धन करनेसे वार प्रवृतिके समयसे इष्टकाल होता है। इस इष्टकालको दोसे गुणा कर ५ का भाग देनेपर जो शेष रहे उसे गुणनफलमें से घटाना चाहिये। अब शेषमें एक जोडकर ७का भाग देनेसे जो शेष आवे उसे दिनपतिसे आगे गणना करनेपर काल होरेश आता है।

उदाहरण–इष्टकाल २३।२२, चर मिनटादि २५।१७––यह पहले निकाला गया है। इसमें घटचादि–२५–- $\frac{१७}{६०}=२५+\frac{१७}{६०}=\frac{१५१७}{६०}$ $\times\frac{१}{२\frac{१}{३}}=\frac{१५१७}{१८०}=१\frac{७७}{१८०}\times\frac{६०}{१}=\frac{७७}{३}=३\frac{२}{३}$ अर्थात् एक घटी ३ पल चर काल हुआ यहाँ सूर्य मेष राशिका होनेके कारण दक्षिण गोलका है अतः उपर्युक्त नियमानुसार इष्टकाल २३।२२ में देशान्तर ८ मिनट ४०से० के घटी { चार घटी १।३ को इष्टकाल २३।२२ में जोड़ा पल बनाये तो { देशान्तर २४।२५

२१$\frac{२}{३}$ पल हुए

०।२१, आरा रेखादेशसे पश्चिम होनेके कारण देशान्तर घटीका धन संस्कार किया।

२४।२५
०।२१
———
२४।४६ वार प्रवृतिसे इष्टकाल

अधिक हो तो धन, अल्प हो तो ऋण करके ४ का भाग देनेसे लब्धि रूप ग्रह दृष्टि होती है। शुभ ग्रहों—गुरु, शुक्र, चन्द्र और बुधकी दृष्टिके जोड़में चारका भाग देनेसे जो आवे उसे पहले वाले पांच बलोंके योगमें जोड़ देनेसे षड्बलैक्य और पाप ग्रहों, सूर्य, मंगल, शनि तथा पाप ग्रह युक्त बुधकी दृष्टिके जोड़मे चारका भाग देने पर जो आवे उसे पहले-वाले पांच बलोंके योगमे घटानेसे षड्वलैक्य बल होता है।

दृष्टि ध्रुवांकचक्र

शेषराशि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	०
ध्रुवांक	०	१	३	२	०	४	३	२	१	०	०	०

उदाहरण—सूर्यपर बुधकी दृष्टिका साधन करना है, अतः यहाँ बुध द्रष्टा और सूर्य्य दृश्य होगा।

०।१०। ७।३४ दृश्यमेंसे

०।२३।२१।३१ द्रष्टाको घटाया

११।१६।४६। ३—शेष, इसमें राशि संख्या ११ है अतः ११के नीच ध्रुवांक शून्य मिला, आगेवाला ध्रुवांक भी शून्य है, दोनोंका अन्तर भी शून्य रूप होगा। अंशादि १६।४६।३×०=०÷३०=०, ०+०=०÷४=० अतः यहाँ सूर्य पर बुधकी दृष्टि शून्य रूप होगी।

इस प्रकार प्रत्येक ग्रह पर सातों ग्रहोंकी दृष्टिका साधन कर शुभाशुभ ग्रहोंकी अपेक्षासे दृष्टि योग निकालना चाहिये।

प्रत्येक ग्रहके पृथक् पृथक् स्थानबल, दिग्बल, कालबल, चेष्टाबल, निसर्गबल और दृग्बल इन छःहों बलोंका योगकर देनेसे हर एक ग्रहका षड्बल आ जाता है।

ग्रहोंके बलाबलका निर्णय

जिन ग्रहोंका बलयोग—षड्वलैक्य तीन अंशसे कम हो वे निर्बल और

जिनका छः अंशसे अधिक हो वे पूर्ण बलवान और जिनका तीन अंशसे अधिक और छः अंशसे कम हो वे मध्यबली होते है।

अष्ट-वर्ग विचार

फल कहनेकी प्रायः तीन विधियाँ प्रचलित हैं--जन्म लग्न द्वारा, जन्म राशि--चन्द्र लग्न द्वारा और नवाश कुण्डली द्वारा। मनुष्यका जन्म जिस राशिमें होता है, वह राशि उसके जीवनमे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। जन्म लग्नसे शरीरका विचार, जन्मराशिसे मानसिक विचार, नवाश कुण्डलीसे जीवनकी विभिन्न समस्याओंका विचार किया जाता है। जन्म राशि द्वारा जो फल कहनेकी विधि प्रचलित है उसे गोचर विधि कहते है। लेकिन गोचरका फल स्थूल होता है। ज्योतिर्विदोंने गोचर विधिको सूक्ष्मता प्रदान करनेके लिये अष्टक वर्ग विधिको निकाला है।

जिस प्रकार प्रत्येक ग्रह जन्म समयकी स्थित राशि पर अपना शुभाशुभ प्रभाव डालता है, उसी प्रकार जन्म लग्नका भी अपना शुभाशुभ फल होता है। तात्पर्य यह है कि सात ग्रह स्थित, राशियाँ और जन्म लग्न इन आठों स्थानोंमें सातों ग्रह और लग्नका प्रभाव इष्टानिष्ट रूपमे पड़ता है। सूर्य कुण्डली, सूर्याष्टकवर्ग, चन्द्र कुण्डली--चन्द्राष्टक वर्ग, मंगल कुण्डली--मगलाष्टक वर्ग, बुध कुण्डली--बुधाष्ट वर्ग, गुरु कुण्डली--गुरु अष्टक वर्ग आदि सात ग्रह और लग्न इन आठोंके अष्टक वर्ग बना लेना चाहिये। प्रत्येक ग्रह अपने-अपने स्थानसे जिन-जिन स्थानोंमें बल प्रदान करता है। उन स्थानोंमें, इस शुभफल दायित्वको रेखा या विन्दु कहते हैं। किसी किसी आचार्यने शुभफलका चिन्ह रेखा माना है तो किसीने विन्दु। सारांश यह है कि शुभ फलको यदि रेखा द्वारा व्यक्त किया जायगा तो अशुभ फलको शून्य द्वारा और शुभ फलको शून्य द्वारा व्यक्त किया जायगा तो अशुभ फलको रेखा द्वारा। नीचे सामान्य अष्टक वर्ग चक्र दिये जाते हैं। जिस अष्टक वर्गमें जो ग्रह जिन-जिन स्थानोंमें बल प्रदान करते है, उन स्थानोंकी संख्या दी गई है। जैसे सूर्याष्टक वर्गमें

चन्द्रमा जिस स्थानपर बैठा होगा, उससे तीसरे, छटवें, दसवे और ग्यारहवें भावमें शुभ फल देता है। शेषमे अशुभ फल देता है। इसी प्रकार अन्य स्थानोंको समझना चाहिये।

रवि रेखा ४८

सू०	च०	भौ०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१	३	१	३	५	६	१	३
२							
४							
७	६	२	५	६	७	२	४
८						४	
९			६				६
१०		४		९	१२	७	
११	१०		९			८	१०
		७	१०	११		९	
	११	८	११			१०	११
		९	१२			११	१२
		१०					
		११					

चन्द्र रेखा ४९

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	१	२	१	१	३	३	३
६	३	३	३	४	४	५	६
७	६	५	४	७	५	६	१०
८	७	६	५	८	७	११	११
१०	१०	९	७	१०	९		
११	११	१०	८	११	१०		
		११	१०	१२	११		
			११				

बुध रेखा ५४

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
५	२	१	१	६	१	१	१
६	४	२	२	८	२	२	२
९	६	४	५	११	३	४	४
११	८	७	६	१२	४	७	६
१२	१०	८	९		५	८	८
					८		
	११	९	१०		९	९	१०
		१०	११		११	१०	११
		११	१२			११	

भौम रेखा ३९

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	३	१	३	६	६	१	१
५	६	२	५	१०	८	८	३
६	११	४	६	११	११	७	६
१०		७	११	१२	१२	८	१०
११		८				९	११
		१०				१०	
		११				११	

गुरु रेखा ५६

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१	२	१	१	१	२	३	१
२	५	२	२	२	५	५	२
३			४		६	६	४
४	७	४		३			
७			५				५
	९	७	६	४	९	१२	६
८				७			
९		८			१०		७
	११	१०	९	८			९
१०			१०		११		
				१०			१०
११		११	११	११			११

शुक्र रेखा ५२

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
८	१	३	३	५	१	३	१
११	२						
	३	५	५	८	२	४	२
१२							
	४	६	६	९	३	५	३
	५						
	८	९	९	१०	६	८	६
	९	११	११	११	५	९	५
					८		
	११						
	१२	१२			९	१०	८
					१०		९
					११	११	११

शनि रेखा ३९

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१	३	३	६	५	६	३	१
		५					३
२	६		८	६	११	५	
							८
४	१२	६	९	११	१२	६	६
७		१०	१०	१२		११	१०
८		११	११				११
१०		१२	१२				
११							

लग्न रेखा ४९

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	३	१	१	१	१	१	३
४	६	३	२	२	२	३	
							६
९	१०	६	८	४	३	८	
१०	११	१०	६	५	८	६	१०
११		११	८	६	५	१०	११
१२			१०	७	८	११	
			११	९	९		
				११	११		

तृतीयाध्याय

जन्मपत्री मानवके पूर्वजन्मके सचित कर्मोका मूर्तिमान रूप है, अथवा यों कह सकते है कि यह पूर्व जन्मके कर्मोको जाननेकी कुञ्जी है। जिस प्रकार विशाल वट वृक्षका समावेश उसके बीजमे है, उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्तिके पूर्व जन्म-जन्मान्तरोके कृतकर्म जन्मपत्रीमे अकित है। जो आस्तिक है, आत्माको नित्य पदार्थ स्वीकार करते है, वे इस बातको माननेसे इकार नही कर सकते कि सचित एव प्रारब्ध कर्मोके फलको मनुष्य अपनी जीवन नौकामे बैठकर क्रियमाणरूपी पतवारके द्वारा हेर फेर करते हुए उपभोग करता है। अतएव जन्मपत्रीसे मानवके भाग्यका ज्ञान किया जाता है। यहाँ इतना स्मरण सदा रखना होगा कि क्रियमाण कर्मोके द्वारा पूर्वोपार्जित अदृष्टमे हीनाधिकता भी की जा सकती है। यह पहले भी कहा गया है कि ज्योतिषका प्रधान उपयोग अपने अदृष्टको ज्ञात कर उसमे सुधार करना है। यदि हम अपने भाग्यको पहलेसे जान जाये तो सजग हो उस भाग्यको उलट भी सकते है। परन्तु जो तीव्र अदृष्ट-का उदय होता है, वह टाला नही जा सकता; उसका फल अवश्य भोगना पडता है। अतएव जो आज साधारण जनतामे मिथ्या विश्वास फैला हुआ है कि ज्योतिषमे अमुक व्यक्ति का भाग्य अमुक प्रकार का बताया गया है, अतएव अमुक व्यक्ति अमुक प्रकारका होगा ही, यह गलत है। यदि क्रियमाणका पलडा भारी हो गया तो सचित अपना फल देनेमे असमर्थ रहेगा। हाँ, क्रियमाण यथार्थ रूपमे सम्पन्न न किया जाय तो पूर्वोपार्जित अदृष्टका फल भोगना ही पडता है, इसलिये जन्मपत्रीमे ज्योतिषी द्वारा जिस प्रकारका फलादेश बतलाया जाता है वह ठीक घट भी सकता है और अन्यथा भी हो सकता है। फिर भी जीवनको उन्नति-

शील बनाने एवं क्रियमाण द्वारा अपने भविष्यको सुधारनेके लिये ज्योतिष ज्ञानकी आवश्यकता है। जन्मपत्रीके फलादेशको अवगत करनेके लिये प्रथम ग्रह और उनके सम्बन्धमे निम्न आवश्यक बाते जान लेना चाहिए। भाव, राशि और ग्रहकी स्थितिको देखकर फलका वर्णन करना एव ग्रहोका स्वरूप ज्ञात कर उनके सम्बन्धसे फल अवगत करना चाहिए--

सूर्य--पूर्वदिशाका स्वामी, पुरुष, रक्त वर्ण, पित्त प्रकृति और पाप ग्रह है। सूर्य आत्मा, स्वभाव, आरोग्यता, राज्य और देवालयका सूचक तथा पितृ कारक है। पिताके सम्बन्धमे सूर्यसे विचार किया जाता है। नेत्र, कलेजा, मेरुदण्ड और स्नायु आदि अवयवो पर इसका विशेष प्रभाव पडता है। यह लग्नसे सप्तम स्थानमे बली माना गया है। मकरसे छः राशि पर्यन्त चेष्टाबली है। इससे शारीरिक रोग, सिरदर्द, अपचन, क्षय, महाज्वर, अतिसार, मदाग्नि, नेत्रविकार, मानसिक रोग, उदासीनता खेद, अपमान एव कलह आदिका विचार किया जाता है।

चन्द्रमा--पश्चिमोत्तर दिशाका स्वामी, स्त्री, श्वेतवर्ण और जल ग्रह है। वातश्लेपमा इसकी धातु और यह रक्तका स्वामी है। माता-पिता, चित्तवृत्ति, शारीरिक पुष्टि, राजानुग्रह, सम्पत्ति और चतुर्थ स्थानका कारक है। चतुर्थ स्थानमे चन्द्रमा बली और मकरसे छः राशिमे इसका चेष्टाबल होता है। इससे शारीरिक रोग, पाडुरोग, जलज तथा कफज रोग, पीनस, मूत्रकृच्छ्र, स्त्रीजन्य रोग, मानसिक रोग, व्यर्थ भ्रमण, उदर एवं मस्तिष्कका विचार किया जाता है। कृष्णपक्षकी ६ से शुक्लपक्षकी १०मी तक क्षीण चन्द्रमा रहनेके कारण पाप ग्रह और शुक्लपक्षकी १०मी से कृष्णपक्षकी ५मी तक पूर्णज्योति रहनेसे शुभ ग्रह और बली माना जाता है। बली चन्द्रमा ही चतुर्थ भावमे अपना पूर्ण फल देता है।

मंगल--दक्षिण दिशाका स्वामी, पुरुष जाति, पित्त प्रकृति, रक्त-वर्ण और अग्नि तत्त्व है। यह स्वभावतः पाप ग्रह है, धैर्य तथा पराक्रम-का स्वामी है। तीसरे और छटवे स्थानमे बली और द्वितीय स्थानमें

निष्फल होता है। दशम स्थानमे दिग्बली और चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है। यह भ्रातृ और भगिनी कारक है।

बुध--उत्तर दिशाका स्वामी, नपुसक, त्रिदोष प्रकृति, श्यामवर्ण और पृथ्वी तत्त्व है। यह पाप ग्रहोके--सू० म० रा० के० श० के साथ रहनेसे अशुभ और शुभ ग्रहों--पूर्व चन्द्रमा, गुरु, शुक्र, के साथ रहनेसे शुभ फलदायक होता है। यह ज्योतिष विद्या, चिकित्सा शास्त्र, शिल्प, कानून, वाणिज्य और चतुर्थ तथा दशम स्थानका कारक है। चतुर्थ स्थानमे रहनेसे निष्फल होता है, इससे जिह्वा और तालु आदि उच्चारणके अवयवोंका विचार किया जाता है। इससे वाणी, गुह्यरोग, सग्रहणी बुद्धिभम, मूक, आलस्य, वातरोग एव श्वेतकुष्ठ आदिका विचार विशेष रूपमे होता है।

गुरु--पूर्वोत्तर दिशाका स्वामी, पुरुष जाति, पीतवर्ण, और आकाश तत्त्व है। यह लग्नमे बली और चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है। यह चर्बी और कफ धातुकी वृद्धि करने वाला है। इससे पुत्र, पौत्र विद्या, गृह, गुल्म एवं सूजन आदि रोगोका विचार किया जाता है।

शुक्र--दक्षिण पूर्वका स्वामी, स्त्री, श्यामगौर वर्ण एवं कार्यकुशल है। इस ग्रहके प्रभावसे जातकका रग गेहूआ होता है। छटवे स्थानमे यह निष्फल एवं सातवेमें अनिष्टकर होता है। यह जलग्रह है, इसलिये कफ, वीर्य आदि धातुओका कारक माना गया है। मदनेच्छा, गानविद्या, काव्य, पुष्प, आभरण, नेत्र, वाहन शैया, स्त्री, कविता आदिका कारक है। दिनमे जन्म होनेसे शुक्रसे माताका भी विचार किया जाता है। सासारिक सुखका विचार इसी ग्रहसे होता है।

शनि--पश्चिम दिशाका स्वामी, नपुसक, वातश्लेषमिक प्रकृति कृष्णवर्ण और वायुतत्त्व है। यह सप्तम स्थानमे बली और वक्रीग्रह या चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है। इससे अग्रेजी विद्याका विचार किया जाता है। रातमे जन्म होनेपर शनि मातृ और पितृ कारक होता

है। इससे आयु, शारीरिक बल, उदारता, विपत्ति, योगाभ्यास, प्रभुता, ऐश्वर्य, मोक्ष, ख्याति, नौकरी एवं मूर्च्छादि रोगोका विचार किया जाता है।

राहु--दक्षिण दिशाका स्वामी कृष्णवर्ण और क्रूर ग्रह है। जिस स्थानपर राहु रहता है, यह उस स्थानकी उन्नतिको रोकता है।

केतु--कृष्णवर्ण और क्रूर ग्रह है। इससे चर्मरोग, मातामह, हाथ पाँव और क्षुधाजनित कष्ट आदिका विचार किया जाता है।

विशेष--यद्यपि बृहस्पति और शुक्र दोनों शुभग्रह है, पर शुक्रसे सासारिक और व्यावहारिक सुखोका तथा बृहस्पतिसे पारलौकिक एव आध्यात्मिक सुखोका विचार किया जाता है। शुक्रके प्रभावसे मनुष्य स्वार्थी और बृहस्पतिके प्रभावसे परमार्थी होता है।

शनि और मगल ये दोनों भी पाप ग्रह है, पर दोनोमे अन्तर यही है कि शनि यद्यपि क्रूर ग्रह है, लेकिन उसका अन्तिम परिणाम सुखद होता है, यह दुर्भाग्य और यन्त्रणाके फेरमे डालकर मनुष्यको शुद्ध बना देता है। परन्तु मगल उत्तेजना देनेवाला, उमग और तृष्णासे परिपूर्ण कर देनेके कारण सर्वदा दुःखदायक होता है।

ग्रहोंके छः प्रकारके बल

स्थानबल, दिग्बल, कालबल, नैसर्गिकबल, चेष्टाबल और दृग्बल, ये छः प्रकारके बल है। यद्यपि पूर्वमे ग्रहोके बलाबलका विचार गणित प्रक्रिया द्वारा किया जा चुका है, तथापि फलित ज्ञानके लिये इन बलोको जानलेना आवश्यक है।

स्थानबल--जो ग्रह उच्च, स्वगृही, मित्रगृही, मूल त्रिकोणस्थ, स्वनवाशस्थ अथवा द्रेष्काणस्थ होता है, वह स्थान बली कहलाता है।

दिग्बल--बुध और गुरु लग्नमे रहनेसे, शुक्र और चन्द्रमा चतुर्थमे रहनेसे, शनि सप्तममे रहनेसे एवं सूर्य और मगल दशम स्थानमें रहनेसे दिग्बली होते हैं।

कालबल——रातमे जन्म होनेपर चन्द्र, शनि और मंगल तथा दिनमे जन्म होनेपर सूर्य और बुध और शुक्र कालबली होते है। मतान्तरसे बुधको सर्वदा कालबली माना है।

नैसर्गिकबल——शनि, मगल, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र और सूर्य उत्तरोत्तर बली होते है।

चेष्टाबल——मकरसे मिथुन पर्यन्त किसी राशिमे रहनेसे सूर्य और चन्द्रमा तथा मगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होते है।

दृग्बल——शुभ ग्रहोंसे दृष्ट ग्रह दृग्बली होते है।

बलवान ग्रह अपने स्वभावके अनुसार जिस भावमे रहता है, उस भावका फल देता है। पाठकोको राशिस्वभाव और ग्रहस्वभाव इन दोनोका समन्वय कर फल अवगत करना चाहिए——

ग्रहोंकी दृष्टि

सभी ग्रह अपने स्थानसे तीसरे और दसवे भावको एक चरण दृष्टिसे; पाँचवे और नवे भावको दो चरण दृष्टिसे, चौथे और आठवे भावको तीन चरण दृष्टिसे एव सातवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखते है। किन्तु मगल चौथे और आठवे भावको, गुरु पाँचवे और नवे भावको एव शनि तीसरे और दसवे भावको भी पूर्ण दृष्टिसे देखते है।

ग्रहोंके उच्च और मूल त्रिकोणका विचार

सूर्यका मेषके १० अशपर, चन्द्रमाका वृषके ३ अशपर, मगलका मकरके २८ अश पर, बुधका कन्याके १५ अश पर, बृहस्पतिका कर्कके ५ अशपर, शुक्रका मीनके २७ अशपर और शनिका तुलाके २० अशपर परमोच्च होता है। प्रत्येक ग्रह अपने स्थानसे सप्तम राशिमे इन्ही अशो पर नीचका होता है। राहु वृष राशिमे उच्च और वृश्चिक

राशिमें नीच एवं केतु वृश्चिक राशिमें उच्च और वृषराशिमें नीचका होता है।

उच्चग्रहकी अपेक्षा मूलत्रिकोणमें ग्रहोंका प्रभाव कम पड़ता है, लेकिन स्वक्षेत्री—अपनी राशिमें रहनेकी अपेक्षा मूलत्रिकोणबली होता है। पहले लिखा गया है कि सूर्य सिंहमें स्वक्षेत्री है—सिंहका स्वामी है, परन्तु सिंहके १ अंशसे २० अंशतक सूर्यका मूल त्रिकोण और २१ से ३० अंश तक स्वक्षेत्र कहलाता है। जैसे किसीका जन्मकालीन सूर्य सिंहके १५ वें अंश पर है तो यह मूलत्रिकोणका कहलायेगा, यदि यही सूर्य २२वें अंशका होता तो स्वक्षेत्री कहलाता। चन्द्रमाका वृषराशिके ३ अंशतक परमोच्च है और इसी राशिके ४ अंशसे ३० अंशतक मूलत्रिकोण है। मंगलका मेषके १८ अंशतक मूलत्रिकोण है, और इससे आगे स्वक्षेत्र है। बुधका कन्याके १५ अंशतक उच्च, १६ अंशसे २० अंश तक मूलत्रिकोण और १२ से ३० अंशतक स्वक्षेत्र है। गुरुका धनुराशिके १ अंशसे १३ अंशतक मूल-त्रिकोण और १४ से ३० अंशतक स्वगृह होता है। शुक्रका तुलाके १ अंशसे १० अंशतक मूलत्रिकोण और ११ से ३० अंशतक स्वक्षेत्र है। शनि का कुम्भके १ अंश से २० अंश तक मूलत्रिकोण और २१ से ३० अंश तक स्वक्षेत्र है। राहुका वृषमें उच्च, मेषमें स्वगृह और कर्कमें मूल त्रिकोण है।

द्वादश भावों—स्थानोंका परिचय

जन्मकुण्डलीके द्वादश भावोंके नाम पहले लिखे गये हैं। यहाँ द्वादश भावोंकी संज्ञाएँ और उनसे विचारणीय बातोंका उल्लेख किया जाता है। केन्द्र १।४।७।१०, पणफर २।५।८।११, आपोक्लिम ३।६।९।१२, त्रिकोण ५।९, उपचय ३।६।१०।११, चतुरस्र ४।८, मारक २।७; नेत्र-त्रिक संज्ञक ६।८।१२ स्थान है।

प्रथम भावके नाम—आत्मा, शरीर, लग्न, होरा, देह, वपु, कल्प,

मूर्त्ति, अग, तनु, उदय, आद्य, प्रथम, केन्द्र, कण्टक और चतुष्टय है ।

विचारणीय बातें—रूप, चिह्न, जाति, आयु, सुख, दुःख, विवेक, शील, मस्तिष्क, स्वभाव, आकृति आदि है । इसका कारक रवि है, इसमें मिथुन, कन्या, तुला और कुम्भ राशियाँ बलवान् मानी जाती है । लग्नेश-की स्थितिके बलाबलानुसार कार्यकुशलता, जातीय उन्नति, अवनतिका ज्ञान किया जाता है ।

द्वितीयभावके नाम—पणफर, द्रव्य, स्व, वित्त, कोश, अर्थ, कुटुम्ब और धन है ।

विचारणीय बातें—कुल, मित्र, आँख, कान, नाक, स्वर, सौन्दर्य गान, ेम, सुखभोग, सत्यभाषण, सचित पूजी (सोना, चाँदी, मणि, माणिक्य आदि) क्रय एव विक्रय आदि है ।

तृतीय भावके नाम—आपोक्लिम, उपचय, पराक्रम, सहज, भ्रातृ और दुश्चिक्य है ।

विचारणीय बातें—नौकर-चाकर, सहोदर, पराक्रम, आभूषण, दासकर्म, साहस, आयुष्य, शौर्य, धैर्य, दमा, खासी, क्षय, स्वास, गायन योगाभ्यास आदि है ।

चतुर्थभावके नाम—केन्द्र कण्टक सुख, पाताल, तुर्य, हिबुक, गृह, सुहृद्, वाहन, यान, अबु, बन्धु, नीर आदि है ।

विचारणीय बातें—मातृ-पितृ सुख, गृह, ग्राम, चतुष्पद, मित्र, शान्ति, अन्तःकरणकी स्थिति, मकान, सम्पत्ति, बाग-बगीचा, पेटके रोग यकृत, दया, औदार्य, परोपकार, कपट, छल एव निधि है । इस स्थानम कर्क, मीन और मकर राशिका उत्तरार्द्ध बलवान होता है । चन्द्रमा और बुध इस स्थानके कारक है । यह स्थान विशेषतः माता का है ।

पञ्चमभावके नाम—पंचम, सुत, तनुज, पणफर, त्रिकोण, बुद्धि, विद्या, आत्मज और वाणी है ।

विचारणीय बातें—बुद्धि, प्रबन्ध, सन्तान, विद्या, विनय, नीति,

व्यवस्था, देवभक्ति, मातुल-सुख, नौकरी छूटना, धन मिलनेके उपाय, अनायास बहुत धन प्राप्ति, जठराग्नि, गर्भाशय, हाथका यश, मूत्रपिण्ड एवं वस्ती है। इसका कारक गुरु है।

षष्टभावके नाम—आपोक्लिम, उपचय, त्रिक, शत्रु, रिपु, द्वेष, क्षत, वैरी और नष्ट है।

विचारणीय बातें—मामाकी स्थिति, शत्रु, चिन्ता, शका, जमीन्दारी रोग, पीडा, व्रणादिक, गुदास्थान एवं यश आदि है। इसके कारक शनि और मगल है।

सप्तमभावके नाम—केन्द्र, मदन, सौभाग्य, जामित्र और काम है।

विचारणीय बातें—स्त्री, मृत्यु, मदन पीडा, स्वास्थ्य, कामचिन्ता मैथुन, अगविभाग, जननेन्द्रिय, विवाह, व्यापार, झगडे एवं बवासीर रोग आदि है। इसमे वृश्चिक राशि बलवान् होती है।

अष्टमभावके नाम—पणफर, चतुस्र, त्रिक, आयु, रन्ध्र और जीवन है।

विचारणीय बातें—व्याधि, आयु, जीवन, मरण, मृत्युके कारण मानसिक चिन्ता, समुद्र यात्रा, ऋणका होना, उतरना, लिग, योनि, अण्ड-कोष आदिके रोग एवं सकट प्रभृति है। इस स्थानका कारक शनि है।

नवमभावके नाम—धर्म, पुण्य, भाग्य और त्रिकोण है।

विचारणीय बातें—मानसिक वृत्ति, भाग्योदय, शील, विद्या, तप धर्म, प्रवास तीर्थयात्रा, पिताका सुख एवं दान आदि है। इसके कारक, रवि और गुरु है।

दशमभावके नाम—व्यापार, आस्पद, मान आज्ञा, कर्म, व्योम, गगन, मध्य, केन्द्र, स्व और नभ है।

विचारणीय बातें—राज्य, मान, प्रतिष्ठा, नौकरी, पिता, प्रभुता, व्यापार, अधिकार, ऐश्वर्य भोग, कीर्त्तिलाभ एवं नेतृत्त्व आदि है। इसमे मेष, सिह, वृष, मकरका पूर्वार्द्ध एवं धनका उत्तरार्द्ध बलवान् होता है। इसके कारक रवि, बुध, गुरु एवं शनि है।

एकादशभावके नाम—पणफर, उपचय, लाभ, उत्तम और आय है।

विचारणीय बातें—गज, अश्व, रत्न, माङ्गलिक कार्य, मोटर, पालकी सम्पत्ति एव ऐश्वर्य आदि है। इसका कारक गुरु है।

द्वादशभावके नाम—रिष्फ, व्यय, त्रिक, अन्तिम और प्रान्त्य है।

विचारणीय बातें—हानि, दान, व्यय, दण्ड, व्यसन एव रोग आदि है। इस स्थानका कारक शनि है।

फल प्रतिपादनके लिये कतिपय नियम

जिस भावमे जो राशि हो, उस राशिका स्वामी ही उस भावका स्वामी या भावेश कहलाता है। छटवे, आठवे और बारहवे भावके स्वामी जिन भावो-स्थानोमे रहते है, अनिष्टकारक होते है। किसी भावका स्वामी स्वगृही हो तो उस स्थानका फल अच्छा होता है। ग्यारहवे भावमे सभी ग्रह शुभ फलदायक होते है। किसी भावका स्वामी पाप ग्रह हो और वह लग्नसे तृतीय स्थानमे पड़े तो अच्छा होता है। किन्तु जिस भावका स्वामी शुभ ग्रह हो और वह तीसरे स्थानमे पड़े तो मध्यम फल देता है। जिस भावमे शुभ ग्रह रहता है, उस भावका फल उत्तम और जिसमे पाप ग्रह रहता है, उस भावके फलका ह्रास होता है।

१।४।५।७।९।१० स्थानोमे शुभ-ग्रहोका रहना शुभ है। ३।६।११ भावोमे पापग्रहोका रहना शुभ है। जो भाव अपने स्वामी, शुक्र, बुध या गुरु द्वारा युक्त अथवा दृष्ट हो एव अन्य किसी ग्रहसे युक्त और दृष्ट न हो तो वह शुभ फल देता है। जिस भावका स्वामी शुभ ग्रहसे युक्त अथवा दृष्ट हो अथवा जिस भावमे शुभग्रह बैठा हो या जिस भावको शुभ ग्रह देखता हो उस भावका शुभ फल होता है। जिस भावका स्वामी पापग्रहसे युक्त अथवा दृष्ट हो या पापग्रह बैठा हो तो उस भावके फलका ह्रास होता है।

भावाधिपति मूलत्रिकोण, स्वक्षेत्रगत, मित्रगृही और उच्चका हो तो उस भावका फल शुभ होता है।

किसी भावके फल प्रतिपादनमे यह देखना आवश्यक है कि उस भाव-का स्वामी किस भावमे बैठा है और किस भावके स्वामीका किस भावमे बैठे रहनेसे क्या फल होता है। सूर्य, मगल, शनि और राहु क्रमसे अधिक अधिक पापग्रह है, ये ग्रह अपनी--पापग्रहोकी राशियोमे रहनेसे विशेष पाप एव शुभकी राशि, मित्रकी राशि और अपने उच्चमे रहनेसे अल्प पापी होते है। चन्द्रमा, बुध, शुक्र, केतु और गुरु ये क्रमसे अधिक-अधिक शुभग्रह है। ये शुभग्रहोकी राशियोमे रहनेसे अधिक शुभ तथा पाप ग्रहोकी राशियोमे रहनेसे अल्प शुभ होते है। केतु फल विचार करनेमे प्राय: पाप ग्रह माना गया है। ८।१२ भावोमे सभी ग्रह अनिष्टकारक होते है।

गुरु छठवें भावमे शत्रुनाशक, शनि आठवे भावमे दीर्घायु कारक एव मगल दसवे स्थानमे उत्तम भाग्य विधायक होता है। राहु, केतु और अष्टमेश जिस भावमे रहते है उस भावको बिगाड़ते है, गुरु अकेला द्वितीय, पञ्चम और सप्तम भावमे होता है तो धन, पुत्र और स्त्रीके लिए सर्वदा अनिष्टकारक होता है। जिस भावका जो ग्रह कारक माना गया है, यदि वह अकेला उस भावमे हो तो उस भावको बिगाडता है।

जन्म समयमें मेषादि द्वादश राशियोंमें नवग्रहोंका फल

रवि--मेषराशि मे रवि हो तो जातक आत्मबली, स्वाभिमानी, प्रतापी, चतुर, पित्तविकारी, युद्धप्रिय, साहसी, महत्त्वाकाक्षी, शूरवीर, गम्भीर, उदार; वृषमे हो तो स्वाभिमानी, व्यवहारकुशल, शान्त, पापभीरु, मुखरोगी, स्त्रीद्वेषी; मिथुनमे हो तो विवेकी, विद्वान् बुद्धिमान्, मधुरभाषी, नम्र, प्रेमी, धनवान्, ज्योतिषी, इतिहासप्रेमी, उदार; कर्कमें हो तो कीर्त्तिमान्, लब्ध प्रतिष्ठ, कार्यपरायण, चचल, साम्यवादी, परोपकारी, इतिहासज्ञ, कफरोगी; सिहमे हो तो योगाभ्यासी, सत्संगी, पुरुषार्थी, धैर्यशाली, तेजस्वी, उत्साही, गम्भीर, क्रोधी, वनविहारी,

कन्यामे हो तो मन्दाग्निरोगी, शक्तिहीन, लेखन-कुशल, दुर्बल, व्यर्थबक-वादी; तुला राशिमें हो तो आत्मबलहीन, मन्दाग्निरोगी, परदेशाभिलाषी व्यभिचारी, मलीन; वृश्चिकमे हो तो गुप्त उद्योगी, उदररोगी, लोकमान्य, क्रोधी, साहसी, लोभी, चिकित्सक, धन राशिमे हो तो बुद्धिमान्, योगमार्गरत, विवेकी, धनी, आस्तिक, व्यवहारकुशल, दयालु, शान्त, मकरमे हो तो चचल, झगडालु, बहुभाषी, दुराचारी, लोभी, कुम्भमे हो तो स्थिरचित्त, कार्यदक्ष, क्रोधी, स्वार्थी, एव मीनमे रवि हो तो ज्ञानी, विवेकी, योगी, प्रेमी, बुद्धिमान, यशस्वी, व्यापारी और श्वसुरसे लाभान्वित होता है ।

चन्द्रमा—मेषमे चन्द्रमा हो तो दृढशरीर, स्थिर सम्पत्तिवान्, शूर, बन्धुहीन, कामी, उतावला, जल-भीरु, वृषमे हो तो सुन्दर, प्रसन्न-चित्त, कामी, दानी, कन्या सन्ततिवान, शान्त, कफरोगी, मिथुनमे हो तो रतिकुशल, भोगी, मर्मज्ञ, विद्वान, नेत्र चिकित्सक, कर्कमे हो तो सन्ततिवान सम्पत्तिशाली, श्रेष्ठबुद्धि, जलविहारी, कामी, कृतज्ञ, ज्योतिषी, उन्माद-रोगी, सिहमे हो तो दृढदेही, दात तथा पेटका रोगी, मातृभक्त, अल्प-सन्ततिवान, गम्भीर, दानी, कन्या राशिमे हो तो सुन्दर, मधुरभाषी, सदाचारी, धीर, विद्वान, सुखी; तुला राशिमे हो तो दीर्घ देही, आस्तिक अन्नदाता, धनवान्, जमीन्दार, परोपकारी, वृश्चिक राशिमे हो तो नास्तिक, लोभी, बन्धुहीन, परस्त्रीरत, धनुराशिमे हो तो वक्ता, सुन्दर, शिल्पज्ञ, शत्रुविनाशक; मकर राशिमे हो तो प्रसिद्ध, धार्मिक, कवि, क्रोधी, लोभी, संगीतज्ञ; कुम्भ राशिमे हो तो उन्मत्त, सूक्ष्मदेही, मद्यपायी, आलसी, शिल्पी, दुःखी एव मीन राशिमे चन्द्रमा हो तो शिल्पकार, सुदेही, शास्त्रज्ञ, धार्मिक, अतिकामी और प्रसन्न मुख जातक होता है ।

मंगल—मेषराशिमे मगल हो तो सत्यवक्ता, तेजस्वी, शूरवीर, नेता, साहसी, दानी, राजमान्य, लोकमान्य, धनवान, वृष राशिमे हो तो पुत्रद्वेषी, प्रवासी, सुखहीन, पापी, लड़ाकू प्रकृति, वचक, मिथुन राशिमे

हो तो शिल्पकार, परदेशवासी, कार्यदक्ष, सुखी, जनहितैषी; कर्कमें हो तो सुखाभिलाषी, दीन, सेवक, कृषक, रोगी, दुष्ट; सिंह राशिमें हो तो शूरवीर सदाचारी, परोपकारी, कार्यनिपुण, स्नेहशील; कन्या राशिमें हो तो लोकमान्य, व्यवहारकुशल, पापभीरु, शिल्पज्ञ, सुखी; तुला राशिमें हो तो प्रवासी, वक्ता, कामी, परधनहारी, वृश्चिक राशिमें हो तो व्यापारी, चोरोंका नेता, पातकी, शठ, दुराचारी; धनुराशिमें हो तो कठोर, शठ, क्रूर, परिश्रमी, पराधीन; मकरराशिमें हो तो ख्यातिप्राप्त, पराक्रमी, नेता, ऐश्वर्यशाली, सुखी, महत्त्वाकांक्षी, कुम्भ राशिमें हो तो आचार-हीन, मत्सरवृत्ति, सट्टेसे धन नाशक, व्यसनी, लोभी एवं मीन राशिमें मंगल हो तो रोगी, प्रवासी, मात्रिक, बन्धु-द्वेषी, नास्तिक, हठी, धूर्त और वाचाल जातक होता है।

बुध—मेषराशिमें बुध हो तो कृश देही, चतुर, प्रेमी, नट, सत्य-प्रिय, रतिप्रिय, लेखक, ऋणी; वृषमें हो तो शास्त्रज्ञ, व्यायामप्रिय, धनवान, गम्भीर, मधुरभाषी, विलासी, रतिशास्त्रज्ञ; मिथुन राशिमें हो तो मधुर भाषी, शास्त्रज्ञ, लब्ध प्रतिष्ठ, वक्ता, लेखक, अल्प सततिवान्, विवेकी, सदाचारी, कर्कराशिमें हो तो वाचाल, गवैया, स्त्रीरत, कामी, परदेशवासी, प्रसिद्धकार्यकारी, परिश्रमी; सिंहराशिमें हो तो मिथ्याभाषी, कुकर्मी, ठग, कामुक, कन्याराशिमें हो तो वक्ता, कवि, साहित्यिक, लेखक, सम्पादक, सुखी, तुलाराशिमें हो तो शिल्पज्ञ, चतुर, वक्ता, व्यापारदक्ष, शास्त्रिक, कुटुम्बवत्सल, उदार; वृश्चिक राशिमें हो तो व्यसनी, दुराचारी, मूर्ख, ऋणी, भिक्षुक; धनुराशिमें हो तो उदार, प्रसिद्ध, राज-मान्य, विद्वान, लेखक, सम्पादक, वक्ता; मकर राशिमें हो तो कुलहीन, दुःशील, मिथ्याभाषी, ऋणी, मूर्ख, डरपोक, कुंभ राशिमें हो तो कुटुम्ब-हीन, दुःखी, अल्पधनी एवं मीन राशिमें हो तो सदाचारी, भाग्यवान, प्रवासमें सुखी, धन संग्रही, कार्यदक्ष, मिष्टभाषी, सहनशील, स्वाभिमानी जातक होता है।

गुरु—मेषराशिमें गुरु हो तो वादी, वकील, ऐश्वर्यशाली, तेजस्वी, प्रसिद्ध, कीर्तिमान, विजयी, वृषराशिमें हो तो आस्तिक, पुष्ट शरीर, सदाचारी, धनवान, चिकित्सक, विद्वान, बुद्धिमान; मिथुनमें हो तो विज्ञान विशारद, अनायास धनप्राप्त करनेवाला, लोक-मान्य, लेखक, व्यवहार कुशल, कर्कमें हो तो सदाचारी, विद्वान, सत्यवक्ता, महायशस्वी, साम्यवादी, सुधारक, योगी, लोकमान्य, सुखी,धनी, नेता, सिंहमें हो तो सभाचतुर, शत्रुजित, धार्मिक, प्रेमी, कार्यकुशल, कन्यामें हो तो सुखी भोगी, विलासी, चित्रकला निपुण, चंचल; तुलामें हो तो बुद्धिमान, व्यापारकुशल, कवि, लेखक, सम्पादक, बहुपुत्रवान, सुखी, वृश्चिकमें हो तो शास्त्रज्ञ, कार्यकुशल, राजमन्त्री, पुण्यात्मा; धनुराशिमें हो तो धर्माचार्य, दम्भी, धूर्त, रतिप्रेमी; मकरमें हो तो द्रव्यहीन, प्रवासी, व्यर्थ परिश्रमी, चचलचित्त, धूर्त; कुम्भमें हो तो डरपोक, प्रवासी, कपटी, रोगी एवं मीनमें हो तो लेखक, शास्त्रज्ञ, राजमान्य, गर्वहीन, शान्त, दयालु, व्यवहार कुशल, साहित्य प्रेमी जातक होता है।

शुक्र—मेषमें शुक्र हो तो विश्वासहीन, दुराचारी, परस्त्रीरत, झगड़ालु, वेश्यागामी, वृषमें हो तो सुन्दर, ऐश्वर्यवान, दानी, सात्त्विक, सदाचारी, परोपकारी, अनेक शास्त्रज्ञ; मिथुनमें हो तो चित्रकला निपुण, साहित्यिक, कवि, साहित्य स्रष्टा, प्रेमी, सज्जन, लोकहितैषी; कर्कराशिमें हो तो धार्मिक, ज्ञाता, सुन्दर, सुख और धनका इच्छुक, नीतिज्ञ; सिंहमें हो तो अल्पसुखी, उपकारी, चिन्तातुर, शिल्पज्ञ; कन्यामें हो तो सभा पंडित, अतिकामी, सुखी, भोगी, रोगी, वीर्यहीन, सट्टे द्वारा धन नाशक; तुलामें हो तो प्रवासी, यशस्वी, कार्यदक्ष, विलासी, कलानिपुण; वृश्चिकमें हो तो कुकर्मी, नास्तिक, क्रोधी, ऋणी, दरिद्री, गुह्य रोगी, स्त्रीद्वेषी, धनुमें हो तो स्वोपार्जित द्रव्यद्वारा पुण्य करने वाला, विद्वान, सुन्दर, लोक-मान्य, राजमान्य, सुखी; मकरमें हो तो बलहीन, कृपण, हृदय-रोगी, दुःखी, मानी; कुम्भमें हो तो चिन्ताशील, रोगसे सन्तप्त, धर्महीन, परस्त्रीरत,

मलीन एवं मीनराशिमें शुक्र हो तो शिल्पज्ञ, शान्त, धनी, कार्यदक्ष, कृषि कर्मका मर्मज्ञ या जमींन्दार और जौहरी जातक होता है ।

शनि—मेष राशिमें शनि हो तो आत्मबलहीन, व्यसनी, निर्धन दुराचारी, लम्पट, कृतघ्न, वृषमें हो तो असत्य भाषी, द्रव्यहीन, मूर्ख, वचनहीन, मिथुनमें हो तो कपटी, दुराचारी, पाखण्डी, निर्धनी, कामी, कर्कमें हो तो बाल्यावस्थामें दुःखी, मातृरहित, प्राज्ञ, उन्नतिशील, विद्वान, सिंहमें हो तो लेखक, अध्यापक, कार्यदक्ष, कन्यामें हो तो बलवान, मितभाषी, धनवान, सम्पादक, लेखक, परोपकारी, निश्चितकार्यकर्त्ता, तुलामें हो तो सुभाषी, नेता, यशस्वी, स्वाभिमानी, उन्नतिशील वृश्चिक, में हो तो स्त्रीहीन, क्रोधी, कठोर हृदयक, लोभी, धनुमें हो तो व्यवहारज्ञ, पुत्रकी कीर्त्तिसे प्रसिद्ध, सदाचारी, वृद्धावस्थामें सुखी, मकरमें हो तो मिथ्याभाषी, आस्तिक, परिश्रमी, भोगी, शिल्पकार, प्रवासी, कुम्भमें हो तो व्यसनी, नास्तिक, परिश्रमी एवं मीनमें हो तो हतोत्साही, अविचारी, शिल्पकार जातक होता है ।

राहु—मेषमें राहु हो तो जातक पराक्रम हीन, आलसी, अविवेकी वृषमें हो तो सुखी, चञ्चल, कुरूप, मिथुनमें हो तो योगाभ्यासी, गवैया बलवान दीर्घायु, कर्कमें हो तो उदर रोगी, धनहीन, कपटी, पराजित, सिंहमें हो तो चतुर, नीतिज्ञ, सत्पुरुष, विचारक, कन्यामें हो तो लोकप्रिय, मधुर भाषी, कवि, लेखक, गवैया, तुलामें हो तो अल्पायु, दन्तरोगी, मृतधनाधिकारी, कार्यकुशल, वृश्चिकमें हो तो धूर्त, निर्धन, रोगी, धननाशक, धनुमें राहु हो तो अल्पावस्थामें सुखी, दन्तक जाने वाला, मित्रद्रोही, कुम्भमें राहु हो तो मितव्ययी, कुटुम्बहीन, दाँतका रोगी, विद्वान, लेखक, मितभाषी एवं मीनमें राहु हो तो आस्तिक, कुलीन, शान्त, कलाप्रिय, और दक्ष होता है ।

केतु—मेषराशिमें केतु हो तो चचल, बहुभाषी, सुखी, वृषमें हो तो दुःखी, निरुद्यमी, आलसी, वाचाल; मिथुनमें हो तो वातविकारी,

अल्प सन्तोषी, दाम्भिक, अल्पायु, क्रोधी; कर्कमें हो तो वातविकारी, भूत-प्रेत पीड़ित, दुःखी, सिंहमें हो तो बहुभाषी, डरपोक, असहिष्णु, सर्प दंशनका भय, कलाविज्ञ, कन्यामें हो तो सदा रोगी मूर्ख, मन्दाग्नि-रोगी, व्यर्थवादी, तुलामें हो तो कुष्टरोगी, कामी, क्रोधी, दुःखी, वृश्चिक-में हो तो क्रोधी, कुष्टरोगी, धूर्त, वाचाल, निर्धन, व्यसनी, धनुमें हो तो मिथ्यावादी, चंचल, धूर्त मकरमें हो तो प्रवासी, परिश्रमशील, तेजस्वी, पराक्रमी कुम्भमें हो तो कर्णरोगी, दुःखी, भ्रमणशील, व्ययशील, साधारण धनी एवं मीनमें केतु हो तो कर्णरोगी, प्रवासी, चंचल और कार्यपरायण जातक होता है।

द्वादश भावोंमें रहनेवाले नवग्रहोंका फल

सूर्य—लग्नमें सूर्य हो तो जातक स्वाभिमानी, क्रोधी, पित्तवात-रोगी, चंचल, प्रवासी, कृशदेही, उन्नत नासिका और विशाल ललाट वाला, शूरवीर, अस्थिर सम्पत्तिवाला एवं अल्पकेशी, द्वितीयमें हो तो मुखरोगी, सम्पत्तिवान्, भाग्यवान, झगड़ालु, नेत्र-कर्ण-दन्तरोगी राजकीय एवं स्त्रीके लिए कुटुम्बियोंसे झगड़ने वाला; तृतीयमें हो तो पराक्रमी, प्रतापशाली, राजमान्य, कवि, बन्धुहीन, लब्धप्रतिष्ठ एवं बलवान; चतुर्थमें हो तो चिन्ताग्रस्त, परमसुन्दर, कठोर, पितृधननाशक, भाइयोंसे वैर करने वाला, गुप्त विद्या प्रिय एवं वाहन सुख हीन, पंचम-में हो तो रोगी, अल्प सन्ततिवान्, सदाचारी, बुद्धिमान, दुःखी, शीघ्र क्रोधी एवं वञ्चक, छठवें स्थानमें हो तो शत्रुनाशक, तेजस्वी, वीर्यवान, मातुल कष्टकारक, बलवान्, श्रीमान, न्यायवान, निरोगी; सातवें स्थानमें हो तो स्त्रीक्लेशकारक, स्वाभिमानी, कठोर, आत्मरत, राजसे अपमानित,

---

भाव गणना लग्नसे होती है—लग्नको प्रथम मानकर बाईं ओर द्वितीयादि गणना की जाती है।

एव चिन्तायुक्त; आठवे भाव हो तो पित्त रोगी, चिन्ता युक्त, क्रोधी, धनी, सुखी और धैर्यहीन एव निर्बुद्धि; नवे भावमे हो तो योगी, तपस्वी, सदाचारी, नेता, ज्योतिषी, साहसी, वाहनसुख युक्त एव भृत्य सुख सहित; दशम स्थानमे हो तो प्रतापी, व्यवसाय कुशल, राजमान्य, लब्ध प्रतिष्ठ, राजमन्त्री, उदार, ऐश्वर्य सम्पन्न एव लोक मान्य; ग्यारहवे भावमे हो तो धनी, बलवान, सुखी, स्वाभिमानी, मितभाषी, तपस्वी, योगी, सदाचारी, अल्पसन्तति एव उदररोगी और बारहवे भावमे हो तो उदासीन, वामनेत्र तथा मस्तक रोगी, आलसी, परदेशवासी, मित्र-द्वेषी एवं कृशशरीर होता है।

चन्द्रमा—लग्नमे हो तो जातक बलवान, ऐश्वर्यशाली, सुखी, व्यवसायी गान-वाद्य प्रिय एव स्थूल शरीर, द्वितीय स्थानमे हो तो मधुर भाषी, सुन्दर, भोगी, परदेशवासी, सहनशील, शान्तिप्रिय एव भाग्यवान्; तृतीय स्थानमे हो तो प्रसन्नचित्त, तपस्वी, आस्तिक, मुधरभाषी, कफरोगी एव प्रेमी, चतुर्थ स्थानमे हो तो दानी, मानी, सुखी, उदार, रोग रहित, रागद्वेष वर्जित, कृषक, विवाहके पश्चात् भाग्योदयी, जलजीवी एव बुद्धिमान; पाँचवे स्थानमें हो तो चचल, कन्यासंततिवान, सदाचारी, सट्टेसे धन कमानेवाला एव क्षमाशील; छटवें स्थानमे हो तो कफ रोगी, अल्पायु, आसक्त, खर्चीले स्वभाव वाला, नेत्र रोगी, एव भृत्य प्रिय; सातवे स्थानमे हो तो सभ्य, धैर्यवान, नेता, विचारक, प्रवासी, जलयात्रा करने वाला, अभिमानी, व्यापारी, वकील, कीर्त्तिमान, शीतलस्वभाव वाला एवं स्फूर्त्तिवान, आठवे भावमे हो तो विकार ग्रस्त, प्रमेयरोगी, कामी, व्यापारसे लाभ वाला, वाचाल, स्वाभिमानी, बन्धनसे दुःखी होनेवाला एवं ईर्ष्यालु; नवे भावमे हो तो सन्तति-सम्पत्ति युक्त, सुखी, धर्मात्मा, कार्यशील, प्रवासप्रिय, न्यायी, चचल, विद्वान, विद्याप्रिय, साहसी एव अल्पभ्रातृवान्; दसवे भावमे हो तो कार्यकुशल, दयालु, निर्मल बुद्धि, व्यापारी, कार्यपरायण, वाहन सुखी, यशस्वी, विद्वान, कुल-

दीपक, सन्तोषी, लोकहितैषी, मानी, प्रसन्नचित्त एवं दीर्घायु, ग्यारहवें भावमें हो तो चचल बुद्धि, गुणी, सन्तति और सम्पत्तिसे युक्त, सुखी, लोक प्रिय, यशस्वी, दीर्घायु, मन्त्रज्ञ, परदेशप्रिय और राज्यकार्यदक्ष एवं बारहवें भावमें चन्द्रमा हो तो नेत्ररोगी, चचल, कफरोगी, क्रोधी, एकान्त प्रिय, चिन्ताशील, मृदुभाषी एवं अधिक व्यय करने वाला होता है।

मंगल—लग्नमें मगल हो तो जातक क्रूर, साहसी, चपल, विचार-रहित, महत्वाकाक्षी, गुप्तरोगी, लोह धातु एवं व्रण जन्य कष्टसे युक्त एवं व्यवसाय हानि; द्वितीय स्थानमें हो तो कटुभाषी, धनहीन, निर्बुद्धि, पशुपालक, कुटुम्ब क्लेश वाला, चोरसे भक्ति, धर्म प्रेमी, नेत्र-कर्ण रोगी तथा कुटु-तिक्तरस प्रिय; तृतीय भावमें हो तो प्रसिद्ध, शूरवीर, धैर्यवान, साहसी, सर्वगुणी, बन्धुहीन, बलवान, प्रदीप्त जठराग्नि वाला, भ्रातृ-कष्टकारक एवं कटुभाषी; चतुर्थमें मगल हो तो वाहन सुखी, सन्ततिवान मातृसुखहीन, प्रवासी, अग्निभय युक्त, अल्पमृत्यु या अपमृत्यु प्राप्त करनेवाला, कृषक, बन्धुविरोधी एवं लाभ युक्त, पाँचवें भावमें हो तो उग्रबुद्धि, कपटी, व्यसनी, रोगी, उदर रोगी, कृशशरीरी, गुप्तागरोगी चचल, बुद्धिमान एवं सन्तति-क्लेश युक्त, छटवें भावमें हो तो प्रबल जठराग्नि, बलवान, धैर्यशाली, कुलवन्त, प्रचण्ड शक्ति, शत्रुहन्ता, ऋणी, पुलिस अफसर, दाद रोगी, क्रोधी, व्रण और रक्त विकार युक्त एवं अधिक व्यय करने वाला; सातवें स्थानमें हो तो स्त्री-दुःखी, वातरोगी, राज-भीरु, शीघ्र कोपी, कटु भाषी, धूर्त, मूर्ख, निर्धन, घातकी, धननाशक एवं ईर्ष्यालु; आठवें भावमें हो तो व्याधिग्रस्त, व्यसनी, मद्यपायी, कठोर भाषी, उन्मत्त, नेत्ररोगी, शस्त्रचोर, अग्निभीरु, सकोची, रक्तविकारयुक्त, एव-धनचिंत्ता युक्त; नौवें भावमें हो तो द्वेषी, अभिमानी, क्रोधी, नेता, अधिकारी, ईर्ष्यालु, अल्प लाभ करनेवाला, यशस्वी, असन्तुष्ट एवं भ्रातृ-विरोधी; दसवें भावमें हो तो धनवान, कुलदीपक, सुखी, यशस्वी, उत्तम वाहनोंसे सुखी, स्वाभिमानी, एवं सन्तति कष्ट वाला; ग्यारहवें भावमें

हो तो कटुभाषी, दम्भी, झगडालू, क्रोधी, लाभ करने वाला, साहसी, प्रवासी, न्यायवान एव धैर्यवान और बारहवे भावमे मगल हो तो नेत्र रोगी स्त्रीनाशक, उग्र ऋणी, झगडालू, मूर्ख, व्ययशील एव नीच प्रकृति-का पापी होता है ।

बुध—लग्नमे बुध हो तो जातक दीर्घायु, आस्तिक, गणितज्ञ, विनोदी उदार, वैद्य, विद्वान, स्त्री-प्रिय, मिष्ट भाषी एव मितव्ययी, द्वितीयमे हो तो वक्ता, सुन्दर, सुखी, गुणी, मिष्टान्न भोजी, दलाल या वकीलका पेशा करने वाला, मितव्ययी, सग्रही, सत्कार्यकारक एव साहसी, तीसरे भावमे हो तो कार्यदक्ष, परिश्रमी, भीरु, लेखक सामुद्रिकशास्त्रका ज्ञाता, सम्पादक, कवि सन्तति वान, विलासी, अल्प भ्रातृवान, चचल, व्यवसायी, यात्राशील धर्मात्मा, मित्रप्रेमी, एव सद्गुणी, चतुर्थमे हो तो पडित, भाग्यवान्, वाहन सुखी दानी, स्थूलदेही, आलसी गीतप्रिय, उदार, बन्धुप्रेमी, विद्वान् लेखक, नीतिज्ञ एव नीतिवान्; पचममे हो तो प्रसन्न, कुशाग्रबुद्धि, गण्यमान्य, सुखी, सदाचारी, वाद्यप्रिय, कवि, विद्वान एव उद्यमी, छटवें स्थानमे हो विवेकी, वादी, कलहप्रिय, आलसी, रोगी, अभिमानी, परिश्रमी, दुर्बल कामी एव स्त्री-प्रिय, सातवे भावमे हो तो सुन्दर, विद्वान, कुलीन, व्यवसायकुशल, धनी, लेखक, सम्पादक, उदार, सुखी, धार्मिक, अल्पवीर्य दीर्घायु, आठमभावमे हो तो दीर्घायु, लब्ध--प्रतिष्ठ, अभिमानी, कृषक, राजमान्य, मानसिकदुःखी, कवि, वक्ता, न्यायाधीश, मनस्वी, धनवान् एव धर्मात्मा, नवमभावमे हो तो सदाचारी, कवि, गवेया, सम्पादक, लेखक, ज्योतिषी, विद्वान, धर्मवीरु, व्यवसायप्रिय एव भाग्यवान, दसवें भावमे हो तो सत्यवादी, विद्वान, लोकमान्य, मनस्वी, व्यवहारकुशल, कवि, लेखक, न्यायी, भाग्यवान्, राजमान्य, मातृपितृ भक्त एव जमीन्दार, ग्यारहवे भावमे हो तो दीर्घायु, योगी, सदाचारी, धनवान, प्रसिद्ध, विद्वान, गायनप्रिय, सरदार, ईमानदार, सुन्दर, पुत्रवान, विचारवान एव शत्रु-नाशक और बारहवे भावमे बुध हो तो विद्वान, आलसी, अल्पभाषी,

शास्त्रज्ञ, लेखक, वेदान्ती, सुन्दर, वकील, एवं धर्मात्मा होता है।

गुरु—लग्नमें गुरु हो तो जातक ज्योतिषी, दीर्घायु, कार्यपरायण, विद्वान्, कार्यकर्त्ता, तेजस्वी, स्पष्टवक्ता, स्वाभिमानी, सुन्दर, सुखी, विनीत, धनी, पुत्रवान, राजमान्य एवं धर्मात्मा, द्वितीयभावमें हो तो सुन्दर शरीरी, मधुरभाषी, सम्पत्ति और सन्ततिवान, राजमान्य लोकमान्य, सुकार्यरत, सदाचारी, पुण्यात्मा, भाग्यवान, शत्रुनाशक, दीर्घायु एवं व्यवसायी, तृतीयभावमें हो तो जितेन्द्रिय, सदाग्नि, शास्त्रज्ञ, लेखक, प्रवासी, योगी, आस्तिक, ऐश्वर्यवान, कामी, स्त्रीप्रिय, व्यवसायी, विदेशप्रिय, पर्यटनशील एवं वाहनयुक्त, चतुर्थमें हो तो भोगी, सुन्दरदेही, कार्यरत, उद्योगी, ज्योतिर्विद, सन्तानरोधक, राजमान्य, लोकमान्य, मातृपितृभक्त, यशस्वी एवं व्यवहारज्ञ, पाँचवे भावमें हो तो आस्तिक ज्योतिषी, लोकप्रिय, कुलश्रेष्ठ, सट्टेसे धन प्राप्त करने वाला, सन्ततिवान् एवं नीतिविशारद; छठवे भावमें हो तो मधुरभाषी, ज्योतिषी, विवेकी, प्रसिद्ध, विद्वान्, सुकर्मरत, दुर्बल, उदार, लोकमान्य, निरोगी एवं प्रतापी, सातवे भावमें हो तो भाग्यवान, विद्वान, वक्ता, प्रधान, नम्र, ज्योतिषी, धैर्यवान, प्रवासी, सुन्दर स्त्रीप्रेमी एवं परस्त्रीरत, आठवे भावमें हो तो दीर्घायु, शील सम्पन्न, सुखी, शान्त, मधुर भाषी, विवेकी, सन्धिकार कुलदीपक, ज्योतिषप्रेमी, लोभी, गुप्तरोगी एवं मित्रों द्वारा धननाशक, नौवे भावमें हो तो तपस्वी, यशस्वी, भक्त, योगी, वेदान्ती, भाग्यवान, विद्वान, राजपूज्य, पराक्रमी, बुद्धिमान, पुत्रवान एवं धर्मात्मा, दसवे भावमें हो तो सत्कर्मी, सदाचारी, पुण्यात्मा, ऐश्वर्यवान, साधु, चतुर, न्यायी, प्रसन्न ज्योतिषी, सत्यवादी, शत्रुहन्ता, राजमान्य, स्वतन्त्र विचारक, मातृपितृभक्त, लाभवान, धनी एवं भाग्यवान, ग्यारहवे भावमें हो तो सुन्दर, निरोगी, लाभवान व्यवसायी, धनिक, सन्तोषी अल्पसन्ततिवान्, राजपूज्य, विद्वान, बहुस्त्री युक्त, सद्व्ययी और पराक्रमी और द्वादश भावमें गुरु हो तो आलसी, मितभाषी, सुखी, मितव्ययी, योगाभ्यासी, परोपकारी,

उदार, शास्त्रज्ञ, सम्पादक, सदाचारी, लोभी, यात्री एव दुष्ट चित्त वाला होता है। गुरुके सम्बन्धमे इतना विशेष है कि २।५।७।११ भावमे अकेला गुरु हानिकारक होता है अर्थात् उन भावोको नष्ट करता है।

शुक्र—लग्नमे शुक्रहो तो जातक दीर्घायु, सुन्दरदेही, ऐश्वर्यवान सुखी, मधुरभाषी, प्रवासी, विद्वान, भोगी, विलासी, कामी एव राजप्रिय, द्वितीयभावमे हो तो धनवान्, मिष्टान्नभोजी, यशस्वी, लोकप्रिय, जौहरी, सुखी, समयज्ञ, कुटुम्बयुक्त, कवि, दीर्घजीवी, साहसी एवं भाग्यवान; तृतीयभावमे हो तो सुखी, धनी, कृपण, आलसी, चित्रकार, पराक्रमी, विद्वान, भाग्यवान एवं पर्यटनशील· चतुर्थभावमें हो तो सुन्दर बलवान, परोपकारी, आस्तिक, सुखी, व्यवहारदक्ष, विलासी, भाग्यवान, पुत्रवान एव दीर्घायु; पाँचवे भावमे हो तो सुखी, भोगी, सद्गुणी, न्यायवान, आस्तिक, दानी, उदार, विद्वान, प्रतिभाशाली, वक्ता, कवि, पुत्रवान, लाभयुक्त, व्यवसायी एव शत्रुनाशक, छटवे भावमे हो तो स्त्री सुखहीन, बहु मित्रवान, दुराचारी, मूत्ररोगी, वैभवहीन, दुःखी, गुप्तरोगी, स्त्रीप्रिय, शत्रुनाशक एव मितव्ययी; सातवे भावमे हो तो स्त्रीसे सुखी, उदार, लोकप्रिय, धनिक, चिंतित, विवाहके बाद भाग्योदयी, साधु, प्रेमी, कामी, अल्पव्यभिचारी, चचल विलासी, गानप्रिय एव भाग्यवान्; आठवे भावमे हो तो विदेशवासी, निर्दयी, रोगी, क्रोधी, ज्योतिषी, मनस्वी, दुःखी, गुप्तरोगी, पर्यटनशील एवं परस्त्रीरत; नौवे भावमे हो तो आस्तिक, गुणी, गृहसुखी, प्रेमी, दयालु, पवित्रतीर्थ यात्राओका कर्ता, राजप्रिय एव धर्मात्मा; दसवे भावमे हो तो विलासी, ऐश्वर्यवान्, न्यायवान, ज्योतिषी, विजयी, लोभी धार्मिक, गानप्रिय, भाग्यवान, गुणवान एव दयालु; ग्यारहवें भावमें शुक्र हो तो विलासी, वाहनसुखी, स्थिरलक्ष्मीवान, लोकप्रिय, परोपकारी, जौहरी, धनवान, गुणज्ञ, कामी एव पुत्रवान और बारहवे भावमे शुक्र हो तो न्यायशील, आलसी, पतित, धातुविकारी, स्थूल, परस्त्रीरत, बहुभोजी, धनवान, मितव्ययी एव शत्रुनाशक होता है।

शनि—लग्नमें शनि मकर तथा तुलाका हो तो धनाढ्य, सुखी, अन्य राशियोंका हो तो दरिद्री; द्वितीयभावमें हो तो मुखरोगी, साधु-द्वेषी, कटुभाषी और कुम्भ या तुलाका शनि हो तो धनी, कुटुम्ब तथा भ्रातृ-वियोगी, लाभवान; तृतीय भावमें हो तो निरोगी, योगी, विद्वान्, शीघ्र कार्यकर्त्ता, मल्ल, सभाचतुर, विवेकी, शत्रुहन्ता, भाग्यवान् एवं चचल; चतुर्थमें हो तो बलहीन, अपयशी कृशदेही, शीघ्रकोपी, कपटी, धूर्त, भाग्यवान् वातपित्तयुक्त एवं उदासीन, पाँचवे भावमें हो तो वातरोगी, भ्रमणशील, विद्वान, उदासीन, सन्तानयुक्त, आलसी एवं चचल; छटवे भावमें हो तो शत्रुहन्ता, भोगी, कवि, योगी, कण्ठरोगी, श्वासरोगी, जाति-विरोधी, ऋणी, बलवान एवं आचारहीन, सातवे भावमें हो तो क्रोधी, धन-सुखहीन, भ्रमणशील, नीच कर्मरत, आलसी, स्त्रीभक्त विलासी एवं कामी; आठवे भावमें हो तो कपटी, वाचाल, कुष्टरोगी, डरपोक, धूर्त, गुप्तरोगी, विद्वान, स्थूल शरीरी एवं उदार प्रकृति; नवे भावमें हो तो रोगी, वातरोगी, भ्रमणशील, वाचाल, कृशदेही, प्रवासी, भीरु, धर्मात्मा, साहसी, भ्रातृहीन एवं शत्रुनाशक; दसवे भावमें हो तो नेता, न्यायी, विद्वान, ज्योतिषी, राजयोगी, अधिकारी, चतुर, महत्वाकाक्षी, निरुद्योगी, परिश्रमी भाग्यवान, उदररविकारी, राजमान्य एवं धनवान; ग्यारहवें भावम हो तो दीर्घायु, क्रोधी, चचल, शिल्पी, सुखी, योगाभ्यासी, नीतिवान, परिश्रमी, व्यवसायी, विद्वान, पुत्रहीन, कन्याप्रज, रोगहीन एवं बलवान और बारहवें भावमें हो तो अपस्मार, उन्मादका रोगी, व्यर्थ व्यय करने वाला, व्यसनी, दुष्ट, कटुभाषी, अविश्वासी, मातुलकष्टदायक, एवं आलसी होता है।

राहु—लग्नमें राहु हो तो जातक दुष्ट, मस्तकरोगी, स्वार्थी, राज-द्वेषी, नीचकर्मरत, मनस्वी, दुर्बल, कामी एवं अल्पसंतति युक्त; द्वितीय भावमें हो तो परदेशगामी, अल्पसन्तति, कुटुम्बहीन, कठोरभाषी, अल्प धनवान, संग्रहशील एवं मात्सर्ययुक्त; तृतीय भावमें हो तो योगाभ्यासी,

पराक्रम शून्य, दृढविवेकी, अरिष्टनाशक, प्रवासी, बलवान, विद्वान एवं व्यवसायी; चतुर्थभावमें राहु हो तो असन्तोषी, दुःखी, मातृक्लेश युक्त, क्रूर, कपटी, उदरव्याधियुक्त, मिथ्याचारी एवं अल्पभाषी, पाँचवे भावमें राहु हो तो उदररोगी, मतिमन्द, धनहीन, कुलधन नाशक, भाग्यवान्, कार्यकर्त्ता एवं शास्त्रप्रिय, छटवे भावमें हो तो विधर्मियों द्वारा लाभ, निरोगी, शत्रुहन्ता, कमरदर्द पीडित, अरिष्टनिवारक, पराक्रमी, एवं बडे-बडे कार्य करने वाला, सातवे भावमें हो तो स्त्रीनाशक व्यापारसे हानिदायक, भ्रमणशील, वातरोगजनक, दुष्कर्मी, चतुर लोभी, एवं दुराचारी, आठवे भावमें हो तो पुष्टदेही, गुप्तरोगी, क्रोधी, व्यर्थभाषी, मूर्ख, उदररोगी एवं कामी; नौवे भावमें हो तो प्रवासी, वातरोगी व्यर्थ परिश्रमी, तीर्थाटनशील, भाग्योदयसे रहित, धर्मात्मा एवं दुष्ट बुद्धि, दसवे भावमें हो तो आलसी, वाचाल, अनियमित कार्यकर्त्ता, मितव्ययी, सन्तति क्लेशी तथा चन्द्रमासे युक्त राहुके होनेपर राजयोग कारक, ग्यारहवे भावमें हो तो मन्दमति, लाभहीन, परिश्रमी, अल्पसन्ततियुक्त, अरिष्टनाशक, व्यवसाययुक्त, कदाचित लाभदायक एवं कार्य सफल करने वाला और बारहवे भावमें हो तो विवेकहीन, मतिमन्द, मूर्ख, परिश्रमी, सेवक, व्ययी, चिन्ताशील एवं कामी होता है।

केतु—लग्नमें केतु हो तो चचल, भीरु, दुराचारी, मूर्ख तथा वृश्चिक राशिमें हो तो सुखकारक, धनी, परिश्रमी, द्वितीयमें हो तो राजभीरु, विरोधी एवं मुख रोगी, तृतीय स्थानमें हो तो चचल, वातरोगी, व्यर्थवादी, भूतप्रेत भक्त; चतुर्थमें हो तो चचल, वाचाल, कार्यहीन, निरुत्साही एवं निरुपयोगी, पाचवे स्थानमें हो तो कुबुद्धि, कुचाली, वातरोगी, छटवे भावमें हो तो वात विकारी, झगड़ालु, भूत-प्रेतजनित रोगोंसे रोगी, मितव्ययी, सुखी एवं अरिष्टनिवारक; सातवे भावमें हो तो मतिमन्द, मूर्ख, शत्रुभीरु एवं सुखहीन; आठवे भावमें हो तो दुर्बुद्धि तेजहीन, दुष्टजनसेवी, स्त्रीद्वेषी एवं चालाक, नौवे भावमें हो तो सुखाभि-

लगी, व्यर्थ परिश्रमी, अपयशी, दसवे भावमें हो तो पितृद्वेषी, दुर्भागी, मूर्ख, व्यर्थ परिश्रमशील एव अभिमानी, ग्यारहवे भावमे हो तो बुद्धिहीन, निजकी हानि कर्त्ता, बातरोगी एव अनिष्टनाशक और बारहवे भावमे हो तो चचलबुद्धि, धूर्त, ठग, अविश्वासी एव जनताको भूत-प्रेतोकी जानकारी द्वारा ठगने वाला होता है।

उच्च राशि गत ग्रहोंका फल

रवि उच्च राशिम हो तो धनवान, विद्वान, सेनापति, भाग्यवान एव नेता; चन्द्रमा हो तो माननीय, मिष्टान्नभोजी, विलासी, अलकार प्रिय एव चपल, मगल हो तो शूरवीर, कर्त्तव्यपरायण एव राजमान्य, बुध हो तो राजा, बुद्धिमान, लेखक, सम्पादक, राजमान्य, सुखी, वशवृद्धि-कारक एव शत्रुनाशक, गुरु हो तो सुशील, चतुर, विद्वान, राजप्रिय, ऐश्वर्यवान, मत्री, शासक एव सुखी, शुक्र हो तो विलासी, गीत-वाद्य-प्रिय कामी एव भाग्यवान; शनि हो तो राजा, जमीन्दार, भूमिपति, कृषक एव लब्ध-प्रतिष्ठ, राहु हो तो सरदार, धनवान, शूरवीर एव लम्पट और केतु हो तो राजप्रिय, सरदार एव नीच प्रकृति जातक होता है।

मूल त्रिकोण राशिमें गये हुए ग्रहोंका फल

रवि मूल त्रिकोणमे हो तो जातक धनी, पूज्य एव लब्ध-प्रतिष्ठ, चन्द्र हो तो धनवान, सुखी, सुन्दर एव भाग्यवान; मगल हो तो क्रोधी, निर्दयी, दुष्ट, चारित्रहीन, स्वार्थी, साधारणधनी लम्पट एव नीचोका सरदार, बुध हो तो धनवान, राजमान्य महात्वाकाक्षी, सैनिक, डाक्टर, व्यवसायकुशल, प्रोफेसर एव विद्वान, गुरु हो तो तपस्वी, भोगी, राजप्रिय एव कीर्त्तिवान; शुक्र हो तो जागीरदार, पुरस्कार विजेता एव कामिनी प्रिय; शनि हो तो शूरवीर, सैनिक, उच्च सेना अफसर, जहाज चालक, वैज्ञानिक, अस्त्र-शस्त्रोका निर्माता एव कर्त्तव्य परायण और राहु हो तो धनी, लुब्धक एव वाचाल होता है।

स्वक्षेत्र गत ग्रहोंका फल

रवि स्वगृही—अपनी ही राशिमें हो तो सुन्दर, व्यभिचारी, कामी एवं ऐश्वर्यवान, चन्द्रमा हो तो तेजस्वी, रूपवान, धनवान एवं भाग्यवान; मंगल हो तो बलवान, ख्यातिप्राप्त, कृषक एवं जमीन्दार; बुध हो तो विद्वान, शास्त्रज्ञ, लेखक एवं सम्पादक; गुरु हो तो काव्य रसिक, वैद्य एवं शास्त्रविशारद, शुक्र हो तो स्वतन्त्र प्रकृति, धनी एवं विचारक, शनि हो तो पराक्रमी, कष्ट सहिष्णु एवं उग्र प्रकृति और राहु हो तो सुन्दर, यशस्वी एवं भाग्यवान जातक होता है।

एक स्वगृही हो तो जातक अपनी जातिमें श्रेष्ठ, दो हो तो कर्त्तव्यशील, धनवान, पूज्य; तीन हो तो राजमन्त्री, धनिक, विद्वान; चार हो तो श्रीमन्त, सम्मान्य, सरदार, नेता एवं पाँच हो तो राजतुल्य राज्याधिकारी होता है।

मित्र क्षेत्रगत ग्रहोंका फल

सूर्य—मित्रकी राशिमें हो तो जातक यशस्वी, दानी, व्यवहार कुशल, चन्द्र हो तो सुखी, धनवान, गुणज्ञ, मंगल हो तो मित्र-प्रिय धनिक; बुध हो तो शास्त्रज्ञ, विनोदी, कार्यदक्ष; गुरु हो तो उन्नति-शील, बुद्धिमान; शुक्र हो तो पुत्रवान्, सुखी एवं शनि हो तो परान्न-भोजी, धनवान, सुखी और प्रेमिल होता है।

एक ग्रह मित्रक्षेत्री हो तो दूसरेके द्रव्यका उपयोग कर्त्ता, दो हो तो मित्रके द्रव्यका उपभोक्ता; तीन हो तो स्वोपार्जित धनका उपभोक्ता; चार हो तो दाता; पाँच हो तो सेनानायक, सरदार, नेता; छह हो तो सर्वोच्च नेता, सेनापति, राजमान्य, उच्चपदासीन एवं सात हों तो जातक राजा या राजा के तुल्य होता है।

शत्रुक्षेत्र गत ग्रहोंका फल

रवि शत्रुक्षेत्री—शत्रु ग्रहकी राशिमें हो तो जातक दुःखी, नौकरी

करने वाला; चन्द्रमा हो तो मातासे दुःखी, हृद्रोगी; मंगल हो तो विकलाङ्गी, व्याकुल, दीन-मलीन; बुध हो तो वासनायुक्त, साधारणतः सुखी, कर्त्तव्यहीन, गुरु हो तो भाग्यवान, चतुर, शुक्र हो तो नौकर, दासवृत्ति करने वाला और शनि हो तो दुःखी होता है।

नीचराशि गत ग्रहोंका फल

सूर्य नीच राशिमें हो तो जातक पापी, बन्धु सेवा करने वाला, चन्द्रमा हो तो रोगी, अल्प धनवान और नीच प्रकृति, मंगल हो तो नीच, कृतघ्न; बुध हो तो बन्धुविरोधी, चंचल, उग्र प्रकृति, गुरु हो तो खल, अपवादी, अपयशभागी; शुक्र हो तो दुःखी और शनि हो तो दरिद्री, दुःखी होता है।

तीन ग्रह नीचके हों तो जातक मूर्ख, तीन ग्रह अस्तगत हों तो दास और तीन ग्रह शत्रुराशि गत हों तो दुःखी तथा जीवनके अन्तिम भागमें सुखी होता है।

नवग्रहोंकी दृष्टिका फल

सूर्य—प्रथम भावको सूर्य पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो जातक रजोगुणी, नेत्ररोगी, सामान्य धनी, साधुसेवी, मन्त्रज्ञ, वेदान्ती, पितृभक्त, राजमान्य और चिकित्सक; द्वितीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धन तथा कुटुम्बसे सामान्य, सुखी, नेत्ररोगी, पशु-व्यवसायी, संचित धननाशक, परिश्रमसे थोड़े धनका लाभ करने वाला और कष्ट सहिष्णु; तृतीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुलीन, राजमान्य, बड़े भाईके सुखसे रहित, उद्यमी, शासक, नेता और पराक्रमी, चतुर्थ भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो २२-२३ वर्ष पर्यन्त सुखहानि प्राप्त करने वाला, सामान्यतः मातृ सुखी, २२ वर्षकी आयुके पश्चात् वाहनादि सुखोंको प्राप्त करनेवाला और स्वाभिमानी, पञ्चम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो प्रथम सन्तान नाशक, पुत्रके लिये चिन्तित, मन्त्रशास्त्रज्ञ, विद्वान, सेवावृत्ति और २०-२१ वर्षकी अवस्थामें सन्तान प्राप्त करनेवाला; छठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे

देखता हो तो शत्रुभयकारक, दुःखी, वामनेत्ररोगी, दुःखी, ऋणी और मातुलको नष्ट करनेवाला; सातवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जीवन भर ऋणी, २२-२३ वर्षकी आयुमें स्त्री नाशक, व्यापारी, उग्र स्वभाव वाला और प्रारम्भमें दुःखी तथा अन्तिम जीवनमें सुखी; आठवें भावको देखता हो तो ववासीर रोगी, व्यभिचारी, मिथ्याभाषी, पाखण्डी और निन्दित कार्य करने वाला, नौवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धर्मभीरु, बड़े भाई और सालेके सुखसे रहित, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राजमान्य, धनी, मातृनाशक तथा उच्च राशिका सूर्य हो तो माता, वाहन और धनका पूर्ण सुख प्राप्त करने वाला, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धनलाभ करने वाला, प्रसिद्ध व्यापारी, प्रथम सन्तान नाशक, बुद्धिमान्, विद्वान, कुलीन और धर्मात्मा एवं बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो प्रवासी, नेत्ररोगी, कान या नाक पर तिल या मस्सेका चिन्ह धारक, शुभ कार्योंमें व्यय करने वाला, मामाको कष्ट कारक एवं सवारीका शौकीन होता है।

चन्द्रमा—लग्नको चन्द्रमा पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक प्रवासी, व्यवसायी, भाग्यवान्, शौकीन, कृपण और स्त्रीप्रेमी; द्वितीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो अधिक सन्तति वाला, सामान्य सुखी, ८-१० वर्षकी अवस्थामें शारीरिक कष्ट युक्त, धन हानि कारक, जलमें डूबनेकी आशंका वाला और चोट, घाव, खरोंच आदिके दुःखको प्राप्त करने वाला; तृतीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धार्मिक, प्रवासी, अधिक बहन तथा कम भाईवाला, २४ वर्षकी अवस्थासे पराक्रमी, सत्सगति प्रिय और मिलनसार, चतुर्थ भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो २४ वर्षकी अवस्थासे सुखी होनेवाला, राजमान्य, कृषक, वाहनादि सुखका धारक और मातृ-सेवी; पंचम भावको पूर्व दृष्टिसे देखता हो तो व्यवहार कुशल, बुद्धिमान्, प्रथम पुत्र सन्तान प्राप्त करनेवाला और कलाप्रिय, षष्ठ भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शान्त, रोगी, शत्रुओंसे कष्ट पाने वाला, गुप्तरोगोंमें

आक्रान्त, व्यय अधिक करनेवाला और २८ वर्षकी अवस्थामे जलसे हानि प्राप्त करनेवाला, सप्तम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सुन्दर, सुखी, सुन्दर-स्त्री प्राप्त करनेवाला, सत्यवादी व्यापारसे धन सचित करनेवाला और कृपण; अष्टम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पितृ धन नाशक कुटुम्बविरोधी, नेत्ररोगी और लम्पटी; नवम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धर्मात्मा, भाग्यशाली, भ्रातृहीन और बुद्धिमान्, दशम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पशु-व्यवसायी, धर्मान्तरमे दीक्षित होनेवाला, पितृविरोधी और चिडचिड़े स्वभावका, एकादशम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो लाभ प्राप्त करनेवाला, कुशल व्यवसायी, अधिक कन्या सन्ततिवाला और मित्र प्रेमी एव द्वादशम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रु द्वारा धन खर्च करनेवाला, चिन्तायुक्त, राजमान्य एव अन्तिम जीवनमे सुखी होता है।

भौम—लग्नभावको मगल पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो उग्र प्रकृति, प्रथम भार्याका २१ या २८ वर्षकी अवस्थामे नाश करनेवाला, राजमान्य और भूमिसे धन प्राप्त करनेवाला; द्वितीयभावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो बवासीर रोगी, स्वल्पधनी, कुटुम्बसे पृथक् रहनेवाला, परिश्रमी और खिन्न चित्त रहनेवाला; तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो बडे भाईके सुखसे रहित, पराक्रमी, भाग्यवान् और एक विधवा बहनवाला; चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो माता-पिताके सुखसे रहित, शारीरिक कष्टधारक, २८ वर्षकी अवस्था तक दु.खी पश्चात् सुखी और परिश्रमसे जी चुरानेवाला; पाँचवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो अनेक भाषाओका ज्ञाता, विद्वान, सन्तान कष्टवाला, उपदश रोगी और व्यभिचारी; छटवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रुनाशक, मातुल कष्ट कारक, रुधिर विकारी और कीर्त्तिवान्; सातवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो परस्त्री-रत, कामी, प्रथम भार्याका २१ या २८ वर्षकी आयुमे वियोगजन्य दु.ख प्राप्त करनेवाला और मद्यपायी; आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो

तो धन, कुटुम्ब नाशक, ऋणग्रस्त, परिश्रमी, दुःखी और भाग्यहीन; नौवे भावको पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो बुद्धिमान, धनवान्, पराक्रमी, और धर्ममे अरुचि रखनेवाला; दसवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राज्यसेवी, मातृ-पितृ कष्टकारक, सुखी और भाग्यवान्, ग्यारहवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धनवान्, सन्तान कष्टसे पीड़ित और कुटुम्बके दुःखसे दुःखी एव बारहवे भावको पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो कुमार्गगामी, मातुलनाशक, बवासीर और भगदर रोगी, शत्रुनाशक और उग्रप्रकृति होता है।

बुध—लग्नभावको बुध पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो, जातक गणितज्ञ सुन्दर, व्यापारी, व्यवहार कुशल, मिलनसार और लब्धप्रतिष्ठ; द्वितीय भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो व्यापारसे धन लाभ करनेवाला, कुटुम्ब विरोधी, स्वतन्त्र विचारक, हठी और अभिमानी; तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भाग्यवान्, प्रवासी, भ्रातृ सुख युक्त, सत्सगी और धार्मिक; चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राज्यसे लाभ प्राप्त करनेवाला, भूमि तथा वाहनके सुखसे परिपूर्ण, श्रेष्ठ बुद्धिवाला और विद्वान्; पाँचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो गुणवान्, विद्वान्, धनवान् शिल्पकार और प्रथम पुत्र उत्पन्न करनेवाला; छटवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो वातरोगी, कुमार्गव्ययी, शत्रुओसे पीड़ित और अन्तिम जीवनमे धन सचय करनेवाला; सातवे भावको पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो सुन्दर, सुशीला भार्यावाला, व्यापारी, गणितज्ञ, चतुर और कार्यदक्ष; आठवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भ्रमणशील, दुःखी, कुटुम्बविरोधी एवं प्रवासी; नौवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो हँसमुख, धनोपार्जित करनेवाला, भ्रातृद्वेषी, राजाओसे मिलनेवाला, गायन प्रिय और विलासी; दसवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो राजमान्य, कीर्त्तिमान्, सुखी कुलीन और कुलदीपक; ग्यारहवे भावको पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो धनार्जन करनेवाला, सन्तानसे युक्त, विद्वान् और कलाविशारद एव बारहवे

भावको पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो मिथ्याभाषी, कुलकलंकी, मद्यपायी नीच प्रकृति और व्यसनी होता है।

गुरु—लग्नभावको बृहस्पति पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो जातक धर्मात्मा, कीर्त्तिवान्, कुलीन, विद्वान् और पतिव्रता शुभाचरणवाली स्त्रीका पति; दूसरे भावको पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो पितृधन-नाशक, धनार्जन करनेवाला, कुटुम्बी, मित्रवर्गमें श्रेष्ठ और राजमान्य, तीसरे भावको पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो भाग्यवान्, पराक्रमी, भ्रातृ-सुखयुक्त, प्रवासी और शुभाचरण करनेवाला, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो श्रेष्ठ, विद्याव्यसनी, भूमिपति, वाहन सुख युक्त और माता-पिताके पूर्ण सुखको प्राप्त करनेवाला; पाँचवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धनिक, ऐश्वर्यवान्, विद्वान्, व्याख्याता, पाँच पुत्रवान् और कला-प्रिय; छटवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो व्याधिग्रस्त, धन नष्ट करनेवाला, क्रोधी और धूर्त; सातवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सुन्दर, धनवान्, कीर्त्तिवान् और भाग्यशाली; आठवे भावको पूर्ण दृष्टि-से देखता हो तो राजभय, चिन्तित, आठ वर्षकी अवस्थामें मृत्युतुल्य कष्ट, भोगनेवाला और २६ वर्षकी आयुमें कारागार जन्य कष्ट पानेवाला; नवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुलीन, भाग्यवान्, शास्त्रज्ञ, धर्मात्मा, स्वतन्त्र, संतानयुक्त, दानी और व्रतोपवास करनेवाला; दसवे भावको पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो राजमान्य, सुखी, धन-पुत्रादिसे युक्त, भूमिपति और ऐश्वर्यवान्; ग्यारहवे भावको पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो बुद्धिमान् पाँच पुत्रोंका पिता, विद्वान्, कलाप्रिय, स्नेही और ७० वर्षकी अवस्थासे अधिक जीवित रहनेवाला एवं बारहवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो रजोगुणी, दुःखी, धन खर्च करनेवाला और निर्बुद्धि होता है।

शुक्र—लग्नस्थानको शुक्र पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक सुन्दर, शौकीन, परस्त्रीरत, भाग्यशाली और चतुर; दूसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो धन तथा कटम्बसे सखी, धनार्जन करनेवाला, परिश्रमी

और दिल्लगी तीसरे भावको पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो शासक, अधिक भाई-बहनवाला, अल्पवीर्य और २५ वर्षकी आयुमें भाग्योदयको प्राप्त होनेवाला, चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सुखी, सुन्दर, समाजसेवी भाग्यशाली, आज्ञाकारी, और राजसेवी, पाँचवे भावको पूर्णदृष्टिसे देखता हो तो विद्वान्, धनी, एक कन्या तथा तीन या पाँच पुत्रोका पिता, प्रेमी और बुद्धिमान्, छठवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पराक्रमी शत्रुनाशक, कुमार्गगामी, वीर्यविकारी, श्वेतकुष्टयुक्त और वाचाल; सातवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कामी, व्यभिचारी, लम्पटी, सुन्दर भार्याको प्राप्त करनेवाला और २५ वर्षकी अवस्थासे स्वाधीन जीवन व्यतीत करनेवाला; आठवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो प्रमेह रोगी, दुःखी, निर्धन, कुटुम्ब-रहित, साधुसेवारत और कफ तथा वात रोगसे पीडित; नौवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुलदीपक, ग्रामाधिपति, शत्रुजयी, धर्मात्मा, कीर्त्तिवान् और विलक्षण; दसवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भाग्यशाली, धनी, प्रवासी, राजसेवी और भूमिपति, ग्यारहवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो नाना प्रकारसे लाभ करनेवाला, नेता, प्रमुख, परस्त्रीरत और कवि एव बारहवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो वीर्यरोगी, विवाहादि कार्योमे व्यय करनेवाला शत्रुओसे पीड़ित, चिन्तित और स्त्रीद्वेषी जातक होता है।

शनि—लग्न स्थानको शनि पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो जातक श्यामवर्णवाला, नीच स्त्रीरत, स्वस्त्रीसे विमुख और लम्पटी; दूसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो ३६ वर्षकी अवस्था तक धन नाशक, कुटुम्ब विरोधी, १९ वर्षकी अवस्थामे शारीरिक कष्ट प्राप्त करनेवाला और नाना रोगोका शिकार; तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखे तो पराक्रमी, अधार्मिक, भाइयोके सुखसे रहित, नीच सगतिप्रिय और बुरे कार्य करनेवाला; चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखे तो प्रथम वर्षमें शारीरिक कष्ट पानेवाला, राजमान्य, ३५ या ३६ वर्षकी अवस्थामे राज्याधिकारमे वृद्धि प्राप्त करनेवाला और

लब्ध प्रतिष्ठ; पाँचवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सन्तान हानि, नीचविद्या विशारद, नीचजनप्रिय और नीच कार्यरत; छटवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रुनाशक, मातुलकष्टकारक, नेत्ररोगी, प्रमेह रोगी, धर्मसे विमुख और कुमार्गरत· सातवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कलहप्रिय, ३६ वर्षकी अवस्थामे मृत्युतुल्य कष्ट पानेवाला, धननाशक और मलीन स्वभाववाला, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुटुम्बविरोधी, राज्यहानि वाला, पिताके धनका ३६ वर्षकी आयुतक नाश करनेवाला और रोगी, नौवे भावको देखता हो तो देशाटन करनेवाला, भाइयोंसे विरोध करनेवाला, प्रवासी, धन प्राप्त करनेवाला, नीच कर्मरत, पराक्रमी, धर्महीन और निन्दक; दसवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पिताके सुखसे रहित, माताके लिए कष्टकारक, भूमिपति, राजमान्य और सुखी, ग्यारहवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो वृद्धावस्थामे पुत्रका सुख पानेवाला, नाना भाषाओंका ज्ञाता और साधारण व्यापारमे लाभ प्राप्त करनेवाला एव बारहवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो अशुभ कार्योंमे धन खर्च करनेवाला, मातुलको कष्टदायक, शत्रुनाशक और सामान्यलाभ करनेवाला होता है।

राहु––लग्नभावको राहु पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शारीरिक रोगी वातविकारी, उग्रस्वभाववाला, खिन्नचित्तवाला उद्योगरहित और अधार्मिक; दूसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो कुटुम्ब सुखहीन, धन नाशक, पत्थरकी चोटसे दुखी होनेवाला और चचल प्रकृति, तीसरे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पराक्रमी, पुरुषार्थी और पुत्र सन्तान रहित; चौथे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो उदररोगी, मलीन और साधारण सुखी; पाँचवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो भाग्यशाली, धनी, व्यवहारकुशल, और सन्तानसुखी; छटवे भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो शत्रुनाशक वीर, गुदा स्थानमे फोडोंके दुखसे पीडित, व्ययशील, नेत्र पर खरौचके निशानवाला, पराक्रमी और बलवान, सातवे भावको पूर्ण दृष्टिसे

देखता हो तो धनी, विषयी, कामी, और नीचसंगति प्रिय, आठवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो पराधीन, धननाशक, कण्ठरोगसे पीडित, धर्म-हीन, नीचकर्मरत और कुटुम्बसे पृथक् रहनेवाला; नवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो बडे भाईके सुखसे रहित, ऐश्वर्यवान्, भोगी, पराक्रमी और सन्ततिवान्, दसवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो मातृसुखहीन, पितृ-कष्टकारक, राजमान्य और उद्योगशील, ग्यारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो सन्तति कष्टसे पीड़ित, नीचकर्मरत और अल्पलाभ करने-वाला एवं बारहवें भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो तो गुप्तरोगी, शत्रुनाशक कुमार्गमे धन व्यय करनेवाला और दरिद्री होता है। केतुकी दृष्टिका फल राहुके समान है।

ग्रहोंकी युतिका फल

रवि-चन्द्र एक स्थान पर हो तो जातक लोहा, पत्थरका व्यापारी, शिल्पकार, वास्तु एव मूर्त्तिकलाका मर्मज्ञ; **रवि-मंगल** एक साथ हों तो शूरवीर, यशस्वी, मिथ्याभाषी, परिश्रमी एवं अध्यवसायी; **रवि-बुध** हो तो मधुरभाषी, विद्वान् ऐश्वर्यवान्, भाग्यशाली कलाकार, लेखक, सशोधक एव विचारक; **रवि-गुरु** एक साथ हो तो आस्तिक, उप-देशक, राजमान्य एव ज्ञानवान; **रवि-शुक्र** एक साथ हो तो चित्रकार, नेत्ररोगी, विलासी, कामुक एव अविचारक; **रवि-शनि** एक साथ हो तो अल्पवीर्य, धातुओका ज्ञाता, आस्तिक: **चन्द्र-मंगल** एक साथ हो तो विजयी कुशल वक्ता धीर, शूरवीर, कला कुशल एव साहसी, **चन्द्र-बुध** एक साथ हों तो धर्म प्रेमी, विद्वान्, मनोज्ञ, निर्मलबुद्धि एव सशोधक, **चन्द्र-गुरु** एक साथ हो तो शील-सम्पन्न, प्रेमी धार्मिक, सदाचारी एवं सेवावृत्तिवाला; **चन्द्र-शुक्र** एक साथ हो तो व्यापारी, सुखी, भोगी एव धनी; **चन्द्र-शनि** एक साथ हो तो शीलहीन, धनहीन, मूर्ख एव वञ्चक; **मंगल-बुध** एक साथ हो तो धनिक, वक्ता, वैद्य, शिल्पज्ञ एव शास्त्रज्ञ; **मंगल-गुरु** एक

साथ हो तो गणितज्ञ, शिल्पज्ञ, विद्वान् एवं वाद्यप्रिय, **मंगल-शुक्र** एक साथ हों तो व्यापारकुशल, धातु संशोधक, योगाभ्यासी, कार्यपरायण एवं विमान चालक; **मंगल-शनि** एक साथ हो तो कपटी, धूर्त, जादूगर, ढोंगी एवं अविश्वासी; **बुध-गुरु** एक साथ हों तो वक्ता, पंडित, सभाचतुर, प्रख्यात, कवि, काव्य-स्रष्टा एवं संशोधक; **बुध-शुक्र** एक साथ हो तो मुंशी, विलासी, सुखी, राजमान्य, रतिप्रिय एवं शासक; **बुध-शनि** एक साथ हो तो कवि, वक्ता, सभापंडित, व्याख्याता एवं कलाकार; **गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो भोक्ता, सुखी, बलवान, चतुर एवं नीतिवान्; **गुरु-शनि** एक साथ हो तो लोकमान्य, कार्यदक्ष, धनाढ्य, यशस्वी, कीर्त्तिवान् एवं आदरपात्र और **बुध-शनि** एक साथ हो तो चित्रकार मल्ल, पशुपालक, शिल्पी, रोगी, वीर्यविकारी, एवं अल्पधनी जातक होता है।

तीन ग्रहोंकी युतिका फल

रवि-चन्द्र-मंगल एक साथ हो तो जातक शूरवीर, धीर, ज्ञानी, बली वैज्ञानिक, शिल्पी एवं कार्यदक्ष, **रवि-चन्द्र-बुध** एक साथ हो तो तेजस्वी, विद्वान्, शास्त्रप्रेमी, राजमान्य, भाग्यशाली एवं नीतिविशारद, **रवि-चन्द्र-गुरु** एक साथ हो तो योगी, ज्ञानी, मर्मज्ञ सौम्यवृत्ति, सुखी स्नेही, विचारक, कुशल कार्यकर्त्ता एवं आस्तिक, **गुरु-शनि-शुक्र** एक साथ हो तो हीनवीर्य, व्यापारी, सुखी, निस्संतान या अल्पसन्तान, लोभी एवं साधारण धनी; **रवि-चन्द्र-शनि** एक साथ हो तो अज्ञानी, धूर्त, वाचाल पाखण्डी, अविवेकी, चञ्चल एवं अविश्वासी, **रवि-मंगल-बुध** एक साथ हों तो साहसी, निष्ठुर, ऐश्वर्यहीन, तामसी, अविवेकी, अहंकारी एवं व्यर्थबकवादी; **रवि-मंगल-गुरु** एक साथ हो तो राजमान्य, सत्यवादी; तेजस्वी, धनिक, प्रभावशाली एवं ईमानदार, **रवि-मंगल-शुक्र** एक साथ हो तो कुलीन, कठोर, वैभवशाली, नेत्ररोगी एवं प्रवीण, **रवि-मंगल-शनि** एक साथ हों तो धन-जन हीन, दुःखी, लोभी एवं अपमानित होनेवाला;

रवि-बुध-गुरु एक साथ हो तो विद्वान, चतुर, शिल्पी, लेखक, कवि, शास्त्र रचयिता, नेत्ररोगी, वातरोगी एवं ऐश्वर्यवान्; **रवि-बुध-शुक्र** एक साथ हो तो दुःखी, वाचाल, भ्रमणशील, द्वेषी, एवं घृणित कार्य करनेवाला; **रवि-बुध-शनि एक** साथ हो तो कलाद्वेषी, कुटिल, धननाशक, छोटी अवस्थामें सुन्दर पर ३६ वर्षकी अवस्थामें विकृतदेही एवं नीचकर्मरत; **रवि-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो परोपकारी, सज्जन, राजमान्य, नेत्रविकारी, लब्ध प्रतिष्ठ एवं सफल कार्य सञ्चालक, **रवि-गुरु-शनि** एक साथ हो तो चरित्रहीन, दुःखी, शत्रु पीड़ित, उद्विग्न, कुष्ठरोगी एवं नीच संगतिप्रिय; **रवि-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो दुश्चरित्र, नीतकार्यरत, घृणितरोगसे पीड़ित एवं लोकतिरस्कृत, **चन्द्र-मंगल-बुध** एक साथ हो तो कठोर, पापी, धूर्त क्रूर एवं दुष्टस्वभाव वाला; **चन्द्र-बुध-गुरु** एक साथ हो तो धनी, सुखी, प्रसन्नचित्त, तेजस्वी, वाक्पटु, एवं कार्यकुशल; **चन्द्र-बुध-शुक्र** एक साथ हो तो धन-लोभी, ईर्ष्यालु, आचारहीन, दाम्भिक, मायावी और धूर्त, **चन्द्र-बुध-शनि** एक साथ हो तो अशान्त, प्राज्ञ, वचनपटु, राजमान्य एवं कार्यपरायण, **चन्द्र-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो सुखी, सदाचारी, धनी, ऐश्वर्यवान, नेता, कर्त्तव्यशील एवं कुशाग्रबुद्धि, **चन्द्र-गुरु-शनि** एक साथ हो तो नीतिवान्, नेता, सुबुद्धि, शास्त्रज्ञ, व्यवसायी, अध्यापक एवं वकील, **चन्द्र-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो लेखक, शिक्षक, सुकर्मरत, ज्योतिषी, सम्पादक, व्यवसायी एवं परिश्रमी, **मंगल-बुध-गुरु** एक साथ हो तो कवि, श्रेष्ठ पुरुष गायन-निपुण, स्त्रीसुख से युक्त, परोपकारी, उन्नतिशील महत्त्वाकांक्षी एवं जीवनमें बड़े-बड़े कार्य करने वाला, **मंगल-बुध-शुक्र** एक साथ हो तो कुलहीन, विकलाङ्गी, चपल, परोपकारी एवं जल्दीबाज; **मंगल-बुध-शनि** एक साथ हो तो व्यसनी, प्रवासी, मुखरोगी एवं कर्त्तव्यच्युत; **मंगल-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो राजमित्र, विलासी, सुपुत्रवान्, ऐश्वर्यवान्, सुखी एवं व्यवसायी, **मंगल-गुरु-शनि** एक साथ हो तो पूर्ण ऐश्वर्यवान् सम्पन्न, सदाचारी, सुखी एवं अन्तिम जीवनमें महान् कार्य करनेवाला

और **गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो शीलवान्, कुलदीपक, शासक, उच्च-पदाधिकारी, नवीन कार्य संस्थापक एवं आश्रयदाता होता है ।

चार ग्रहोंकी युतिका फल

रवि-चन्द्र-मंगल-बुध एक साथ हो तो जातक लेखक, मोही, रोगी, कार्यकुशल एवं चतुर; **रवि-चन्द्र-मंगल-गुरु** एक साथ हो तो भूपति, धनी, नीतिज्ञ एवं सरदार, **रवि-चन्द्र-मंगल-शुक्र** एक साथ हो तो धनी, तेजस्वी नीतिमान्, कार्यदक्ष, विनोदी, एवं गुणज्ञ, **रवि-चन्द्र-मंगल-शनि** एक साथ हो तो नेत्र रोगी, शिल्पकार, स्वर्णकार, धनी, धैर्यवान् एवं शास्त्रज्ञ, **रवि-चन्द्र-बुध-गुरु** एक साथ हो तो सुखी, सदाचारी, प्रख्यात पंडित, एवं मध्यम वित्तवाला, **रवि-चन्द्र-बुध-शुक्र** एक साथ हो तो आलसी, स्वल्प-धनी दुःखी, विद्वान्, मनोज्ञ एवं क्षीण शक्ति, **रवि-चन्द्रमा-बुध-शनि** एक साथ हो तो विकलदेही वाक्पटु, शीलवान्, चंचल, कार्यकुशल एवं यन्त्रज्ञ, **रवि-चन्द्र-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो परोपकारी, धर्मशास्त्री, धर्मशाला तथा तालाब आदिका निर्मापक, सज्जन, मिलनसार एवं उच्चाभिलाषी, **रवि-चन्द्र-गुरु-शनि** एक साथ हो तो तामसी, हठी, कुलीन, सुखी, निन्दक, कार्यरत एवं अध्यवसायी, **रवि-चन्द्र-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो दुर्बल देही, स्त्रीरत, कामी एवं व्यभिचारकी ओर झुकनेवाला, **रवि-मंगल-बुध-गुरु** एक साथ हो तो परस्त्रीगामी, चोर, निन्दक, जीवनमें अपमानित होनेवाला एवं व्यापारद्वारा धनी, **रवि-मंगल-बुध-शनि** एक साथ हो तो कवि, मन्त्री, सज्जन, लब्ध प्रतिष्ठ, सुखी एवं सम्माननीय, **रवि-मंगल-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो लोकमान्य, ऐश्वर्यवान्, नीतिज्ञ, कार्यदक्ष एवं सर्वप्रिय, **रवि-मंगल-गुरु-शनि** एक साथ हो तो राजमान्य कुटुम्बप्रेमी, साधुसेवी, कार्यकुशल, व्यापारी, मिल संस्थापक, विधानज्ञ, शिक्षक एवं शासक; **रवि-मंगल-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो बन्धुद्वेषी, अपयशी, दुराचारी, मलिन एवं नीच कर्मरत, **रवि-बुध-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो धनिक,

बन्धुवान, सुखी, सफल कार्यकर्त्ता, सभापति, सभाजित, लोकमान्य एवं नीतिवान्; **रवि-बुध-गुरु-शनि** एक साथ हो तो मानी, हीनवीर्य, झगड़ालु, कवि, संशोधक, सम्पादक एवं साहित्यिक; **रवि-बुध-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो वाचाल, सदाचारी, अल्पसुखी, वनविहारी, प्रवासी एवं साधन सम्पन्न; **रवि-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो लोभी, कवि, प्रधान, नेता, स्वार्थी, ख्यातिवान् एवं चतुर; **चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु** एक साथ हो तो बुद्धिमान्, सुखी, सदाचारी, शास्त्रज्ञ, लोकपालक एवं शिल्पशास्त्रज्ञ, **चन्द्र-मंगल-बुध शुक्र** एक साथ हो तो आलसी, झगडालु, सुखी एवं असहयोगी; **चन्द्रमा-मंगल-बुध-शनि** एक साथ हो तो शूर, बहुपुत्रवान् विकलशरीरी, सुकलत्रवान् एवं गुणवान्; **चन्द्र-मंगल-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो मानी, धनी, स्त्री-सुखी, निर्मलचित्त, धर्मात्मा एवं समाजसेवी; **चन्द्र-मंगल-गुरु-शनि** एक साथ हो तो धीर, पराक्रमशाली, धनी, परिश्रमी एवं शस्त्र-शास्त्रज्ञ; **चन्द्र-मंगल-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो गुरुजन हीन, दुःखी, वाचाल एवं नीचकर्मरत; **चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो आस्तिक, मातृ-पितृ भक्त, विद्वान्, धनवान्, सुखी एवं कार्यदक्ष; **चन्द्र-बुध-गुरु-शनि** एक साथ हो तो कीर्त्तिवान, तेजस्वी, बन्धुप्रेमी, प्रसिद्ध कवि, एवं सम्मान्य; **चन्द्र-बुध-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो चरित्रहीन, जनद्वेषी एवं वञ्चक; **चन्द्र-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो त्वग्रोगी, प्रवासी, दुःखी, वाचाल एवं निर्धनी, **मंगल-बुध-गुरु-शुक्र** एक साथ हों तो लोक-मान्य, विद्वान, शूर, चतुर, धनहीन एवं परिश्रमी; **मंगल-बुध-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो पुष्ट, मल्ल, युद्धविजयी एवं पराक्रमी; **मंगल-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो तेजस्वी, धनिक, स्त्रीलोभी, साहसी एवं चपल और **मंगल-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो विद्वान्, पितृभक्त, धर्मात्मा, सुखी, सच्चरित्र एवं कार्यदक्ष होता है। इन ग्रहोंका पूर्ण फल उच्चके होनेपर; मध्यम फल मूलत्रिकोणमें रहनेपर और अधम फल अपनी राशि या मित्रके गृहमें रहनेपर मिलता है।

पञ्चग्रह योग फल

रवि-चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु एक साथ हो तो जातक युद्धकुशल, धूर्त, सामर्थ्यवान, अशान्त एव प्रपचकर्त्ता, **रवि-चन्द्र-मंगल-बुध-शुक्र** एक साथ हो तो परस्वार्थी, अन्यधर्म श्रद्धालु, बन्धुरहित एव बलहीन; **रवि-चन्द्र-मंगल-बुध-शनि** एक साथ हो तो अल्पायु, सुखहीन, स्त्री-पुत्र-धन रहित एवं विरहसे पीड़ित· **रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो माता-पिता-भाईसे रहित, परधनहर्ता, दुष्ट, पिशुन, नेत्ररोगी, वीर एव कपटी **रवि-चन्द्र-भौम-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो युद्ध-कुशल, चालाक, धन-मान-प्रभावसे हीन एवं सताप दाता; **रवि-चन्द्र-भौम-शुक्र-शनि** एक साथ हों तो धनी पराक्रमी, मलिन, परस्त्रीरत एव व्यवहार शून्य; **रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो मत्री, धनवान्, बलवान्, यशस्वी एव प्रतापवान्; **रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शनि** एक साथ हो तो भिक्षुक, डरपोक, उग्रस्वभाव-वाला, परान्नभोजी एव पापी; **रवि-चन्द्र--बुध-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो दरिद्री, पुत्रहीन, रोगी, दीर्घदेही एव आत्मघाती; **रवि-चन्द्र-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो स्त्रीसुखयुक्त, बली, चतुर, निर्भय, जादूगर एव अस्थिर चित्त-वृत्ति; **रवि-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो सेनानायक, सरदार, परकामिनीरत, विनोदी, सुखी, प्रतापी एव वीर, **रवि-मंगल-बुध-गुरु-शनि** एक साथ हो तो रोगी, नित्योद्वेगी, मलिन, एव अल्पधनी; **रवि-बुध-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो ज्ञानी, धर्मात्मा, शास्त्रज्ञ, विद्वान् एवं भाग्यवान्; **चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र** एक साथ हो तो सज्जन, सुखी, विद्वान्, बलवान्, लेखक, सशोधक एव कर्त्तव्यशील; **चन्द्र-मंगल-बुध-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो दुःखी, रोगी, परोपकारी, स्थिरचित्त एवं यश-स्वी; **चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो पूज्य, यन्त्रकर्त्ता (नवीन मशीन बनानेवाला) लोकमान्य, राजा या तत्तुल्य ऐश्वर्यवान् एव नेत्र-रोगी और **मंगल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हों तो सदा प्रसन्नचित्त, सन्तोषी, एव लब्ध प्रतिष्ठ होता है।

षड्ग्रह योग फल

रवि-चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र एक साथ हो तो तीर्थयात्रा करनेवाला, सात्त्विक, दानी, स्त्री-पुत्रयुक्त, धनी, अरण्य-पर्वत आदिमें निवास करनेवाला एवं सत्कीर्तिवान्; **रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो मिरगेगी, परदेशी, उन्माद प्रकृतिवाला, देवभूमिमें निवास करनेवाला एव शिथिल चारित्र धारक, **रवि-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो बुद्धिमान, भ्रमणशील, परसेवी, बन्धुद्वेषी, एव रोगी; **रवि-चन्द्र, मंगल-बुध-गुरु-शनि** एक साथ हो तो कुष्ठ रोगी, भाइयोंमें निन्दित, दुःखी पुत्ररहित, एव परसेवी, **रवि-चन्द्र-मंगल-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो मत्री, नेता, मान्य, नीच कर्मरत, क्षय तथा पीनसके रोगमें दुःखी एव स्वल्प धनी, **रवि-चन्द्र-मंगल-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो शान्त, उदार, धनी-मानी एव शासक और **चन्द्र-मंगल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि** एक साथ हो तो धनिक, धर्मात्मा, ऐश्वर्यवान् एव चरित्रवान् होता है। किसी भी ग्रहके साथ **मंगल बुध** का योग वक्ता, वैद्य, कारीगर और शास्त्रज्ञ होनेकी सूचना देता है।

द्वादश भाव विचार

लग्न विचार—पहले ही कहा गया है कि प्रथम भावसे शरीरकी आकृति, रूप आदिका विचार किया जाता है। इस भावमें जिस प्रकारकी राशि और ग्रह होंगे जातकका शरीर भी वैसाही होगा। शरीरकी स्थितिके सम्बन्धमें विचार करनेके लिये ग्रह और राशियोंके तत्त्व नीचे लिखे जाते हैं।

सूर्य	शुष्कग्रह	अग्नितत्त्व	सम (कद)
चन्द्र	जलग्रह	जलतत्त्व	दीर्घ "
भौम	शुष्कग्रह	अग्नितत्त्व	ह्रस्व
बुध	जलग्रह	पृथ्वीतत्त्व	सम

गुरु	जलग्रह	आकाश या तेज तत्त्व	मध्यम या ह्रस्व
शुक्र	जलग्रह	जलतत्त्व	,,
शनि	शुष्कग्रह	वायुतत्त्व	दीर्घ

राशि संज्ञाएँ

मेष	अग्नि	पादजल ($\frac{1}{4}$)	ह्रस्व (२४ अंश)
वृष	पृथ्वी	अर्द्धजल ($\frac{1}{2}$)	ह्रस्व (२४ अंश)
मिथुन	वायु	निर्जल (०)	सम (२८ अंश)
कर्क	जल	पूर्णजल (१)	सम (३२ अंश)
सिंह	अग्नि	निर्जल (०)	दीर्घ (३६ अंश)
कन्या	पृथ्वी	निर्जल (०)	दीर्घ (४० अंश)
तुला	वायु	पादजल ($\frac{1}{4}$)	दीर्घ (४० अंश)
वृश्चिक	जल	पादजल ($\frac{1}{4}$)	दीर्घ (३६ अंश)
धनु	अग्नि	अर्द्धजल ($\frac{1}{2}$)	सम (३२ अंश)
मकर	पृथ्वी	पूर्णजल (१)	सम (२८ अंश)
कुम्भ	वायु	अर्द्धजल ($\frac{1}{2}$)	ह्रस्व (२४ अंश)
मीन	जल	पूर्णजल (१)	ह्रस्व (२० अंश)

उपर्युक्त संज्ञाओंपर से शारीरिक स्थित ज्ञात करनेके नियम

१—लग्न जल राशि हो और उसमे जलग्रहकी स्थिति हो तो जातकका शरीर मोटा होगा।

२—लग्न और लग्नाधिपति जलराशि गत होनेसे शरीर खूब स्थूल होगा।

३—यदि लग्न अग्निराशि हो और अग्निग्रह उसमे स्थित हो तो मनुष्य बली होता है, पर शरीर देखनेमे दुबला मालूम पडता है।

४—अग्नि या वायुराशि लग्न हो और लग्नाधिपति पृथ्वी राशिगत हो तो

हड्डियाँ साधारणतया पुष्ट और मजबूत होती है. और शरीर ठोस होता है ।

५--यदि अग्नि या वायु राशि लग्न हो, लग्नाधिपति जलराशिगत हो तो शरीर स्थूल होता है ।

६--यदि लग्न वायु राशि हो और उसमे वायु ग्रह स्थित हो तो जातक दुबला, पर तीक्ष्ण बुद्धिवाला होता है ।

७--यदि लग्न पृथ्वी राशि हो और उसमे पृथ्वीग्रह स्थित हो तो मनुष्य नाटा होता है ।

८--पृथ्वी राशि लग्न हो और लग्नाधिपति पृथ्वीराशिगत हो तो शरीर स्थूल और दृढ होता है।

९--पृथ्वी राशि लग्न हो और उसका अधिपति जलराशिमे हो तो शरीर साधारणतया स्थूल होता है ।

लग्नकी राशि ह्रस्व, दीर्घ या सम जिस प्रकारकी हो, उसीके अनुसार जातकके शरीरकी ऊँचाई समझनी चाहिए । शरीरकी आकृति निर्णयके लिये निम्न नियम उपयोगी है--

(१)लग्नराशि कैसी है ? (२) लग्नमे ग्रह है तो कैसा है ? (३) लग्नेश कैसा ग्रह है ? और किस राशिमे है ? (४) लग्नेशके साथ कैसे ग्रह है ? (५) लग्नपर किसकी दृष्टि है ? (६) लग्नेश अष्टम या द्वादश भावमें तो नही है ? (७) गुरु लग्नमे है अथवा लग्नको देखता है । कैसी राशिमे बृहस्पतिकी स्थिति है ।

इन सात नियमो द्वारा विचार करनेपर ज्ञात हो जायगा कि जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु तत्त्वोंमे किसकी विशेषता है । अन्तमे अन्तिम निर्णयके लिये पहलेवाले नौ नियमोका आश्रय लेकर निश्चय करना चाहिए ।

लग्नेश और लग्नराशिके स्वरूपके अनुसार जातकके रूप-रगका निश्चय करना चाहिए । मेष लग्नमे लालमिश्रित सफेद, वृषमे पीला मिश्रित सफद, मिथुनमे गहरा लाल मिश्रित सफेद, कर्कमे नीला, सिहमें

धूसर, कन्यामें घनश्याम रंग, तुलामें कृष्णवर्ण लाली लिये, वृश्चिकमें बादामी, धनुमें पीत वर्ण, मकरमें चितकबरी, कुम्भमें आकाश सदृश नीला और मीनमें गौरवर्ण होता है ।

सूर्यसे रक्त-श्याम, चन्द्रसे गौरवर्ण, मंगलसे समवर्ण, बुधसे दूर्वादल-के समान श्यामल, गुरुसे काचन वर्ण, शुक्रसे श्यामल, शनिसे कृष्ण, राहु-से कृष्ण और केतुसे धूम्र वर्णका जातकको समझना चाहिए । लग्न तथा लग्नेश पर पापग्रहकी दृष्टि होनेसे मनुष्य कुरूप होता है, बुध-शुक्र एक साथ कहीं भी हों तो गौरवर्ण न होते हुए भी सुन्दर होता है । शुभग्रह युत या दृष्ट लग्न होनेपर जातक सुन्दर होता है । रवि लग्नमें हो तो आँखे सुन्दर नहीं होतीं, चन्द्रमा लग्नमें हो तो गौर वर्ण होते हुए भी सुडौल नहीं होता, मंगल लग्नमें हो तो शरीर सुन्दर होता है, पर चेहरे पर सुन्दरतामें अन्तर डालनेवाला कोई निशान होता है । बुध लग्नमें हो तो चमकदार साँवला रंग होता है तथा कम या अधिक चेचकके दाग होते हैं । बृहस्पति लग्नमें हो तो गौर रंग, सुडौल शरीर होता है, किन्तु कम आयुमें ही वृद्ध बना देता है, सफेद बाल जल्द होते हैं, ४५ वर्षकी उम्रमें ही दाँत गिर जाते हैं। मेदवृद्धिसे पेट बड़ा हो जाता है । शुक्र लग्नमें हो तो शरीर सुन्दर और आकर्षक होता है । शनि लग्नमें हो तो मनुष्यके रूपमें कमी होती है और राहु-केतुके लग्नमें रहनेसे चेहरेपर काले दाग होते हैं ।

शरीरके रूपका विचार करते समय ग्रहोंकी दृष्टिका अवश्य आश्रय लेना चाहिए । लग्नमें कुरूपता करने वाले क्रूर ग्रहोंके रहनेपर भी लग्न स्थानपर शुभ ग्रहकी दृष्टि होनेसे जातक सुन्दर होता है । इसी प्रकार पापग्रहोंकी दृष्टि होनेसे जातककी सुन्दरतामें कमी आती है ।

शरीरके अंगोंका विचार

अंगोंके परिमाणका विचार करनेके लिये ज्योतिषशास्त्रमें लग्नस्थान गत राशिको सिर, द्वितीय स्थानकी राशिको मुख और गला, तृतीय स्थान-

की राशिको वक्षस्थल और फेफड़ा, चतुर्थ स्थानकी राशिको हृदय और छाती, पंचम स्थानकी राशिको कुक्षि और पीठ, षष्ठ स्थानकी राशिको कमर और आँते, सप्तम स्थानकी राशिको नाभि और लिंगके बीचका स्थान, अष्टम स्थानकी राशिको लिङ्ग और गुदा, नवम स्थानकी राशिको उरु और जघा, दशम स्थानकी राशिको टेहुना, एकादश स्थानकी राशिको पिंडुलियाँ और द्वादश स्थानकी राशिको पैर समझना चाहिए।

जिस अंगपर विचार करना हो उस अंगकी राशि जिस प्रकारकी ह्रस्व या दीर्घ हो तथा उस अंग संज्ञक राशिमें रहनेवाला जैसा ग्रह हो, उस अंगको वैसा ही ह्रस्व या दीर्घ अवगत करना चाहिए। अंगज्ञानके लिये कुछ नियम निम्न प्रकार है—

(१) अंगकी राशि कैसी है।(२) उस राशिमें ग्रह कैसा है। (३) अंग निर्दिष्ट राशि का स्वामी किस प्रकारकी राशिमें पड़ा है। (४) अंग निर्दिष्ट राशिमें कोई ग्रह है तो वह किस प्रकारकी राशिका स्वामी है। यदि अंग स्थान राशिमें एकसे अधिक ग्रह हों तो जो सबसे बलवान हो उसमें विचार करना चाहिए।

जन्म समयके वातावरणका परिज्ञान

जन्म समयमें मेष, वृष लग्न हो तो घरके पूर्व भागमें शय्या, मिथुन हो तो घरके अग्निकोणमें, कर्क, सिंह लग्न हो तो घरके दक्षिण भागमें, कन्या लग्न हो तो घरके नैऋत्य कोणमें, तुला, वृश्चिक लग्न हो तो घरके पश्चिम भागमें, धनु राशि लग्न हो तो घरके वायुकोणमें, मकर कुम्भ लग्न हो तो घरके उत्तर भागमें एवं मीन राशिका लग्न हो तो घरके ईशान भागमें प्रसूतिकाकी शय्या जाननी चाहिए।

* जो ग्रह सबसे बलवान हो अथवा १।४।७।१० में स्थित हो उस ग्रहकी दिशामें सूतिका गृहका द्वार ज्ञात करना चाहिये। रविकी पूर्व दिशा, चन्द्रकी वायव्य, मंगलकी दक्षिण, बुधकी उत्तर, गुरुकी ईशान, शुक्रकी

आग्नेय, शनिकी पश्चिम और राहुकी नैऋत्य दिशा है।

जन्म समय लग्नमें शीर्षोदय ३।५।६।७।८।११ राशियोंका नवांश हो तो मस्तककी तरफसे जन्म; लग्नमें उभोदय राशि--मीनका नवांश हो तो प्रथम हाथ निकला होगा; और लग्नमें पृष्ठोदय १।२।३।४।९।१० राशियोंका नवांश हो तो पाँवकी ओरसे जन्म जानना चाहिए।

लग्न और चन्द्रमाके बीचमें जितने ग्रह स्थित हों उतनी ही उपसूतिकाओंकी संख्या जानना चाहिए। मीन मेष लग्नमें जन्म हो तो दो, वृष, कुम्भमें जन्म हो तो चार, कर्क सिंहमें हो तो पाँच, शेष लग्नों--मिथुन कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु और मकर लग्न हो तो तीन उपसूतिकाएँ जाननी चाहिये।

अरिष्ट विचार

उत्पत्तिके समय जातकके ग्रहारिष्ट, गण्डारिष्ट और पातकी अरिष्टका विचार करना चाहिए।

१--लग्नमें चन्द्रमा, बारहवेंमें शनि, नौवेंमें सूर्य और अष्टममें मंगल हो तो अरिष्ट होता है।

२--लग्नमें पाप ग्रह हो और चन्द्रमा पाप ग्रहके साथ स्थित हो तथा शुभग्रहोंकी दृष्टि लग्न और चन्द्रमा दोनों पर न हो तो अरिष्ट समझना चाहिए।

३--बारहवें भावमें क्षीण चन्द्रमा स्थित हो और लग्न एवं अष्टममें पाप ग्रह स्थित हो तो बालकको अरिष्ट होता है।

४--क्षीण चन्द्रमा पर पाप ग्रह या राहुकी दृष्टि हो तो बालकको अरिष्ट होता है।

५--चन्द्रमा ४।७।८ में स्थित हो और उसके दोनों ओर पाप ग्रह स्थित हों तो बालकको अरिष्ट होता है।

६—चन्द्रमा ६।८।१२ में हो और उसपर राहुकी दृष्टि हो तो अरिष्ट होता है।

७—चन्द्रमा कर्क, वृश्चिक और मीन राशिका हो तथा राशिके अन्तिम नवांशमें हो, शुभ ग्रहोंकी दृष्टि चन्द्रमापर न हो एवं पंचम स्थानपर पापग्रहोंकी दृष्टि हो अथवा पाप ग्रह स्थित हो तो बालकको अरिष्ट होता है।

८—मेष राशिका चन्द्रमा २३ अंशका अष्टम स्थानमें हो तो २३ वर्षके भीतर जातककी मृत्यु होती है। वृषके २१ अंशका, मिथुनके २२ अंशका, कर्कके २२ अंशका, सिंहके २१ अंशका, कन्याके १ अंशका, तुलाके ४ अंशका, वृश्चिकके २१ अंशका, धनुके १८ अंशका, मकरके २० अंशका, कुम्भके २० अंशका एवं मीनके १० अंशका चन्द्रमा अरिष्ट करनेवाला होता है।

९—पाप ग्रहसे युक्त लग्नका स्वामी ७ वें स्थानमें स्थित हो तो एक वर्ष तक परम अरिष्ट होता है।

१०—जन्मराशिका स्वामी पापग्रहसे युक्त होकर आठवें स्थानमें हो तो अरिष्ट होता है।

११—शनि, सूर्य, मंगल आठवें अथवा बारहवें स्थानमें हों तो जातकको एक महीने तक परम अरिष्ट होता है।

१२—लग्नमें राहु तथा छठवें या आठवें भावमें चन्द्रमा हो तो जातकको अत्यन्त अरिष्ट होता है।

१३—लग्नेश आठवें भावमें पाप ग्रहसे युत या दृष्ट हो तो चार महीने तक जातकको अरिष्ट होता है।

१४—शुभ तथा पाप ग्रह ३।६।९।१२ स्थानोंमें निर्बली होकर स्थित हों तो ६ मास तक जातकको अरिष्ट होता है।

१५—पापग्रहोंकी राशियाँ १।५।८।१०।११ स्थानोंमें हों तथा

सूर्य, चन्द्र, मगल, पाँचवे स्थानमे हो तो जातकको ६ महीनेका अरिष्ट होता है ।

१६—पापग्रह छटवें, आठवें स्थानमे स्थित हों और पापग्रहोंकी दृष्टि भी हो तो एक वर्षका अरिष्ट होता है ।

१७—चन्द्र, बुध दोनो केन्द्रमे स्थित हो और अस्त शनि या मंगल उनको देखते हो तो एक वर्षके भीतर मृत्यु होती है ।

१८—शनि, रवि और मगल छठे, आठवे भावमे गये हो तो एक वर्ष तक अरिष्ट जातकको होता है ।

१९—अष्टमेश लग्नमे और लग्नेश अष्टम भावमे गया हो तो पाँच वर्ष तक अरिष्ट होता है ।

२०—कर्क या सिंह राशिका शुक्र ६।८।१२ मे स्थित हो तथा पापग्रहोसे देखा जाता हो तो छठे वर्षमे मृत्यु जानना ।

२१—लग्नमें सूर्य, शनि और मगल स्थित हों और क्षीण चन्द्रमा सातवे भावमे हो तो सातवे वर्षमे मृत्यु होती है ।

२२—सूर्य, चन्द्र और शनि इन तीनो ग्रहोका योग ६।८।१२ स्थानोंमे हो तो ९ वर्ष तक जातकको अरिष्ट रहता है ।

२३—चन्द्रमा सातवे भावमे और अष्टमेश लग्नमे स्थित हो तो ९ वर्ष तक अरिष्ट रहता है । परन्तु इस योगमे शनिकी दृष्टि अष्टमेश पर आवश्यक है ।

२४—चन्द्रमा और लग्नेश ६।७।८।१२ स्थानोमे स्थित हो तो १२ वर्ष तक अरिष्ट रहता है ।

२५—चन्द्र और लग्नेश शनि एवं सूर्यसे युत हो तो १२ वर्ष तक अरिष्ट रहता है ।

गण्ड-अरिष्ट

आश्लेषाके अन्त और मघाके आदिके दोषयुक्त कालको रात्रिगण्ड

ज्येष्ठा, और मूलके दोषयुक्त कालको दिवागण्ड एवं रेवती और अश्विनीके दोषयुक्त कालको सन्ध्या गण्ड कहते हैं। अभिप्राय यह है कि आश्लेषा, ज्येष्ठा और रेवती नक्षत्रकी अन्तिम चार घटियों तथा मघा, मूल, और अश्विनी नक्षत्रके आदिकी चार घटियाँ गण्डदोष युक्त मानी गई है। इस समयमे उत्पन्न होनेवाले बालकोको अरिष्ट होता है। मतान्तरसे ज्येष्ठाके अन्तकी एक घटी और मूलके आदिकी दो घटीको अभुक्त मूल कहा गया है। इन तीन घटियोके भीतर जन्म लेनेवाले बालकको विशेष अरिष्ट होता है।

यहाँ स्मरण रखनेकी बात यह है कि बालकका प्रातःकाल अथवा सन्ध्याके सन्धि समयमे जन्म हो तो सान्ध्य गण्ड विशेष कष्टदायक; रात्रिकालमे जन्म हो तो रात्रिगण्डदोष विशेष कष्टदायक एवं दिनमे जन्म होनेपर दिवागण्ड कष्टकारक होता है। सान्ध्यगण्ड बालकके लिये रात्रिगण्ड माताके लिये और दिवागण्ड पिताके लिये कष्टदायक होता है।

अरिष्टभंग योग

१--शुक्ल पक्षमे रात्रिका जन्म हो और लग्नसे आठवे स्थानमे चन्द्रमा स्थित हो तो सर्वारिष्ट नाशक योग होता है।

२--शुभ ग्रहोकी राशि और नवमाश २।७।९।१२।३।६।४में हो तो अरिष्ट नाशक योग होता है।

३--जन्मराशिका स्वामी १।४।७।१० स्थानोमे स्थित हों अथवा शुभग्रह केन्द्रमें गये हो तो अरिष्टनाश होता है।

४--सभी ग्रह ३।५।६।७।८।११ राशियोंमे हों तो अरिष्टनाश होता है।

५--चन्द्रमा अपनी राशि, उच्चराशि तथा मित्रके गृहमें स्थित हो तो सर्वारिष्ट नाश करता है।

६—चन्द्रमासे दसवें स्थानमें गुरु, बारहवेमे बुध, शुक्र और बारहवें स्थानमे पापग्रह गये हों तो अरिष्टनाश होता है ।

७—कर्क तथा मेष राशिका चन्द्रमा केन्द्रमें स्थित हो और शुभ ग्रहसे दृष्ट हो तो सर्वारिष्ट नाश करता है ।

८—कर्क, मेष और वृष राशि लग्न हों तथा लग्नमे राहु हो तो अरिष्ट भग होता है ।

९—सभी ग्रह १।२।४।५।७।८।१०।११ स्थानोमे गये हो तो अरिष्ट नाश होता है ।

१०—पूर्व चन्द्रमा शुभ ग्रहकी राशिका हो तो अरिष्ट भंग होता है ।

११—शुभ ग्रहके वर्गमे गया हुआ चन्द्रमा ६।८ स्थानमे स्थित हो तो सर्वारिष्टनाश होता है ।

१२—चन्द्र और जन्म लग्नको शुभ ग्रह देखते हो तो अरिष्ट भंग होता है ।

१३—शुभ ग्रहकी राशिके नवांशमे गया हुआ चन्द्रमा १।४।५। ७।९।१० स्थानोमे स्थित हो और शुक्र उसको देखता हो तो सर्वारिष्ट नाश होता है ।

१४—बलवान शुभग्रह १।४।७।१० स्थानोमे स्थित हो और ग्यारहवें भावमे सूर्य हो तो सर्वारिष्ट नाश होता है ।

१५—लग्नेश बलवान हो और शुभग्रह उसे देखते हो तो अरिष्टनाश होता है ।

१६—मंगल, राहु और शनि ३।६।११ स्थानोमे हों तो अरिष्ट-नाशक होते है ।

१७—बृहस्पति १।४।७।१० स्थानोंमें हो या अपनी राशि ९।१२ में हो अथवा उच्चराशिमे हो तो सर्वारिष्ट नाशक होता है ।

१८—सभी ग्रह १।३।५।७।९।११ राशियोमें स्थित हो तो अरिष्ट नाशक होते हैं ।

१९—सभी ग्रह मित्रग्रहोकी राशियोमे स्थित हो तो अरिष्टनाश होता है ।

२०—सभी ग्रह शुभ ग्रहोके वर्गमे या शुभ ग्रहोके नवाशमे स्थित हो तो अरिष्ट नाशक होते है ।

जारज योग

१—१।४।७।१० स्थानोमे कोई भी ग्रह नही हो, सभी ग्रह २।६।८।१२ स्थानोमे स्थित हो, केन्द्रके स्वामीका तृतीयेशके साथ योग हो; छटवे या आठवे स्थानका स्वामी चन्द्र-मगलके युक्त होकर चतुर्थ स्थानमे स्थित हो; छटवे और नौवे स्थानके स्वामी पापग्रहोसे युक्त हो; द्वितीयेश, तृतीयेश, पचमेश और षष्ठेश लग्नमे स्थित हो, लग्नमे पाप ग्रह, सातवेमे शुभग्रह और दसवें भावमें शनि हो; लग्नमे चन्द्रमा, पञ्चम स्थानमे शुक्र और तीसरे स्थानमें भौम हो; लग्नमे सूर्य, चतुर्थमे राहु हो; लग्नमे राहु, मंगल और सप्तम स्थानमे सूर्य, चन्द्रमा स्थित हो; सूर्य, चन्द्र दोनो एक राशिमे स्थित हो और उनको गुरु नही देखता हो एव सप्तमेश धन स्थानमे पापग्रहसे युक्त और भौमसे दृष्ट हो तो जातक जारज होता है ।

बधिर योग

१—शनिसे चतुर्थ स्थानमे बुध हो और षष्ठेश ६।८।१२वें भावमें स्थित हो ।

२—पूर्ण चन्द्र और शुक्र ये दोनों शत्रुग्रहसे युक्त हों ।

३—रात्रिका जन्म हो, लग्नसे छटवे स्थानमे बुध और दसवे स्थानमे शुक्र हो ।

४—बारहवें भावमे बुध, शुक्र दोनों हों ।

५—३।५।९।११ भावोमे पापग्रह हो और शुभग्रहोंकी दृष्टि इन पर नही हो ।

६—षष्ठेश ६।१२वे स्थानमे हो और शनिकी दृष्टि न हो ।

मूक योग

१—कर्क, वृश्चिक और मीन राशिमे गये हुए बुधको अमावस्याका चन्द्रमा देखता हो।

२—बुध और षष्ठेश दोनो एक साथ स्थित हो।

३—गुरु और षष्ठेश लग्नमे स्थित हो।

४—वृश्चिक और मीन राशिमे पाप ग्रह स्थित हों एवं किसी भी राशिके अन्तिम अंशोमे वा वृष राशिमे चन्द्र स्थित हो और पाप ग्रहोसे दृष्ट हो तो जीवन भरके लिये मूक तथा शुभ ग्रहोसे दृष्ट हो तो पाँच वर्षके उपरान्त बालक बोलता है।

५—क्रूर ग्रह सन्धिमे गये हों, चन्द्रमा पापग्रहोसे युक्त हो तो भी गूंगा होता है।

६—शुक्लपक्षका जन्म हो और चन्द्रमा, मंगलका योग लग्नमें हो।

७—कर्क, वृश्चिक और मीन राशिमे गया हुआ बुध, चन्द्रसे दृष्ट हो, चौथे स्थानमें सूर्य हो और छटवें स्थानको पापग्रह देखते हो।

८—द्वितीय स्थानमें पापग्रह हो और द्वितीयेश नीच या अस्तंगत होकर पाप ग्रहोंसे दृष्ट हो एवं रवि, बुधका योग सिंह राशिमे किसी भी स्थानमें हो।

९—सिंह राशिमें रवि, बुध दोनों एक साथ स्थित हों तो जातक मूक होता है।

नेत्ररोगी योग

१—वक्रगतिस्थ ग्रहकी राशिमे छटवे स्थानका स्वामी हो तो नेत्र रोगी होता है।

२—लग्नेश ३।६।१।८ राशियोमे हो और बुध, मंगल देखते हों। लग्नेश तथा अष्टमेश छटवें स्थानमे हो तो बायें नेत्रमें रोग होता है।

३—छटवें और आठवें स्थानमें शुक्र हो तो दक्षिण नेत्रमें रोग होता है।

४—धनेश शुभ ग्रहसे दृष्ट हो एवं लग्नेश पापग्रहसे युक्त हो तो सरोग नेत्र होते हैं।

५—दूसरे और बारहवें स्थानके स्वामी शनि, मंगल और गुलिकसे युक्त हों तो नेत्रमें रोग होता है।

६—नेत्र स्थान २।१२ के स्वामी तथा नवांशका स्वामी पापग्रहकी राशिके हो तो नेत्ररोगसे पीड़ित होता है।

७—लग्न तथा आठवें स्थानमें शुक्र हो और उसपर क्रूर ग्रहकी दृष्टि हो तो नेत्ररोगसे पीड़ित होता है।

८—शयनावस्थामें गया हुआ मंगल लग्नमे हो तो नेत्रमे पीडा होती है।

९—शुक्रसे ६।८।१२वें स्थानमें नेत्र स्थानका स्वामी हो तो नेत्ररोगी होता है।

१०—पापग्रहसे दृष्ट सूर्य ५।९ में हो तो निस्तेज नेत्र होते हैं।

११—चन्द्रसे युक्त शुक्र ६।८।१२वें स्थानमे स्थित हो तो निशान्ध—रतौधी रोग से पीड़ित होता है।

१२—नेत्र स्थान (२।१२) के स्वामी शुक्र, चन्द्रसे युक्त हों लग्नमें स्थित हों तो निशान्ध योग होता है।

१३—मगल या चन्द्रमा लग्नम हो और शुक्र, गुरु उसे देखते हों या इन दोनोंमें कोई एक ग्रह देखता हो तो जातक काणा होता है।

१४—सिह राशिका चन्द्रमा सातवें स्थानमें मंगलसे दृष्ट हो या कर्क राशिका रवि सातवें स्थानमें मंगलसे दृष्ट हो तो जातक काणा होता है।

१५—चन्द्र और शुक्रका योग सातवें या बारहवें स्थानमें हो तो बायीं आंखका काणा होता है।

१६--- बारहवें भावमें मंगल हो तो वामनेत्रमें एवं दूसरे स्थानमें शनि हो तो दक्षिणनेत्रमें चोट लगती है ।

१७--लग्नेश और धनेश ६।८।१२वें भावमे हों और चन्द्र, सूर्य सिंह राशिके लग्नमें स्थित हों तथा शनि इनको देखता हो तो नेत्र ज्योति हीन होते हैं ।

१८--लग्नेश सूर्य, शुक्रसे युत होकर ६।८।१२वे स्थानमें गया हो, नेत्र स्थान (२।१२)के स्वामी और लग्नेश ये दोनो सूर्य, शुक्रसे युत होकर ६।८।१२वे स्थानमे हो तो जन्मान्ध जातक होता है ।

१९--चन्द्र-मंगलका योग ६।८।१२वें स्थानमे हो तो गिरनेसे जातक अन्धा होता है । गुरु और चन्द्रमाका योग ६।८।१२वे भावमें हो तो ३० वर्षकी आयुके पश्चात् अन्धा होता है ।

२०--चन्द्र और सूर्य दोनो तीसरे स्थानमे अथवा १।४।७।१०वें स्थानमे हों या पाप ग्रहकी राशिमे गया हुआ मंगल १।४।७।१०वे स्थानमे हो तो रोगसे अन्धा होता है ।

२१--मकर या कुम्भका सूर्य ७वे स्थानमें हो या शुभ ग्रह ६।८।१२वें स्थान गये हों और उनको क्रूरग्रह देखते हो तो जातक अन्धा होता है ।

२२--शुक्र और लग्नेश ये दोनो दूसरे और बारहवे स्थानके स्वामीसे युक्त हों और ६।८।१२वें स्थानमें स्थित हों तो जातक अन्धा होता है ।

२३--चौथे, पाँचवेमें पापग्रह हो या पापग्रहसे दृष्ट चन्द्रमा ६।८।१२वें स्थानमे हो तो जातक २५ वर्षकी आयुके बाद काणा होता है ।

२४--चन्द्र और सूर्य दोनों शुभ ग्रहोंसे अदृष्ट होते हुए बारहवें स्थानमें स्थित हों या सिंह राशिका शनि या शुक्र लग्नमें हो तो जातक मध्यावस्थामें अन्धा होता है ।

२५--शनि, चन्द्र, सूर्य ये तीनों ग्रह क्रमशः १२।२।८ में स्थित हों तो नेत्रहीन तथा छटवे स्थानमे चन्द्र, आठवेमें रवि और मंगल बारहवेंमें हो तो वात और कफ रोगसे जातक अन्धा होता है ।

सुख विचार--लग्नेश निर्बल होकर ६।८।१२वें भावमें हो तो सुखकी कमी तथा ६।८।१२ वे भावोंके स्वामी कमजोर होकर लग्नमें बैठे हों तो सुखकी कमी समझना चाहिये। षष्ठेश और व्ययेश अपनी राशिमें हो तो भी जातकको सुखका अभाव या अल्पसुख होता है। लग्नेश-के निर्बल होनेसे शारीरिक सुखोंका अभाव रहता है। लग्नमें क्रूर ग्रह शनि और मंगलके रहनेसे शरीर रोगी रहता है।

साहस विचार--लग्नेश बलवान् हो या ३।६।११वें भावोंमें क्रूर ग्रहोंकी राशिया हों तो जातक साहसी अन्यथा साहसहीन होता है।

नौकरी योग--व्ययेश १।२।४।५।९।१० भावोंमेंसे किसी भी भावमें हो तो नौकरी योग होता है। इस योगके होनेपर ३।६।११ भावोंमें सौम्य ग्रह--बलवान् चन्द्रमा, बुध, गुरु, शुक्र, केतु हो या इन ग्रहोंकी राशियाँ हों तो दीवानी महकमेकी नौकरीका योग होता है। ३।६।११ भावोंमें क्रूर ग्रहोंकी राशियाँ हो और इन भावोंमेंसे किसी भी भावमें स्वगृही ग्रह हो तो पुलिस अफसरका योग होता है। ३।६।११ भावोंमेंसे किन्हीं भी दो भावोंमें क्रूर ग्रहोंकी राशियाँ हों और शेष स्थानोंमें सौम्य ग्रहोंकी राशियाँ हों, तथा इन स्थानोंमें भी कोई ग्रह स्वगृही हो और लग्नेश बलवान् हो तो जज या न्यायाधीशका योग होता है। ३।६।११ भावोंमें क्रूर ग्रहोंकी राशियाँ हों और इन भावोंमें कोई ग्रह उच्चका हो तो मजिस्ट्रेट होनेका योग होता है।

द्वादश भावोंमें लग्नेशका फल

लग्नेश--लग्नमें हो तो जातक निरोगी, दीर्घायु, बलवान्, जमीन्दार, कृषक और परिश्रमी; द्वितीयमें हो तो धनवान्, लब्धप्रतिष्ठ, दीर्घजीवी, स्थूल, सत्कर्मनिरत, नायक, नेता और कृतज्ञ; तृतीयमें हो तो सद्बन्धु-युत, उत्तम मित्रवान्, धार्मिक, दानी, शूर, बलवान्, समाजमें आदर पाने-वाला और साहसी; चौथे भावमें हो तो राजप्रिय, दीर्घजीवी, माता-पिता-

की भक्ति करनेवाला अल्पभोजी, पितासे धन पानेवाला, पुरुषार्थी और कार्यरत; पाँचवे भावमे हो तो सुन्द पुत्रवाला, त्यागी, लब्धप्रतिष्ठ, धनिक, विनीत, विद्वान्, दीर्घायु और कर्त्तव्यनिष्ठ; छटवे भावमे हो तो बलवान्, कृपण, धनवान्, शत्रुनाशक, निरोगी और सत्कार्यरत; सातवे भावमे हो तो तेजस्वी, शीलवान्, सुशीला, गुणवती एवं सुन्दरी भार्याका पति और भाग्यवान्; आठवे भावमे हो तो कृपण, धन-सग्रह-कर्त्ता, दीर्घजीवी; लग्नेश यदि क्रूर ग्रह हो तो कटुवक्ता, क्षीणशरीरी तथा सौम्य ग्रह हो तो पुष्ट देहवाला और निरोगी; नौवे भावमें हो तो पुण्यवान्, पराक्रमी, तेजस्वी, स्वाभिमानी, सुशील, विनीत, धार्मिक, व्रती और लब्ध प्रतिष्ठ; दसवे भावमे हो तो विद्वान्, सुशील, गुरुजन सेवामे रत, राज्यसे लाभ प्राप्त करनेवाला और समाज प्रसिद्ध, ग्यारहवे भावमें हो तो श्रेष्ठ आजीविकावाला, सुखी, प्रसिद्ध, तेजस्वी, बली, परिश्रमी और स धारण धनी एव बारहवे भावमे हो तो कठोर प्रकृति, व्यर्थ बकवाद करनेवाला, प्रसन्नचित्त, धोखेबाज, प्रवासी, रोगी और अविश्वासी होता है।

द्वितीयभाव विचार

इस भावका विचार करनेके लिये द्वितीयेश, द्वितीय भावकी राशि और इस स्थान पर दृष्टि रखनेवाले ग्रहोके सम्बन्धसे करना चाहिए। द्वितीयेश शुभग्रह हो या द्वितीयभावमें शुभग्रहकी राशि और उसमे शुभ ग्रह बैठा हो तथा शुभ ग्रहोंकी द्वितीय भाव पर दृष्टि हो तो व्यक्ति धनी होता है। नीचे कुछ धनी योग दिये जाते है—

१—भाग्येश और लाभेशका योग, २—भाग्येश और देशमेशका योग,
३—भाग्येश और चतुर्थेशका योग, ४—भाग्येश और पञ्चमेशका योग,
५—भाग्येश और लग्नेशका योग, ६—भाग्येश और धनेशका योग,
७—दशमेश और लाभेशका योग, ८—दशमेश और चतुर्थेशका योग

९—दशमेश और लग्नशका योग, १०—दशमेश और पंचमेशका योग,
११—दशमेश और द्वितीयेशका योग, १२—लाभश और धनेशका योग,
१३—लाभेश और चतुर्थेशका योग, १४—लाभश और लग्नेशका योग,
१५—लाभेश और पचमेशका योग, १६—लग्नश और धनेशका योग,
१७—लग्नेश और चतुर्थेशका योग, १८—लग्नेश और पंचमेशका योग,
१९—धनेश और चतुर्थेशका योग, २०—धनेश और पंचमेशका योग,
२१—चतुर्थेश और पंचमेशका योग

उपर्युक्त २१ योगवाले ग्रह २।४।५।७ भावोमे हो तो पूर्ण फल, ८।१२ भावोंमे हों तो आधा फल और छटवें भावमें हो तो चतुर्थांश फल देते हैं, अन्य स्थानोंमें निष्फल बताये गये है।

दारिद्र योग[1]

१—षष्ठचेश और धनशका योग, २—षष्ठचेश और लग्नेशका योग,
३—षष्ठचेश और चतुर्थेशका योग, ४—व्ययेश और चतुर्थेशका योग,
५—व्ययेश और धनेशका योग, ६—व्ययेश और लग्नेशका योग,
७—षष्ठचेश और दशमेशका योग, ८—व्ययेश और दशमेशका योग,
९—षष्ठचेश और पञ्चमेशका योग, १०—षष्ठचेश और सप्तमेशका योग,
११—व्ययेश और पञ्चमेशका योग, १२—व्ययेश और सप्तमेशका योग,
१३—षष्ठचेश और भाग्येशका योग, १४—व्ययेश और भाग्येशका योग
१५—षष्ठचेश और तृतीयेशका योग, १६—व्ययेश और तृतीयेशका योग,
१७—षष्ठचेश और लाभेशका योग, १८—व्ययेश और लाभेशका योग,
१९—षष्ठचेश और अष्टमेशका योग, २०—व्ययेश और अष्टमेशका योग,
२१—षष्ठचेश और व्ययेशका योग

ये दारिद्रयोग धनस्थानमें हो तो पूर्ण फल, व्ययस्थानमें हों तो पादोन फल $\frac{3}{4}$ और अन्य स्थानोंमे हों तो अर्द्ध फल देते है।

---

[1]देखें—जातकतत्त्व और जातकपारिजात

उपर्युक्त धनी और दरिद्र योगोंका विचार करनेसे जितने जो जो योग आवें उन्हें पृथक् लिख लेना चाहिये। यदि धनी योग कुण्डलीमें अधिक हो और दारिद्र योग कम हो तो जातक धनवान और दारिद्र योग अधिक तथा धनी योग कम हो तो जातक दरिद्री या अल्प धनी होता है। इन योगोंमें रहस्यपूर्ण बात यह है कि बलवान् धनी योग कम हो और निर्बल दारिद्र योग अधिक हो तो जातक धनी एवं दारिद्र योग बलवान हो और उनकी अपेक्षा निर्बल धनी योग अधिक हो तो जातक धनी होते हुए भी कुछ समयके लिये दरिद्री जैसा जीवन यापन करता है। धनी और निर्धनी-का विचार करते समय देश, काल तथा जातिका विचार अवश्य कर लेना चाहिए। यदि किसी धनी घरानेमें पैदा हुए जातककी कुण्डलीमें धनी योग हो तो जातक लक्षाधीश या योगके बलाबलानुसार कोट्याधीश होता है। यदि वही योग किसी साधारण घरके जन्मे व्यक्तिकी कुण्डलीमें हो तो वह अपनी स्थितिके अनुसार धनी होता है।

जिसकी जन्मकुण्डलीमें दो बलवान् धनी योग हो वह सहस्राधिपति, तीन हो वह लक्षाधिपति, चार या पाँच हो वह कोट्याधिपति होता है। इससे अधिक धनीयोग होनेपर जातक विपुल सम्पत्तिका स्वामी होता है।

धनी योगोंसे एक दरिद्री योग अधिक हो तो अल्पधनी, दो अधिक हों तो दरिद्री और तीन अधिक हो तो भिक्षुक या तत्सदृश होता है।

धनी योगोंके अभावमें एक दरिद्री योग हो तो जातक दरिद्री, दो हो तो जीवन भर धनके कष्टसे पीड़ित और तीन हो तो भिक्षुक होता है।

दारिद्र योगोंके अभावमें एक धनी योग होने पर जातक खाता-पीता सुखी, दो धनी योगोंके होने पर आश्रयदाता, लक्षाधीश एवं तीन या इससे अधिक योगोंके होने पर जातक बहुत बड़ा धनी होता है। परन्तु योगोंके बलाबलका विचार कर लेना नितान्त आवश्यक है।

१—राहु लग्न, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम, षष्ठ, अष्टम, नवम, एकादश और द्वादश भावोंमेंसे किसी भावमें स्थित हो एवं मेष, वृष,

मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, वृश्चिक, और मीन इन राशियोंमेंसे किसी भी राशिमें स्थित हो तो जातक धनी होता है।

२—चन्द्र और गुरु एक साथ किसी भी स्थानमें बैठे हों तो जातक धनी होता है। सूर्य, बुध एक साथ सप्तम भावके अलावा अन्य स्थानोंमें हों तो जातक बडा व्यापारी होता है।

३—कारक ग्रहोंकी दशामें जन्म हुआ हो तो जातक जन्मसे धनी अन्यथा निर्धन होता है। जब कारक ग्रहकी दशा आती है, उस समय जातक अवश्य धनी होता है।

१—अष्टमेश ४।५।९।१० स्थानोंमें हो और लग्नेश निर्बल हो तो जातक दिवालिया होता है। योग कारक ग्रहके ऊपर राहु एवं रविकी दृष्टि पड़नेसे योग अधूरा रह जाता है।

२—लाभेश व्ययमें हो या भाग्येश और दशमेश व्ययमें हो तो दिवालिया होता है। यदि पञ्चममें शनि तुलाराशिका हो तो भी यह योग बनता है।

३—द्वितीयेश ९।१०।११ भावोंमें हो तो दिवालिया योग होता है, परन्तु द्वितीयेश गुरुके दशम और मंगलके एकादश भावमें रहनेसे यह योग खण्डित हो जाता है।

४—लग्नेश वक्री होकर ६।८।१२ वें भावमें स्थित हो तो भी जातक दिवालिया होता है।

जमीन्दारी योग—

१—चतुर्थेश दशममें और दशमेश चतुर्थमें हो।

२—चतुर्थेश २ या ११वें भावमें हो। चतुर्थस्थानकी राशि चर हो और उसका स्वामी भी चर राशिमें हो।

३—पञ्चमेश, लग्नेश, तृतीयेश, चतुर्थेश, षष्ठेश, सप्तमेश, नवमेश

और द्वादशेशके साथ हो तो जमीन्दारीके साथ व्यापार भी जातक करता है।

४—चतुर्थेश, दशमेश और चन्द्रमा बलवान् हो और ये ग्रह परस्परमें मित्र हो तो जातक जमीन्दार होता है।

ससुरालसे धन प्राप्तिके योग

१—सप्तमेश और द्वितीयेश एक साथ हो और उन पर शुक्रकी पूर्ण दृष्टि हो।

२—चतुर्थेश सप्तमस्थ हो और शुक्र चतुर्थस्थ हो तथा इन दोनोंमें मित्रता हो।

३—सप्तमेश और नवमेश आपसमें सम्बद्ध हो तथा शुक्रके साथ हो।

४—बलवान धनेश, सप्तमेश शुक्रसे युत हों।

अकस्मात् धन प्राप्तिके साधनोंका विचार पंचम भावसे किया जाता है। यदि पंचम स्थानमें चन्द्रमा बैठा हो और शुक्रकी उस पर दृष्टि हो तो लॉटरीसे धन मिलता है। यदि द्वितीयेश और चतुर्थेश शुभ ग्रहकी राशिमें शुभ ग्रहोंसे युत या दृष्ट होकर बैठे हो तो भूमिमें गड़ी हुई सम्पत्ति मिलती है। एकादशेश और द्वितीयेश चतुर्थ स्थानमें हो और चतुर्थेश शुभ ग्रहकी राशिमें शुभ ग्रहसे युत या दृष्ट हों तो जातकको अकस्मात् धन मिलता है। यदि लग्नेश द्वितीय स्थानमें और द्वितीयेश ग्यारहवें स्थानमें हो तथा एकादशेश लग्नमें हो तो इस योगके होनेसे जातकको भूगर्भसे सम्पत्ति मिलती है। लग्नेश शुभ ग्रह हो और धन स्थानमें स्थित हो या धनेश आठवें स्थानमें स्थित हो तो गडा हुआ धन मिलता है।

धनेशका द्वादश भावोंमें फल

धनेश लग्नमें हो तो कृपण, व्यवसायी, कुकर्मरत, धनिक, विख्यात, सुखी, अतुलित ऐश्वर्यवान् और लब्धप्रतिष्ठ; द्वितीय भावमें हो तो

धनवान्, धर्मात्मा, लोभी, चतुर, धनार्जन करनेवाला, व्यापारी, यशस्वी और दानी; तृतीय भावमें हो तो व्यापारी, कलह कर्त्ता, कलाहीन, चोर, चञ्चल, अविनयी और ठग; चौथे भावमें हो तो पितासे लाभ करनेवाला, सत्यवादी, दयालु, दीर्घायु, मकानवाला, व्यापारमें लाभ करनेवाला और परिश्रमी; पाँचवें भावमें हो तो पुत्र द्वारा धनार्जन करनेवाला, सत्कार्यनिरत, प्रसिद्ध, कृपण और अन्तिम जीवनमें दुःखी, छठवें भावमें हो तो धन-संग्रहमें तत्पर, शत्रुहन्ता, भू-लाभान्वित, कृषक, प्रसिद्ध और सेवा कार्यरत; सातवें भावमें हो तो भोगविलासवती-धनसंग्रह करने-वाली श्रेष्ठ रमणीका भर्ता, भाग्यवान्, स्त्री-प्रेमी और चपल; आठवें भावमें हो तो पाखण्डी, आत्मघाती, अत्यन्त भाग्यशाली, परोपकारी, भाग्यपर विश्वास करनेवाला और आलसी; नौवें भावमें हो तो दानी, प्रसिद्ध पुरुष, धर्मात्मा, मान और विद्वान्; दसवें भावमें हो तो राजमान्य, धन लाभ करने वाला, भाग्यशाली, देशमान्य और श्रेष्ठ आचार वाला; ग्यारहवें भावमें हो तो प्रसिद्ध व्यापारी, परम धनिक, प्रख्यात, विजयी, ऐश्वर्यवान् और भाग्यशाली एवं बारहवें भावमें हो तो जातक निन्द्य ग्रामवासी, कृपक, अल्पधनी, प्रवासी और निन्द्य साधनों द्वारा आजीविका करने वाला होता है। उपर्युक्त भावोंमें जो धनेशका फल कहा गया है, वह शुभ ग्रहका है। यदि धनेश क्रूर ग्रह हो या पापी हो तो विपरीत फल समझना चाहिए। किन्तु क्रूर धनेश ३।६।११वें भावोंमें स्थित हो तो जातक श्रेष्ठ होता है।

व्यापारका विचार करनेके लिये सप्तम भावसे सहायता लेनी चाहिए। वाणिज्यका कारक बुध है, अतएव बुध, सप्तम भाव और द्वितीय इन तीनों की स्थिति एवं बलाबलानुसार व्यापारके सम्बन्धमें फल समझना चाहिए। यदि बुध सप्तममें हो और सप्तमेश द्वितीय स्थानमें हो या द्वितीयेश बुधके साथ सप्तम भावमें हो तो जातक प्रसिद्ध व्यापारी होता है। बुध और शुक्र इन दोनोंका योग द्वितीय या सप्तममें हो तथा इन ग्रहों पर शुभ ग्रहोंकी

दृष्टि हो तो भी जातक व्यापारी होता है। यदि द्वितीयेश शुभग्रहोकी राशिमे स्थित हो तथा बुध या सप्तमेशसे दृष्ट हो तो जातक व्यापारी होता है। जिसकी जन्मकुण्डलीमें उच्चका बुध सप्तममे बैठा हो तथा द्वितीय भवनपर द्वितीयेशकी दृष्टि हो अथवा गुरु पूर्ण दृष्टिसे द्वितीयेशको देखता हो तो जातक प्रसिद्ध व्यापारी होता है।

तृतीय भाव विचार

तृतीय भावसे प्रधानतः भाई और बहनोंका विचार किया जाता है, लेकिन ग्यारहवे भावसे बड़े भाई और बड़ी बहनका एवं तृतीय भावसे छोटे भाई और छोटी बहनका विचार होता है। मगल भ्रातृकारक ग्रह है। भ्रातृ सुखके लिये निम्न योगोका विचार कर लेना आवश्यक है। (क) तृतीय स्थानमे शुभ ग्रह रहनेसे, (ख) तृतीय भावपर शुभग्रहकी दृष्टि होनेसे, (ग) तृतीयेशके बली होनेसे, (घ) तृतीय भावके दोनो ओर द्वितीय और चतुर्थमे शुभ ग्रहोके रहनेसे, (ङ) तृतीयेशपर शुभ ग्रहोकी दृष्टि रहनेसे, (च) तृतीयेशके उच्च होनेसे और (छ) तृतीयेशके साथ शुभ ग्रहोके रहनेसे भाई-बहनका सुख होता है।

तृतीयेश या मगलके युग्म—समसञ्यक वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीनमे रहनेसे कई भाई-बहनोका सुख होता है। यदि तृतीयेश और मगल १२वें स्थानमे हो, उनपर पापग्रहोकी दृष्टि हो अथवा मगल तृतीय स्थानमे हो और उस पर पापग्रहकी दृष्टि हो या पापग्रह तृतीयमे हो तथा उसपर पापग्रहकी दृष्टि हो या तृतीयेशके आगे पीछे पापग्रह हो या द्वितीय और चतुर्थमे पापग्रह हो तो भाई-बहनकी मृत्यु होती है। तृतीयेश या मगल ३।६।१२वे भावमे हो और शुभग्रहसे दृष्ट नही हो तो भाईका सुख नही होता है। तृतीयेश राहु या केतुके साथ ६।८।१२वें भावमे हो तो भ्रातृ सुखका अभाव होता है।

ग्यारहवें स्थानका स्वामी पापग्रह हो या उस भावमे पापग्रह बैठे

हो और शुभ ग्रहसे दृष्ट न हों तो बड़े भाईका सुख नहीं होता है। तृतीय स्थानमें पापग्रहका रहना अच्छा है, पर भ्रातृ सुखके लिये उत्तम नहीं है।

भ्रातृ संख्या

१—द्वितीय तथा तृतीय स्थानमें जितने ग्रह रहें उतने अनुज और एकादश तथा द्वादश स्थानमें जितने ग्रह हों उतने ज्येष्ठ भ्राता होते हैं। यदि इन स्थानोंमें ग्रह नहीं हों तो, इन स्थानोंपर जितने ग्रहोंकी दृष्टि हो उतने अग्रज और अनुजोंका अनुमान करना। परन्तु स्वक्षेत्री ग्रहोंके रहनेसे अथवा उन भावों पर अपने स्वामीकी दृष्टि पड़नेसे भ्रातृ संख्यामें वृद्धि होती है।

२—भ्रातृ संख्या जाननेकी विधि यह भी है कि जितने ग्रह तृतीयेशके साथ हों, मंगलके साथ हों, तृतीयेश पर दृष्टि रखनेवाले हों और तृतीयस्थ हों उतनी ही भ्रातृ संख्या होती है। यदि उपर्युक्त ग्रह शत्रुगृही, नीच और अस्तगत हों तो भाई अल्पायुके होते हैं। यदि ये ग्रह मित्रगृही, उच्च या मूल त्रिकोणके हों तो दीर्घायुके होते हैं। अभिप्राय यह है कि भाईके सम्बन्धमें (१) तृतीय स्थानसे, (२) तृतीयेशसे, (३) मंगलसे, (४) तृतीयसे सम्बन्ध ग्रहसे, (५) तृतीयस्थके नवांश पतिसे, (६) मंगलके सम्बन्धी ग्रहों से (७)तृतीयेशके साथ योग करनेवाले ग्रहोंसे (८) एकादशेशसे (९) एकादशस्थ ग्रहसे तथा उसकी स्थिति पर से (१०) एकादश स्थानके नवांशसे तथा उस नवांशके स्वामीकी स्थिति पर से (११) एकादशेशकी स्थिति तथा उसके सम्बन्ध आदि पर से एवं (१२)एकादश और मंगलके सम्बन्ध तथा दृष्टिपरसे विचार करना चाहिए।

यदि लग्नेश और तृतीयेश परस्पर मित्र हों तो भाई-बहनोंका परस्पर प्रेम रहता है तथा लग्नेश और तृतीयेश शुभभावगत हों तो भी भाइयोंमें परस्पर प्रेम रहता है।

अन्य विशेष योग–

१––लग्न और लग्नेशसे ३।११ स्थानोंमें बुध, चन्द्र, मंगल और गुरु स्थित हो तो अधिक भाई तथा केतु स्थित हो तो बहनें अधिक होती हैं।

२––तृतीयेश शुभ ग्रहसे युत १।४।७।१० स्थानोंमें हो तो भाइयोंका सुख होता है।

३––तृतीयेश जितनी सम्यक राशिके नवांशमें गया हो उतनी भाई-बहनोंकी संख्या होती है।

४––नवम भावमें जितने स्त्री ग्रह हों उतनी बहनें और जितने पुरुष ग्रह हों उतने भाई होते हैं।

५––तृतीय भावमें गये हुए ग्रहके नवांशकी संख्या जितनी हो उतने भाई-बहन जानने चाहिए।

६––तृतीयेश और मंगल ६।८।१२ स्थानोंमें हो तो भ्रातृहीन समझना चाहिए।

७––तृतीय भावमें पापग्रह हो अथवा पापग्रहसे दृष्ट हो तो भ्रातृ हानि करनेवाला योग होता है।

८––भ्रातृकारक ग्रह पापग्रहोंके बीचमें हो या तीसरे भाव पर पापग्रहोंकी पूर्ण दृष्टि हो तो भाईका अभाव सूचक योग होता है।

आजीविका विचार

तृतीय स्थानसे आजीविकाका भी विचार किया जाता है। किसी-किसीका मत है कि लग्न, चन्द्रमा और सूर्य इन तीनों ग्रहोंमें से जो अधिक बलवान हो, उससे दसवें स्थानके नवांशाधिपतिके स्वरूप, गुण, धर्मानुसार आजीविका ज्ञात करनी चाहिए।

विचार करनेपर दसवें स्थानका नवांशाधिपति सूर्य हो तो डाक्टरी, वैद्यकसे या दवाओंके व्यापारसे, एवं सोना, मोती, ऊनी वस्त्र, घी, गुड़,

चीनी आदि वस्तुओंके व्यापारसे जातक आजीविका करता है। ज्योतिषमें एक मत यह भी है कि घास, लकडी और अनाजका व्यापारी भी उपर्युक्त योगसे जातक होता है। मुकद्दमा लडनेमे इसकी अभिरुचि अधिक रहती है।

चन्द्र हो तो शख, मोती, प्रवाल आदि पदार्थो के व्यापारसे, मिट्टीके खिलौने, सीमेन्ट, चूना बालू, ईट आदिके व्यापारसे; खेती शराबकी दुकान, तैलकी दुकान एव वस्त्रकी दुकानसे आजीविका करता है।

मगल हो तो मेनसिल, हरताल, सुरमा प्रभृति पदार्थोंके व्यापारसे, बन्दूक, तोप, तलवारके व्यापारसे या सैनिक वृत्तिसे, सुनार, लुहार, बढई, खटीक आदिके पेशे द्वारा एव बिजलीके कारखानेमे नौकरी करके अथवा मशीनरीके कार्य द्वारा जातक आजीविका उत्पन्न करता है।

बुध हो तो क्लर्क, लेखक, कवि, चित्रकार, जिल्दसाज, शिक्षक, ज्योतिषी, पुस्तक विक्रेता, यन्त्रनिर्माणकर्त्ता, सम्पादक, सशोधक, अनुवादक, और वकीलके पेशे द्वारा आजीविका जातक करता है। मतान्तरसेसाबुन अगरबत्ती, पुष्पमालाएँ, कागजके खिलौने आदिके बनानेके कार्यो द्वारा जातक आजीविका अर्जन करता है।

गुरु हो तो शिक्षक, अनुष्ठान करनेवाला, धर्मोपदेशक, प्रोफेसर, न्यायाधीश, वकील, बैरिस्टर, और मुख्तार आदिके पेशे द्वारा जातक आजीविका करता है। लवण, सुवर्ण एवं खनिज पदार्थोंका व्यापारी भी हो सकता है। किसी-किसीका मत है कि हाथी, घोटोका व्यापार भी यह जातक करता है।

शुक्र हो तो चाँदी, लोहा, सोना, गाय, भैस, हाथी, घोड़ा, दूध, दही, गुड, आलंकारिक वस्तुएँ, सुगन्धित चीजें एवं हीरा, माणिक्य आदि मणियोके व्यापारसे जातक जीविका करता है। मतान्तरसे सिनेमा, नाटक, आदिमें पार्ट खेलने, और शराबके व्यापारसे भी आजीविका जातक करता है।

शनि हो तो चपरासी, पोस्टमैन, हलकारा तथा जिनको रास्तेमे चलना फिरना पडे वैसा काम करनेवाला; चोरी, हिसा, नौकरी आदि द्वारा पेशा करनेवाला; प्रेस, खेती, बागवानी, मन्दिरमे नौकरी और दूतका कार्य करना प्रभृति कामोसे आजीविका करनेवाला जातक होता है। कुछ लोग दशम स्थानकी राशिके स्वभावानुसार आजीविका निर्णय करते है

तृतीयेशका द्वादश भावोंमें फल

लग्न स्थानमे तृतीयेश हो तो जातक वावदूक, लम्पट, सेवक, क्रूर-प्रकृति, स्वजनोसे द्वेष करनेवाला, अल्पधनी, भाइयोसे अन्तिम अवस्थामे शत्रुता करनेवाला और झगडालू प्रकृतिका, द्वितीय भावमे हो तो भिक्षुक धनहीन, अल्पायु, वन्धुविरोधी तथा द्वितीयेश शुभ ग्रह हो तो बलवान्, भाग्यवान्, देशमान्य और कुलमे प्रसिद्ध, तृतीयभावमे हो तो सज्जनोसे मित्रता करनेवाला, धार्मिक, राज्यसे लाभान्वित होनेवाला तथा शुभ ग्रह तृतीयेश हो तो बन्धु-बान्धवोसे सुखी, बलवान्, मान्य और क्रूर ग्रह हो तो भाइयोको कष्ट दायक, सेवक, चतुर्थ भावमे हो तो काकाको सुख देनेवाला, माता पिताके साथ विरोध करनेवाला, अकीर्त्तिवान्, लालची और धननाश करनेवाला, पाँचवे भावमे हो तो परोपकारी, दीर्घायु, सुपुत्रवान्, भाइयोके सुखसे समन्वित, बुद्धिमान्, मित्रोको सहायता देनेवाला और जातिमे प्रमुख; छटवे स्थान मे हो तो बन्धु-विरोधी, नेत्र-रोगी, जमीन्दार, भाइयोको सुखदायक और मान्य, सातवें भावमें तृतीयेश शुभ ग्रह हो तो अति रूपवती, सौभाग्यवती स्त्रीका पति, स्त्रीसे सुखी, विलासी और भाग्यवान् तथा पापग्रह तृतीयेश हो तो व्यभिचारिणी स्त्रीका पति और नीच कर्मरत; आठवे भावमे क्रूर ग्रह तृतीयेश हो तो भाइयोको कष्ट, मित्रोकी हानि, वान्धवोसे विरोध तथा शुभ ग्रह तृतीयेश हो तो भाइयोसे सामान्य सुख, मित्रोसे प्रेम करने

वाला और जातिमे प्रतिष्ठा पानेवाला; नौवें भावमें क्रूर ग्रह तृतीयेश हो तो बन्धुजित, मित्रोंका द्वेषी, भाइयों द्वारा अपमानित और साधारण जीवन व्यतीत करनेवाला तथा शुभ ग्रह हो तो पुण्यात्मा, भाइयोंसे सम्मानित, और मित्रोंमे मान्य, दसवें भावमें हो तो राजमान्य, भाग्यशाली, उत्तम बन्धु-बान्धवोंसे सहित और यशस्वी, ग्यारहवे भावमें हो तो श्रेष्ठ बन्धुवाला, राजप्रिय, सुखी, धनी और उद्योगशील एव बारहवे भावमे हो तो मित्रोंका विरोधी, बान्धवोंसे दूर रहनेवाला, प्रवासी और विचित्र प्रकृतिवाला होता है।

चतुर्थ भाव विचार

चतुर्थ भावपर शुभ ग्रहोंकी दृष्टि होनेसे या इस स्थानमें शुभ ग्रहोंके रहनेसे मकानका सुख होता है। चतुर्थेश पुरुष ग्रह बली हो तो पिताका पूर्ण सुख और निर्बल हो तो अल्पसुख तथा चतुर्थेश स्त्री ग्रह बली हो तो माताका सुख पूर्ण और निर्बल हो तो माताका सुख अल्प होता है। चन्द्रमा बली हो तथा लग्नेशको जितने शुभ ग्रह देखते हो, जातकके उतने ही मित्र होते हैं। चतुर्थ स्थानपर चन्द्र, बुध और शुक्रकी दृष्टि हो तो बाग-बगीचा, चतुर्थ स्थान बृहस्पतिसे युत या दृष्ट होनेसे मन्दिर; बुधसे युत या दृष्ट होने पर रंगीन महल; मंगलसे युत या दृष्ट होनेसे पक्का मकान और शनिसे युत या दृष्ट होनेसे सीमेन्ट और लोहे युक्त मकानका सुख होता है।

लग्नमें शुभ ग्रह हो तथा चतुर्थ और लग्न स्थानपर शुभ ग्रहोंकी दृष्टि हो तो जातक सुखी होता है। जन्म कुण्डलीमे पाँच ग्रह स्वराशियोंके हो तो जातक परम सुखी होता है। लग्नेश और चतुर्थेश तथा लग्न और चतुर्थ पाप ग्रहसे युत या दृष्ट हो तो जातक दुःखी अन्यथा सुखी होता है। पाँचवेमे बुध, राहु और सूर्य, चौथेमे भौम और आठवेमे शनि हो तो जातक दुःखी होता है।

कतिपय सुखयोग

१--चतुर्थेशको गुरु देखता हो। २--चतुर्थ स्थानमें शुभ ग्रहकी राशि तथा शुभ ग्रह स्थित हो। ३--चतुर्थेश शुभग्रहोंके मध्यमें स्थित हो। ४--बलवान् गुरु चतुर्थेशसे युत हो। ५--चतुर्थेश शुभग्रहसे युत होकर १।४।७।१०।५।९ स्थानोंमें स्थित हो। ६--लग्नेश उच्च या स्वराशिमें हो।७- लग्नेश मित्रग्रहके द्रेष्काणमें हो अथवा शुभग्रहोंसे दृष्ट-युत हो। ८--चन्द्रमा शुभ ग्रहोंके मध्यमें हो।९--सुखेश शुभ ग्रहकी राशिके नवांशमें हो और वह २।३।६।१०।११ वे स्थानमें स्थित हो तो जातक सुखी होता है।

दुःख योग

१--लग्नमें पाप ग्रह हो। २--चतुर्थ स्थानमें पापग्रह हो और गुरु अल्पबली हो।३--चतुर्थेश पाप ग्रहसे युत हो तो धनी व्यक्ति भी दुःखी होता है।।४--चतुर्थेश पाप ग्रहके नवांशमें सूर्य मंगलसे युत हो। ५--सूर्य, मंगल नीच या पाप ग्रहकी राशिके होकर चतुर्थमें स्थित हो। ६--अष्टमेश ११ वे भावमें गया हो।७--लग्नमें शनि, आठवेंमें राहु, छठवें स्थानमें भौम स्थित हो।८--पाप ग्रहोंके मध्यमें चन्द्रमा स्थित हो ९--लग्नेश बारहवें स्थानमें, पापग्रह दसवें स्थानमें और चन्द्र-मंगलका योग किसी भी स्थानमें हो तो जातक दुःखी होता है।

इस भावके विशेष योग

कारकांश कुण्डलीमें चतुर्थ स्थानमें चन्द्र, शुक्रका योग हो, राहु, शनिका योग हो; केतु मंगलका योग हो अथवा उच्चराशिका ग्रह स्थित हो तो श्रेष्ठ मकान जातकके पास होता है। कारकांश कुण्डलीमें चौथे स्थानमें गुरु हो तो लकड़ीका मकान, सूर्य हो तो फूसकी कुटिया एवं बुध हो तो साधारण स्वच्छ मकान जातकके पास होता है।

लग्नेश चतुर्थ भावमे और चतुर्थेश लग्नमे गया हो तो जातकको गृहलाभ होता है। चतुर्थेश बलवान् होकर १।४।७।१० स्थानोंमे शुभ ग्रहसे दृष्ट या युत होकर स्थित हो अथवा चतुर्थेश जिस राशिमें गया हो उस राशिके स्वामिका नवांशाधिपति १।४।७।१० स्थानोंमें हो तो घरका लाभ होता है। धनेश और लाभेश चतुर्थ भावमें स्थित हो तथा चतुर्थेश लाभ भाव या दशममे स्थित हो तो धन सहित जातकको घर मिलता है।

लग्नेश और चतुर्थेश दोनों चतुर्थ भावमे शुभ ग्रहोंसे दृष्ट या युत हो तो घरका लाभ अकस्मात् होता है।

लग्नेश, धनेश और चतुर्थेश इन तीनों ग्रहोमेसे जितने ग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोमे गये हो उतने ही घरोका स्वामी जातक होता है। उच्च, मूलत्रिकोणी और स्वक्षेत्रीमे क्रमशः तिगुने, दूने और डेढ गुने समझने चाहिए।

जातकके गोद—दत्तक जानेके योग

(क) कर्क या सिह राशिमें पापग्रहके होनेसे (ख) चन्द्रमा या रविको पाप ग्रहोसे युत या दृष्ट होनसे (ग) चतुर्थ और दशम स्थानमे पाप ग्रहोके जानेमे (घ) मेष, सिह, धनु और मकर इन राशियोमें किसी भी राशिके चतुर्थ या दशम भावमे जानेसे (ङ) चन्द्रमासे चतुर्थ स्थानमे पाप ग्रहोके रहनेसे (च) रविसे नवम या दशम स्थानमें पापग्रहोके जानेसे और (छ) चन्द्र अथवा रविके शत्रु क्षेत्रीय ग्रहोसे युत होनेसे जातक दत्तक—गोद जाता है।

किसी किसीका मत है कि चतुर्थसे विद्याका और पंचमसे बुद्धिका विचार करना चाहिए। विद्या और बुद्धिमे घनिष्ठ सम्बन्ध है। दशमसे विद्या जनित यशका तथा विश्वविद्यालयोंकी उच्च परीक्षाओंमें उत्तीर्णता प्राप्त करनेका विचार किया जाता है।

१—चन्द्र लग्न एवं जन्म लग्नमें पंचम स्थानका स्वामी बुध, गुरु और शुक्रके साथ १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें बैठा हो तो जातक विद्वान् होता है।

२—चतुर्थस्थानमें चतुर्थेश हो अथवा शुभ ग्रहोंकी दृष्टि हो या वहाँ शुभ ग्रह स्थित हो तो जातक विद्या विनयी होता है।

३—चतुर्थेश ६।८।१२ स्थानोंमें हो या पापग्रहके साथ हो या पाप-ग्रहसे दृष्ट हो अथवा पापराशि गत हो तो विद्याका अभाव समझना चाहिए।

चतुर्थेशका द्वादश भावोंमें फल

चतुर्थेश लग्नमें हो तो जातक पितृभक्त, काकासे वैर करनेवाला, पिताके नामसे प्रसिद्धि पानेवाला, कुटुम्बकी ख्याति करनेवाला और मान्य; द्वितीयमें हो तो पिताके धनसे वंचित, कुटुम्ब विरोधी, झगड़ालू और अल्पसुखी, तीसरे स्थानमें हो तो पिताको कष्ट देनेवाला, मातासे झगड़ा करनेवाला, कुटुम्बियोंके साथ रूखा व्यवहार करनेवाला और अपनी सन्तान द्वारा प्रसिद्धि पानेवाला, चौथे स्थानमें हो तो राजा तथा पितासे सम्मान पानेवाला, पिताके धनका उपभोग करनेवाला, स्वधर्मरत, कर्त्तव्य-निष्ठ, धन-धान्यसे परिपूर्ण और सुखी, पाँचवें भावमें हो तो दीर्घायु, राजमान्य, पुत्रवान्, सुखी, विद्वान्, कुशाग्र बुद्धि और पिता द्वारा अर्जित धनसे आनन्द लेनेवाला; छठवें स्थानमें हो तो धन संचय करनेवाला, पराक्रमी स्नेही तथा चतुर्थेश क्रूर ग्रह होकर छठवें स्थानमें हो तो पितासे वैर करने-वाला, पिताके धनका दुरुपयोग करनेवाला और व्यसनी; सातवें भावमें क्रूर ग्रह चतुर्थेश हो तो ससुरका विरोधी, ससुरालके सुखसे वंचित तथा शुभ ग्रह चतुर्थेश हो तो ससुरालसे धन-मान प्राप्त करनेवाला और स्त्री सुखसे पूर्ण; आठवें भावमें क्रूर स्वभावका चतुर्थेश हो तो रोगी, दरिद्री दुष्कर्मकर्त्ता, अल्पायु, दुःखी तथा सौम्य ग्रह हो तो मध्यमायु, सामान्यतः

स्वस्थ और उच्च विचारका, नौवे भावमे हो तो विद्वान्, सत्मगतिमें रहनेवाला, पिताका परम भक्त, धर्मात्मा और तीर्थ स्थानोंकी यात्रा करनेवाला, दसवे स्थानमे चतुर्थेश पापग्रह हो तो पिता जातककी माताको त्यागकर अन्य स्त्रीसे विवाह करनेवाला तथा शुभ ग्रह हो तो पिता प्रथम स्त्रीका विना त्याग किये अन्य स्त्रीसे विवाह करनेवाला, ग्यारहवे भावमे हो तो पिताकी सेवा करनेवाला, धनी, प्रवासी, लोकमान्य और आनन्द-पूर्वक जीवन व्यतीत करनेवाला एव बारहवे भावम हो तो विदेशवासी, मातापिताका सामान्य सुख पानेवाला और गृह सुखसे वचित अथवा जीवनमे दो-तीन घरोका मालिक होता है। यदि चतुर्थेश क्रूर ग्रह होकर ग्यारहवे और बारहवे भावमे स्थित हो तो जातक जारज—अन्य पितासे उत्पन्न हुआ होता है। बली, सौम्य ग्रह चतुर्थेश चौथे, पाँचवे और सातवे-भावमें हो तो जातक जीवनमे सब प्रकारसे सुखी होता है।

पंचम भाव विचार

१—पचम स्थानका स्वामी बुध, शुक्रसे युत या दृष्ट हो, २—पंचमेश शुभग्रहोसे घिरा हो, ३—बुध उच्चका हो, ४—बुध पचम स्थानमे हो, ५—पचमेश जिस नवाश मे हो उसका स्वामी केन्द्रगत हो और शुभ-ग्रहोंसे दृष्ट हो तो जातक समझदार, बुद्धिमान् और विद्वान् होता है। पचमेश जिस स्थानमे हो उस स्थानके स्वामी पर शुभ ग्रहकी दृष्टि हो अथवा दोनों तरफ शुभ ग्रह बैठे हो तो जातक सूक्ष्म बुद्धिवाला होता है। यदि लग्नेश नीच या पाप युक्त हो तो जातककी बुद्धि अच्छी नही होती है। पचम स्थानमे शनि और राहु हो और शुभ ग्रहोकी पचम पर दृष्टि न हो, पञ्चमेश पर पाप ग्रहोकी दृष्टि हो और बुध द्वादश स्थानमे हो तो जातककी स्मरण शक्ति अच्छी नही होती है। पञ्चमेश शुभ युत या दृष्ट हो अथवा पंचम स्थान शुभ युत या दृष्ट हो और बृहस्पतिसे पचम स्थानका स्वामी १।४।५।७।९।१० स्थानोंमे हो तो स्मरण शक्ति तीक्ष्ण

होती है। गुरु १।४।५।७।९।१० स्थानोमे हो, बुध पचम भावमे हो, पञ्चमेश बलवान् होकर १।४।५।७।९।१० स्थानोमे हो तो जातक बुद्धिमान् होता है। पञ्चमेश १।४।७।१० स्थानोमे हो तो जातक की स्मरणशक्ति अत्यन्त प्रबल होती है।

१—दसवे भावका स्वामी लग्नमे या ग्यारहवे भावका स्वामी ग्यारहवे भावमे हो तो जातक कवि होता है।

२—स्वगृही, बलवान्, मित्रगृही या उच्च राशिका पचमेश १।४।७।९।१० स्थानोमे स्थित हो या पञ्चमेश दसवें अथवा ग्यारहवे भावमे स्थित हो तो सस्कृतज्ञ विद्वान् होता है।

३—बुध शुक्रका योग द्वितीय, तृतीय भावमे हो; बुध १।४।५।७।९।१० स्थानोमे हो; कर्क राशिका गुरु धन स्थानमे हो, गुरु १।४।५।७।९।१० स्थानोमे हो; धनेश सूर्य या मगल हो और वह गुरु या शुक्रसे दृष्ट हो; गुरु स्वराशिके नवाशमे हो एव कारकाश कुण्डलीमे पाचवे भावमे बुध या गुरु हो तो जातक फलित ज्योतिषका जाननेवाला होता है।

४—कारकाश लग्नसे द्वितीय, तृतीय और पचम भावमे केतु और गुरु स्थित हो, धनस्थानमे चन्द्र और मगलका योग हो तथा बुधकी दृष्टि हो; धनेश अपनी उच्चराशिमे हो; गुरु लग्न और शनि आठवे भावमे हो; गुरु १।४।५।७।९।१० स्थानोमे शुक्र अपनी उच्च राशि और बुध धनेश हो या धन भावमे गया हो; द्वितीय स्थानमे शुभ ग्रहसे दृष्ट मगल हो एव कारकाश कुण्डलीमे ४।५ स्थानोमे बुध या गुरु हो तो जातक गणितज्ञ होता है। जिस व्यक्तिकी जन्मपत्रीमे गणितज्ञ योग होता है वह ज्योतिषी, अकाउन्टेन्ट, इजिनियर, शोवरसीयर, मुनीम, खजानची रेवेन्यू-अफसर एव पैमायश करनेवाला होता है।

५—रविसे पंचम स्थानमे मंगल, शुक्र, शनि और राहु इन चारोमे से कोई भी दो या तीन ग्रह स्थित हो; लग्नमे चन्द्रमा स्थित हो, पचम

भाव और पञ्चमेश पाप ग्रहसे युत या दृष्ट हो तो जातक अंगेजी भाषाका जानकार होता है ।

६--शनिसे गुरु सातवे स्थानमे हो या शनि गुरुमें नवम, पचमका सम्बन्ध हो या ये ग्रह मेष, तुला, मिथुन कुम्भ और सिह राशिके हो अथवा शनि-गुरु १-७,२-८,३-९,५-११ मे हो तो जातक वकील, बैरिस्टर, प्रोफेसर एवं न्यायाधीश होता है ।

७--कारकाश कुण्डलीमे पाँचवे भावमे पापग्रहसे युत चन्द्र, गुरु स्थित हो तो नवीन ग्रन्थ लिखनेवाला जातक होता है ।

सन्तान विचार

सन्तानका विचार जन्मकुण्डलीमे पचम स्थान और जन्मस्थ चन्द्रमाके पंचम स्थानसे होता है । बृहस्पति सन्तानकारक ग्रह है ।

१ -पचम भाव, पचमाधिपति और बृहस्पति शुभ ग्रह द्वारा दृष्ट अथवा युत रहनसे सन्तानयोग होता है ।

२--लग्नेश पाँचवे भावमे हो और बृहस्पति बलवान् हो तो सन्तान योग होता है ।

३--बलवान् बृहस्पति लग्नेश द्वारा देखा जाता हो तो प्रबल सन्तान योग होता है ।

४--सन्तान स्थानपर मगल और शुक्रकी एक पाद, द्विपाद या त्रिपाद दृष्टि आवश्यक है ।

५--केन्द्रत्रिकोणाधिपति शुभ ग्रह हो और उनमेसे पंचममे कोई ग्रह अवश्य हो तथा पंचमेश ६।८।१२ वे भावमे न हो, पापयुक्त, अस्त एवं शत्रु राशिगत न हो तो सन्तान सुख होता है

६ --पचम स्थानमे वृष, कर्क और तुलामे से कोई राशि हो, पचममे शुक्र या चन्द्रमा स्थित हो अथवा इनकी दृष्टि पंचम पर हो तो बहुपुत्र योग होता है ।

७—लग्न या चन्द्रमासे पंचम स्थानमें शुभग्रह स्थित हो, पचम स्थान शुभ ग्रहोसे दृष्ट हों या पंचमेशसे दृष्ट हो तो सन्तान योग होता है।

८—लग्नेश, पंचमेश एक साथ हों या परस्पर दृष्ट हों अथवा दोनो स्वगृही, मित्रगृही, या उच्चके हो तो प्रबल सन्तानयोग होता है।

९—लग्नेश-पंचमेश शुभ ग्रहके साथ होकर केन्द्रगत हो और द्वितीयेश बली हो तो सन्तान योग होता है।

१०—लग्नेश और नवमेश दोनों सप्तमस्थ हो अथवा द्वितीयेश लग्नस्थ हो तो सन्तान योग होता है।

११—पंचमेशके नवांशका स्वामी शुभ ग्रहसे युत और दृष्ट हो तो सन्तान योग होता है। लग्नेश और पञ्चमेश १।४।७।१० स्थानोमे शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो सन्तान योग होता है

१२— पंचमेश और गुरु बलवान् हो तथा लग्नेश पचम भावमे हो; सप्तमेशके नवांशका स्वामी लग्नेश, धनेश और नवमेश इन तीनोंसे दृष्ट हो तो सन्तान प्राप्तिका योग होता है।

१३—पंचम भावमे २।४।६।८।१०।१२ राशियाँ और इन्ही राशियो-के नवांश शनि, बुध, शुक्र या चन्द्रमासे युत हो तो कन्याएँ अधिक तथा पचम भावमें १।३।५।७।९।११ राशियाँ तथा इन राशियोके नवांशाधि-पति मंगल, शनि और शुक्रसे दृष्ट हो तो पुत्र अधिक होते है।

१४— पंचमेश धनमे अथवा आठवे भावमे गया हो तो कन्याएँ अधिक होती है।

१५—ग्यारहवे भावमे बुध, शुक्र या चन्द्रमा इन तीनोमेसे एक भी ग्रह गया हो तो कन्याएँ अधिक होती है।

१६—बुध, चन्द्र और शुक्र इन तीनो ग्रहोमेसे एक भी ग्रह पाँचवे भावमें हो तो कन्याएँ अधिक होती है।

१७—पंचम भावमें मेष, वृष और कर्क राशिमें केतु गया हो तो सन्तानकी प्राप्ति होती है ।

सन्तान प्रतिबन्धक योग

१—तृतीयेश और चन्द्रमा १।४।७।१०।५।९ स्थानोंमें हों तो सन्तान नहीं होती ।

२—सिंह राशिमें गये हुए शनि, मंगल पंचम भावमें स्थित हों और पञ्चमेश छठवें भावमें गया हो तो सन्तान नहीं होती ।

३—बुध और लग्नेशमें दोनों लग्नके बिना अन्य केन्द्र स्थानोंमें हों तो सन्तानका अभाव होता है ।

४—५।८।१२वें भावोंमें पापग्रह गये हों तो वंशविच्छेदक योग होता है । लग्नमें चन्द्रमा गुरुका योग हो तथा सातवें भावमें शनि या मंगल हो तो सन्तानका अभाव सूचक योग होता है ।

५—पाँचने भावमें चन्द्रमा तथा ८।१२वें भावमें सम्पूर्ण पापग्रह स्थित हों; सातवें भावमें बुध, शुक्र; चतुर्थमें पापग्रह और पंचम भावमें गुरु स्थित हो तो सन्तान प्रतिबन्धक योग होता है ।

६—लग्नमें पापग्रह, चतुर्थमें चन्द्रमा, पंचममें लग्नेश, स्थित हों और पञ्चमेश अल्पबली हो तो वंशविच्छेदक योग होता है ।

७—सातवें भावमें शुक्र, दसवें भावमें चन्द्रमा और चतुर्थ भावमें तीन-चार पापग्रह स्थित हो तो सन्तान प्रतिबन्धक योग होता है ।

८—लग्नमें मंगल, आठवेंमें शनि और पाँचवें भावमें सूर्य हो तो वंश नाशक योग होता है ।

बिलम्बसे सन्तान प्राप्ति योग

१—लग्नेश, पञ्चमेश और नवमेश ये तीनों ग्रह शुभ ग्रहसे युत होकर ६।८।१२वें भावमें गये हों तो बिलम्बसे सन्तान होती है ।

२--दशमे भावमें सभी शुभग्रह और पचम भावमें सभी पापग्रह हो तो सन्तान प्रतिबन्धक योग होता है, अत: विलम्बसे सन्तान होती है।

३--पापग्रह अथवा गुरु चतुर्थ या पञ्चम भावमें गया हो और अष्टम भावमें चन्द्रमा हो तो तीस वर्षकी आयुमें सन्तान होती है।

४--पापग्रहकी राशि लग्नमें पापग्रह युत हो, सूर्य निर्बल हो और मगल सम राशि (२।४।६।८।१०।१२) में स्थित हो तो तीस वर्षकी आयुके पश्चात् सन्तान होती है।

५--कर्क राशिमें गया हुआ चन्द्रमा पापग्रहसे युत व दृष्ट हो और सूर्यको शनि देखता हो तो ६० वे वर्षमें पुत्रकी प्राप्ति होती है। ग्यारहवे भावमें राहु हो तो वृद्धावस्थामें पुत्र होता है।

६--पञ्चममें गुरु हो और पञ्चमेश शुक्रसे युत हो तो ३२ या ३३ वर्षकी अवस्थामें पुत्र होता है।

७--पञ्चमेश और गुरु १।४।७।१० स्थानोंमें हो तो ३८ वर्षकी आयुमें सन्तान होती है।

८--नवमें भावमें गुरु हो और गुरुसे नौवें भावमें शुक्र लग्नेश-से युत हो तो ४० वर्षकी अवस्थामें पुत्र होता है।

९--राहु, रवि और मगल ये तीनों पचम भावमें हो तो सन्तान प्रतिबन्धक योग होता है।

१०--पञ्चमेश नीच राशिमें हो, नवमेश लग्नमें और बुध, केतु पचम भावमें गये हो तो कष्टसे पुत्रकी प्राप्ति होती है।

स्त्रीकी कुण्डलीमें निम्न योगोंके होनेसे सन्तानका अभाव होता है।

१--सूर्य लग्नमें और शनि सप्तममें हो। २--सूर्य और शनि सप्तम भावमें, चन्द्रमा दसवें भावमें स्थित हो तथा बृहस्पतिसे दोनों ग्रह अदृष्ट हो। ३--षष्ठेश, रवि और शनि ये तीनों ग्रह षष्ठ स्थानमें हो और चन्द्रमा सप्तम स्थानमें हो तथा बुधसे अदृष्ट हो। ४--शनि, मगल छटवें और चौथे स्थानमें हो। ५--६।८।१२ भावोंके स्वामी पचम भावमें

हो या पचमेश ६।८।१२ भावोमे हो, पचमेश नीच या अस्तगत हो तो सन्तान योगका अभाव पुरुष और स्त्रीकी कुण्डलीमे समझना चाहिये । ४।९।१०। १२ इन राशियोका बृहस्पति पचम भावमे हो तो प्रायः सन्तानका अभाव समझना चाहिये । तृतीयेश १।२।३।५ भावोंमेसे किसी भी भावमे हो तथा शुभ ग्रहसे युत और दृष्ट न हो तो सन्तानका अभाव समझना चाहिये ।

पचमेश और द्वितीयेश निर्बल हो और पचम स्थानपर पापग्रहकी दृष्टि हो तो सन्तानका अभाव रहता है । लग्नेश, सप्तमेश, पंचमेश और गुरु निर्बल हो तो सन्तानका अभाव रहता है । पचम स्थानमे पापग्रह हो और पचमेश नीच हो तथा शुभ ग्रहोसे अदृष्ट हो; बृहस्पति दो पापग्रहोके बीचमे हो एव पचमेश जिस राशिमे हो उससे ६।८।१२ भावोमे पापग्रहोके रहनेसे सन्तानका अभाव होता है ।

१—पचममे जितने ग्रह हो और इस स्थानपर जितने ग्रहोंकी दृष्टि हो उतनी सख्या सन्तानकी समझनी चाहिये । पुरुषग्रहोके योग और दृष्टिसे पुत्र और स्त्रीग्रहोके योग और दृष्टिसे कन्या सख्याका अनुमान करना चाहिये ।

२—तुला तथा वृष राशिका चन्द्रमा ५।९ भावोमे गया हो तो एक पुत्र होता है । पचममे राहु या केतु हो तो एक पुत्र होता है ।

३—पचममे सूर्य शुभ ग्रहसे दृष्ट हो तो तीन पुत्र होते है । पचममे विषम राशिका चन्द्र शुक्रके वर्गमे हो या चन्द्र शुक्रसे युत हो तो बहुपुत्र होते है ।

सन्तान संख्या विचार

४—पचमेशकी किरण[1] सख्याके समान सन्तान सख्या जाननी चाहिये ।

---

[1]सूर्य उच्च राशिका हो तो १०, चन्द्र हो तो ९, भौम ५, बुध ५, गुरु ७, शुक्र ८ और शनिकी ५ किरणे होती है । उच्चबलका साधन कर पञ्चमेशकी किरणे निकाल लेना चाहिये ।

५—गुरु, चन्द्र और सूर्य इन तीनो ग्रहोके स्पष्ट राश्यादि जोड़नेपर जितनी राशि सख्या हो उतनी सन्तान सख्या जानना। पचम भावसे या पचमेशसे शुक्र या चन्द्रमा जिस राशिमे गये हो उस राशि पर्यन्तकी सख्याके बीचमे जितनी राशि सख्या हो उतनी सन्तान सख्या जानना चाहिये। पचम भावसे या पचमेशसे शुक्र या चन्द्रमा जिस राशिमे स्थित हो उस राशि पर्यन्तकी सख्याके बीच जितनी राशियाँ हो उतनी ही सन्तान सख्या समझना चाहिए।

६—५वे भावमे गुरु हो, रवि स्वक्षेत्री हो, पचमेश पचममे हो तो पाँच सन्ताने होती है।

७—कुम्भ राशिका शनि पचम भावमे गया हो तो पाँच पुत्र होते है। मकर राशिमे ६ अश ४० कलाके भीतरका शनि हो तो तीन पुत्र होते है। पचम भावमे मगल हो तो ३ पुत्र, गुरु हो तो ५ पुत्र, सूर्य, मगल दोनो हो तो ४ पुत्र, सूर्य-गुरु हो तो ६ सन्ताने, मगल, गुरु हो तो ८ सन्ताने एव सूर्य, मगल, गुरु ये तीनो ग्रह हो तो ९ सन्ताने होती है। पचम भावमे चन्द्रमा गया हो तो ३ कन्याएँ, शुक्र हो तो ५ कन्याएँ और शनि गया हो तो ७ कन्याएँ होती है।

८—लग्नमे राहु, पाँचवे गुरु और नौवेमे शनि हो तो ६ पुत्र; नौवेमे शनि और नवमेश पचममे हो तो ७ पुत्र, गुरु ५।९वे भावमे और धनेश १०वे भावमे तथा पचमेश बलवान् हो, उच्च राशिमे गया हुआ पचमेश लग्नेशसे युत हो और गुरु शुभ ग्रहसे युत हो तो १० पुत्र, द्वितीयेश और पचमेशका योग पचम भावम हो तो ६ पुत्र; परमोच्च राशिका गुरु हो, द्वितीयेश राहुसे युत हो और नवमेश नौवे भावमे गया हो तो ९ पुत्र एव पाँचवे भावमे शनि हो तो दूसरा विवाह करनेसे सन्तान होती है।

९—कर्क राशिका चन्द्रमा पंचम भावमे गया हो तो अल्पसन्तान योग होता है। पचमेश नीचका होकर ६।८।१२वे भावमे स्थित हो और पाप-

ग्रहसे युत हो तो काकबन्ध्या योग होता है; पंचमेश नीचका होकर शनिसे युत हो तो भी काकबन्ध्या योग होता है।

पञ्चमेशका द्वादश भावोंमें फल

पंचमेश लग्नमें हो तो जातक प्रसिद्ध पुत्रवाला, शास्त्रज्ञ, संगीत-विशारद, सुकर्मरत, विद्वान्, विचारक और चतुर; द्वितीय भावमें हो तो धनहीन, काव्यकला जाननेवाला, कष्टसे भोजन प्राप्त करनेवाला, आजीविका रहित और चालाक; तृतीयमें हो तो मधुर-भाषी, प्रसिद्ध, पुत्रवान्, आश्रयदाता और नीतिज्ञ; चौथेमे हो तो गुरुजन भक्त, माता-पिताकी सेवा करनेवाला, कुटुम्बका सवर्द्धन करनेवाला और सुन्दर सन्तानका पिता; पाँचवें भावमें हो तो श्रेष्ठ सच्चरित्र पुत्रोंका पिता, धनिक, लब्धप्रतिष्ठ, चतुर, विद्वान् और समाजमान्य; छटवें भावमें हो तो पुत्रहीन, रोगी, धनहीन, शस्त्रप्रिय और दुःखी; सातवे भावमें हो तो सुन्दरी, सुशीला, सन्तानवती, मधुरभाषिणी भार्याका पति, आठवें भावमें हो तो कठोर वचन बोलनेवाला, मंदभागी, स्थानके कष्टसे दुःखी और कष्ट भोगनेवाला; नौवें भावमे हो तो विद्वान्, संगीतप्रिय, राजमान्य, सुन्दर, रसिक और सुबोध; दसवें भावमे हो तो राजमान्य, सत्कर्मरत, माताके सुखसे सहित, और ऐश्वर्यवान, ग्यारहवें भावमें हो तो पुत्रवान्, कलाविद, राजमान्य, सत्कर्मरत, गायक और धन-धान्यसे परिपूर्ण एवं बारहवें भावमे हो तो पुत्रवान्, सुखी तथा क्रूर ग्रह पंचमेश हो तो सन्तान रहित, दुःखी और प्रवासी होता है।

षष्ठभाव विचार

छटवें स्थानमें पापग्रहोंका रहना प्रायः शुभ होता है। किन्तु इस स्थानमें रहनेवाले निर्बल पापग्रह शत्रु पीड़ाके सूचक है। षष्ठेश ही छटवें भावमें हो तो स्वजातिके लोग ही शत्रु होते हैं। पंचमेश ६।१२ भावोंमें हो और लग्नेशकी दृष्टि हो तो शत्रुपीड़ा जातकको होती है।

१—चतुर्थेश और एकादशेश लग्नेशके शत्रु हो तो मातासे वैर होता है। चतुर्थेश पापग्रहसे युत या दृष्ट हो या चतुर्थेश लग्नेशसे छटवें भावमें स्थित हो अथवा चतुर्थेश छटवें भावमे बैठा हो तो मातासे जातकका वैर होता है।

२—लग्नेश और दशमेशकी परस्पर शत्रुता हो, दशमेश लग्नेशसे छटवे स्थानमे बैठा हो या दशमेश छटवे भावमे स्थित हो तो जातककी पितासे अनबन रहती है। पंचमेश ६।८।१२ भावोमे हो तो जातक पितासे शत्रुता करता है।

३—लग्नेश और सप्तमेश दोनो आपसमे शत्रु हो तो स्त्रीसे जातककी सदा खट-पट रहती है।

छटवे स्थानमें राहु, शनि और मगलमेसे कोई ग्रह हो और छटवें स्थानपर शुभ ग्रहोकी दृष्टि हो तो जातक विजयी और शत्रुनाशक होता है।

रोग विचार

यद्यपि लग्न स्थानसे कुछ रोगोका विचार किया गया है, किन्तु छटवें स्थानसे भी कतिपय रोगोका विचार किया जाता है. अतः कुछ योग नीचे दिये जाते है।

१—षष्ठेश सूर्यसे युत १।८ भावोमे हो तो मुख या मस्तकपर घाव निकलता है।

२—षष्ठेश चन्द्रमासे युत १।८ भावोमे हो तो मुख या तालुपर व्रण होता है। मगलसे युत होकर १।८मे हो तो कठमें घाव, बुधसे युत होकर १।८मे हो तो हृदयमे व्रण; गुरुसे युत होकर १।८मे हो तो नाभिके नीचे व्रण; शुक्रसे युत होकर १।८में हो तो नेत्रके नीचे व्रण; शनिसे युत होकर १।८मे हो तो पैरमें व्रण एवं राहु और केतुसे युत होकर १।८में हो तो मखपर घाव होता है।

३--बारहवे भावमे गुरु और चन्द्रका योग हो और बुध ३।६।१ भावोमे हो तो गुदाके समीप व्रण होता है ।

४--मगल और शनिका योग छटवे या बारहवे भावमे हो और शुभ ग्रह न देखते हो तो गण्डमाला (कण्ठमाला) रोग होता है ।

५--पापग्रहसे युत या दृष्ट षष्ठेश जिस स्थानमे हो उस स्थानके स्वामीकी दशामे तथा उस राशि द्वारा सार्केतिक अगमे घाव जातकको होता है ।

६--लग्नेश और रविका योग ६।८।१२ भावोमेसे किसी भावमे हो तो गलगण्ड दाहयुक्त, चन्द्रमा और लग्नेश ६।८।१२ भावमे हो तो जलोत्पन्न गलगण्ड, लग्नेश, षष्ठेश और चन्द्रमामे से कोई भी ६।८।१२ भावोमसे किसी भी भावमे हो तो कफ जनित गलगण्ड होता है ।

७--लग्नेश और बुधका योग ६।८।१२वे भावमे हो तो पित्त रोगी; गुरु और लग्नेशका योग ६।८।१२वे भावमे हो तो बात रोगी एव शुक्र और लग्नेशका योग ६।८।१२वे भावमे हो तो जातक क्षयरोगी होता है । यहा स्मरण रखनेकी एक बात यह है कि इन योगोपर क्रूर ग्रहोकी दृष्टिका होना आवश्यक है । क्रूर ग्रहकी दृष्टिके अभावमे योग पूर्ण फल नही देते है ।

८--मगल और शनि लग्न स्थान या लग्नेशको देखते हो तो श्वास, क्षय, कास रोग; कर्क राशिमे बुध स्थित हो तो कास, क्षय रोग; शनि युक्त चन्द्रमाकी दृष्टि मगल पर हो तो सग्रहणी रोग; चतुर्थ स्थानमें गुरु, रवि और शनि ये तीनो ग्रह स्थित हो तो हृदयरोगी एव लाभेश छटवे स्थानमे स्थित हो तो अनेक रोगोसे पीडित जातक होता है ।

९--सूर्य, मगल, शनि जिस स्थानमे हो उस स्थानवाले अंगमे रोग होता है तथा सूर्य, मगल और शनिसे देखा गया भाव रोगाक्रान्त होता है ।

१०--शुक्रके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे वीर्य सम्बन्धी रोग होते है ।

११—मगलके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे रक्त सम्बन्धी रोग होते है ।

१२—बुधके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे कुष्ट रोग होता है ।

१३—सूर्यके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे चर्म रोग होते है ।

१४—चद्रमाके पापयुक्त, पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे मानसिक रोग होते है ।

१५—गुरुके पापयुक्त. पापदृष्ट तथा पापराशि स्थित होनेसे मृगी अपस्मार आदि रोग होते है । मतिविभ्रम भी इस योगके होनेसे देखा गया है ।

१६—सूर्य, मगल और शुक्रका योग तथा अष्टमेश और लग्नेशका योग जातकको रोगी बनाता है ।

१७—छटवे स्थानपर शनिकी पूर्ण दृष्टि हो तो राजयक्ष्मा जातकको होता है । चन्द्र और शनि एक साथ कर्क राशिमे स्थित हो या छटवे भावमे स्थित होकर बुधसे दृष्ट हो तो जातकको कुष्ठ रोग होता है ।

षष्ठेशका द्वादश भावोंमें फल

षष्ठेश लग्न भावमे हो तो जातक निरोगी, कुटुम्बको कष्ट देनेवाला, शत्रुनाशक, निरुत्साही, निरुद्यमी, चचल, धनी, अन्तिम अवस्थामे आलसी पर मध्यम वयमे परिश्रमी, और अभिमानी, द्वितीय भावमे हो तो दुष्ट बुद्धिवाला, चालाक, सग्रह करनेवाला, उत्तम स्थानवाला, प्रख्यात, रोगी और अस्त-व्यस्त रहनेवाला, तृतीय भावमे हो तो कुटुम्बियोसे मनमुटाव रखनेवाला, सग्राहक, द्वेषबुद्धि करनेवाला, स्वार्थी, अभिमानी, निरोगी और चतुर; चौथे भावमे हो तो पितासे द्वेष करनेवाला, नीच बुद्धि, अभिमानी, अभक्ष्य भक्षक, और लालची; पाँचवे भावमे हो तो माताका भक्त,

शत्रुओंसे पीड़ित, साधारण रोगी, ववासीर और मस्तिष्क रोगसे पीड़ित, छटवे भावमे हो तो निरोगी, कृपण, शत्रुहन्ता, अरिष्टनाशक, सुखी, साधारण धनी तथा क्रूर ग्रहोकी दृष्टि हो तो नाना रोगोका शिकार, अभिमानी और कुटुम्बियोको शत्रु समझनेवाला; सातवे भावमे क्रूर ग्रह षष्ठेश हो तो भार्या कुरूपा, लडाकू, अभिमानिनी और व्यभिचारिणी होती है तथा शुभ ग्रह षष्ठेश हो तो सन्तानहीन, रूपवती, गुणवती स्त्रीका पति; आठवें भावमे हो तो स्त्री मृत्युके साधनोका ग्रहोके स्वरूपानुसार अनुमान करना चाहिए तथा जातक, रोगी, अनेक व्याधियोसे पीडित, दु:खी, और शत्रुओंके द्वारा कष्ट पानेवाला; नौवे भावमे हो तो निरोगी, सम्माननीय, धर्मात्मा और मित्रोसे युक्त, दसवे भावमे हो तो पितासे स्नेह करनेवाला, पिता-रोगी रहनेवाला, माताकी सेवा करनेवाला, निरोगी, बलवान्, ऐश्वर्यवान् और साहसी, किन्तु षष्ठेश क्रूर ग्रह हो तो इसके विपरीत फल मिलता है; ग्यारहवें भावमे हो तो शत्रुओसे कष्ट, मवेशीके व्यापारसे लाभ और निरोग तथा षष्ठेश क्रूर हो तो रोगी, शत्रुओसे दु खी और अभिमानी, एवं बारहवे भावमे हो तो रोगी, दु:खी और व्यापारसे धनार्जन करनेवाला होता है ।

सातवें भावका विचार

सप्तम स्थानसे विवाहका विचार प्रधानत: किया जाता है । विवाहके प्रतिबन्धक योग निम्न है--

१--सप्तमेश शुभ युक्त न होकर ६।८।१२ भावमे हो अथवा नीचका या अस्तगत हो तो विवाह नही होता है अथवा विधुर होता है ।

२--सप्तमेश बारहवे भावमें हो तथा लग्नेश और जन्म राशिका स्वामी सप्तममे हो तो विवाह नही होता ।

३--षष्ठेश, अष्टमेश तथा द्वादशेश सप्तममे हो तथा ये ग्रह शुभ ग्रहसे युत या दृष्ट न हों अथवा सप्तमेश ६।८।१२वें भावका स्वामी हो तो स्त्री सुख जातकको नही होता है ।

४--यदि शुक्र और चन्द्रमा साथ होकर किसी भावमें बैठे हो और शनि एव भौम उनसे सप्तम भावमें हो तो विवाह नही होता ।

५--लग्न, सप्तम और द्वादश भावमे पापग्रह बैठे हो और पंचमस्थ चन्द्रमा निर्बल हो तो विवाह नही होता ।

६--७।१२वे स्थानमे दो-दो पापग्रह हों तथा पंचममें चन्द्रमा हो तो जातकका विवाह नही होता ।

७--सप्तममे शनि और चन्द्रमाके सप्तम भावमे रहनेसे जातकका विवाह नही होता; यदि विवाह होता भी है तो स्त्री वन्ध्या होती है ।

८--सप्तम भावमें पापग्रहके रहनेसे मनुष्यको स्त्री सुखमे बाधा होती है ।

९--शुक्र और बुध सप्तममें एक साथ हो तथा सप्तमपर पापग्रहोकी दृष्टि हो तो विवाह नही होता; किन्तु शुभ ग्रहोकी दृष्टि रहनेसे बड़ी आयुमें विवाह होता है ।

१०--यदि लग्नसे सप्तम भावमे केतु हो और शुक्रकी दृष्टि उसपर हो तो स्त्रीसुख कम होता है ।

११--शुक्र, मंगल ५।७।९वे भावमे हों तो विवाह नही होता ।

१२--लग्नमें केतु हो तो, भार्यामरण तथा सप्तममे पापग्रह हों और सप्तमपर पापग्रहोकी दृष्टि भी हो तो जातकको स्त्रीसुख कम होता है ।

विवाह योग

१--सप्तम भाव शुभयुत या दृष्ट होनेसे तथा सप्तमेशके बलवान होनेसे विवाह होता है ।

२--शुक्र स्वगृही या कन्या राशिका हो तो विवाह होता है ।

३--सप्तमेश लग्नमे हो या सप्तमेश शुभ ग्रहसे युत होकर ११वें भावमें हो तो विवाह होता है ।

४--जितने अधिक बलवान् ग्रह सप्तमेशसे दृष्ट होकर सप्तम भावमें गये हो उतना ही जल्द विवाह होता है ।

५--द्वितीयेश और सप्तमेश १।४।७।१०।५।९वे स्थानमे हो तो विवाह होता है ।

६--मगल तथा रविके नवाशमे बुध, गुरु गये हो या सप्तम भावमे बुध, गुरुका नवाश हो तो विवाह होता है ।

७--लग्नेश लग्नमे हो, लग्नेश सप्तम भावमे हो, सप्तमेश या लग्नेश द्वितीय भावमे हो तो विवाह योग होता है ।

८--सप्तम और द्वितीय स्थानपर शुभ ग्रहोकी दृष्टि हो तथा द्वितीयेश और सप्तमेश शुभ राशिमे हो तो विवाह होता है ।

९--लग्नेश दशममे हो और उसके साथ बलवान् बुध हो एव सप्तमेश और चन्द्रमा तृतीय भावमे हो तो जातकका विवाह होता है ।

१०--गुरु अपने मित्रके नवाशमे हो तो विवाह होता है ।

११--सप्तममे चन्द्रमा या शुक्र अथवा दोनोके रहनेसे विवाह होता है ।

१२--यदि लग्नसे सप्तम भावमे शुभ ग्रह हो या सप्तमेश शुभ ग्रहसे युत होकर द्वितीय, सप्तम या अष्टममे हो तो जातकका विवाह होता है ।

१३--विवाह प्रतिबन्धक योगोके न रहनेपर विवाह होता है ।

विवाह--स्त्री संख्या विचार

१--सप्तममे बृहस्पति और बुधके रहनेसे एक स्त्री होती है । सप्तममे मगल या रवि हो तो एक स्त्री होती है ।

२--लग्नेश और सप्तमेश इन दोनो हीके लग्न या सप्तममे रहनेसे दो स्त्रियाँ होती है । यदि लग्नेश और सप्तमेश दोनो ही स्वगृही हों तो जातकका एक विवाह होता है ।

३--सप्तमेश और द्वितीयेश शुक्रके साथ अथवा पापग्रहके साथ

होकर ६।८।१२वे भावमे हो तो एक स्त्रीकी मृत्युके बाद दूसरा विवाह होता है ।

४—यदि सप्तम या अष्टम स्थानमे पापग्रह और मगल द्वादश भावमे हों तथा द्वादशेश अदृश्य चक्रार्धमे हो तो जातकका द्वितीय विवाह अवश्य होता है ।

५—लग्न, सप्तम स्थान और चन्द्रलग्न ये तीनो द्विस्वभाव राशिमे हो तो जातकके दो विवाह होते है ।

६—लग्नेश, सप्तमेश और राशीश द्विस्वभाव राशिमे हो तो दो विवाह होते है ।

७—लग्नेश द्वादश भावमे और द्वितीयेश पापग्रहके साथ कही भी हो तथा सप्तम स्थानमे पापग्रह बैठा हो तो जातककी दो स्त्रियाँ होती है ।

८—शुक्र पापग्रहके साथ हो अथवा नीचका हो तो जातकके दो विवाह होते है ।

९—अष्टमेश १।७वे भावमे हो, लग्नेश लग्नमे हो, लग्नेश छठवे भावमे हो; सप्तमेश शुभ ग्रहसे युत शत्रु या नीच राशिमे गया हो एव शुक्र नीच, शत्रु और अस्तगत राशिका हो तो दो विवाह होते है ।

१०—धन स्थानमे अनेक पापग्रह हो और धनेश भी पापग्रहोसे दृष्ट हो तो तीन विवाह होते है ।

११—सप्तम भावमे बहुत पापग्रह हो तथा सप्तमेश पापग्रहोमे युत हो तो तीन विवाह होते है ।

१२—बली चन्द्र और शुक्र एक साथ हो, बली शुक्र सप्तम भावको पूर्ण दृष्टिसे देखता हो; लग्नेश उच्चका हो या लग्न भावमे उच्चका ग्रह एव लग्नेश, द्वितीयेश और षष्ठेश ये तीनो ग्रह पापग्रहोसे युक्त होकर सप्तम भावमे स्थित हो तो जातक अनेक स्त्रियोके साथ विहार करनेवाला होता है ।

१३—सप्तमेशसे तीसरे स्थानमे चन्द्रमा, गुरुसे दृष्ट हो, या सप्तमेशसे

तीसरे, सातवे भावमें चन्द्रमा हो; सप्तमेश शनि हो; सप्तमेश और नवमेश वली होकर ५।९वे भावमे स्थित हो एवं दशमेशसे दृष्ट सप्तमेश १।४।५।७।९।१०वें भावमे स्थित हो तो जातक अनेक स्त्रीभोगी होता है।

१४—७वें या १२वें भावमे बुध हो तो वेश्यागामी होता है।

स्त्रीरोग विचार

१—लग्न स्थानमे शनि, मगल, बुध, केतु इन चारोंमेसे किसी भी ग्रहके रहनेसे स्त्री रोगिणी रहती है।

२—सप्तमेश ८।१२वे भावमे हो तो भार्या रोगिणी रहती है।

३—सप्तमेश और द्वितीयेश दोनो पापग्रहोसे युत होकर ३।१२वें भावमे हो तो स्त्री रोगिणी रहती है।

विवाह-समय-विचार

१—बृहत्पाराशरीकारने बताया है कि सप्तमेश शुभ ग्रहकी राशिमें गया हो और शुक्र अपनी उच्च राशिमे हो तो नौ वर्षकी अवस्थामें विवाह होता है।

२—शुक्र धन स्थानमे और सप्तमेश ग्यारहवें भावमे हो तो १०या १६ वर्षकी आयुमें विवाह होता है।

३—लग्नमें शुक्र और लग्नेश १०।११ राशिमे हो तो ११ वर्षकी आयुमें विवाह होता है।

४—केन्द्र स्थानमें शुक्र हो और शुक्रसे सातवें शनि हो तो १२ या १९की अवस्थामें विवाह होता है।

५—सातवें स्थानमे चन्द्रमा हो और शुक्रसे सातवें स्थानमें शनि हो तो १८ वर्षकी आयुमें विवाह होता है।

६—द्वितीयेश ११वें और एकादशेश २रे भाव हों तो १३ वर्षकी आयुमें विवाह होता है।

७—शुक्र द्वितीय स्थानमें हो और द्वितीयेश तथा मगल इन दोनोका योग हो तो २७वे वर्षमें विवाह होता है। मतान्तरसे इस योगके रहनेपर २२ या २३ वर्षकी आयुमे भी विवाह होता है।

८—पंचम भावमे शुक्र और चतुर्थमे राहु हो तो ३१वें या ३३वें वर्षकी आयुमें विवाह होता है।

९—तृतीय भावमे शुक्र और नौवें भावमे सप्तमेश गया हो तो तीसवें या सत्ताइसवें वर्षमे विवाह होता है।

१०—लग्नेशसे शुक्र जितना नजदीक हो उतना ही जल्द विवाह होता है। शुक्रकी स्थिति जिस राशिमे हो उस राशिकी दशामे विवाह होता है।

११—सप्तमस्थ राशिकी जो सख्या हो, उसमे आठ और जोड़ देनेपर विवाहकी वर्ष संख्या आ जाती है। शुक्र, लग्न और चन्द्रमासे सप्तमाधिपतिकी संख्यामे विवाहका योग आता है।

१२—लग्न, द्वितीय और सप्तममे शुभ ग्रह हो या इन स्थानोंपर शुभ ग्रहोकी दृष्टि हो तो छोटी अवस्थामे विवाह होता है।

१३—लग्नेश और सप्तमेशको जोड़कर जो राशि हो उस राशिमे जब गोचरका गुरु पहुँचता है तब विवाहका योग होता है। अपनी जन्म राशिके स्वामी और अष्टमेशको जोड़नेसे जो राशि आवे, उस राशिमें जब गोचरका गुरु पहुँचता है तब विवाह होता है।

१४—शुक्र और चन्द्रमा इन दोनोमेसे जो ग्रह बली हो उसकी महादशामें विवाह होता है।

१५—यदि सप्तमेश शुक्रके साथ हो तो सप्तमेशकी अन्तर्दशामे विवाह होता है। नवमेश, दशमेश और सप्तम भावस्थ ग्रहकी अन्तर्दशामे विवाह होता है।

स्त्री मृत्यु विचार

१—कोई पापग्रह सप्तम स्थानमें हो; पंचमेश सप्तम स्थानमे हो;

अष्टमेश सप्तम स्थानमें हो, गुरु सप्तम स्थानमें हो एवं पाप ग्रहसे युत शुक्र सप्तममें हो तो जातकी स्त्रीका मरण उसकी जीवित अवस्थामें होता है।

२—स्त्रीके जन्मनक्षत्रसे पुरुषके जन्मनक्षत्र तक तथा पुरुषके जन्मनक्षत्रसे स्त्रीके जन्मनक्षत्र तक गिननेसे जो संख्या आवे उसमें अलग-अलग ७से गुणाकर २८का भाग देनेसे यदि प्रथम संख्यामें अधिक शेष रहे तो स्त्रीकी मृत्यु पहले और द्वितीय संख्यामें अधिक शेष रहे तो पुरुषकी मृत्यु पहले होती है।

३—शुक्रके नवांशमें या लग्नसे सप्तम स्थानमें शुक्र हो और सप्तमेश पंचम स्थानमें हो तो जातकको स्त्रीमरणका दुःख सहन करना पड़ता है।

४—द्वितीयेश और सप्तमेश ६।८।१२वें भावमें हो तो स्त्रीमरण; छठवेंमें मंगल, सप्तममें राहु और अष्टममें शनि हो तो भार्यामरण होता है।

५—शुक्र द्विस्वभाव राशिमें हो और सप्तममें पापग्रह स्थित हो अथवा सप्तमपर पापग्रहोंकी दृष्टि हो तो जातककी स्त्रीका मरण होता है।

सप्तमेशका द्वादश भावोंमें फल

सप्तमेश लग्न स्थानमें हो तो जातक स्वस्त्रीसे प्रेम करनेवाला, सदाचारी, परस्त्री रतिमें घृणा करनेवाला, रूपवान्, स्त्रीके वशमें रहनेवाला, सुपुत्रवान् और धर्मभीरु, द्वितीय भावमें हो तो सुखरहित, दुःखी, ससुरालसे धन प्राप्त करनेवाला, स्त्रीके सुखसे रहित और रति सुखके लिये सदा लालायित रहनेवाला, तृतीय भावमें हो तो पुत्रसे प्रेम करनेवाला, रोगिणी भार्याका पति, दुःखी, रोगी और कौटुम्बिक सुखसे हीन, चौथे भावमें हो तो साधक, पितासे द्वेष करनेवाला, चंचल, समाजसेवी और सुखी, पाँचवें भावमें हो तो सौभाग्य युक्त, पुत्रवान्, हठी, दुष्ट विचारवाला, माताकी सेवा करनेवाला और दुष्ट प्रकृतिका, छठवें भावमें हो तो स्त्रीसे द्वेष करनेवाला, रोगिणी भार्याका पति, स्त्रीसे हानि, और कुटुम्बसे दुःखी, सातवें भावमें हो तो दीर्घायु, शीलवान्, तेजस्वी, सुन्दर नारीका

पति, सौभाग्यशाली, सुखी और कुटुम्बसे परिपूर्ण, आठवें भावमें हो तो वेश्यागामी, विवाहसे वंचित, वास्तविक रति सुखसे वंचित और रोगी; नौवें भावमें हो तो तेजस्वी, शिल्पी, स्त्रीसुखसे परिपूर्ण, सुन्दर रमणीके साथ रमण करनेवाला, धर्मात्मा और नीतिज्ञ, दसवें भावमें हो तो राजासे दण्ड पानेवाला, लम्पट, कामी, क्रूर और नीच कर्मरत, ग्यारहवें भावमें हो तो रूपवती, सुशीला रमणीका पति, गुणवान्, दयालु और धनिक एवं बारहवें भावमें हो तो गृह और बन्धुसे हीन, स्त्रीसुख रहित या अल्प स्त्रीसुख पानेवाला और स्त्रीविरहके कष्टको पानेवाला होता है। यदि सप्तमेश क्रूर ग्रह हो तो उसका फल अनिष्ट प्रत्येक भावमें ज्ञात करना चाहिये।

अष्टम-भाव-विचार

अष्टम भावसे प्रधानतः आयुका विचार किया जाता है। दीर्घायुके योग निम्न हैं—

१—पञ्चममें चन्द्रमा, नौवेमें गुरु और दसवें भावमें मंगल हो तो दीर्घायु योग होता है।

२—अष्टमेश अपनी राशिमें हो और शनि अष्टममें हो।

३—अष्टमेश, लग्नेश और दशमेश १।४।५।७।९।१०वें भावमें हों तो दीर्घायु होता है।

४—षष्ठेश और व्ययेश दोनों लग्नमें हों, दशमेश केन्द्रमें हो और लग्नेश केन्द्रमें हो तो दीर्घायु योग होता है।

५—पापग्रह ३।६।११ और शुभ ग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें हो तो दीर्घायु योग होता है।

६—लग्नेश बलवान् होकर केन्द्रमें हो तो दीर्घायु और सभी ग्रह तीसरे चौथे अथवा आठवें स्थानमें हो तो दीर्घायु जातक होता है।

अल्पायु योग

१—वृश्चिकका सूर्य गुरुके साथ लग्नमे हो और अष्टमेश केन्द्रमें हो तो २२ वर्षकी आयु होती है ।

२—१।४।५।८ राशियोंका शनि लग्नमें हो; शुभ ग्रह ३।६।९।१२में हो तो २६ या २७ वर्षकी आयु होती है ।

३—अष्टमेश पापग्रह हो और गुरु या पापग्रहसे दृष्ट हो; लग्नेश अष्टम भावमे हो तो २८ वर्षकी आयु होती है ।

४—चन्द्र या शनि युक्त सूर्य आठवें भावमे हो तो २९ वर्षकी आयु; राशीश और अष्टमेशके मध्यमे चन्द्र हो, व्यय भावमें गुरु हो तो २७ या ३० वर्षकी आयु होती है ।

५—क्षीण चन्द्रमा हो, अष्टमेश पापयुक्त केन्द्र या अष्टममें हो; लग्न पापयुक्त निर्बल हो तो ३२ वर्षकी आयु होती है ।

६—६।८।१२वें भावोंमें पापग्रह हो, लग्नेश निर्बली हो तथा शुभ ग्रहोसे युत और दृष्ट न हो तो जातक अल्पायु हो ता है ।

७—सभी पापग्रह ३।६।९।१२ भावोंमें हों तो अल्पायु; लग्नेश और अष्टमेश ६वें या ८वे भावमे हो तो अल्पायु होता है ।

८—द्वितीयेश नवम भावमें, शनि सातवे और गुरु, शुक्र ग्यारहवें भावमे हों तो अल्पायु योग होता है ।

९—लग्नेश निर्बल हो तथा सभी पापग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें हों और शुभ ग्रहोंकी दृष्टि भी नही हो तो आल्पायु योग होता है ।

१०—शुक्र, गुरु लग्नमे हो और चंचममे मंगल पापग्रहसे युत हो तथा सूर्य सहित लग्नेश लग्नमें हो तो जातक अल्पायु होता है ।

मध्यमायु योग

१—सभी पापग्रह २।५।८।११वे स्थानमें हों या ३।४ स्थानोंमें हों तो मध्यमायु योग होता है ।

२—लग्नेश निर्बली हो, गुरु १।४।७।१०।५।९ स्थानोंमें हो और पाप-ग्रह ६।८।१२वें भावमें स्थित हो तो मध्यमायु योग होता है ।

३—सभी शुभ ग्रह १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें हों, शनि ६।८ स्थानोंमें हो और पापग्रह बलवान् होकर ६।८ स्थानोंमें हो तो जातक मध्यमायु होता है ।

४—१।४।५।७।९।१० स्थानोंमें शुभ और पाप दोनों ही प्रकारके मिश्रित ग्रह हों तो मध्यमायु योग होता है ।

५—दिनमें जन्म हो और चन्द्रमासे आठवें स्थानमें पापग्रह हों तो मध्यमायु योग होता है ।

मृत्युका निर्णय करनेके लिये मारकका ज्ञान कर लेना आवश्यक है । ज्योतिष शास्त्रमें लग्नेश, षष्ठेश, अष्टमेश, गुरु और शनि इनके सम्बन्धसे मारकेशका विचार किया गया है । अष्टमेश बली होकर ३।४।६।१०।१२ स्थानोंमें हो तो मारक होता है । लग्नेशसे अष्टमेश बलवान् हो तो अष्ट-मेशकी अन्तर्दशा मार्क होती है । शनि षष्ठेश और अष्टमेश होकर लग्नेशको देखता हो तो लग्नेश भी मारक हो जाता है । अष्टमेश सप्तम भावमें बैठकर लग्नको देखता हो तो पापग्रहकी दशा अन्तर्दशामें वह मारक होता है । मंगलकी दशामें शनि तथा शनिकी दशामें मंगल सदा जातकको रोगी बनाते हैं । अष्टमेश चतुर्थ स्थानमें शत्रुक्षेत्री हो तो मारक बन जाता है ।

पाराशरके मतसे द्वितीय और सप्तम मारक स्थान है । तथा इन दोनोंके स्वामी—द्वितीयेश, सप्तमेश, द्वितीय और सप्तममें रहनेवाले पापग्रह एवं द्वितीयेश और सप्तमेशके साथ रहनेवाले पापग्रह मारकेश होते हैं । अभिप्राय यह है कि यदि द्वितीयेश पापग्रह हो तथा पापग्रहसे दृष्ट हो तो प्रथम वही मारकेश होता है, पश्चात् सप्तमेश पापग्रह हो और पापग्रहसे दृष्ट हो, अनन्तर द्वितीयमें रहनेवाला पापग्रह, अनन्तर सप्तममें रहनेवाला पापग्रह, द्वितीयेशके साथ रहनेवाला पापग्रह और

सप्तमेशके साथ रहनेवाला पापग्रह मारकेश होता है। शनि यदि मारकेशके साथ हो तो मारकेशको हटाकर स्वय मारक बन जाता है। द्वादशेश भी पापग्रह होनेपर मारक बन जाता है। पापग्रह षष्ठेश हो या पापराशिमे षष्ठेश बैठा हो अथवा पापग्रहसे दृष्ट हो तो षष्ठेशकी दशामे भी मरणकी सभावना होती है। मारकेशकी दशामे षष्ठेश, अष्टमेश और द्वादशेशकी अन्तर्दशामे मरण सम्भव होता है। यदि मारकेश अधिक बलवान् हो तो उसकी दशा या अन्तर्दशामे मरण होता है। राहु या केतु १।७।८।१२वे भाव हो अथवा मारकेशसे ७वे भावमे हो या मारकेशके साथ हो तो मारक होता है। मकर और वृश्चिक लग्नवालोके लिये राहु मारक बताया गया है।

जैमिनीके मतसे आयुविचार

लग्नेश-अष्टमेश, जन्मलग्न-चन्द्र एव जन्मलग्न-होरालग्न इन तीनोके द्वारा आयुका विचार करना चाहिए। उपर्युक्त तीनो योगोवाले ग्रह अर्थात् लग्नेश और अष्टमेश, जन्म लग्न और चन्द्र, तथा जन्म लग्न और होरालग्न द्वारा नीचेके चक्रसे आयुका निर्णय करना चाहिये।

दीर्घायु	मध्यमायु	अल्पायु
चरराशि-लग्नेश चरराशि-अष्टमेश	चरराशि-लग्नेश स्थिरराशि-अष्टमेश	चरराशि-लग्नेश द्विस्वभाव-अष्टमेश
स्थिरराशि-लग्नेश द्विस्वभाव-अष्टमेश	स्थिरराशि-लग्नेश चरराशि-अष्टमेश	स्थिरराशि-लग्नेश स्थिरराशि-अष्टमेश
द्विस्वभाव-लग्नेश स्थिरराशि-अष्टमेश	द्विस्वभाव-लग्नेश द्विस्वभाव-अष्टमेश	द्विस्वभाव-लग्नेश चरराशि-अष्टमेश

इसी प्रकार लग्न-चन्द्र अथवा शनि-चन्द्र जन्म तथा लग्न-होरालग्नपरसे आयुका विचार होता है। यदि तीनो प्रकारसे अथवा दो प्रकारसे एक ही प्रकारकी आयु आवे तो उसे ठीक समझना चाहिये। यदि तीनों प्रकारोंसे भिन्न-भिन्न प्रकारकी आयु आवे तो जन्मलग्न और होरालग्न[1]परसे जो आयु निकले उसीको ग्रहण करना चाहिए।

विसवाद होनेपर लग्न या सप्तममे चन्द्रमा हो तो शनि और चन्द्रमापरसे आयु निकालना चाहिए। अन्यथा जन्मलग्न और होरालग्नपरसे ही आयु सिद्ध करना चाहिए।

इस प्रकार आयुका योग निश्चित कर लेनेपर भी यदि लग्नेश या अष्टमेश शनि हो तो कक्षा हानि अर्थात् दीर्घायु योग आया हो तो उसको मध्यमायु योग; मध्यमायु योग आया हो तो अल्पायु योग और अल्पायु योग आया हो तो हीनायु योग होता है; परन्तु शनि ७।१०।११ राशियोंमेसे किसी भी राशिमे हो तो कक्षा हानि नही होती है।

लग्न या सप्तममे गुरु हो अथवा केवल शुभ ग्रहसे युत या दृष्ट गुरु हो तो कक्षा वृद्धि अर्थात् अल्पायुमे मध्यमायु, मध्यमायु मे दीर्घायु और दीर्घायुमे पूर्णायु होती है।

तीनों प्रकारसे दीर्घायु आये तो १२० वर्ष, दो प्रकारसे आये तो १०८ वर्ष तथा एक प्रकारसे आये तो ९६ वर्ष होते है।

तीनो प्रकारसे मध्यमायुमे ८० वर्ष, दो प्रकारसे मध्यमायुमे ७२ वर्ष और एक प्रकारसे मध्यमायुमे ६४ वर्ष होते है।

तीनों प्रकारसे अल्पायुमे ३२ वर्ष, दो प्रकारसे अल्पायु योगमे ३६ वर्ष और एक प्रकारसे अल्पायु हो तो ४० वर्ष होते है।

---

[1]**इष्टकालको २से गुणाकर पाँचका भाग देनेसे जो राश्यादि आवें उसमें रविस्पष्टको जोड़ देनेपर होरा लग्न होता है।**

स्पष्टायु साधनका नियम

जिन ग्रहोंपरसे आयु जानना हो उन स्पष्ट ग्रहोंकी राशियोंको छोड अंशादिका योग करके, योगकारक ग्रहोंकी संख्यासे भाग देकर जो अंशादि आवे, उनके अनुसार अंश, कला, विकला फलके कोष्ठकके नीचे जो वर्ष, मास और दिनादि हों उन्हें जोडकर दीर्घायु हो तो ९६मेंसे, मध्यमायु हो तो ६४मेंसे और अल्पायु हो तो ३२मेंसे घटानेपर स्पष्टायु होती है।

मतान्तरसे योगकारक ग्रहोंके अंशादि जोड़नेसे जो आये उसमें योगकारक ग्रहोंकी संख्याका भाग देनेसे जो लब्ध आये उसमें तीन प्रकारसे आयु आनेपर ४०से, दो प्रकारसे आनेपर ३६से और तीन प्रकारसे आनेपर ३२से गुणा कर ३०का भाग देनेपर लब्ध वर्षादिको पूर्वोक्त आयु खण्डमेंसे घटानेपर स्पष्टायु होती है।

उदाहरण—द्वितीय अध्यायमें दी गई उदाहरण-कुण्डली ही यहाँपर उदाहरण समझना चाहिए। यहाँ लग्नेश सूर्य है और अष्टमेश शुक्र है। सूर्य चर राशिमें और अष्टमेश द्विस्वभाव राशिमें है, अतः अल्पायु योग हुआ। द्वितीय प्रकार अर्थात् चन्द्र-शनिसे विचार किया तो चन्द्रमा स्थिर राशिमें और शनि द्विस्वभाव राशिमें है अतः दीर्घायु योग हुआ।

इष्टकाल २३।२२ × २ = ४६।४४ ÷ ५ = ९।१०।४८ + रवि स्प० ०।१०। ७।३४ सूर्य स्पष्ट

९।१०।४८। ०

९।२०।५५।३४ स्पष्ट होरालग्न

इस उदाहरणमें जन्मलग्न स्थिर और होरालग्न स्थिर राशिमें है अतः अल्पायु योग हुआ।

इस उदाहरणमें दो प्रकारसे अल्पायु योग आया है, अतएव अल्पायु समझनी चाहिये।

स्पष्टायु निकालनेके लिये गणित क्रिया की--

लग्नेश सूर्य	०।१०।७।३४	
अष्टमेश शुक्र	११।२३।२०।१०	राशियोंको छोड दिया
होरालग्न	९।२०।५५।३४	
जन्मलग्न	४।२३।२५।२७	
	--।७७।४८।४५	

७७।४८।४५÷४=१९।२७।११ इसे ३२से गुणा किया और ३०का भाग दिया तो वर्षादि २३।८।३।४३ मिला। इसे अल्पायुके द्वितीय खण्डमेंसे घटाया--

३६।०।०। ०
२३।८।३।४३
१२।७।२६।१७ स्पष्टायु

आयुसाधनकी दूसरी प्रक्रिया

जन्मकुण्डलीके केन्द्राङ्क, त्रिकोणाङ्क, केन्द्रस्थ ग्रहाङ्क[1] और त्रिकोणस्थ ग्रहाङ्क इन चारों संख्याओंका जोड़कर योगफलको १२से गुणाकर १०का भाग देनेसे जो वर्षादि लब्ध आये उनमेंसे १२ घटानेपर आयु प्रमाण निकलता है।

उदाहरण--दूसरे अध्यायमें जो उदाहरण कुण्डली लिखी गई है उसकी आयु--

---

[1]केन्द्रमें सिर्फ चन्द्रमा है, सूर्यसे चन्द्रमा दूसरी संख्याका है अतः २ अंक लिया है; इसी प्रकार मंगलसे ३, बुधसे ४, गुरुसे ५, शुक्रसे ६, शनिसे ७, राहुसे ८ और केतुसे ९ अंक लेते हैं।

केन्द्राङ्क ५+८+११+२=२६
त्रिकोणाङ्क ९+१ =१०
केन्द्रस्थग्रहाङ्क २ = २
त्रिकोणस्थग्रहाङ्क ८+१ = ५

$२६+१०+२+५=४३,\ \frac{४३\times १२}{१०}=\frac{५१६}{१०}=५१\frac{६}{१०}$

$\frac{६}{१०}\times\frac{१२}{१}=\frac{७२}{१०}=७\frac{२}{१०}=\frac{३०}{१}=६$

५१।७।६
१२।०।०
३९।७।६ आयुमान हुआ।

नक्षत्रायु

जन्मनक्षत्रकी भुक्त घटियोंको ४से गुणाकर ३का भाग देनेसे जो लब्ध आये उसे १०० वर्षमेंसे घटानेसे नक्षत्रायु आती है। उदाहरण भुक्तनक्षत्र १२।१० है।

$१२।१०\times ४=४८।४०\div ३=\frac{४८+४०}{६०}=४८+\frac{२}{३}=\frac{१४६}{३}\times\frac{१}{३}=$

$\frac{१४६}{८०}=१६\frac{२}{३}\times ४=\frac{८}{३}=२\frac{२}{३}\times ४^{१०}$

१६।२।२० को १०० वर्षमेंसे घटाया
१००।०।
१६।२।२०
८३।९।१० नक्षत्र स्पष्टायु हुई।

ग्रह रश्मियों द्वारा आयु साधन

सूर्यका रश्मि गुणाङ्क १०, चन्द्रका ११, मगलका ५, बुधका ५, गुरुका ७, शुक्रका ८ और शनिका ५ रश्मि गुणाङ्क है ।

ग्रहमेंसे अपने-अपने उच्चको घटाना, शेष छ राशिसे कम हो तो उसे १२ राशियोमेंसे घटानेपर जो शेष रहे उसकी कला बनाकर अपने गुणाङ्कसे गुणा करना चाहिये । जो गुणनफल आवे उसमे २१६००का भाग देनेपर ग्रहकी रश्मिज आयु आती है । इस विधिसे समस्त ग्रहोकी रश्मिज आयुका साधन कर लेना चाहिये । जो ग्रह स्वगृही, उच्चराशि, मित्रक्षेत्री और वक्री होनेवाला हो उसके वर्षोको द्विगुणित कर लेना चाहिये । वक्री और अस्तगत ग्रहके वर्षोका आधा करनेपर ग्रहकी आयु आती है । समस्त ग्रहोकी आयुको जोड देनेपर जातककी आयु आ जाती है । रश्मिज आयुमें राहु और केतुकी आयु नही निकाली गई है ।

लग्नायु साधन

जन्मकुण्डलीमे जिस-जिस स्थानमे ग्रह स्थित हो, उस-उस स्थानमें जो-जो राशि हो, उन सभी ग्रहस्थ राशियोके निम्न ध्रुवाङ्कोको जोड़ देने से लग्नायु होती है । ध्रुवाङ्क—मेष १०, वृष ६, मिथुन २०, कर्क ५, सिह ८, कन्या २, तुला २०, वृश्चिक ६, धनु १०, मकर १८, कुम्भ ३ और मीन १० ध्रुवाङ्क सख्यावाली है ।

केन्द्रायु साधन

जन्मकुण्डलीमे चारो केन्द्रस्थानो (१।४।७।१०)की राशियोका योगकर भौम और राहु जिस-जिस राशिमे हो उनके अकोकी सख्याका योग केन्द्राङ्क संख्याके योगमेमे घटा देनेपर जो शेष बचे उसे तीनसे गुणा करनेसे केन्द्रायु होती है ।

प्रकारान्तरसे नक्षत्रायु

भयातको ९०मेंसे घटाकर जो शेष रहे उसको चारसे गुणाकर तीनका भाग देनेसे लब्ध वर्षादि नक्षत्रायु होते है ।

ग्रहयोगों परसे आयु विचार

शनि तुलाके नवाशमे हो और उसपर गुरुकी दृष्टि हो तथा शनि, राहु बारहवेमे हो और शनि वक्री हो तो १३ वर्षकी आयु होती है ।

२--शनि कन्याके नवाशमे हो और बुधसे दृष्ट हो; राहु, सूर्य, मगल बुध और शनि ये पाँचो ग्रह या इनमेंसे कोई चार ग्रह अष्टममे हो एव मंगल-राहु या शनि-राहु बारहवे स्थानमे हो तो १८ वर्षकी आयु होती है ।

३--शनि सिहके नवाशमे हो और राहुसे दृष्ट हो तथा चौथेमे चन्द्रमा और छटवेमे सूर्य हो तो १५ वर्षकी आयु होती है ।

४--३ या ११वे भावमें शनि, ५ वे या ९ वे रवि और गुरु, शुक्र केन्द्रमे नही हो; तथा शनि कर्कके नवाशमे. केतुसे दृष्ट हो तो १६वर्षकी आयु होती है ।

५-शनि मिथुनके नवाशमे लग्नेशसे दृष्ट हो, सूर्य वृश्चिक या कुम्भ राशिमे, शनि मेषमे और गुरु मकर राशिमें हो एव कर्क या कुम्भ राशिमे सूर्य, शनि और मेष राशिमे गुरु, शुक्र स्थित हो तो १७ वर्षकी आयु होती है ।

६--लग्नेश अष्टममे, अष्टमेश लग्नमे हो; छटवे स्थानमे शनि, सूर्य और चन्द्रमा एकत्रित हो एव पापग्रहोसे दृष्ट चन्द्रमा ६।८।१२वे भावमे हो, लग्नेश अष्टममे पापग्रह दृष्ट या युत हो तो १८से २० वर्ष तक आयु होती है ।

७--लग्नमे वृश्चिक राशि हो और उसमें सूर्य, गुरु स्थित हों तथा अष्टमेश केन्द्रमे हो; चन्द्रमा और राहु ७।८वें भावमें हों; पापग्रहके

साथ गुरु लग्नमें हो, अष्टम स्थान ग्रह शून्य हो; अष्टमेश, द्वितीयेश और नवमेश एक साथ हो तथा लग्नेश अष्टममे हो तो २२ या २४ वर्षकी आयु होती है ।

८—शनि द्विस्वभाव राशिगत होकर लग्नमे हो और द्वादशेश तथा अष्टमेश निर्बल हो तो २५ वर्षकी आयु होती है ।

९—लग्नेश निर्बल हो, अष्टमेश द्वितीय या तृतीयमे हो, लग्नेश, अष्टमेश केन्द्रवर्ती हो तथा केन्द्रमे और कोई शुभ ग्रह नही हो तो जातककी ३० या ३२ वर्षकी आयु होती है ।

१०—गुरु और शुक्र केन्द्रमे हो और लग्नेश किसी पापग्रहके साथ आपोक्लिममे हो और जन्म सन्ध्या समय का हो तो ३६ वर्षकी आयु होती है ।

११—अष्टमेश स्थिर राशिमे स्थित होकर केन्द्रमे हो और अष्टम स्थान पाप दृष्ट हो, अष्टमेश लग्नमे हो और अष्टम स्थानमे कोई शुभ ग्रह नही हो एव स्वक्षेत्री शुभ ग्रहकी दृष्टि अष्टम स्थानपर पडती हो तो जातककी ४० वर्षकी आयु होती है ।

१२—अष्टमेश लग्नमे मगलके साथ हो अथवा अष्टमेश स्थिर राशिमे स्थित होकर १।८।१२ स्थानोमेसे किसी भी स्थानमे स्थित हो तो जातककी ४२ वर्षकी आयु होती है ।

१३—लग्न द्विस्वभाव राशिमे हो, बृहस्पति केन्द्रमे और शनि दसवे स्थानमे हो; सूर्य और शुक्र मकर राशिमे ३।६वे स्थानमे हो और अष्टमेश केन्द्रमे हो तो ४४ वर्षकी आयु होती है ।

१४—जन्मराशीश पापग्रहके साथ अष्टम स्थानमें हो और लग्नेश किसी पापग्रहके साथ छटवे स्थानमे हो तो ४५ वर्षकी आयु होती है ।

१५—सभी पापग्रह केन्द्रमे हो तो ४७ वर्षकी आयु होती है ।

१६—बुध चौथे या दसवे स्थानमे हो और चन्द्र लग्न अष्टम या

द्वादशमे हो और बृहस्पति शुक्र किसी भी स्थानमें एकत्रित हों तो ५० वर्षकी आयु होती है ।

१७--लग्न मीन राशि हो और शनि अन्य ग्रहोके साथ उसमें स्थित हो तथा चन्द्रमा ८।१२वे स्थानमे हो, शुक्र और गुरु उच्चके हो एवं द्वादशेश और अष्टमेश उच्चके हों तो ५५ वर्षकी आयु होती है ।

१८--तृतीयेश गुरुके साथ लग्नमे हो, कोई भी पापग्रह कुम्भ राशिका होकर केन्द्रमे हो; अष्टमेश लग्नमे हो, लग्नेश द्वादश भावमे हो तथा अष्टम स्थानमे पापग्रह हो, सूर्य शत्रुग्रह और मगलके साथ लग्नमे हो; लग्नेश पापग्रहके साथ ६।८।१२वें भावमे हो एव अष्टम स्थान शुभ ग्रहसे रहित हो और लग्नेश पापग्रहके साथ ६।८।१२वें स्थानमे हो तो ६० वर्षकी आयु होती है ।

१९--नीचका शनि केन्द्र या त्रिकोणमे हो और रवि शुभ ग्रहके साथ १।४।७।१० स्थानोमेंसे किसी भी स्थानमे हो तो ६५ वर्षकी आयु होती है।

२०--मगल पाँचवे, सूर्य सातवे और शनि नीच राशिका हो तो ७० वर्षकी आयु होती है ।

अष्टमेशका द्वादशभावोंमें फल

अष्टमेश लग्न स्थानमे हो तो जातक सहनशील, दीर्घरोगी, राजाके द्वारा धन प्राप्त करनेवाला, अशुभ कर्मरत और दु:खी द्वितीय स्थानमें हो तो अल्पायु, शत्रुओसे युत नीचकर्मरत, अभिमानी और दु:ख प्राप्त करनेवाला; तृतीयभावमे हो तो बन्धुविरोधी, सहोदर रहित, दुर्बल, रोगी, अल्पसुखी और विकलाङ्गी, चौथे भावमे हो पितासे शत्रुता करनेवाला, अन्यायसे पिताके धनका हरण करनेवाला, पिताके लिये विभिन्न प्रकारके कष्ट देनेवाला, चालाक, वावदूक और उग्र प्रकृतिवाला; पाँचवे भावमे हो तो सुतहीन, अल्पसन्ततिवाला, सन्तानके द्वारा सर्वदा कष्ट पानेवाला और मेधावी; छटवे स्थानमे हो तो रोगी, दु:खी, जीवनमे अनेक

प्रकारके उतार-चढाव देखनेवाला, शत्रुओंसे पीड़ा प्राप्त करनेवाला तथा उनके द्वारा मृत्युको प्राप्त होनेवाला और सन्तप्त, सातवे भावमे हो तो दुष्ट कुलोत्पन्न स्त्रीका पति, गुल्मरोगी, कष्ट पानेवाला, स्त्रीके साथ निरन्तर कलहसे दुःखी रहनेवाला और अल्पसुखी, आठवें भावमे हो तो व्यवसायी, निरोगी, व्याधि रहित, नीचोका नेता, नीचकर्मरत और धूर्तो-का सरदार; नौवे भावमे हो तो पापी, नीच, धर्मविमुख, अकेला रहनेवाला, सज्जन तथा नीच अष्टमेश होनेसे ब्राह्मणकी हत्या करनेवाला और कुरूप, दसवे भावमे हो तो नीचकर्मरत, राजाकी सेवा करनेवाला, आलसी, क्रूर प्रकृति, जारज, नीच और मातृघातक; ग्यारहवे भावमे हो तो बाल्यावस्था-मे दुखी, पर अन्तिम तथा मध्यावस्थामे सुखी, दीर्घायु, सत्कार्यरत तथा पापग्रह अष्टमेश ग्यारहवेमे हो तो अल्पायु, नीचकर्मरत, हिंसक और दु खी एव बारहवे भावमे अष्टमेश क्रूरग्रह हो तो निकृष्ट, चोर, शठ, कुब्जक, रोगी, दु खी और अनेक प्रकारके कष्ट पानेवाला होता है ।

अष्टमेश लग्नमे और लग्नेश अष्टममे हो तथा द्वादश, द्वितीय और तृतीय स्थानोपर पापग्रहोकी दृष्टि हो या पापग्रह इन स्थानोमे हो तो जातक नाना व्याधियोसे पीडित होकर मृत्युको प्राप्त करता है ।

नवम भाव विचार

नवमसे भाग्य और धर्म-कर्मके सम्बन्धमे विचार किया जाता है । भाग्येशके बलवान् होनेसे जातक भाग्यशाली होता है । यदि भाग्य भवनपर अनेक ग्रहोकी दृष्टि हो तो भाग्योदयके समय अनेक व्यक्तियोकी सहायता लेनी पड़ती है । भाग्येश ६।८।१२वे भावमे शत्रुगृहमे बैठा हो तो भाग्य उत्तम नही होता है । भाग्यस्थानमे लाभेश बैठा हो तो नौकरीका योग होता है । धनेश लाभमे गया हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो तो भाग्य-वान् होता है । लाभेश नौवे भावमे हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो तो भाग्यवान् होता है । नवमेश धन भावमे गया हो और दशमेशसे युत या

दृष्ट हो तो भाग्यवान् होता है । लाभेश नवम भावमें, धनेश लाभ भावमे, नवमेश धन भावमे हो और दशमेशसे युत या दृष्ट हो तो महाभाग्यवान् होता है । नवम भाव गुरु और शुक्रसे युत, दृष्ट हो या भाग्येश गुरु, शुक्रसे युत हो या लग्नेश और धनेश पचममे स्थित हो अथवा नवम भावमे; नवमेश लग्न भावमे गया हो तो जातक भाग्यवान् होता है ।

भाग्योदय काल

सप्तमेश या शुक्र ३।६।१०।११।७वे स्थानमे हो तो विवाहके बाद भाग्योदय होता है । भाग्येश रवि हो तो २२वे वर्षमे, चन्द्र हो तो २४वे वर्षमे, मगल हो तो २८वे वर्षमे, बुध हो तो ३२वे वर्षमे, गुरु हो तो १६वे वर्षमे, शुक्र हो तो २५वे वर्षमे, शनि हो तो ३६वे वर्षमे और राहु हो तो ४२वे वर्षमे भाग्योदय होता है ।

इस भावका विशेष फल

१—नवम भावमे गुरु या शुक्र स्थित हो तो मत्री, शासनकार्यमे सहयोग या विचारपरामर्श देनेवाला, कौसिलका मेम्बर, पार्लमेन्ट सेक्रेटरी और प्रधान न्यायाधीशका पेशकार होता है । पर इस योगमे ध्यान देनेकी एक बात यह है कि यह फल गुरु या शुक्रके उच्च राशिमे रहनेपर ही घटता है । नवम भावपर शुभ ग्रहकी दृष्टि भी अपेक्षित है ।

२—नवमस्थ गुरुको सूर्य देखता हो तो राजाके समान, धारासभाओ-का सदस्य, जनताका प्रतिनिधि, चन्द्र देखता हो तो विलासी, सुन्दरदेही; मगल देखता हो तो काचन, हिरण्य आदि मूल्यवान् धातुओवाला; बुध देखता हो तो धनी; शुक्र देखता हो तो पशु, धनधान्य आदि सम्पत्तिसे युक्त; शनि देखता हो तो चल-अचल नाना प्रकारकी सम्पत्तिका स्वामी होता है ।

३—गुरुको सूर्य-मंगल देखते हो तो ऐश्वर्य, रत्न, स्वर्ण आदि

सम्पत्तिसे युक्त, साहसी, धीरवीर, पराक्रमी और बडे परिवारवाला होता है। सूर्य-बुध देखते हो तो सुन्दर, भाग्यवान्, सुन्दर स्त्रीका पति, धनी, कवि, लेखक, सशोधक, सम्पादक और विद्वान् होता है। सूर्य-शुक्र देखते हो तो उद्यमी, कलाविज्ञ, यशस्वी, सुरुचिसम्पन्न, सुखी और नम्र होता है। सूर्य-शनि नवमस्थ गुरुको देखते हो तो नेता, प्रतिनिधि, कोषाध्यक्ष, प्रख्यात, मजिस्ट्रेट, न्यायाधीश और सग्रहकर्त्ता होता है। चन्द्र-मगल देखते हो तो सेनापति, कीर्त्तिवान्, धारासभाका सदस्य, मत्री, सुखी, भाग्यवान्, चतुर और मान्य; चन्द्र-बुध देखते हो तो उत्तम सुख प्राप्त करनेवाला, तेजस्वी, क्षमावान्, विद्वान्, कवि, कहानीकार और सगीतप्रिय, चन्द्र-शुक्र देखते हो तो धनिक, कर्त्तव्यपरायण, सन्तानहीन और कुटुम्बसे दुःखी, चन्द्र-शनि देखते हो तो अभिमानी, प्रवासी, मध्यावस्थामे सुखी, अन्तिम जीवनमे दुःखी और कष्ट प्राप्त करनेवाला, मगल-बुध देखते हो तो चतुर, सुशील, गायक, भूमिपति, विद्याद्वारा यशोपार्जन करनेवाला, प्रतिज्ञापूर्ण करनेवाला और मान्य, मगल-शुक्र देखते हो तो धनिक, विद्वान्, विदेश जानेवाला, तेजस्वी, सात्त्विक, चतुर, लब्धप्रतिष्ठ और शासन करनेवाला, मगल-शनि देखते हो तो नीच, पिशुन, द्वेषी, विदेश यात्रा करनेवाला, नीच प्रकृति, धन-धान्यसे परिपूर्ण होता है।

भाग्येशका द्वादश भावोंमें फल

भाग्येश लग्नमे हो तो जातक धर्मात्मा, श्रद्धालु, पराक्रमी, कृपण, राज-कार्य करनेवाला, बुद्धिमान, विद्वान्, कोमल प्रकृतिका और श्रेष्ठ कार्योमे अभिरुचि रखनेवाला; द्वितीय भावमे हो तो शीलवान् प्रख्यात, सत्यप्रिय, दानी, धर्मात्मा, धनिक, ऐश्वर्यवान् और मान्य; तृतीय भावमे हो तो बन्धुओसे प्रेम करनेवाला, अनाथोका आश्रयदाता और कुटुम्बियोंको सब प्रकारसे सहायता देनेवाला, चौथे भावमे हो तो पिताका भक्त, विद्वान्, कीर्त्तिवान्, सत्कार्यरत, दानी, मित्रवर्गको सुख देनेवाला, उद्योगी,

तेजस्वी और चपल; पाँचवे भावमे हो तो पुण्यात्मा, देव-द्विज और गुरुकी सेवामे तत्पर रहनेवाला, सुपुत्रवान्, सन्तान द्वारा यश प्राप्त करनेवाला और माताकी सेवामे सर्वदा प्रस्तुत रहनेवाला; छटवे भावमे हो तो शत्रुओसे पीड़ित, भीरु, पापी, नीच, शौकीन, निद्रालु, मूर्ख और धूर्त; सातवे भावमे हो तो सुन्दर, सत्यवती, सुशीला, धनवती तथा मधुरभाषिणी नारीका पति, विलासी, रतिकर्ममे प्रवीण और सुन्दर, आठवे भावमें हो तो दुष्ट, हिसक, कुटुम्बियोसे विरोध करनेवाला, निर्दयी, विचित्र स्वभावका और दुराचारी, नौवे भावमे हो तो स्नेही, कुटुम्बकी वृद्धि करनेवाला, भाग्यवान्, धनिक, दानी, श्रद्धालु, सेवापरायण, सज्जन, व्यापार द्वारा धनार्जन करनेवाला और प्रख्यात, दसवे भावमे हो तो ऐश्वर्यवान्, राजमान्य, सुखी, विलासी, कठिनसे कठिन कार्यमे भी सफलता प्राप्त करनेवाला, लब्धप्रतिष्ठ, शासनकार्यमे भाग लेनेवाला, धारासभाओ-का सदस्य और उच्च पदपर रहनेवाला, ग्यारहवे भावमे हो तो दीर्घायु, धर्मपारायण, धनिक, प्रेमी, व्यापार द्वारा लाभ प्राप्त करनेवाला, राज-मान्य, पुण्यात्मा, यशस्वी और स्व-पर कार्यरत एव बारहवे भावमे हो तो विदेशमे मान्य, सुन्दर, विद्वान्, कलाविज्ञ, चतुर, सेवा द्वारा ख्याति प्राप्त करनेवाला और किसी महान् कार्यमे सफलता प्राप्त करनेवाला होता है। यदि भाग्येश क्रूर ग्रह हो तो जातक दुर्बुद्धि और नीचकार्यरत होता है।

दशम भाव विचार

दशम भावपर शुभ ग्रहोकी दृष्टि हो तो मनुष्य व्यापारी होता है। (क) दसवे भावमे बुध स्थित हो (ख) दशमेश और लग्नेश एक राशिमे हो (ग) लग्नेश दशम भावमे गया हो, (घ) दशमेश १।४।५।७।९।१०मे हो तथा शुभ ग्रहोमे दृष्ट हो (ड) दशमेश अपनी राशिमे हो तथा शुभ ग्रहकी दृष्टि हो तो जातक व्यापारी होता है।

१—६।८।१२वे भावमे पापग्रहोसे दृष्ट बुध, गुरु और शुक्र हो तो

जातकको किसी भी काममे सफलता नही मिलती है । दशमेश ६।८।१२वे भावमे हो तो मन चञ्चल रहनेसे काम ठीक नही होता ।

२—दशमेश ग्यारहवे भावमे हो और एकादशेश दशम भावमे हो अथवा नवमेश दशममे और दशमेश नवम भावमे हो तो जातक श्रीमान्, प्रतापी, शासक और लोकमान्य होता है ।

३—१।८।७।१०मे रवि हो, चन्द्रमा १।८।५।७।९।१०वे स्थानमे हो, १।८वे भावमे गुरु हो तो राजयोग होता है ।

४—अष्टमेश छटवे और षष्ठेश आठवे भावमे हो अथवा अष्टमेश और षष्ठेश ये दोनो ग्रह १।८।७।१०मे स्थित हो या छटवेमे गुरु और ग्यारहवेमे चन्द्रमा तथा लाभेश शुभ ग्रहकी राशि और शुभ ग्रहके नवाशम स्थित हो तो जातक प्रतापी होता है ।

५—बली शुभ ग्रह ग्यारहवे भावमे हो और किसी अन्य शुभ-ग्रहके द्वारा देखा भी जाता हो अथवा द्वितीय स्थानमे चन्द्र, गुरु और शुक्र गये हो तो जातक श्रीमान् होता है ।

६—पञ्चमस्थानमे गुरु और दशमस्थानमे चन्द्रमा हो तो जातक राजा, बुद्धिमान् या तपस्वी होता है ।

पितृ सुख योग

१—(क) दशमेश शुभग्रह हो और वह शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो; (ख) दशमेश गुरु, शुक्रसे युत हो; (ग) नवमेश परमोच्चका हो (घ) चन्द्रकुण्डलीमे केन्द्रस्थानमे शुक्र हो (ङ) एव दशमेश शुभग्रहोके मध्यमे हो तो जातकको पिताका सुख अधिक होता है ।

२—(क) सूर्य, मगल दसवे या नौवे भावमे हो; (ख) पापग्रहसे युत सूर्य सातवे भावमे हो, (ग) सातवेमे सूर्य, दसवे स्थानमे मगल और बारहवे स्थानमे राहु हो; (घ) चतुर्थेश ६।८।१२वे भावमे हो; (ङ) दशमेश रवि, मंगलसे युक्त हो, ; (च) एवं दशम भावमे दशमेशकी शत्रुराशि-

का ग्रह हो तो जातकके पिताकी शीघ्र मृत्यु होती है। जातक अपने पिताका बहुत कम सुख प्राप्त करता है।

३—(क) कर्क राशिमें राहु, मगल और शनि हो, (ख) चतुर्थस्थानमें क्रूर ग्रह हो, (ग) चतुर्थेश क्रूर ग्रहोंसे दृष्ट युत हो; (घ) दशम स्थानमें समराशि गत हो और उस राशिका स्वामी क्रूर ग्रह हो, (ङ) चन्द्रमा पापग्रहके साथ हो तथा चन्द्रमासे चतुर्थ शनि और राहु हो तो जातकको माताका सुख कम मिलता है; अर्थात् छोटी ही अवस्थामें माताकी मृत्यु हो जाती है।

दशमेशका द्वादश भावोंमें फल

दशमेश लग्नमें हो तो जातक पितासे स्नेह करनेवाला, बाल्यावस्थामें दुखी, मातासे द्वेष करनेवाला, अन्तिम अवस्थामें सुखी, धनिक, पुत्रवान् और देशमान्य; द्वितीय स्थानमें हो तो अल्पसुखी, जागीरदार, मातासे द्वेष करनेवाला और परिश्रमसे जी चुरानेवाला, तृतीय स्थानमें हो तो कुटुम्बियोंसे विरोध करनेवाला, मामाके द्वारा सहायता प्राप्त करनेवाला और प्रत्येक कार्यमें असफलता प्राप्त करनेवाला; चौथे स्थानमें हो तो सुखी, कुटुम्बियोंकी सेवा करनेवाला राजमान्य, शासनमें भाग लेनेवाला, पच, प्रमुख, सबका प्रिय और ऐश्वर्यवान्, पाँचवे भावमें हो तो शुभ कार्य करनेवाला, पाखण्डी, राजासे धन प्राप्त करनेवाला, विलासी, माताको सर्व प्रकारसे सुख देनेवाला और सुखी; छटवें भावमें दशमेश पापग्रह होकर स्थित हो तो बाल्यावस्थामें दुखी, मध्यावस्थामें सुखी, मातासे द्वेष करनेवाला, भाग्यरहित, सामान्य धनिक और शत्रु द्वारा हानि प्राप्त करनेवाला, सातवेंमें हो तो सुन्दर रूपवती और पुत्रवाली रमणीका भर्त्ता, कौटुम्बिक सुखसे परिपूर्ण, भोगी, ससुरालसे सुख प्राप्त करनेवाला और सुखी; आठवे भावमें हो तो क्रूर, तस्कर, पाखण्डी, धूर्त, मिथ्याभाषी, अल्पायु, माताको सन्ताप देनेवाला, कष्टोंसे दुखित और नीचकर्मरत;

नौवें भावमे हो तो बन्धु-बान्धव समन्वित, मित्रोके सुखसे परिपूर्ण, अच्छे स्वभाववाला, धर्मात्मा और लोकप्रिय, दसवे भावमे हो तो पिताको सुख देनेवाला, माताके कुटुम्बको प्रसन्न रखनेवाला, मातुलकी सेवा करनेवाला, राजमान्य, मुखिया, धनी, चतुर, लेखक और कार्यकुशल, ग्यारहवें भावम हो तो माता-पिताको सम्मानित करनेवाला, धनिक, उद्योगी और व्यापारमे अत्यन्त निपुण; एव बारहवे भावमे हो तो राजकार्यमे प्रेम रखनेवाला, मान्य, शासनके कार्योमे सुधार करनेवाला, स्वाभिमानी और प्रवासी होता है।

एकादश भाव विचार

लाभ भावमे शुभग्रह हों तो न्यायमार्गसे धनका लाभ और पापग्रह हो तो अन्याय मार्गसे धनका लाभ होता है तथा शुभ और अशुभ दोनो प्रकारके ग्रह लाभ भावमे हो तो न्याय, अन्याय मिश्रित मार्गसे धन आता है।

लाभ भावपर शुभग्रहोकी दृष्टि हो तो लाभ और पापग्रहोकी दृष्टि हो तो हानि होती है। लाभेश १।४।५।७।९।१० भावोमे हो तो धनका बहुत लाभ होता है।

लाभेश शुभग्रहसे सम्बन्ध करता हो तो लाभ होता है।

यद्यपि ससुरालसे धन प्राप्त करनेके दो-तीन योग पहले भी लिखे गये है; किन्तु ग्यारहवें भावके विचारमे इन योगोपर कुछ विचार कर लेना आवश्यक है। निम्न योग अनुभव सिद्ध है--

१--सप्तम और चतुर्थ स्थानका स्वामी एक ही ग्रह हो तथा वह ग्रह इन्ही दोनों भावोमेसे किसी भावमे हो।

२--जायेश कुटुम्ब[1]स्थानमे और कुटुम्बेश जाया[2] स्थानमे हो।

---

[1]चौथा स्थान, [2]सप्तम स्थान।

३––जायेश[१] और कुटुम्बेश दोनो ग्रह सप्तममे अथवा कुटुम्ब स्थानमे एकत्र स्थित हो ।

४––जायेश और कुटुम्बेश दोनो ग्रह १।४।५।७।९।१०।११वे भावमे हो या चन्द्रसे ७वे अथवा चतुर्थ स्थानमे एकत्रित हों ।

बहुलाभ योग––लाभेश शुभग्रह होकर दशममे और दशमेश नवम भावमे हो या लाभेश नवम भावमे हो और नवमेश लाभ भावमे हो तो जातकको प्रचुर सम्पत्तिका लाभ होता है ।

द्वादश भावोंमें लाभेशका फल

लाभेश लग्नमे हो तो जातक अल्पायु, रोगी, बलवान्, पराक्रमी, दानी, सत्यकार्यरत, धनिक, ऐश्वर्यवान्, लोभी, समयपर कार्य करनेकी सूझसे अनभिज्ञ और हठी, दूसरे भावमे हो तो भोगी, साधारणतया धनी, रोगी, रत्न, सोना और चाँदीके आभूषण धारण करनेवाला, और आधि-व्याधि ग्रस्त, तीसरे भावमे हो तो बन्धु-बान्धवसे युक्त, लक्ष्मीवान् सर्वप्रिय और कुलमे ख्याति प्राप्त करनेवाला, चौथे भावमे हो तो दीर्घायु, समयकी गतिको पहचाननेवाला, धर्मरत, धनधान्यका लाभ प्राप्त करनेवाला और ऐश्वर्यवान्; पाँचवे भावमे हो तो पुत्रवान्, गुणवान्, अल्प लाभ प्राप्त करनेवाला, मध्यावस्थामे आर्थिक सकटसे दु.खी और पितासे प्रेम करनेवाला, छटवे भावमे हो तो रोगी, शत्रुओसे पीड़ित, पशुओका व्यापार करनेवाला और प्रवासी; सातवे भावमे हो तो तेजस्वी, पराक्रमशाली, सम्पत्तिवान्, दीर्घायु, पत्नीसे प्रेम करनेवाला, सब प्रकारके कौटुम्बिक सुखोको प्राप्त करनेवाला और रति कर्ममे प्रवीण; आठवे भावमे हो तो अल्पायु, रोगी, दु.खी, जीविकाहीन, आलसी, निस्तेज और अर्द्धमृतक समान, नौवे भावमे हो तो ज्ञानवान्, शास्त्रज्ञ, धर्मात्मा, ख्यातिवान् और

---

[१] सप्तम स्थानेश ।

श्रद्धालु; दसवे भावमे हो तो माताका भक्त, पुण्यात्मा, पितासे द्वेष करनेवाला, दीर्घायु, धनिक, उद्योगी, समाज मान्य, सत्कार्यरत, राष्ट्रीय कार्योमे प्रमुख भाग लेने वाला, देशकी उन्नतिमे अपने जीवन और प्राणोका उत्सर्ग करनेवाला, देशमे प्रतिनिधित्व प्राप्त करनेवाला और अमर कीर्त्तिको स्थापित करनेवाला, ग्यारहवे भावमे हो तो दीर्घायु, पुत्रवान् सुकर्मरत, सुशील, हसमुख, मिलनसार और साधारण धनिक एव बारहवे भावमे हो तो चचल, भोगी, रोगी, बाल्यावस्थामे दु खी, मध्यावस्थामे साधारण दु खी किन्तु अन्तिमावस्थामे आधि-व्याधियोसे पीडित, अभिमानी, अवसर आनेपर दान देनेवाला और सदा चिन्तित रहनेवाला होता है ।

बारहवें भावका विचार

द्वादश भावमे शुभग्रह स्थित हो तो सन्मार्गमे धनव्यय, अशुभ ग्रह स्थित हो तो असत्कार्योमे धन व्यय एव शुभ और पाप दोनो ही प्रकारके ग्रह स्थित हो तो सद्-असद् दोनो ही प्रकारके कार्योमे धन व्यय होता है । रवि, राहु और शुक्र ये तीनो बारहवे भावमे हो तो राजकार्यमे तथा गुरु बारहवे भावमे हो तो टैक्स और व्याज देनेमे धन व्यय होता है । बारहवे भावमे शनि, मगल हो तो भाईके द्वारा धन खर्च और क्षीण चन्द्र एव रवि हो तो राज-दण्डमे धन खर्च होता है ।

यद्यपि जातकके व्यवसायके बारेमे पहले लिखा जा चुका है किन्तु द्वादश भावकी सहायतासे भी व्यवसायका निर्णय करना चाहिये । चर राशिगत ग्रहोकी सख्या अधिक हो तो जातक किसी स्वतन्त्र व्यवसायका करनेवाला, स्थिर राशिगत ग्रहोकी सख्या अधिक हो तो डाक्टर, वकील एवं स्थायी व्यवसाय वाला तथा द्विस्वभाव राशिगत ग्रहोकी सख्या अधिक हो तो जातक अध्यापक, प्रोफेसर, मास्टर, किरानी, आढतिया आदिका पेशा करता है ।

राशि और ग्रहोके तत्त्व प्रथम भावके विचारमे लिखे गये है । उनके अनुसार निम्नप्रकार विचार किया जाता है--

१--बली ग्रह (२) बली ग्रहकी राशि (३) लग्न और (४) दशम-राशि इन चारोमे यदि अग्नि तत्त्वकी विशेषता हो तो बुद्धि और मानसिक क्रियाओमे चमत्कारपूर्ण कार्य; पृथ्वी तत्त्वकी विशेषता हो तो शारीरिक श्रम साध्य कार्य एव जल तत्त्वकी विशेषता हो तो जातकका व्यवसाय बदला करता है ।

द्वादश भावोंमें द्वादशेशका फल

व्ययेश लग्नमे हो तो जातक विदेश भ्रमण करनेवाला, मधुर भाषी, धन खर्च करनेवाला, रूपवान्, कुसगतिमे रहनेवाला, झगड़ालु, नाना प्रकरके उपद्रवोको करनेवाला और पुसत्व शक्तिसे हीन या अल्पपुसत्व शक्ति वाला; द्वितीय भावमे हो तो कृपण, कठोर, कटुभाषी, रोगी, निर्धन और दु खी; तीसरे भावमे हो तो मातृहीन या अल्पभाइयो वाला, प्रवासी, रोगी, अल्प धनी व्यवसायी, परिश्रमी और वाचाल; चौथे भावमे हो तो रोगी, श्रेष्ठ कार्यरत, पुत्रसे कष्ट प्राप्त करनेवाला, दु.खी, आर्थिक सकटसे परिपूर्ण और जीवनमे प्रायः असफल रहनेवाला, पाँचवे भावमे पापग्रह व्ययेश हो तो पुत्रहीन, पुत्रसुखसे वंचित, दुःखी तथा शुभग्रह व्ययेश हो तो पुत्र सुखसे अन्वित, सत्कार्यरत और अल्पसन्तति सुखको प्राप्त करनेवाला; छटवे भावमे पापग्रह व्ययेश हो तो कृपण, दुष्ट, नीच कार्यरत, अल्पायु तथा शुभग्रह व्ययेश हो तो मध्यमायु, लाभान्वित साधारणतया सुखी और अन्तिम जीवनमे कष्ट प्राप्त करने वाला; सातवें भावमें हो तो दुश्चरित्र, चतुर, अविवेकी परस्त्रीरत तथा क्रूरग्रह सप्तमेश हो तो अपनी स्त्रीसे मृत्यु प्राप्त करनेवाला, या किसी वेश्याके जालमे फँसकर मृत्युको प्राप्त करनेवाला और व्यसनी; आठवे भावमे हो तो पाखण्डी, धूर्त, धनरहित और नीचकार्यरत, नौवें

भावमें हो तो तीर्थयात्रा करनेवाला, चंचल, आलसी, दानी, धनार्जन करनेवाला और मतिहीन; दसवे भावमें हो तो परस्त्रीसे पराङ्मुख, सुन्दर सन्तानवाला, पवित्र, धनिक, जीवनको सफलतापूर्वक व्यतीत करनेवाला, और माताके साथ द्वेष करनेवाला; ग्यारहवे भावमें हो तो दीर्घजीवी, प्रमुख, दानी, सत्यवादी, सुकुमार, प्रसिद्ध, श्रेष्ठकार्यरत, मान्य, सेवावृत्तिके मर्मको जाननेवाला और परिश्रमी एवं बारहवे भावमें हो तो ऐश्वर्यवान्, ग्रामीण, कृपण, पशुसम्पत्तिवाला, जमीन्दार या मामूली जागीरका स्वामी और स्वकार्यरत होता है।

द्वादश लग्नोंका फल

मेष लग्नमें जन्म लेने वाला जातक दुर्बल, अभिमानी, अधिक बोलनेवाला, बुद्धिमान्, तेज स्वभाववाला, रजोगुणी, चंचल, स्त्रियोंसे द्वेष रखनेवाला, धर्मात्मा, कम सन्तानवाला, कुल दीपक, उदारवृत्ति तथा १।३ ६।८।१५।२१।३६।४०।४५।५६।६३ इन वर्षोंमें शारीरिक कष्ट, धन हानि और १६।२०।२८।३४।४१।४८।५१ इन वर्षोंमें भाग्य वृद्धि, धनलाभ वाहन सुख आदिको प्राप्त करनेवाला; वृषमें जन्म हो तो जातक गौरवर्ण स्त्रियोंका-सा स्वभाव, मधुरभाषी, शोकीन, उदारवृत्ति रजोगुणी ऐश्वर्यवान्, अच्छी सगतिमें बैठनेवाला, पुत्रसे रहित, लम्बे दाँत और कुंचित केशवाला, पूर्णायु और ३६ वर्षकी आयुके पश्चात् दुःख भोगनेवाला; मिथुनलग्नमें जन्म हो तो गेहुँआ रंग, हास्यरसमें प्रवीण, गायन-वाद्य रसिक, स्त्रियोंकी अभिलाषा करनेवाला, विषयासक्त, गोल-चेहरेवाला, शिल्पज्ञ, चतुर, परोपकारी, कवि, गणितज्ञ, तीर्थयात्रा करनेवाला, प्रथम अवस्थामें सुखी, मध्यमें दुःखी और अन्तिम अवस्थामें सुख भोगनेवाला, ३२–३५ वर्षकी अवस्थामें भाग्योदयको प्राप्त करनेवाला, मध्यमायु और नाना प्रकारके सुखोंको प्राप्त करने वाला; कर्क लग्नमें जन्म हो तो ह्रस्वकाय, कुटिल स्वभाव, स्थूल शरीर, स्त्रियोंके

वशीभूत रहनेवाला, धनिक, जलाशयसे प्रेम करनेवाला, मित्र द्रोही, शत्रुओं-से पीडित, कन्या सन्ततिवाला, व्यापारी, सुन्दर नेत्रवाला, अपने स्थानको छोड़कर अन्य स्थानमें वास करनेवाला, १६ या १७ वर्षकी अवस्थामें भाग्योदयको प्राप्त होनेवाला और व्यसनी; सिंह लग्नमें जन्म हो तो पराक्रमी बड़े हाथ-पैरवाला, चौड़े हृदयवाला, ताम्रवर्ण, पतलीकमर-वाला, तेज स्वभावका, क्रोधी, वेदान्त विद्याको जाननेवाला, घोड़ेकी सवारीसे प्रेम करनेवाला, रजोगुणी, अस्त्र चलानेमें निपुण उदारवृत्ति, साधु सेवामें सलग्न, प्रथमावस्थामें सुखी, मध्यमावस्थामें दुःखी अन्तिमावस्थामें पूर्ण सुखी तथा २१ या २८ वर्षकी अवस्थामें भाग्यो-दयको प्राप्त करनेवाला, कन्या लग्नमें जन्म हो तो जनाने स्वभावका, शृंगारप्रिय, बड़े नेत्रवाला, स्थूल तथा सामान्य शरीरका, अल्प और प्रिय भाषी, स्त्रीके वशमें रहनेवाला, भ्रातृद्रोही, चतुर, गणितज्ञ, कन्या सन्तति उत्पन्न करनेवाला, धर्ममें रुचि रखनेवाला, प्रवासी, गम्भीर स्वभाववाला, अपने मनकी बात किसीसे भी नहीं कहनेवाला, बाल्यावस्थामें सुखी, मध्या-वस्थामें सामान्य और अन्त्यावस्थामें दुःखी रहनेवाला और २३–२८ से ३६ वर्षकी अवस्था पर्यन्त भाग्योदय द्वारा धन ऐश्वर्यको बढानेवाला, तुला लग्नमें जन्म हो तो गौरवर्ण, सतोगुणी, परोपकारी, शिथिल गात्र, देवता, तीर्थमें प्रीति करनेवाला, मोटी नासिकावाला, व्यापारी, ज्योतिषी, प्रिय वचन बोलनेवाला, लोभरहित, भ्रमणशील, कुटम्बसे अलग रहने वाला, स्त्रियोंका द्रोही, वीर्य विकारसे युक्त, प्रथमावस्थामें दुःखी, मध्यमा-वस्थामें सुखी, अन्तिमावस्थामें सामान्य, मध्यमायु, और ३१ या ३२ वर्ष-की अवस्थामें भाग्यवृद्धिको प्राप्त करनेवाला; वृश्चिक लग्नमें जन्म हो तो ह्रस्वकाय, स्थूल शरीर, गोल नेत्र, चौडी छातीवाला, निन्दक, सेवाकर्म करनेवाला, कपटी, पाखण्डी, भ्राताओंसे द्रोह करनेवाला, कटु स्वभाव, झूठ बोलनेवाला, भिक्षावृत्ति, तमोगुणी, पराये मनकी बात जाननेवाला, ज्योतिषी, दयारहित, प्रथमावस्थामें दुःखी, मध्यमावस्थामें सुखी, पूर्णा-

युष और २० या २४ वर्षकी अवस्थामें भाग्योदयको प्राप्त होनेवाला, धनु लग्नमें जन्म हो तो सतोगुणी, अच्छे स्वभाववाला, बड़े दाँतवाला, धनिक, ऐश्वर्यवान्, विद्वान्, कवि, लेखक, प्रतिभावान्, व्यापारी, यात्रा करनेवाला, महात्माओंकी सेवा करनेवाला, पिंगल वर्ण, पराक्रमी, अल्पसन्तानवाला, प्रेमके वशमें रहनेवाला, प्रथमावस्थामें सुख भोगनेवाला, मध्यावस्थामें सामान्य, अन्तमें धन-ऐश्वर्यसे परिपूर्ण और २२ या २३ वर्षकी अवस्थामें धनलाभ प्राप्त करनेवाला, मकर लग्नमें जन्म हो तो मनुष्य तमोगुणी, सुन्दर नेत्रवाला, पाखण्डी, आलसी, खर्चीला, भीरु, अपने धर्ममें विमुख रहनेवाला, स्त्रियोंमें आसक्ति रखनेवाला, कवि, निर्लज्ज, प्रथमावस्थामें सामान्य, मध्यमें दुःखी, पूर्णायु और अन्तमें ३२ वर्षकी आयुके पश्चात् सुख भोगनेवाला, कुम्भ लग्नमें जन्म हो तो रजोगुणी, मोटी गर्दनवाला, अभिमानी ईर्षालु, द्वेषयुक्त, गंजे सिरवाला, ऊँचे शरीरवाला, पर स्त्रियोंकी अभिलाषा करनेवाला, प्रथमावस्थामें दुःखी, मध्यमावस्थामें सुखी, अन्तिम अवस्थामें धन, पुत्र, भूमि प्रभृतिके सुखोंको भोगनेवाला, भ्रातृद्रोही और २४ या २५ वर्षकी अवस्थामें भाग्योदयको प्राप्त करनेवाला एवं मीन लग्नमें जन्म हो तो सतोगुणी, बड़े नेत्रवाला, ठोढ़ीमें गाड़, सामान्य शरीर वाला, प्रेमी, स्त्रीके वशीभूत रहने वाला, विशाल मस्तिष्क वाला, ज्यादा सन्तान पैदा करनेवाला रोगी, आलसी, विषयासक्त-अकस्मात् हानि उठाने वाला, प्रथमावस्थामें सामान्य, मध्यम दुःखी और अन्तमें सुख भोगनेवाला तथा २१–२२ वर्षकी आयुमें भाग्यवृद्धि करनेवाला होता है।

होराफल

द्वितीय अध्यायमें होराका साधन किया गया है। अतएव होरा कुण्डली बनाकर देखना चाहिये कि होरा लग्न सूर्य राशि हो और सूर्य उसीमें स्थित हो तो जातक रजोगुणी, उच्चपदाभिलाषी, गुरु और शुक्र

होरा लग्नमे सूर्यके साथ हो तो सम्पत्तिवान्, सुखी, मान्य, उच्चपदारूढ, शासक, नेता, शीलवान्, राजमान्य तथा होरेश लग्नमे पापग्रहसे युक्त हो तो नीच प्रकृतिवाला, दुश्शील, सम्पत्ति रहित कुलके विरुद्ध आचरण करनेवाला और नीच कर्मरत जातक होता है। यदि चन्द्रमाकी राशि होरालग्नमे हो और होरेश चन्द्रमा उसमे स्थित हो तो जातक शान्त स्वभाव वाला, मातृभक्त, लज्जालु, व्यवसायी, कृषिकर्ममे अभिरुचि करनेवाला, अल्पलाभमे सन्तोष करनेवाला, तथा शुभग्रह गुरु, शुक्र आदि भी होरा लग्नमे चन्द्रमाके साथ हो तो जातक भक्ति-श्रद्धा-सदाचार युक्त आचरण करनेवाला, शीलवान्, धनिक, सन्तानवान्, सुखी और चन्द्रमाके साथ पापग्रह हो तो विपरीत आचरणवाला, निर्धन, दुःखी तथा नीच कार्योमे प्रेम करनेवाला होता है।

सप्तमांश चक्रका फल विचार

सप्तमाश लग्नसे केवल सन्तानका विचार करना चाहिये। सप्तमाश लग्नका स्वामी पुरुषग्रह हो तो जातकको पुत्र उत्पन्न होते हैं और सप्तमाश लग्नका स्वामी स्त्रीग्रह हो तो जातकको कन्याएँ अधिक उत्पन्न होती है। सप्तमाश लग्नका स्वामी पापग्रह हो, पापग्रहके साथ हो या पापग्रहकी राशिमे हो तो सन्तान नीच कर्म करनेवाली होती है और सप्तमाश लग्नका स्वामी स्वराशिका शुभग्रहसे युक्त वा दृष्ट हो या शुभ ग्रहकी राशिमे स्थित हो तो सन्तान शुभाचरण करनेवाली, सुन्दर, सुशील और गुणी होती है।

सप्तमाश लग्नका स्वामी सप्तमाश लग्नसे ६ या ८ वें स्थानमे पापग्रहसे युक्त या दृष्ट हो तो जातक सन्तानहीन होता है!

नवमांश कुण्डलीके फलका विचार

नवमाश लग्नसे स्त्री भावका विचार किया जाता है। इससे स्त्रीका आचरण, स्वभाव, चेष्टा प्रभृतिको देखना चाहिये। नवमाश लग्नका

स्वामी मगल हो तो स्त्री क्रूर स्वभावकी, कुलटा, लड़ाकू, सूर्य हो तो पतिव्रता, उग्रस्वभावकी; चन्द्रमा हो तो शीतलस्वभाव, गौरवर्ण और मिलनसार प्रकृतिकी; बुध हो तो चतुर, चित्रकार, सुन्दर आकृति, शिल्प विद्यामें निपुण; गुरु हो तो पीत वर्ण, ज्ञानवती, शुभाचरणवाली पतिव्रता, सौम्य स्वभाव, व्रत-तीर्थ करनेवाली; शुक्र हो तो चतुर, शृगार-प्रिय, विलासी, कामक्रीड़ामें प्रवीण, गौरवर्ण, व्यभिचारिणी और शनि हो तो क्रूर स्वभाववाली, कुलके विरुद्ध आचरण करनेवाली, श्याम वर्ण नीच सगतिमे रत, पतिसे विरोध करनेवाली होती है। नवमाश लग्नका स्वामी राहु, केतुके साथ हो तो दुराचारिणी, कुटिला, दुष्टा, नवमाश लग्नका स्वामी शुभ ग्रह हो और स्वराशिस्थ केन्द्रत्रिकोणमे हो तो जातकको स्त्रीका पूर्ण सुख मिलता है तथा नवमाश लग्नका स्वामी भाग्येश-के साथ २।११ वे भावमे उच्चका होकर स्थित हो तो स्त्रियोसे अनेक प्रकार-का लाभ तथा ससुरालके धनका स्वामी होता है। नवमाश लग्नका स्वामी पापग्रहोसे युक्त या दृष्ट ६।८।१२ वे भावमे स्थित हो तो जातकको स्त्रीका सुख नही होता है। यह जितने पाप ग्रहोसे युक्त या दृष्ट हो उतनी ही स्त्रियोको नाश करनेवाला होता है।

द्वादशांश कुण्डलीके फलका विचार

द्वादशाश लग्नपरसे माता-पिताके सुख दु.खका विचार किया जाता है। यदि द्वादशाश लग्नका स्वामी शुभ ग्रह हो तो जातकके माता-पिता-का शुभाचरण और पापग्रह हो तो व्यभिचार युक्त आचरण होता है। द्वादशाश लग्नका स्वामी पुरुषग्रह अपनी राशि, मित्रकी राशि या उच्चकी राशिमे स्थित होकर १।४।५।७।९।१० वें स्थानोमे स्थित हो तो जातकको पिताका पूर्ण सुख और नीच राशि, शत्रुराशि या पापग्रहकी राशिमे स्थित हो या ६।८।१२ वें भावमे बैठा हो तो पिताका अल्प सुख होता है। द्वादशाश लग्नका स्वामी स्त्रीग्रह सौम्य हो और स्वराशि, मित्रराशि या

उच्चकी राशिमे स्थित हो कर १।४।५।७।९।१० भावोमे स्थित हो तो जातकको माताका सुख होता है । यदि यही स्त्रीग्रह पापयुक्त या पापदृष्ट होकर ६।८।१२वे भाव हो तो माताका सुख नही होता ।

चन्द्रकुण्डली फल विचार

चन्द्रकुण्डलीसे जन्मकुण्डलीके समान फलका विचार करना चाहिए । यदि चन्द्र लग्नेश उच्चराशि, स्वराशि या मित्रराशिमे स्थित होकर १।४।५।७।९।१०वे भावमे स्थित हो तो जातक चतुर, धनिक, कार्यकुशल, ख्यातिवान्, धन-धान्य समन्वित होता है तथा चन्द्र-लग्नेश पाप दृष्ट या पापयुत होकर ६।८।१२वे भावमे स्थित हो तो जातकको नाना प्रकारके कष्ट सहन करने पडते है । चन्द्र-लग्नेश शुभ ग्रहोसे युत होकर जन्मलग्नेशसे इत्थशाल करता हो तो जातक ऐश्वर्यवान्, पराक्रमी और सहनशील होता है । चन्द्र लग्नसे चौथे मगल, दसवे गुरु और ग्यारहवे शुक्र हो तो जातक राजमान्य; नेता, प्रतिनिधि और धारा सभाका मेम्बर होता है । चन्द्र लग्नमे बुध चौथे, शुक्र पाँचवे, गुरु नौवे और मगल दसवे स्थानमे हो तो जातक राजा मत्री, जागीरदार, जमीन्दार शासक या उच्च पदासीन होनेवाला होता है, चन्द्रलग्नेश चन्द्रलग्नसे नवम स्थानके स्वामीका मित्र होकर चन्द्रलग्नसे दसवे भावमे स्थित हो तो जातक तपस्वी, महात्मा, शासक या पूज्य नेता होता है । चन्द्र लग्नेशका ३।६वे भावमे रहना रोग सूचक है ।

विंशोत्तरी दशा फल विचार

दशाके द्वारा प्रत्येक ग्रहकी फल प्राप्तिका समय जाना जाता है । सभी ग्रह अपनी दशा, अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा और सूक्ष्म दशाकालमें फल देते है । जो ग्रह उच्चराशि, मित्रराशि या अपनी राशिमे रहता है वह अपनी दशामे अच्छा फल और जो नीचराशि, शत्रुराशि और अस्तगत हो वे अपनी दशामे धन-हानि, रोग, अवनति आदि फलोको करते है ।

रवि दशाफल——सूर्यकी दशामें परदेशगमन, राजासे धन लाभ, व्यापार-आमदनी, ख्यातिलाभ, धर्ममें अभिरुचि; यदि सूर्य नीच राशिमें पापयुक्त या दृष्ट हो तो ऋणी, व्याधिपीड़ित, प्रियजनोंके वियोग जन्य कष्टको सहनेवाला, राजासे भय और कलह आदि अशुभ फल होता है। सूर्य यदि मेषराशिगत हो तो नेत्ररोग, धनहानि, राजासे भय, नाना प्रकारके कष्ट, वृष राशि गत हो तो स्त्री-पुत्रके सुखसे हीन, हृदय और नेत्रका रोगी मित्रोंसे विरोध, मिथुन राशिमें हो तो अन्न-धन युक्त, शास्त्र-काव्यमें आनन्द, विलास, कर्कमें हो तो राज सम्मान, धन प्राप्ति, माता-पिता-बन्धुवर्गसे पृथक्ता, वातजन्यरोग, सिंहमें हो तो राजमान्य, उच्च पदासीन, प्रसन्न, कन्यामें हो तो कन्यारत्नकी प्राप्ति, धर्ममें अभिरुचि, तुलामें हो तो स्त्री-पुत्रकी चिन्ता, परदेश गमन, वृश्चिकमें हो तो प्रतापकी वृद्धि विष-अग्निसे पीड़ा, धनुमें हो तो राजासे प्रतिष्ठा प्राप्ति, विद्याकी प्राप्ति, मकरमें हो तो स्त्री-पुत्र-धन आदिकी चिन्ता, त्रिदोष रोगी, परकार्योंमें प्रेम, कुम्भमें हो तो पिशुनता, हृदयरोग, अल्पधन, कुटम्बियोंसे विरोध, और मीन राशिमें हो तो रविदशा कालमें वाहन लाभ, प्रतिष्ठाकी वृद्धि, धन-मानकी प्राप्ति, विषमज्वर आदि फलोंकी प्राप्ति होती है।

चन्द्र दशाफल——पूर्ण, उच्चका और शुभग्रह युत चन्द्रमा हो तो उसकी दशामें अनेक प्रकारसे सम्मान, मन्त्री, धारासभाका सदस्य, विद्या, धन आदि प्राप्त करनेवाला होता है। नीच या शत्रुराशिमें रहनेपर चन्द्रमाकी दशामें कलह, क्रूरता, सिरमें दर्द, धन नाश आदि फल होता है। चन्द्रमा मेषराशिमें हो तो उसकी दशामें स्त्रीसुख, विदेशसे प्रीति, कलह, सिररोग, वृषमें हो तो धन-वाहन लाभ, स्त्रीसे प्रेम, माताकी मृत्यु, पिताको कष्ट, मिथुनमें हो तो देशान्तर गमन, सम्पत्ति लाभ, कर्कमें हो तो गुप्तरोग, धन-धान्यकी वृद्धि, कलाप्रेम; सिंहमें हो तो बुद्धिमान्, सम्मान्य, धनलाभ, कन्यामें हो तो विदेशगमन, स्त्रीप्राप्ति, काव्यप्रेम, अर्थलाभ; तुलामें हो तो विरोध, चिन्ता, अपमान, व्यापारसे धनलाभ, मर्म स्थानमें रोग,

वृश्चिकमे हो तो चिन्ता, रोग, साधारण धन लाभ, धर्महानि; धनुमें हो तो सवारी लाभ, धन नाश; मकरमे हो तो सुख, पुत्र स्त्री-धनकी प्राप्ति उन्माद या वायु रोगसे कष्ट; कुम्भमे हो तो व्यसन, ऋण नाभिसे ऊपर तथा नीचे पीड़ा, दाँत-नेत्रमें रोग और मीनमे हो तो चन्द्रमाकी दशामे अर्थागम, धनसग्रह, पुत्रलाभ, शत्रुनाश आदि फलोकी प्राप्ति होती है।

भौम दशाफल——मंगल उच्च, स्वस्थान या मूलत्रिकोणगत हो तो उसकी दशामे यशलाभ, स्त्री-पुत्रका सुख, साहस, धनलाभ आदि फल प्राप्त होते है। मगल मेष राशिमे हो तो उसकी दशामे धनलाभ, ख्याति, अग्निपीड़ा; वृषमे हो तो रोग, अन्यसे धनलाभ, परोपकाररत; मिथुनमे हो तो विदेशवासी, कुटिल, अधिक खर्च, पित्त-वायुसे कष्ट, कानमे कष्ट; कर्कमें हो तो धनयुक्त, क्लेश, स्त्री-पुत्र आदिसे दूर निवास; सिहमे हो तो शासनलाभ, शस्त्राग्निपीड़ा, धनव्यय,; कन्यामे हो तो पुत्र, भूमि, धन, अन्नसे परिपूर्ण; तुलामे हो तो स्त्री-धनसे हीन, उत्सव रहित, झझट अधिक, क्लेश; वृश्चिकमे हो तो अन्न-धनसे परिपूर्ण, अग्नि-शस्त्रसे पीड़ा; धनुमे हो तो राजमान्य, जय-लाभ, धनागम; मकरमे हो तो अधिकार प्राप्ति, स्वर्ण-रत्न लाभ, कार्यसिद्धि, कुम्भमे हो तो आचारका अभाव, दरिद्रता, रोग, व्यय अधिक, चिन्ता और मीनमे हो तो ऋण, चिन्ता, विसूचिका-रोग, खुजली, पीड़ा आदि फल प्राप्त होते है।

बुध दशाफल——उच्च स्वराशिगत और बलवान् बुधकी दशामे विद्या, विज्ञान, शिल्प, कृषि कर्ममे उन्नति; धनलाभ, स्त्रीपुत्रको सुख, कफ-वात-पित्तकी पीड़ा होती है। मेष राशिमे बुध हो तो बुधकी दशामे धनहानि, छलकपटयुक्त व्यवहारके लिये प्रवृत्ति; वृष राशिमे हो तो धन, यशलाभ, स्त्रीपुत्रकी चिन्ता, विषसे कष्ट; मिथुनमे हो तो अल्पलाभ, साधारण कष्ट, माताको सुख; कर्कमे हो तो धनार्जन, काव्यसृजन योग्य प्रतिभाकी जागृति, विदेशगमन; सिंहमे हो तो ज्ञान, यश, धननाश; कन्यामे हो तो ग्रन्थोका निर्माण, प्रतिभाका विकास, धन-ऐश्वर्य लाभ; वृश्चिकमे

हो तो कामपीडा, अनाचार, अधिक खर्च; धनुमें हो तो मन्त्री, शासन-की प्राप्ति, नेतागिरी; मकरमें हो तो नीचोंसे मित्रता, धन हानि, अल्पलाभ; कुंभमें हो तो बन्धुओंको कष्ट, दरिद्रता, रोग, दुर्बलता और मीनराशिमें हो तो बुधकी दशामें खांसी, विष-अग्नि-शस्त्रसे पीड़ा, अल्पहानि, नाना प्रकारकी झंझटें आदि फलोंकी प्राप्ति होती है।

गुरु दशाफल—गुरुकी दशामें ज्ञानलाभ, धन-वस्त्र-वाहन-लाभ, कंठरोग, गुल्मरोग, प्लीहा रोग आदि फल प्राप्त होते हैं। मेष राशिमें गुरु हो तो उसकी दशामें अफसरी, विद्या, स्त्री, धन, पुत्र, सम्मान आदिका लाभ; वृषमें हो तो रोग, विदेशमें निवास, धन हानि; मिथुनमें हो तो विरोध, क्लेश, धन नाश; कर्कमें हो तो राज्यसे लाभ, ऐश्वर्यलाभ, ख्याति-लाभ, मित्रता, उच्चपद, सेवावृत्ति; सिंहमें हो तो राजसे मान, पुत्र-स्त्री-बन्धु-लाभ, हर्ष, धन-धान्य पूर्ण; कन्यामें हो तो रानीके आश्रयसे धनलाभ, शासनमें योग दान देना, भ्रमण, विवाद, कलह; तुलामें हो तो फोड़ा-फुंसी, विवेकका अभाव, अपमान, शत्रुता; वृश्चिकमें हो तो पुत्रलाभ, निरोगता, धनलाभ, पूर्व ऋणका अदा होना; धनु राशिमें हो तो सेनापति मंत्री सदस्य, उच्च पदासीन, अल्पलाभ; मकरमें हो तो आर्थिक कष्ट, गुह्यस्थानोंमें रोग; कुम्भमें हो तो राजासे सम्मान, धारासभाका सदस्य, विद्या-धनलाभ, आर्थिक साधारण सुख और मीनमें हो तो विद्या, धन, स्त्री, पुत्र, प्रसन्नता, सुख आदिको प्राप्त करता है।

शुक्र दशाफल—शुक्रकी दशामें रत्न, वस्त्र, आभूषण, सम्मान नवीन कार्यारम्भ, मदनपीड़ा, वादनसुख आदि फल मिलते हैं। मेष राशिमें शुक्र हो तो मनमें चंचलता, विदेश भ्रमण, उद्वेग, व्यसनप्रेम धनहानि; वृषमें हो तो विद्यालाभ, धन, कन्या, सुखकी प्राप्ति; मिथुनमें हो तो काव्य-प्रेम, प्रसन्नता, धनलाभ, परदेश गमन, व्यवसायमें उन्नति; कर्कमें हो तो उद्यमसे धनलाभ, आभूषणलाभ, स्त्रियोंसे विशेष प्रेम; सिंहमें हो तो

साधारण आर्थिक कष्ट, स्त्री द्वारा धनलाभ, पुत्रहानि, पशुओसे लाभ; कन्यामे हो तो आर्थिक कष्ट, दुःखी, परदेश गमन, स्त्री-पुत्रमे विरोध, तुलामे हो तो ख्यातिलाभ, भ्रमण, अपमान, वृश्चिकमे हो तो प्रताप, क्लेश, धनलाभ, सुख, चिन्ता, धनुमे हो तो काव्यप्रेम, प्रतिभाका विकास, राज्यसे सम्मान लाभ, पुत्रोसे स्नेह, मकरमे हो तो चिन्ता, कष्ट वात-कफके रोग, कुम्भमे हो तो व्यसन, रोग, कष्ट, धनहानि और मीनमे हो तो राजासे धनलाभ, व्यापारसे लाभ, कारोबारकी वृद्धि, नेतागिरी आदि फलोकी प्राप्ति होती है।

शनि दशाफल——बलवान् शनिकी दशामे जातकको धन, जन सवारी, प्रताप, भ्रमण, कीर्त्ति, रोग आदि फल प्राप्त होते है। मेष राशिमे शनि हो तो शनिकी दशामे स्वतन्त्रता, प्रवास, मर्मस्थानमे रोग, चर्मरोग बन्धु-बान्धवसे वियोग, वृषमे हो तो निरुद्यम, वायुपीडा, कलह, वमन-दस्तके रोग, राजासे सम्मान, विजयलाभ; मिथुनमे हो तो ऋण, कष्ट, चिन्ता, परतन्त्रता, कर्कमे हो तो नेत्र-कानके रोग, बन्धुवियोग, विपत्ति, दरिद्रता, सिहमे हो तो रोग, कलह आर्थिक कष्ट, कन्यामे हो तो मकानका निर्माण करना, भूमिलाभ, सुखी होना, तुलामे हो तो धन-धान्यका लाभ, विजय-लाभ, विलास, भोगोपभोगकी वस्तुओकी प्राप्ति, वृश्चिकमे हो तो भ्रमण, कृपणता, नीच सगति, साधारण आर्थिक कष्ट; धनुमे हो तो राजासे सम्मान, जनतामे ख्याति, आनन्द, प्रसन्नता, यशलाभ; मकरमे हो तो आर्थिक सकट, विश्वासघात, बुरे व्यक्तियोका साथ; कुम्भमे हो तो पुत्र, धन, स्त्रीका लाभ, सुखलाभ, कीर्त्ति, विजय; और मीनमे हो तो अधिकार प्राप्ति, सुख, सम्मान, स्वास्थ्य, उन्नति आदि फलोकी प्राप्ति होती है।

राहु दशाफल——मेष राशिमे राहु हो तो उसकी दशामे अर्थ-लाभ, साधारण सफलता, घरेलू झगड़े, भाईसे विरोध; वृषमे हो तो राज्यसे लाभ, अधिकार प्राप्ति, कष्टसहिष्णुता, सफलता; मिथुनमे हो तो दशाके

प्रारम्भमे कष्ट, मध्यममे सुख; कर्कमे हो तो अर्थलाभ, पुत्रलाभ, नवीन कार्य करना, धन सचित करना; सिहमे हो तो प्रेम, ईर्षा, रोग, सम्मान, कार्योमे सफलता; कन्यामे हो तो मध्यवर्गके लोगोसे लाभ, व्यापारसे लाभ, व्यसनोसे हानि, नीच कार्योसे प्रेम, सन्तोष; तुला राशिका राहु हो तो झझट, अचानक कष्ट, बन्धु-बान्धकोसे क्लेश, धनलाभ, यश और प्रतिष्ठा की-वृद्धि, वृश्चिक राशिका राहु हो तो आर्थिक कष्ट, शत्रुओसे हानि, नीचकार्यरत, धनुका हो तो यशलाभ. धारासभाओमे प्रतिष्ठा, उच्च पद प्राप्ति; मकरका राहु हो तो सिरमे रोग, वातरोग, आर्थिक सकट, कुम्भका हो तो धन-लाभ, व्यापारसे साधारण लाभ, विजय और मीनका हो तो विरोध, झगड़ा, झझट, अल्पलाभ, रोग आदि बाते होती है ।

केतु दशाफल—मेषमे केतु हो तो धनलाभ, यश, स्वास्थ्य, वृषमे हो तो कष्ट, हानि, पीडा, चिन्ता, अल्पलाभ, मिथुनमे हो तो कीर्त्ति, बन्धुओसे विरोध, रोग, पीडा, कर्कमे हो तो सुख, कल्याण, मित्रता, पुत्रलाभ, स्त्री-लाभ, सिहमे हो तो अल्पसुख, धनलाभ, कन्यामे हो तो निरोग, प्रसिद्ध, सत्कार्योसे प्रेम, नवीन काम करनेकी रुचि, तुलामे हो तो व्यसनोमे रुचि, कार्यहानि, अल्पलाभ, वृश्चिकमे हो तो धन-सम्मान-पुत्र-स्त्रीलाभ, कफ रोग, बन्धनजन्य कष्ट, धनुमे हो तो सिरमे रोग, नेत्रपीडा, भय, झगड़े, मकरमे हो तो हानि, साधारण व्यापारोसे लाभ, नवीन कार्योमे असफलता. कुम्भमे हो तो आर्थिक सकट, पीडा, चिन्ता बन्धु-बान्धवोका वियोग और मीनमे हो तो साधारण लाभ, अकस्मात् धन प्राप्ति, लोकमे ख्याति, विद्या-लाभ, कीर्त्तिलाभ आदि बाते होती है । दशाफलका विचार करते समय ग्रह किस भावका स्वामी है और उसका सम्बन्ध कैसे ग्रहोसे है, इसका ध्यान रखना आवश्यक है ।

भावेशोंके अनुसार विशोत्तरी दशाका फल

१—लग्नेशकी दशामे शारीरिक सुख और धनागम होता है, परन्तु स्त्रीकष्ट भी देखा जाता है ।

२--धनेशकी दशामें धनलाभ, पर शारीरिक कष्ट भी होता है। यदि धनेश पापग्रहसे युत हो तो मृत्यु भी हो जाती है।

३--तृतीयेशकी दशा कष्टकारक, चिन्ताजनक, और साधारण आमदनी करानेवाली होती है।

४--चतुर्थेशकी दशामें घर, वाहन, भूमि आदिके लाभके साथ माता, मित्रादि और स्वयं अपनेको शारीरिक सुख होता है। चतुर्थेश बलवान्, शुभग्रहोंसे दृष्ट हो तो इसकी दशामें नया मकान जातक बनवाता है। लाभेश और चतुर्थेश दोनों दशम या चतुर्थमें हो तो इस ग्रहकी दशामें मिल या बड़ा कारोबार जातक करता है। लेकिन इस दशाकालमें पिताको कष्ट रहता है। विद्यालाभ, विश्वविद्यालयोंकी बड़ी डिग्रियाँ इसके कालमें प्राप्त होती हैं। यदि जातकको यह दशा अपने विद्यार्थी कालमें नहीं मिले तो अन्य समयमें इसके कालमें विद्या विषयक उन्नति, तथा विद्या द्वारा यशकी प्राप्ति होती है।

५--पंचमेशकी दशामें विद्याप्राप्ति, धनलाभ, सम्मानवृद्धि, सुबुद्धि, माताकी मृत्यु या माताको पीड़ा होती है। यदि पंचमेश पुरुषग्रह हो तो पुत्र और स्त्रीग्रह हो तो कन्या सन्तानकी प्राप्तिका भी योग रहता है, किन्तु सन्तान योगपर इस विचारमें दृष्टि रखना आवश्यक है।

६--षष्ठेशकी दशामें रोगवृद्धि, शत्रुभय, और सन्तानको कष्ट होता है।

७--सप्तमेशकी दशामें शोक, शारीरिक कष्ट, आर्थिक कष्ट और अवनति होती है। सप्तमेश पापग्रह हो तो इसकी दशामें स्त्रीको अधिक कष्ट और शुभग्रह हो तो साधारण कष्ट होता है।

८--अष्टमेशकी दशामें मृत्युभय, स्त्री-मृत्यु एवं विवाह आदि कार्य होते हैं। अष्टमेश पापग्रह हो और द्वितीयमें बैठा हो तो निश्चय मृत्यु होती है।

९--नवमेशकी दशामें तीर्थयात्रा, भाग्योदय, दान, पुण्य विद्या,

द्वारा उन्नति, भाग्यवृद्धि, सम्मान, राज्यसे लाभ और किसी महान् कार्यमे पूर्ण सफलता प्राप्त करनेवाला होता है।

१०—दशमेशकी दशामें राजाश्रयकी प्राप्ति, धनलाभ, सम्मान-वृद्धि, और सुखोदय होता है। माताके लिये यह दशा कष्टकारक है।

११—एकादशेशकी दशामे धनलाभ, ख्याति, व्यापारसे प्रचुरलाभ एव पिताकी मृत्यु होती है। यह दशा साधारणतः शुभ फलदायक होती है, यदि एकादशेशपर क्रूरग्रहकी दृष्टि हो तो यह रोगोत्पादक भी होती है।

१२—द्वादशेशकी दशामे धनहानि, शारीरिक कष्ट, चिन्ताएँ, व्याधियाँ और कुटुम्बियोको कष्ट होता है।

ग्रहोंकी दशाका फल सम्पूर्ण दशा कालमे एकसा नही होता है, किन्तु प्रथम द्रेष्काणमे ग्रह हो तो दशाके प्रारम्भमे, द्वितीय द्रेष्काणमे हो तो दशाके मध्यमे और तृतीय द्रेष्काणमे ग्रह हो तो दशाके अन्तमे फलकी प्राप्ति होती है। वक्रीग्रह हो तो विपरीत अर्थात् तृतीय द्रेष्काणमे हो तो प्रारम्भमे, द्वितीयमे हो तो मध्यमे और प्रथम द्रेष्काणमे हो तो अन्तमे फल समझना चाहिये।

वक्रीग्रहकी दशाका फल—वक्रीग्रहकी दशामे स्थान, धन, और सुखका नाश होता है, परदेशगमन तथा सम्मानकी हानि होती है।

मार्गीग्रहकी दशाका फल—मार्गीग्रहकी दशामे सम्मान, सुख, धन, यशकी वृद्धि, लाभ, नेतागिरी और उद्योगकी प्राप्ति होती है। यदि मार्गीग्रह ६।८।१२वे भावमे हो तो अभीष्ट सिद्धिमे बाधा आती है।

नीच क्षौर शत्रुक्षेत्री ग्रहकी दशाका फल—नीच और शत्रुग्रहकी दशामे परदेशमे निवास, वियोग, शत्रुओंसे हानि, व्यापारसे हानि, दुराग्रह, रोग, विवाद और नाना प्रकारकी विपत्तियाँ आती है। यदि ये ग्रह सौम्य ग्रहोसे युत या दृष्ट हो तो बुरा फल कुछ न्यून रूपमे मिलता है।

अन्तर्दशा फल

१--पापग्रहकी महादशामे पापग्रहकी अन्तर्दशा धनहानि, शत्रुभय और कष्ट देनेवाली होती है ।

२--जिस ग्रहकी महादशा हो उससे छटवे या आठवे स्थानमे स्थित ग्रहोकी अन्तर्दशा स्थानच्युति, भयानकरोग, मृत्यु तुल्य कष्ट या मृत्यु देनेवाली होती है ।

३--पापग्रहकी महादशामे शुभग्रहकी अन्तर्दशा हो तो उस अन्तर्दशाका पहला आधा भाग कष्टदायक और आखिरी आधा भाग सुखदायक होता है ।

४--शुभग्रहकी महादशामे शुभग्रहकी अन्तर्दशा धनागम, सम्मानवृद्धि, सुखोदय, और शारीरिक सुख प्रदान करती है ।

५--शुभग्रहकी महादशामे पापग्रहकी अन्तर्दशा हो तो अन्तर्दशाका पूर्वार्द्ध सुखदायक और उत्तरार्द्ध कष्टकारक होता है ।

६--पापग्रहकी महादशामे अपने शत्रुग्रहसे युक्त पापग्रहकी अन्तर्दशा हो तो विपत्ति आती है ।

७--शनिक्षेत्रमे चन्द्रमा हो तो उसकी महादशामे सप्तमेशकी महादशा परम कष्टदायक होती है ।

८--शनिमे चन्द्रमा और चन्द्रमामे शनिका दशाकाल आर्थिक रूपसे कष्टकारक होता है ।

९--बृहस्पतिमे शनि और शनिमे बृहस्पतिकी दशा खराब होती है ।

१०--मगलमे शनि और शनिमे मगलकी दशा रोगकारक होती है ।

११--शनिमे सूर्य और सूर्यमे शनिकी दशा गुरुजनोके लिये कष्टदायक तथा अपने लिये चिन्ताकारक होती है ।

१२--राहु और केतुकी दशा प्रायः अशुभ होती है, किन्तु जब राहु ३।६।११वे भावमे हो तो उसकी दशा अच्छा फल देती है ।

सूर्यकी महादशामें सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

सूर्यमे सूर्य—सूर्य उच्चका हो और १।४।५।७।९।१०वे स्थानमे हो तो उसकी अन्तर्दशामे धनलाभ, राजसम्मान, विवाह, कार्यसिद्धि, रोग और यश प्राप्ति होती है। यदि सूर्य द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अल्पमृत्यु भी हो सकती है।

सूर्यमे चन्द्रमा—लग्न, केन्द्र और त्रिकोणमे हो तो इस दशाकालमे धनवृद्धि, घर, खेत और वाहनकी वृद्धि होती है। चन्द्रमा उच्च अथवा स्वक्षेत्री हो तो स्त्रीसुख, धनप्राप्ति, पुत्रलाभ और राजासे समागम होता है। क्षीण या पापग्रहसे युक्त हो तो धन-धान्यका नाश, स्त्री-पुत्रोको कष्ट, भृत्यनाश, विरोध और राजविरोध होता है। ६।८।१२वे स्थानमे हो तो जलसे भय, मानसिक चिन्ता, बन्धन, रोग, पीडा, मूत्रकृच्छ्र, और स्थान भ्रश होता है। महादशाके स्वामीसे १।४।५।७।९।१०वे भावमे हो तो सन्तोष, स्त्री-पुत्रकी वृद्धि, राज्यसे लाभ, विवाह, धनलाभ, और सुख होता है। महादशाके स्वामीसे ६।८।१२वे भावमे हो तो धननाश, कष्ट, रोग और झझट होते है।

सूर्यमे मंगल—उच्च और स्वक्षेत्री मगल हो या १।४।५।७।९।१०वे स्थानमे हो तो इस दशा कालमे भूमिलाभ, धनप्राप्ति, मकानकी प्राप्ति सेनापति, पराक्रमवृद्धि, शासनसे सम्बन्ध और भाइयोकी वृद्धि होती है। दशेशसे मगल ६।८।१२वे भाव हो या पापग्रहयुक्त हो तो धनहानि, चिन्ता, कष्ट, भाइयोसे विरोध, जेल, क्रूरबुद्धि आदि बाते होती है।

सूर्यमे राहु—१।४।५।७।९।१०वे भावमे राहु हो तो इस दशा कालमे धननाश, सर्पसे काटनेका भय चोरी, स्त्री-पुत्रोको कष्ट होता है। यदि राहु३।६।१०।११वे स्थानमे हो तो राजमान, धनलाभ, भाग्यवृद्धि, स्त्री-पुत्रोको कष्ट होता है। दशाके स्वामीसे राहु ६।८।१२वे हो तो बन्धन, स्थान नाश, कारागृहवास, क्षय, अतिसार आदि रोग, सर्प या घावका भय

होता है । यदि राहु द्वितीय और सप्तम स्थानोंका स्वामी हो तो अल्प मृत्यु होती है ।

सूर्यमें गुरु—गुरु उच्च या स्वराशिका १।४।५।७।९।१०वे स्थानमें हो तो इस दशाकालमें विवाह, अधिकार प्राप्ति, बड़े पुरुषोंके दर्शन, धन-धान्य-पुत्रका लाभ होता है । गुरु नौवें या दसवें भावका स्वामी हो तो सुख मिलता है । यदि दायेश—दशाके स्वामीसे गुरु ६।८।१२वें स्थानमें हो या नीच राशि अथवा पापग्रहोंसे युक्त हो तो राजकोप, स्त्री-पुत्रको कष्ट, रोग, धननाश, शरीरनाश और मानसिक चिन्ताएं रहती है ।

सूर्यमे शनि—१।४।५।७।९।१०वे भावमें शनि हो तो इस दशाकालमें शत्रुनाश, कल्याण, विवाह, पुत्रलाभ, धनप्राप्ति होती है । दायेश—दशाके स्वामीसे शनि ६।८।१२वें भावमें नीच या पापग्रहसे युक्त हो तो धननाश, पापकर्मरत, वातरोग, कलह, नानारोग होते है । यदि द्वितीयेश और सप्तमेश शनि हो तो अल्पमृत्यु होती है ।

सूर्यसे बुध—स्वराशि या उच्च राशिका बुध १।४।५।७।९।१०वे स्थानमें हो तो इस दशाकालमें उत्साह बढानेवाली, सुखदायक और धनलाभ करानेवाली दशा होती है । यदि शुभ राशिमें हो तो पुत्रलाभ, विवाह, सम्मान आदि मिलते है । दायेशसे ६।८।१२वें भावमें हो तो पीडा, आर्थिक संकट और राजभय आदि होते है । द्वितीयेश और सप्तमेश बुध हो तो ज्वर, आंत्ररोग आदि होते है ।

सूर्यमे केतु— इस दशामें देहपीड़ा, धननाश, मनमें व्यथा, आपसी झगडे, राजकोप आदि बातें होती है । दायेशसे केतु ६।८।१२वें भावमें हो तो दातरोग, मूत्रकृच्छ्र, स्थानभ्रंश, शत्रुपीडा, पिताका मरण परदेश-गमन आदि फल होते है । केतु ३।६।१०।११वें भावमें हो तो सुखदायक होता है । द्वितीयेश और सप्तमेश केतु हो तो अल्पमृत्युका योग करता है ।

सूर्यमे शुक्र—उच्च या मित्रके वर्गमें शुक्र हो अथवा १।४।५।७।९।१० स्थानोंमेंसे किसीमें हो तो इस दशाकालमें सम्पत्ति लाभ, राजलाभ, यशलाभ

और नाना प्रकारके सुख होते है। यदि दायेशसे ६।८।१२वे स्थानमे हो तो राजकोप चित्तमे क्लेश, स्त्री-पुत्र-धनका नाश होता है। यदि शुक्र लग्नसे ६।८वे भावमे हो तो अल्पमृत्यु होती है।

चन्द्रमाकी महादशामें सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

चन्द्रमागे चन्द्र—चन्द्रमा उच्चका या स्वक्षेत्री हो या १।५।९।११वे स्थानमे हो अथवा भाग्येशसे युत हो तो इस दशाकालमे धन-धान्यकी प्राप्ति यशलाभ, राजसम्मान, कन्यासन्तानका लाभ, विवाह आदि फल मिलते है। पापयुक्त चन्द्रमा हो, नीचका हो या ६।८वे स्थानमे हो तो धनका नाश, स्थानच्युत, आलस, सन्ताप, राज्यसे विरोध, माताको कष्ट, कारागृहवास, और भार्याका नाश होता है। यदि द्वितीयेश और सप्तमेश चन्द्रमा हो तो अल्पायुका भय होता है।

चन्द्रमे मंगल—१।४।५।७।९।१०वे स्थानमे मगल हो तो इस दशाकालमे सौभाग्य, वृद्धि, राजसे सम्मान, घर-क्षेत्रकी वृद्धि, विजयी होता है। उच्च और स्वक्षेत्री हो तो कार्यलाभ, सुखप्राप्ति, धनलाभ होता है। यदि ६।८।१२वे स्थानमे पापयुक्त हो अथवा दायेशसे शुभ स्थानमे हो तो घर-क्षेत्र आदिकी हानि पहुंचाता है, बान्धवोंसे वियोग और नाना प्रकारके कष्ट होते है।

चन्द्रमे राहु—१।४।५।७।९।१०वे स्थानमे राहु हो तो इस दशाकालमे शत्रुपीडा, भय, चोर-सर्प-राजभय, बान्धवोंका नाश, मित्रकी हानि, अपमान, दुःख, सन्ताप होता है। यदि शुभग्रहकी दृष्टि या ३।६।१०।११वे स्थानमे राहु हो तो कार्यसिद्धि होती है। दायशमे ६।८।१२वे स्थानमे हो तो स्थानभ्रश, दुःख, पुत्रका क्लेश, भय, स्त्रीको कष्ट होता है। दायेशसे केन्द्रस्थानमे हो तो शुभ होता है।

चन्द्रमे गुरु—लग्नसे गुरु १।४।५।७।९।१०मे हो, उच्च या स्वराशिमे हो तो इस दशाकालमे शासनसे सम्मान, धनप्राप्ति, पुत्रलाभ होता है।

यदि ६।८।१२वे भावमे हो या नीच, अस्त अथवा शत्रुक्षेत्री हो तो अशुभ फलकी प्राप्ति, गुरुजन तथा पुत्रका नाश, स्थानच्युति, दु ख और कलहादि होते है । दायेशसे १।४।५।७।९।१०।३मे हो तो धैर्य, पराक्रम, विवाह, धनलाभ आदि फल होते है । यदि दायेशसे ६।८।१२वे स्थानमे हो तो विदेशगमन, और क्लेश होता है । यदि द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो जातक अल्पायु होता है ।

चन्द्रमे शनि—१।४।५।७।९।१०।११मे शनि हो, स्वक्षेत्री हो या उच्चका हो, शुभग्रहसे युत या दृष्ट हो तो इस दशाकालमे पुत्र, मित्र और धनकी प्राप्ति, व्यवसायमे लाभ, घर और खेत आदिकी वृद्धि होती है । यदि ६।८।१२वे स्थानमे हो, नीचका हो अथवा धन स्थानम हो तो पुण्य-तीर्थमे स्नान, कष्ट, शस्त्रपीडा होती है ।

चन्द्रमे बुध—१।४।५।७।९।१०।११वे स्थानमे बुध हो या उच्चका हो तो इस दशामे राजासे आदर, विद्यालाभ, ज्ञानवृद्धि, धनकी प्राप्ति, सन्तान प्राप्ति, सन्तोष, व्यवसाय द्वारा प्रचुर लाभ, विवाह आदि फल मिलते है । यदि दायेशसे बुध २।११वे स्थानमे हो तो निश्चय विवाह, धारासभाके सदस्य, आरोग्य या सुखकी प्राप्ति होती है । यदि बुध दायेशसे ६।८।१२वे स्थानमे नीचका हो तो बाधा, कष्ट, भूमिका नाश, कारागृहवास, स्त्रीपुत्रको कष्ट होता है । यदि बुध द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो ज्वरसे कष्ट होता है ।

चन्द्रमामे केतु—३।१।४।५।७।९।१०।११वे स्थानमे केतु हो तो इस दशाकालमे धनका लाभ, सुखप्राप्ति, स्त्री-पुत्रसे सुख होता है । यदि दायेशसे केतु केन्द्र-लाभ और त्रिकोणमे हो तो अल्पसुख मिलता है, धनकी प्राप्ति होती है । यदि पापग्रहसे दृष्ट अथवा युत हो या दायेशसे ६।८।१२वे स्थानमे हो तो कलह होती है । द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो आरोग्यमे हानि होती है ।

चन्द्रमे शुक्र—केन्द्र, लाभ, त्रिकोणमे शुक्र हो या उच्चका हो, स्वक्षेत्री

हो तो इस दशाकालमे राजशासनमे अधिकार, ख्याति, मत्री या अफसर, स्त्री-पुत्र आदिकी वृद्धि, नवीन घरका निर्माण, सुख, रमणीय स्त्रीका लाभ आरोग्य आदि फल प्राप्त होते है । यदि दायेशसे शुक्र युत हो तो देहमे सुख, अच्छी ख्याति, सुख,-सम्पत्ति-घर-खेत आदिकी वृद्धि होती है । यदि नीचका हो, अस्तगत हो, पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो भूमि, पुत्र, मित्र, पत्नी आदिका नाश, राजसे हानि होती है । यदि धन स्थानमे हो, अपने उच्चका हो अथवा स्वक्षेत्री हो तो निधि लाभ होता है । दायेशसे ६।८।१२वे स्थान मे हो, पापयुक्त हो तो परदेशमे रहनेसे दुःख होता है । द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो अल्पायुका भय होता है ।

चन्द्रमे सूर्य---सूर्य उच्चका हो, स्वक्षेत्री हो या १।४।५।७।९।१०वे स्थानमे हो तो इस दशामे राजसम्मान, धनलाभ, घरमे सुख, ग्राम, भूमि आदिका लाभ, सन्तान प्राप्ति होती है । यदि दायेशसे ६।८।१२वे स्थानम हो, पापयुत हो तो सर्प, राजा एव चोरसे भय, ज्वर रोग, परदेशगमन और पीडा होती है । सूर्य द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो ज्वर बाधा होती है ।

मंगलकी महादशामें सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

मंगलमे मंगल---मगल १।४।५।७।९।१०मे हो, लग्नेशसे युत हो तो इसकी दशामे वैभव प्राप्ति, धनलाभ, पुत्रप्राप्ति, सुखप्राप्ति होती है । यदि अपने उच्चका हो अथवा स्वक्षेत्री हो तो घर या खेतकी वृद्धि, धनलाभ होता है । यदि ६।८।१२वे स्थानमे पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो मूत्रकृच्छ्र-रोग, घाव, फोडा-फुसी, सर्प और चोरसे पीडा, राजासे भय होता है द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो शारीरिक कष्ट होते है ।

मंगलमे राहु---राहु उच्च, मूलत्रिकोणी और शुभग्रहसे दृष्ट या युत हो या १।४।५।७।९।१०वे स्थानमे हो तो इस दशाकालमे राजासे सम्मान, घर, खेतका लाभ, स्त्री-पुत्रका लाभ, व्यवसायमे सफलता, परदेशगमन आदि फल होते है । यदि पापग्रहसे युक्त ६।८।१२वे स्थानमे राहु हो तो

चोर, सर्प, राजासे कष्ट, वात, पित्त और क्षयरोग, जेल आदि फल होते हैं। यदि धन स्थानमें राहु हो तो धनका नाश होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश राहु हो तो अल्पमृत्युका भय होता है।

मंगलमें गुरु—१।४।५।७।९।१०।११।२ स्थानमें गुरु हो, उच्चका हो तो इस दशाकालमें यशलाभ, देशमें मान्य, धन-धान्यकी वृद्धि, शासनमें अधिकार, स्त्री-पुत्र लाभ होता है। यदि दायेश १।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें हो तो घर, खेत आदिकी वृद्धि, आरोग्यलाभ, यशप्राप्ति, व्यापारमें लाभ, उद्यम करनेसे फल प्राप्ति, स्त्री-पुत्रका ऐश्वर्य, राजासे आदरकी प्राप्ति होती है, ६।८।१२वें स्थानमें नीचका गुरु हो, अस्तगत हो, पाप-ग्रहसे युत या दृष्ट हो तो चोर और सर्पसे पीडा, पित्तविकार, उन्मत्तता, भ्रातृनाश होता है।

मंगलमें शनि—शनि स्वक्षेत्री मूलत्रिकोणी, उच्चका या १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें हो तो इस दशामें राजसुख यशवृद्धि, पुत्र-पौत्रकी वृद्धि होती है। नीचका शत्रुक्षेत्री हो या ६।८।१२वें भावमें हो तो धन-धान्यका नाश, जेल, रोग चिन्ता होती है। सप्तमेश और द्वितीयेश हो तो मृत्यु अथवा ६।८।१२वें भावमें पापदृष्ट हो तो मृत्यु होती है।

मंगलमें बुध—बुध १।४।५।७।९।१० में हो तो इस दशाकालमें सुन्दर कन्या सन्ततिवाला, धर्ममें रुचि, यशलाभ, न्यायसे प्रेम होता है तथा सुन्दर पदार्थ खानेको मिलते हैं। नीच या अस्तगत अथवा ६।८।१२वें भावमें हो तो हृदयरोग, मानहानि, पैरोंमें बेडीका पडना, बान्धवोंका नाश, स्त्री मरण, पुत्र मरण और नाना कष्ट होते हैं। बुध दायेशसे पापयुक्त होकर ६।८।१२ वें स्थानमें हो तो मानहानि होती है और यह द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो महाव्याधि होती है।

मंगलमें केतु—केतु १।४।५।७।९।१०।११ वें स्थानमें शुभ ग्रहसे युत या दृष्ट हो तो इस दशाकालमें धन, भूमि, पुत्रका लाभ, यशकी वृद्धि, सेनापतिका पद, सम्मान आदि मिलते हैं। दायेशसे ६।८।१२वें भावमें

पापयुक्त हो तो व्याधि, भय, अविश्वास, पुत्र-स्त्रीको कष्ट होता है।

मंगलमे शुक्र--शुक्र १।४।५।७।९।१०वे भावमे हो उच्च, मूल त्रिकोणी अथवा स्वराशिका हो तो इस दशाकालमे राजलाभ, आभूषण प्राप्ति और सुख प्राप्ति होती है। यदि लग्नेशसे युत हो तो पुत्र-स्त्री आदिकी वृद्धि ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। यदि शुक्र दायेशसे १।४।५।७।९।१०।११।२वे स्थानमे हो तो लक्ष्मीकी प्राप्ति, सन्तानलाभ, सुख प्राप्ति, गीत, नृत्य आदिका होना, तीर्थ यात्राका होना आदि फल होते है। यदि शुक्र कर्मशसे युक्त हो तो तालाब, धर्मशाला, कुँआ आदि बनवानेका परोपकारी काम करता है। दायेशसे ६।८।१२वे भावमे हो तो कष्ट, झझटे, सन्तान, चिन्ता, धननाश, मिथ्यापवाद, कलह आदि फल मिलते ह।

मंगलमें सूर्य---सूर्य उच्च, स्वराशि या मूलत्रिकोणी सूर्य १।४।५।७।९।१०वे स्थानमे हो तो इस दशाकालमे वाहनलाभ, यश प्राप्ति, पुत्रलाभ, धन-धान्य लाभ होता है। दायेशसे ६।८।१२वे भावमे पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो पीडा, सन्ताप, कष्ट, व्याधि, धननाश, कार्यबाधा आदि बाते होती है।

मंगलमें चन्द्र--चन्द्र उच्च मूलत्रिकोणी, स्वराशि या शुभग्रह युत हो तो इस दशाकालमे राजलाभ, मत्रीपद, सम्मान, उत्सवोका होना, विवाह, स्त्री-पुत्रोको सुख, माता-पितासे सुख, मनोरथ सिद्ध आदि फल मिलते है। नीच, शत्रु राशि या अस्तंगत होकर दायेशसे ६।८।१२ वे स्थानमे हो तो स्त्री-पुत्रकी हानि कष्ट, पशु-धान्यका नाश, चोरभय प्रभृति फल होत है। द्वितीयेश या सप्तमेश चन्द्रमा हो तो अकालमरण होता है।

राहुकी महादशामें सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

राहुमे राहु--कर्क, वृष, वृश्चिक, कन्या और धनराशिका राहु हो तो उसकी दशामे सम्मान, शासनलाभ, व्यापारम लाभ होता है। राहु ३।६।११वे भावमे हो, शुभ ग्रहसे युत या दृष्ट हो, उच्चका हो तो इस दशामे

राज्यशासनमें उच्चपद, उत्साह, कल्याण एवं पुत्रलाभ होता है। ६।८।१२वें भावमें पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो कष्ट, हानि, बन्धुओंका वियोग, झंझटे, चिन्ताएँ आदि फल होते हैं। ७वें भावमें हो तो रोग होते हैं।

राहुमें गुरु—गुरु १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें स्वगृही, मूलत्रिकोणी, या उच्चका हो तो इस दशाकालमें शत्रुनाश, पूजा, सम्मान, धनलाभ सवारी, मोटर, पुत्र आदिकी प्राप्ति होती है। नीच, अस्तगत या शत्रु राशिमें होकर ६।८।१२वें भावमें हो तो धनहीन, कष्ट विघ्न-बाधाओंका बाहुल्य, स्त्री, पुत्रोंको पीडा आदि फल होते है।

राहुमें शनि—शनि १।४।५।७।९।१०।११वें भावमें उच्च या मूल त्रिकोणी हो तो उसकी दशामें उत्सव, लाभ, सम्मान, बडे कार्य, धर्मशाला, तालाबका निर्माण आदि बातें होती है। नीच, शत्रुक्षेत्री होकर ६।८।१२वें भावमें हो तो स्त्री-पुत्र का मरण लडाई और नाना कष्टोंकी प्राप्ति होती है। द्वितीयेश या सप्तमेश शनि हो तो अकालमरण होता है।

राहुमें बुध—राहु १।४।५।७।९।१०वें स्थानमें स्वक्षेत्री, उच्चका बलवान् हो तो इस दशाकालमें कल्याण, व्यापारसे धन प्राप्ति, विद्या-प्राप्ति, यशलाभ और विवाहोत्सव आदि होते हैं। ६।८।१२वें स्थानमें शनैश्चरकी राशिमें युत या दृष्ट हो या दायेशसे ६।८।१२वें स्थानमें हो तो हानि, कलह, सकट, राजकोप, पुत्रका वियोग होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश बुध हो तो अकालमरण होता है।

राहुमें केतु—इस दशाकालमें वातज्वर, भ्रमण और दुःख होता है। यदि शुभग्रहसे केतु युत हो तो धनकी प्राप्ति, सम्मान, भूमिलाभ और सुख होता है। १।४।५।७।९।१०।८।१२वें स्थानमें केतु हो तो उसकी दशा महान कष्ट देनेवाली होती है।

राहुमें शुक्र—१।४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें शुक्र हो तो उसकी दशामें पुत्रोत्सव, राजसम्मान, वैभव प्राप्ति, विवाह आदि उत्सव होते हैं। ६।८।१२वें भावमें शुक्र नीचका, शत्रुक्षेत्री, शनि या मंगलसे युत हो तो

रोग, कलह, वियोग, बन्धु हानि, स्त्रीको पीड़ा, शूल रोग आदि फल होते है । दायेशसे ६।८।१२वे स्थानमे शुक्र हो तो अचानक विपत्ति, झूठे दोष, प्रमेह रोग आदि फल होते है । द्वितीयेश और सप्तमेश शुक्र हो तो अकालमरण भी इसकी दशामे होता है ।

राहुमें सूर्य—सूर्य स्वक्षेत्री, उच्चका ५।९।११वे भावमे हो तो धन-धान्यकी वृद्धि, कीर्त्ति, परदेश गमन, राजाश्रयसे धन प्राप्ति होती है । दायेशसे सूर्य ६।८।१२वे भावमे नीचका हो तो ज्वर, अतिसार, कलह, राजद्वेष, अग्निपीडा आदि फल मिलते है ।

राहुमें चन्द्र—बलवान् चन्द्रमा १।४।७।५।९।१०।११वे भावमे हो तो इस दशाकालमे सुख-समृद्धि होती है । दायेशसे ६।८।१२वे भावमे हो तो नाना प्रकारके कष्ट, धन हानि, विवाद, मुकद्दमा आदिसे कष्ट होता है ।

राहुमे मंगल—१।४।५।७।९।१०।११वे भावमे मगल हो तो उसकी दशामे घर खेतकी वृद्धि, सन्तान सुख, शारीरिक कष्ट, अकस्मात् किसी प्रकारकी विपत्ति, नौकरीमे परिवर्तन, उच्च पदकी प्राप्ति होती है । दायेशसे मगल ६।८।१२वे स्थानमे पापयुक्त हो तो स्त्री पुत्रकी हानि, सहोदर भाईको पीडा और अनेक प्रकारकी झझटे आती है ।

गुरुकी महादशामें सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

गुरुमे गुरु—गुरु उच्च और स्वक्षेत्री होकर केन्द्रगत हो तो इस दशामे वस्त्र, मोटर, आभूषण, नवीन सुन्दर मकान आदिकी प्राप्ति होती है । यदि गुरु भाग्येश और कर्मेशसे युक्त हो तो स्त्री, पुत्र, धन लाभ होता है । नीच राशिका बृहस्पति हो या ६।८।१२वे भावमे स्थित हो दुःख, कलह, हानि, कष्ट और पुत्र-स्त्रीका वियोग होता है । प्राय देखा जाता है कि गुरुमे गुरुका अन्तर अच्छा नही बीतता है ।

गुरुमें शनि—शनि उच्च, स्वक्षेत्र, मूलत्रिकोणी हो या १।४।५।७।९।१०।११वे भावमे स्थित हो तो इस दशामे भूमि, धन, सवारी, पुत्र

आदिका लाभ, पश्चिम दिशामें यात्रा, और बड़े पुरुषोंसे मिलना होता है। नीच अस्तगत या शत्रुक्षेत्री शनि हो या ६।८।१२वे भावमें हो तो ज्वरबाधा मानसिक दुःख, स्त्रीको कष्ट, सम्पत्तिकी क्षति होती है। दायेशसे ६।८।१२वे भावमें हो तो नाना प्रकारसे कष्ट होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो शारीरिक कष्ट या अकालमरण होता है।

गुरुमें बुध—बुधस्वराशि, उच्च या मूलत्रिकोणी हो अथवा १।४।५। ७।९।१०।११वे भावमें बलवान् होकर स्थित हो तो इस दशामें धारा सभाओंका सदस्य, मन्त्री, अफसर, सुख धनलाभ, पुत्र लाभ होता है। ६।८।१२वे भावमें हो या दायेशसे ६।८।१२वे भाव हो तो नाना प्रकारके कष्ट, रोग, भार्या मरण आदि फल होते हैं। द्वितीयेश और सप्तमेश बुध हो तो इसकी दशामें महान् कष्ट या अकालमरण होता है।

गुरुमें केतु—यदि शुभग्रहसे केतु युक्त हो तो इस दशामें सुख प्रदान करता है। दायेशसे ६।८।१२वे स्थानमें पापयुक्त हो तो राजकोप, बन्धन धननाश, रोग आदि फल होते हैं। दायेशसे ४।५।९।१०वे स्थानमें हो तो अभीष्टलाभ, उद्यममें लाभ, पशुलाभ होता है।

गुरुमें शुक्र—बलवान् शुक्र केन्द्रेशसे युक्त होकर ५।११वे भावमें हो तो इस दशामें सुख, कल्याण धनलाभ धर्मशाला तालाब, कुँआ आदिका निर्माण, पुत्रलाभ स्त्रीलाभ, नवीन कार्य, आदि फल मिलते हैं। शुक्र दायेशसे या लग्नसे ६।८।१२वे स्थानमें हो तो कष्ट, कलह, बन्धन, चिन्ता आदि फल होते हैं। द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो अकालमरण भी होता है।

गुरुमें सूर्य—सूर्य उच्चका, स्वक्षेत्री होकर १।४।५।७।९।१०।११वे भाव में हो तो इस दशामें सम्मान प्राप्ति, तत्काल लाभ, सवारीकी प्राप्ति पुत्र प्राप्ति आदि फल होते हैं। लग्नेश या दायेशसे सूर्य ६।८।१२वे स्थानमें हो तो मिरमें रोग, ज्वर पीडा पापकर्म, बन्धु वियोग आदि फल मिलते हैं। सूर्य द्वितीयेश और सप्तमेश हो तो यह समय महा कष्टकारक होता है।

गुरुमे चन्द्र—बलवान् चन्द्रमा १।४।५।७।९।१०।११वे भावमे हो तो इस दशामे सत्कार्य, सम्मान, कीर्त्ति, पुत्र-पौत्रकी वृद्धि होती है। लग्नेश या दायेशसे (दशापति) ६।८।१२वे स्थानमे चन्द्रमा हो तो अपमान, खेद, स्थानच्युति, मातुल वियोग, माताको दुःख आदि फल होते है। द्वितीयेश हो तो महाकष्ट होता है।

गुरुमे भौम—उच्च या स्वगृही मगल १।४।५।७।९।१०वे भावमे हो तो इस दशामे भूमिलाभ, मित्रोका निर्माण और कार्य सिद्धि होती है। दायेशसे केन्द्र स्थानमे शुभ ग्रहसे युत या दृष्ट हो तो तीर्थ यात्रा, विद्वत्तासे भूमि लाभ, नवीन कार्यो द्वारा यश लाभ होता है। दायेशसे भौम ६।८।१२वे भावमे पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो धन-धान्य और घरका नाश होता है।

गुरुमे राहु—उच्च स्वक्षेत्री या मूलत्रिकोणी राहु ३।६।११वे भावमे हो तो इस दशामे ख्याति, सम्मान, विद्यालाभ, दूरदेश गमन, सम्पत्ति और कल्याणकी प्राप्ति होती है। दायेशसे ६।८।१२वे भाव राहु हो तो कष्ट, भय, व्याकुलता, कलह, रोग, दुःस्वप्न, शारीरिक कष्ट, अल्पलाभ, आदि फल प्राप्त होते है।

शनि महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

शनिमे शनि—स्वराशि उच्च और मूलत्रिकोणका शनि हो अथवा १।४।५।७।९।१०।११वे भावमे स्थित हो तो इस दशामे सम्मान, ख्याति, शासन-प्राप्ति, उच्चपदकी प्राप्ति, विदेशीय भाषाओका ज्ञान, स्त्री-पुत्र-की वृद्धि होती है। नीच या पापयुक्त होकर शनि ६।८।१२वे भावमे हो तो रक्तस्राव, अतिसार, गुल्म रोग होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश शनि हो तो मृत्यु भी इस दशाकालमे सभव होती है।

शनिमें बुध—१।४।५।७।९।१०वे स्थानमे बुध हो तो इस दशामे सम्मान, कीर्त्ति, विद्या, धन, देह सुख आदिकी प्राप्ति होती है। इस दशामे

नवीन व्यापार आरम्भ करनेसे प्रचुर धन लाभ किया जा सकता है। दायेशसे ६।८।१२वे भावमे बुध हो तो अल्प सुख, बुद्धिसे कार्यसिद्धि, बडे लोगोका समागम, अल्प मृत्यु, भय, शीतज्वर, अतिसार आदि रोग होते है।

शनिमें केतु—शुभग्रहसे युत या दृष्ट केतु हो तो इस दशामे स्थान-भ्रश, क्लेश, धनहानि, स्त्री-पुत्रका मरण होता है। लग्नेशसे युत या दायेशसे ६।८।१२वे भावमे केतु हो तो सुख मिलता है।

शनिमे शुक्र—उच्चका या स्वक्षेत्री शुक्र १।४।५।७।९।१०।११वे भावमे शुभ ग्रहसे युत या दृष्ट हो तो इस दशामे आरोग्यलाभ, धन प्राप्ति, कल्याण, आदर, उन्नति, जीवनमे सुखकी प्राप्ति होती है। शत्रुक्षेत्री नीच या अस्तगत शुक्र ६।८।१२वे स्थानमे हो तो स्त्रीमरण, स्थानभ्रश, पद परिवर्त्तन, अल्पलाभ होता है। शुक्र दायेशसे ६।८।१२वे भावमे हो तो ज्वर, पीडा, पायरिया रोग, वृक्षसे पतन, सन्ताप, विरोध और झगडे होते है।

शनिमे सूर्य—उच्चका, स्वराशिका या भाग्येशसे युत १।४।५।७।९।१०।११वे स्थानमे सूर्य हो तो इस दशामे घरमे दही-दूधकी प्रचुरता, पुत्रकी प्राप्ति, कल्याण, पद वृद्धि जीवनमे परिवर्तन, यशकी प्राप्ति होती है। सूर्य लग्न या दायेशसे ६।८।१२वे भावमे हो तो हृदयमे रोग, मानहानि, स्थानभ्रश, दुःख पश्चात्ताप होता है। द्वितीयेश और सप्तमेश होनेपर महान् कष्ट होता है।

शनिमे चन्द्रमा—चन्द्रमा गुरुसे दृष्ट हो, अपने उच्चका हो, स्वक्षेत्री हो, १।४।५।७।९।१०।११वे भावमे हो तो इस दशामे सौभाग्य वृद्धि, माता पिताको सुख, कारोबारमे बढती होती है। क्षीण चन्द्रमा हो या पाप-ग्रहसे युत चन्द्रमा हो तो धन नाश, मातापिताका वियोग, सन्तानको कष्ट, धन-का खर्च और रोग होते है।

शनिमे भौम—बलवान् भौम १।४।५।७।९।१०।११वे भावमे हो

या लग्नेशसे युत हो तो इस दशामे सुख, धनलाभ, राजप्रीति, सम्पत्तिलाभ, नये घरका निर्माण, मिल या नवीन कारखानोका स्थापन आदि फल मिलते है । नीचका मगल हो या अस्तगत हो तो परदेश गमन, धन हानि, कारागृहका दण्ड आदि फल मिलते है । द्वितीयेश या सप्तमेश होनेसे मगलकी दशामे अकाल मरण भी हो सकता है ।

शनिमे राहु––इस दशामे कलह, चित्तमे क्लेश, पीड़ा, चिन्ता, द्वेष धननाश परदेश गमन, मित्रोसे कलह आदि फल होते है । उच्च क्षेत्री या स्वगृही राहु लाभ स्थानमे हो तो धन लाभ, सम्पत्तिकी प्राप्ति और अन्य प्रकारके समस्त सुख होते है ।

शनिमे गुरु––बलवान् गुरु शुभग्रहोसे युत होकर १।४।५।७।९।१०। ११वे भावमे हो तो इस दशामे मनोरथ सिद्धि, सम्मान प्राप्ति, पुत्रलाभ, नवीन कार्योके करनेकी प्रेरणा होती है । ६।८।१२वे स्थानमे नीच, अस्तगत या पापग्रहसे युत होकर स्थित हो तो कुष्ठरोग, परदेश गमन, कार्यहानि, धन-धान्यका नाश होता है । दायेशसे ६।८।१२वे स्थानोमे निर्बली गुरु हो तो भाइयोसे द्वेष, धन-लाभ, पुत्रका नाश और राजदण्ड भोगना पडता है ।

बुधकी महादशामे सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

बुधमे बुध––इस दशामे लाभ, सुख, विद्या, कीर्त्ति, वैभवकी प्राप्ति होती है । नीच या उग्र ग्रहसे युक्त होकर बुध ६।८।१२वे स्थानमे हो तो भय, क्लेश, कलह, रोग, शोक, हानि आदि फल होते है । बुध द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो किसी सम्बन्धीकी मृत्यु इस दशामे होती है ।

बुधमें केतु––लग्नेश या दायेशसे केतु युक्त हो तो इस दशामें अल्पलाभ, शारीरिक, सुख, विद्या और यशका लाभ होता है । दायेशसे ६।८।१२वे भावमे पापग्रह युत हो तो जातकको नाना प्रकारका कष्ट सहन करना पड़ता है ।

बुधमे शुक्र––इस दशामे धन, सम्पत्तिका लाभ, विद्या द्वारा ख्याति, धनका सचय, व्यवसायमे लाभ, समृद्धि आदि फल होते है । दायेशसे शुक्र ६।८।१२वे स्थानोमे हो तो नाना प्रकारकी झझटे, अल्प लाभ, भार्याकष्ट बन्धु वियोग मनमे सन्ताप होता है । द्वितीयेश या सप्तमेश शुक्र हो तो मृत्यु भी इसकी दशामे हो सकती है ।

बुधमे सूर्य––उच्चका सूर्य हो तो सुख, मगल युत हो तो इस दशामे भूमि लाभ, लग्नेशसे युत या दृष्ट हो तो धन प्राप्ति, भूमि लाभ होता है । दायेशसे सूर्य ६।८।१२वे स्थानमे मगल राहुसे युत हो तो चोर, अग्नि या शस्त्रसे पीड़ा, पित्त जन्यरोग, सन्ताप होते है । सूर्य द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अकालमरण भी इस दशामे होता है ।

बुधमे चन्द्रमा––उच्च, स्वराशि और शुभग्रहोसे युत चन्द्रमा हो तो इस दशामे सुख, कन्यालाभ, धन प्राप्ति, नौकरीमे तरक्की होती है । निर्बल चन्द्रमा दायेशसे ६।८।१२वे भावमे हो तो धननाश, बुरे कार्य, राजदण्ड, छल-कपट द्वारा धन हरण आदि फल होते है ।

बुधमे भौम––उच्च स्वराशि और शुभग्रहोसे युत होने पर इस दशामे मकान, भूमि, खेतकी प्राप्ति, पुस्तकोके निर्माण द्वारा यश, कवितामे अभिरुचि होती है । मगल नीचका, अस्तगत या शत्रु क्षेत्री हो तो चोरसे भय स्थानभ्रश, पुत्र मित्रोसे विरोध होता है । द्वितीयेश या सप्तमेश मगल हो तो इस दशामे अकालमरण होता है ।

बुधमें राहु––राहु ६।८।१२वे स्थानमे हो तो रोग, धननाश, वातज्वर, होता है । ३।६।१०।११वे भावमे हो तो सम्मान, राजासे लाभ, अल्प धन लाभ व्यापारमे वृद्धि और कीर्त्ति होती है ।

बुधमें गुरु––उच्च, स्वराशि, या शुभग्रहोसे युत गुरु १।४।५।७।९।१०वे स्थानमे हो तो इस दशामे प्रतिष्ठा, ग्रन्थ निर्माण उत्सव, धनलाभ आदि फल मिलते है । गुरु दायेशसे ६।८।१२वे भावमे हो तो

हानि, अपमान तथा शनि, मगलमे युत हो तो कलह, पीडा, माताकी मृत्यु, झगड़ा, धननाश, शारीरिक कष्ट आदि फल होते है ।

बुधमे शनि––उच्च, स्वराशि या मूलत्रिकोणका शनि हो तो इस दशामे कल्याणकी वृद्धि, लाभ, राजसम्मान, बडप्पन आदि फल प्राप्त होते है । दायेशके शनि ६।८।१२वे भावमे हो तो बन्धुनाश, दु खप्राप्ति, कष्ट, परदेशगमन होता है । शनि द्वितीयेश या सप्तमेश होकर द्वितीय या तृतीयमे हो तो इस दशामे मृत्यु होती है ।

केतुकी महादशामें सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

केतुमे केतु––केतु केन्द्र, त्रिकोण और लाभ भावमे हो तो इस दशामे भूमि, धन, धान्य, चतुष्पद आदिका लाभ, स्त्रीपुत्रसे सुख मिलता है । नीच या अस्तगत हो या ६।८।१२वे स्थानमे हो तो रोग, अपमान, धन-धान्यका नाश, स्त्री-पुत्रको पीडा, मन चचल होता है । द्वितीयेश या सप्तमेशके साथ सम्बन्ध हो तो महाकष्ट होता है ।

केतुमे शुक्र––शुक्र उच्च, स्वराशिका हो या १।४।५।७।९।१०।११वे भावमे या दार्केशसे युक्त हो तो इस दशामे राजप्रीति, सौभाग्य, धनलाभ होता है । यदि भाग्येश और कर्मेशसे युक्त हो तो राजासे धनलाभ सम्मान, सुख और उन्नति होती है । दायेशसे ६।८।१२वे भावम हो या पापयुक्त होकर इन स्थानोमे हो तो मानहानि, धनकष्ट, स्त्रीसे झगडा, पुत्रोको कष्ट और अवनति होती है ।

केतुमे सूर्य––सूर्य स्वक्षेत्री, उच्चका हो या १।४।५।७।९।१०।११ हो तो इस दशामे प्रारम्भमे सर्वसुख, मध्यम कुछ कष्ट होता है । नीच, अस्तगत या पापग्रहसे युक्त ६।८।१२वे भावमे हो तो राजदण्ड, कष्ट, पीड़ा, माता-पिताका वियोग, विदेश गमन होता है । सूर्य द्वितीयेश हो तो कष्टकारक होता है ।

केतुमे चन्द्रमा––चन्द्रमा उच्चका, स्वराशिका हो तो इस दशामे

राज्यसे सुख, धनलाभ, कन्या सन्तानकी प्राप्ति, कल्याण, भूमिलाभ, उद्योगमे सफलता, धनसग्रह, पुत्रसे सुख आदि फल होते है। नीचका क्षीण चन्द्रमा ६।८।१२वे भावमे हो तो भय, रोग, चिन्ता और मुकद्मोके झझटमे फसना पडता है।

केतुमे भौम—भौम उच्चका, स्वराशिका या १।४।५।७।९।१०।११वे भावमे हो तो इस दशामे भूमिलाभ, विजय, पुत्रलाभ, व्यापारमे वृद्धि होती है। दायेशसे भौम केन्द्र, त्रिकोण स्थानमे हो तो देशमे सम्मान, तो इस दशामे कीर्त्ति, बड़प्पन आदि फल मिलते है। दायेशसे २।६।८।१२वे स्थानमे हो परदेशगमन, अवनति, कारोबारमे हानि, मृत्यु, पागल, प्रमेह या अन्य जननेन्द्रिय सम्बन्धी रोग होते है।

केतुमे राहु—राहु उच्चका, स्वराशिका या मित्रक्षेत्री हो तो इस दशामे धन-धान्यका लाभ, सुख, भूमिका लाभ, नौकरीमे तरक्की होती है। ७।८।१२वे स्थानमे पापग्रहसे युत या दृष्ट हो तो धनहानि, नोकरीमे गडबडी, प्रमेह, नेत्ररोग होते है। राहु द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शीतज्वर, कलह, शूलरोग होते है।

केतुमे गुरु—१।४।५।७।९।१०।११वे भावमे गुरु हो तो इस दशामे विद्यालाभ, कीर्त्तिलाभ, सम्मान, रक्तविकार, परदेशगमन, पुत्रप्राप्ति, स्थानभ्रश, शान्तिलाभ होता है। गुरु नीच, अस्तगत होकर दायेशसे ६।८।१२वे भावमे हो तो धन-धान्यका नाश, आचारकी शिथिलता, स्त्री-वियोग और अनेक प्रकारके कष्ट होते है।

केतुमे शनि—८।१२वे भावमे शनि हो तो इस दशामे कष्ट, चित्तम सन्ताप, धननाश, और भय होता है। उच्च या मूलत्रिकोणी शनि ३।६।११वे भावमे स्थित हो तो जातकको साधारणत. सुख, मनोरथसिद्धि, सम्मान-प्राप्ति होती है। शनि दायेशसे ६।८।१२वे भावमे हो तो इस दशामे मृत्यु, भयकर रोग, धनहानि होती है।

केतुमे बुध—१।४।५।७।९।१० भावमे बलवान् बुध हो तो इस दशाम

ऐश्वर्यप्राप्ति, चतुराई, यशलाभ, और सत्संगतिकी प्राप्ति होती है। दायेशसे ६।८।१२वे भाव नीच या अस्तगत हो तो खर्च अधिक, बन्धन, द्वेष, झगड़ा होता है तथा अपना घर छोड़कर अन्यत्र निवास करना पड़ता है।

शुक्रकी महादशामें सभी ग्रहोंकी अन्तर्दशाका फल

शुक्रमें शुक्र—१।४।५।७।९।१०वे भावमे वली शुक्र बैठा हो तो इस दशामे धनप्राप्ति, श्रेष्ठकार्योमे रत, पुत्रकी प्राप्ति, कल्याण, सम्मान, अकस्मात् धनप्राप्ति, नये घरका निर्माण आदि फल होते है। दायेशसे ६।८।१२वे भावमे नीच या अस्तंगत राहु हो तो कष्ट, मृत्यु रोग, राजासे भय और आर्थिक कष्ट आदि फल होते है। शुक्र स्वराशि या उच्चका होकर १।४।५वें भावमें हो तो जातक अनेक नवीन ग्रन्थोका निर्माण इसकी दशामे करता है।

शुक्रमें सूर्य—इस दशामे कलह, सन्ताप, दारिद्रच आदि होते है। यदि सूर्य उच्च या स्वराशिका हो अथवा दायेशसे १।४।५।७।९।१०वें भावमे हो तो धनलाभ, सम्मान, शासनकी प्राप्ति, माता-पितासे सुख, भाईसे लाभ होता है। दायेशसे ६।८।१२वे भावमे हो तो पीड़ा, चिन्ता, कष्ट, रोग आदि होते है।

शुक्रमें चन्द्रमा—चन्द्रमा उच्चका, स्वराशिका या मित्रवर्गका हो तो जातकको उस दशामें स्त्रीको सुख, धनलाभ, पुत्रीकी प्राप्ति, उन्नति, उच्चपदका लाभ आदि फल प्राप्त होते है। यदि चन्द्रमामे दायेशसे ६।८।१२वें भावमें हो तो नाना प्रकारके कष्ट भोगने पड़ते है।

शुक्रमें भौम—१।४।५।७।९।१०।११वें भावमें बलवान् भौम स्थित हो तो इस दशामे मनोरथ सिद्धि, धनलाभ, स्थानभ्रंश, कलह आदि फल प्राप्त होते है। यदि दायेशसे ६।८।१२वें भावमें भौम हो तो जातकको

रोग, कष्ट, धननाश, खेतकी हानि और मकानकी हानि भी इस दशामें सहनी पड़ती है ।

शुक्रमें राहु—१।४।५।७।९।१०।११वें भावमे राहु बलवान् हो तो इस दशामे कार्यसिद्धि, व्यापारमें लाभ, सुख, धन-ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है । दायेशसे ७।८।१२वे भावमे हो तो नाना प्रकारके कष्ट होते है ।

शुक्रमें गुरु—बलवान् गुरु १।४।५।७।९।१०वें भावमे हो तो इस दशामे पुत्रलाभ, कृषिसे धनप्राप्ति, यशप्राप्ति, मातापिताका सुख और इष्टबन्धुओंका समागम होता है । ६।८।१२वे भावमे हो तो कष्ट, चोर-भय, पीड़ा, हानि होती है ।

शुक्रमे शनि—इस दशामे क्लेश, आलस्य, व्यापारमे हानि, अधिक व्यय होता है । लग्नेश या दायेशसे शनि ६।८।१२वें स्थानमे हो तो स्त्रीको पीड़ा, उद्योगमें हानि होती है । द्वितीयेश या सप्तमेश शनि हो तो बीमारी या अकाल मृत्यु होती है ।

शुक्रमें बुध—बलवान् बुध १।४।५।७।९।१०वे भावमे हो, लग्नेश, चतुर्थेश या पचमेशसे युक्त हो तो इस दशामे साहित्यिक कार्यो द्वारा धन-कीर्त्ति लाभ, सन्मार्गसे धनागम, बड़े कार्योमें अधिक सफलता मिलती है । दायेशसे ६।८।१२वें भावमे बुध हो तो अपकीर्त्ति, अल्पलाभ, कुटु-म्बियोसे झगड़ा आदि फल प्राप्त होते है ।

शुक्रमें केतु—इस दशामे कलह, बन्धुनाश, शत्रुपीड़ा, भय, धननाश होता है । दायेशसे ६।८।१२वे भावमे पापग्रहसे युक्त केतु हो तो सिरमे रोग, घाव, फोड़े-फुसी और बन्धुवियोग आदि फल प्राप्त होते है । उच्चका केतु ३।६।११वे भावमे हो तो धनागम, सम्मान और सुखकी प्राप्ति होती है।

स्त्रीजातक

यद्यपि पहले जितना फल पुरुष जातकके लिये बताया गया है, उसीको स्त्रीजातकके सम्बन्धमें समझ लेना चाहिये । किन्तु जो योग पुरुषकी

कुण्डलीमे स्त्रीके सूचक थे, वे स्त्रीकी कुण्डलीमे पुरुष—पतिकी उन्नति-अवनति, स्वभाव, गुणके सूचक है ।

स्त्रियोकी कुण्डलीमे लग्न या चन्द्रमासे उनकी शारीरिक स्थिति, पचमसे सन्तान, सप्तमसे सौभाग्य और अष्टमसे पतिकी मृत्युके सम्बन्धमें विचार करना चाहिये ।

लग्न और चन्द्रमा १।३।५।७।९।११वे राशिमे स्थित हो तो पुरुषकी आकृतिवाली, परपुरुषरत, दुराचारिणी और लग्न तथा चन्द्रमा २।४।६।८।१०।१२वी राशिमे हो तो सुन्दरी, शीलवती, पतिव्रता स्त्री होती है । यदि लग्न और चन्द्रमा १।३।५।७।९।११वीं राशिमें हो तथा शुभग्रहकी दृष्टि उनपर हो तो स्त्री मिश्रित स्वभावकी, पापग्रह दृष्ट या युत हो तो नारी दुष्ट स्वभावकी, व्यभिचारिणी; समराशियोमे लग्न, चन्द्रमा हों और उनपर क्रूर ग्रहोकी दृष्टि हो तो स्त्री मध्यम स्वभावकी होती है । नारीकी कुण्डलीमे उसके स्वभावका निर्णय करनेके लिये अशुभ, शुभ ग्रहोकी दृष्टिका मिलान कर लेना आवश्यक है ।

स्त्रीकी कुण्डलीमे २।४।६।८।१०।१२ राशियोमे मगल, बुध, गुरु और शुक्र हो तो वह नारी विदुषी, साध्वी, विख्यात और गुणवती होती है ।

सप्तम भावमे शनि पापग्रहोसे दृष्ट हो तो स्त्री आजन्म अविवाहित रहती है । सप्तमेश पापयुत या दृष्ट हो तथा सप्तममे पापग्रह हो तो यह योग विशेष बलवान् होता है । यदि सप्तमेश शनिके साथ हो तो बड़ी आयुमे विवाह करनेवाली होती है ।

वैधव्य योग

१—सप्तम भावमे मगल हो तथा सप्तम भावपर पापग्रहोकी दृष्टि हो तो बालविधवा योग होता है ।

२—लग्न या चन्द्रमासे सप्तम या अष्टम भावमें तीन-चार पापग्रह हों तो स्त्री विधवा होती है ।

३—मगलकी राशिमे स्थिर राहु पापग्रहसे युत होकर ८ या १२वें भावमे हो तो विधवा होती है ।

४—लग्न और सप्तम भावमे पापग्रह हो तो विवाहके सात-आठ वर्ष बाद विधवा होती है । चन्द्रमासे ७वे, ८वे और १२वें भावमें शनि, मगल दोनो हो तथा वे पापग्रहोसे दृष्ट हो तो स्त्री विवाहके बाद जल्द ही विधवा होती है ।

५—क्षीणचन्द्रमा, नीच या अस्तंगत राशिका चन्द्रमा छठवे या आठवें भावमे हो तो जल्द विधवा होनेका योग होता है ।

६—षष्ठेश और अष्टमेश ६।१२वें भावमे पापग्रहयुत या दृष्ट हों तो वैधव्य योग होता है ।

७—अष्टमेश सप्तम भावमे और सप्तमेश अष्टम भावमे हो तथा दोनो या एक स्थान पापग्रहोसे दृष्ट हो तो वैधव्य योग होता है ।

८—चन्द्रमासे सातवे भावमे मगल, शनि, राहु और सूर्य इन चारोमेसे कोई दो ग्रह हो तो स्त्री विधवा होती है ।

सप्तम स्थानमें प्रत्येक ग्रहका फल

सूर्य—सप्तम स्थानमे सूर्य हो तो नारी दुष्ट स्वभाव, पतिप्रेमसे वचित और कर्कशा होती है ।

चन्द्रमा—हो तो कोमल स्वभावकी, लज्जाशील तथा उच्चका चन्द्रमा हो तो वस्त्र, आभूषणवाली, धनिक और सुन्दरी होती है ।

मंगल—सप्तममे मगल हो तो नारी सौभाग्यहीन, कुकर्मरत तथा कर्क या सिह राशिमे शनिश्चरके साथ मंगल हो तो व्यभिचारिणी, वेश्या, धनी और बुरे स्वभावकी होती है ।

बुध—सप्तममे बुध हो तो नारी आभूषणवाली, विदुषी, सौभाग्य-शालिनी और पतिकी प्यारी होती है । उच्च राशिका बुध हो तो लेखिका, सुन्दर पतिवाली, धनी और नाना प्रकारके ऐश्वर्यको भोगनेवाली होती है ।

गुरु––सप्तम स्थानमें गुरु हो तो नारी पतिव्रता, धनी, गुणवती, और सुखी होती है। चन्द्रमा कर्क राशिमे और गुरु सप्तममे हो तो नारी साक्षात् रति होती है। उसके समान सुन्दरी कम ही नारियाँ लोकमें मिल सकेगी।

शुक्र––सप्तममें शुक्र हो तो नारीका पति श्रेष्ठ गुणवान्, धनी, वीर, कामकलामे प्रवीण होता है तथा वह नारी स्वय रसिका और सुन्दर वस्त्राभूषणोवाली होती है।

शनि––सप्तममे शनि हो तो उस नारीका पति रोगी, दरिद्र, व्यसनी, निर्बल होता है। यदि उच्चका शनि हो तो पति धनिक, गुणवान्, शीलवान् और कामकलाका विज्ञ मिलता है। शनिपर राहु या मगलकी दृष्टि हो तो विधवा होती है।

राहु––सप्तम स्थानमे राहु हो तो नारी अपने कुलको दोष लगानेवाली, दुःखी, पतिसुखसे वचित तथा राहु उच्चका हो तो सुन्दर और स्वस्थ पति मिलता है।

अल्पपत्या या अनपत्या योग

१––चन्द्रमा वृष, कन्या, सिह और वृश्चिक इन राशियोंमेंसे किसी राशिमे स्थित हो तो अल्पसन्तानवाली नारी होती है।

२––पचम भावमे धनु या मीन राशि हो, गुरु पचम भावमे स्थित हो या पंचम भावपर क्रूर ग्रहोकी दृष्टि हो तो सन्तान नही होती।

३––सप्तम भावमे पापग्रहकी राशि हो अथवा सप्तम भाव पाप ग्रहसे दृष्ट हो तो नारीको सन्तान नही होती अथवा कम सन्तान होती है। मगल पंचम भावमे हो और राहु सप्तममें हो तो सन्तानका अभाव होता है। पचमेशके नवमाशमे शनि या गुरु स्थित हो तो भी सन्तान नहीं होती है।

४––सप्तम स्थानमें सूर्य या राहु हों अथवा अष्टम स्थानमें शुक्र या गुरु हों तो सन्तान जीवित नही रहती।

५--सप्तम स्थानमे चन्द्रमा या बुध हो तो कन्याओंको जन्म देनेवाली नारी होती है। यदि नारी की कुण्डलीमे पञ्चम स्थानमें गुरु या शुक्र हो तो बहुत पुत्रोको प्रजनन करती है।

६--पचम भावमे सूर्य हो तो एक पुत्र, मगल हो तो तीन पुत्र, गुरु हो तो पाँच पुत्र होते है। पचममे चन्द्रमाके रहनेसे दो कन्याएँ, बुधके रहनेसे चार और शुक्रके रहनेसे सात कन्याएं होती है।

७--नवम स्थानमे शुक्र हो तो छ. कन्याएँ, सप्तममें राहु हो तो सन्तानाभाव या दो कन्याएँ होती है।

८--जिन नारियोकी जन्मराशि वृष, सिह. कन्या और वृश्चिक हो उनके पुत्र कम होते है, किन्तु इन्ही राशियोमे शुभ ग्रह स्थित हो तो सन्तान सुन्दर उत्पन्न होती है।

९--पचम स्थानमे तीन पापग्रह हो या पचमपर तीन पापग्रहोकी दृष्टि हो और पंचमेश शत्रु राशिमे हो तो नारी बाँझ होती है।

१०--अष्टम स्थानमे चन्द्रमा और बुध हो तो काकवन्ध्या योग होता है। यदि अष्टममे बुध, गुरु और शुक्र हो तो गर्भनाश होता है या सन्तान होकर मर जाती है।

१०--सप्तम स्थानमे मगल हो और उसपर शनिकी दृष्टि हो, अथवा शनि, मगल दोनो ही सप्तम स्थानमे हो तो गर्भपात होता है या बहुत ही कम सन्तान उत्पन्न होती है।

प्रवासी पतियोग--जन्म लग्न चर राशिमें हो तो नारीका पति प्रवासी होता है। चर राशियोमे लग्नेश और तृतीयेश हों तो भी पति प्रवासी होता है।

पतिके गुण-दोष द्योतक योग

१--सप्तम भावमें २।७ राशि हो तथा शुक्रका नवमांश हो तो पति भाग्यवान् होता है।

२--सप्तममे सूर्यकी राशि या सूर्यका नवाश हो तो मन्द रति करने-वाला, विद्वान्, लेखक, विचारक, अफसर पति होता है ।

३--सप्तम भावमे चन्द्रमा हो या चन्द्रमाका नवमांश हो तो कामी, कोमल स्वभावका, दयालु, विद्वान्, रसिक, धनी, व्यापारी पति होता है ।

४--सप्तममे मगलकी राशि या मंगलका नवाश हो तो क्रोधी, जमीन्दार, कृषक, धनी, हिंसक, व्यसनी और नीच प्रकृतिका व्यक्ति पति होता है ।

५--सप्तम भावमे बुधकी राशि या बुधका नवमाश हो तो विद्वान्, शोधक, इतिहासज्ञ, कवि, लेखक, सम्पादक, मजिस्ट्रेट, धनी, रतिज्ञ, कामी, मायावी और चतुर पति होता है ।

६--सप्तम भावमे गुरुकी राशि या गुरुका नवमाश हो तो गुणवान्, विशेषज्ञ, त्यागी, पत्नीभक्त, सेवापरायण, मत्री, न्यायाधीश, लोभी, चिड़चिड़ा, धर्मात्मा और प्राचीन परम्पराका पोषक पति होता है ।

७--सप्तममे शनिकी राशि या शनिका नवमाश हो तो मूर्ख, व्यसनी, क्रोधी, आलसी, साधारण धनी, और चिड़चिड़े स्वभावका पति होता है ।

चतुर्थ-अध्याय

ताजिक (वर्षफल-निर्माण-विधि)

वर्षपत्र बनानेकी प्रक्रिया ताजिक शास्त्रमे बतलाई गई है। इस शास्त्रका प्रचार भारतमे यवनोके सम्पर्कसे हुआ है। प्राचीन भारतवर्षमें वर्षपत्र जातक ग्रन्थोके आधारपर विंशोत्तरी, अष्टोत्तरी आदि दशाओके समय विभागानुसार बनाया जाता था। जातक अंगके विकास क्रमपर ध्यान देनेसे ज्ञात होगा कि पहले-पहल जो ग्रह जन्मकुण्डलीके जिस भाव—स्थानमे पड़ जाता था उसीके शुभाशुभ फलके अनुसार उस भावका फल माना जाता था। अन्य ग्रहोके सम्बन्धका विचार करना आदिकालकी अन्तिम शताब्दियों तक आवश्यक नही था, परन्तु पूर्वमध्यकालमे इस सिद्धान्तमे विकास हुआ और ग्रहोकी शत्रुता, मित्रता, सबलत्व, निर्बलत्व, स्वामित्व एवं दृष्टिकी अपेक्षासे फलाफलका विचार किया जाने लगा। विकसित होकर आगे यही प्रक्रिया दशाके रूपको प्राप्त हुई। इसमे १२० वर्ष या १०८ वर्षकी परमायु मानकर नव ग्रहोंका विभाजन किया गया है। तात्पर्य यह है कि मनुष्यके जीवन कालमे जन्मनक्षत्रके अनुसार जिस ग्रहकी दशा होती है, उसीकी अपेक्षासे सुख दुःख आदि फल मिलते हैं। यद्यपि दशाधिपतिके फलमे मित्र, शत्रु और समग्रहके घरमें रहनेके कारण फलमे न्यूनाधिकता हो जाती है, पर दशाधिपति निश्चित समयकी मर्यादा पर्यन्त वही रहता है।

यवनोंको उपर्युक्त जातक शास्त्रकी प्रक्रिया उपयुक्त न जँची और उन्होंने एक नयी प्रणाली निकाली, जिसमें एक-एक वर्षका पृथक्-पृथक् फल निकाला गया और प्रत्येक वर्षमें नव ग्रहोको फल देनेका अधिकार

देते हुए भी एक प्रधान ग्रहको वर्षेश बतलाया । तत्कालीन भारतीय ज्योतिर्विदोंने इस नयी प्रणालीका स्वागत किया और इसे अपने ढाँचेमें ढालकर वर्षपत्र विषयक अनेक ग्रन्थोंकी रचना भारतीय ज्योतिषकी भित्तिपर की । इन आचार्योंने वर्ष प्रवेश समयकी कुण्डलीमें बारह भावोंमें स्थित नव ग्रहोके फलका विवेचन जातक शास्त्रके अनुसार किया तथा ग्रहोके जन्मपत्री विषयक गणितका उपयोग भी कुछ हेर-फेरके साथ बतलाया तथा निम्न पाँच ग्रहोमेसे किसी एक बली ग्रहको वर्षका मालिक निर्धारित, करने की प्रक्रिया घोषित की—(१)जन्मकुण्डलीकी लग्न-राशिका स्वामी (२)वर्ष प्रवेश कालकी लग्न-राशिका स्वामी,(३)वर्षका मुन्थेश, (४) त्रिराशिप एवं (५) वर्ष प्रवेश दिनमे हो तो वर्ष कुण्डलीकी सूर्याधिष्ठित राशिका स्वामी और रातमे वर्ष प्रवेश हो तो वर्ष कुण्डलीकी चन्द्राधिष्ठित राशिका स्वामी ।

वर्ष-कुण्डली बनानेके लिये सर्वप्रथम वर्षेष्टकालका साधन करना चाहिये । ज्योतिष ग्रन्थोंमें बताया है कि अभीष्ट संवत्मेसे जन्म संवत्को घटानेसे गतवर्ष आते है । गतवर्षकी सख्या जितनी हो उसमे उसका चौथाई भाग एक स्थानमे जोड़ दे और दूसरी जगह गतवर्ष सख्याको २१से गुणा करे, गुणनफलमे ४०का भाग देनेसे जो घटचात्मक लब्धि आवे उसमे जन्म समयके वार आदि इष्टकालको जोड़कर ७का भाग देनेपर शेष तुल्य वार आदि वर्षेष्ट काल होता है ।

उदाहरण—जन्म सं० १९६९मे कार्त्तिक मास, शुक्ल पक्ष, १२ तिथि, गुरुवारको इष्टकाल १० घटी २२ पलपर हुआ है । इस दिन सूर्यस्पष्ट ७।५।४१।४१ है । इस जन्मपत्रीवालेका वर्षपत्र बनाना है अतः—२००३ वर्तमान संवत्मेसे

१९६९ जन्म संवत्को घटाया

३४ गतवर्ष हुए इनका चौथाई भाग=

$३४ \div ४ = ८\frac{२}{४} = ८\frac{१}{२} \times \frac{६०}{२} = ८।३०$ गत वर्षका चतुर्थांश

३४ गतवर्ष + ८।३० गतवर्षका चतुर्थांश — ४२/३०

दूसरे स्थानमें — ३४ × २१ = ७१४ ÷ ४० = १७।५१

४२।३० और १७।५१ को जोड़ा तो =

४२।४७।५१

५।१०।१२ जन्म समयके वारादि

४७।५८।३ ÷ ७ = ६ लब्धि, ५।५८।३ शेष। यहाँ लब्धिको छोड़ शेषमात्रको वर्ष प्रवेश कालीन वारादि इष्टकाल समझना चाहिये; अर्थात् बृहस्पति वारको ५८ घटी ३ पल इष्टकालपर वर्ष-प्रवेश हुआ माना जायगा।

सारणी द्वारा वर्षप्रवेश कालीन वारादि इष्टकाल निकालनेकी विधि आगेवाली वर्ष-सारणीमेंसे गतवर्षके नीचे लिखे गये वारादिको लेकर उसमें जन्म समयके वारादिको जोड़ देना चाहिये। यदि वार स्थानमें ७से अधिक आवे तो उसमें ७का भाग देकर शेषको वार स्थानमें ग्रहण करना चाहिये।

उदाहरण—गतवर्ष संख्या ३४ है, इसके नीचे ०।४७।५१।० लिखा है, इसमें जन्म समयकी वारादि संख्या ५।१०।१२को जोड़ दिया तो—

०।४७।५१।०

५।१०।१२।०

५।५८। ३ अर्थात् बृहस्पति वारको ५८ घटी ३ पल इष्टकालपर वर्षप्रवेश हुआ माना जायगा।

अन्य उदाहरण— २००३ वर्तमान संवत्मेंसे

१९७२ जन्म संवत्को घटाया

३१ गतवर्ष संख्या हुई; इसके नीचे वर्षप्रवेश सारणीमें ४।१।३६।३० लिखा है, इसमें जन्म समयकी वारादि संख्याको जोड़ दिया तो—

४। १।३६।३० सारणीके वारादि

५।५२।४१।५३ जन्मके वारादि

९।५४।१८।२३ यहाँ वार स्थानमें ७से अधिक होनेके कारण ७का भाग दिया तो शेष २।५४।१८।२३ वर्षप्रवेश कालीन वारादि इष्ट हुआ, अर्थात् सोमवारको ५४ घटी १८ पल २३ विपलपर वर्षप्रवेश माना जायगा।

वर्षप्रवेश सारणी

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
१	२	३	५	६	०	१	३	४	५	६	१	२	३	४	६
१५	३१	४६	२	१७	३३	४८	४	१०	३५	५०	६	२१	३७	१२	८
३१	३	३४	६	३७	९	४०	१२	४३	१५	४६	१८	४९	२१	५२	२४
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२
०	१	२	४	५	६	०	२	३	४	५	०	१	२	४	५
२३	३९	५४	१०	२६	४१	५७	१२	२८	४३	५९	१४	३०	४५	१	१६
५५	२७	५८	३०	१	३३	४	३६	७	३९	१०	४२	१३	४५	१६	४८
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

३३	३४	३५	३६	३७	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८
६	०	२	३	४	५	०	१	२	३	५	६	०	१	३	४
३२	४७	३	१८	३४	४९	५	२१	३६	५२	७	२३	३८	५४	९	२५
१९	५१	२२	५४	२५	५७	२८	०	३१	३	३४	६	३७	९	४०	१२
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

४९	५०	५१	५२	५३	५४	५५	५६	५७	५८	५९	६०	६१	६२	६३	६४
५	६	१	२	३	४	६	०	०	३	४	५	६	१	२	३
४०	५६	११	२७	४२	५८	१३	२९	४४	०	१५	३१	४७	२	१८	३३
४३	१५	४६	१८	४९	२१	५२	२४	५५	२७	५८	३०	१	३३	४	३६
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

६५	६६	६७	६८	६९	७०	७१	७२	७३	७४	७५	७६	७७	७८	७९	८०
४	६	०	१	२	४	५	६	०	२	३	४	५	०	१	२
४९	४	२०	३५	५१	६	२२	३७	५३	८	२४	३९	५५	१०	२६	४२
७	३९	१०	४२	१३	४५	१६	४८	१९	५१	२२	५४	२५	५७	२८	०
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

८१	८२	८३	८४	८५	८६	८७	८८	८९	९०	९१	९२	९३	९४	९५	९६
३	५	६	०	१	३	४	५	०	१	२	३	५	६	०	१
५७	१३	२८	४४	५९	१५	३०	४६	१	१७	३२	४८	३	१९	३४	५०
३१	३	३४	६	३७	९	४०	१२	४३	१५	४६	१८	४९	२१	५२	२४
३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०

वर्षप्रवेशकी तिथिका साधन

गतवर्षकी संख्याको ११ से गुणा करके दो स्थानोंमें रक्खे। प्रथम स्थानकी राशिमें १७० का भाग देनेसे जो लब्धि आवे उसे द्वितीय स्थानकी राशिमें जोड़ दें। इस योगफलमें जन्मकालिक तिथिको शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे गिनने पर जो संख्या हो उसे भी जोड़कर ३० का भाग दें। जो शेष बचे, शुक्ल पक्षकी प्रतिपदासे गिनने पर उस संख्यक तिथिमें वर्ष प्रवेश जानना चाहिये। पहले निकाले गये वारमें यह तिथि प्रायः मिल जाती है, लेकिन कभी-कभी एक तिथिका अन्तर भी पड़ जाता है। जब-जब अन्तर आवे उस समय वारको ही प्रधान मानकर उस वारकी तिथिको ग्रहण करना चाहिए।

उदाहरण—गतवर्ष संख्या ३४ है। ३४×११=३७४

३७४÷१७०=२ लब्धि और शेष ३४

३७४+२=३७६, इसमें जन्म तिथिकी संख्या अभीष्ट उदाहरणके अनुसार शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे गिनकर १२ जोड़ दी।

अतः ३७६+१२=३८८÷३०=१२ लब्धि, शेष २८। शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे २८ संख्या तक तिथि गणना की तो यह संख्या --२८ वीं संख्या कृष्णपक्षकी त्रयोदशीको आई। अतः वर्षप्रवेश प्रस्तुत उदाहरणका मार्गशीर्ष वदी १३ बृहस्पतिवारको ५८ घटी ३ पल इष्टकाल पर माना जायगा।

तिथि, नक्षत्र, वार आदि वर्षप्रवेशके जाननेकी एक सरल विधि

ज्योतिष-शास्त्रमें वर्षप्रवेशकालीन तिथि, वार निकालनेका एक सरल नियम यह भी बताया गया है कि जन्मकालका सूर्य और वर्ष प्रवेश-कालका सूर्य राशि, अंशादिमें समान होता है। जिस दिन उस संवत्में जन्मकालीन सूर्यके राशि, अंशादि मिल जायँ, उसी दिन उतने ही मिश्रमान कालिक इष्टकाल पर वर्ष प्रवेश समझना चाहिये। प्रस्तुत उदाहरणमें जन्मकालीन सूर्य ७।५।४१।४१ है, यह मार्गशीर्ष कृष्ण १३ गुरुवारकी रातको ५८।३ इष्ट काल पर मिल जाता है, अतः इसी दिन वर्ष प्रवेश माना जायगा।

वर्षकुण्डलीका लग्न जन्मकुण्डलीके लग्नके समान ही बनाया जाता है। यहाँ पर लग्नसारिणीके अनुसार लग्नका उदाहरण दिखलाया जा रहा है--

५८।३ वर्ष प्रवेशका इष्टकाल
४०।४३।१६सारणीमें प्राप्त सूर्यफल
३८।४६।१६योगफल,

इस योगफलको पुनः लग्नसारणीमें देखा तो ६।२३ का फल ३८।३६।२३ और ६।२४ का ३८।४७।५२ मिला। अभीष्ट योगफल ३८।४६।१६ है, अतः इसे २३ और २४ अंशके मध्यका समझना चाहिये। कला विकला-को निकालनेके लिये प्रक्रिया की--

३८।४७।५२, २४ अंशके फलमें से
३८।३६।२३, २३ अंशके फलको घटाया
११।२९ सजातीय संख्या बनाई
६०
६६०+२९=६८९
३८।४६।१६, अभीष्ट योगफलमें से
३८।३६।२३, २३ अंशके फलको घटाया
९।५३ सजातीय संख्या बनाई
६०
५४०+५३=५९३

यहाँ अनुपात किया कि ६८९ प्रतिविकलामें ६० कला फल मिलता है तो ५९३ प्रति विकलामें क्या ?

$$\frac{५९३\times ६०}{६८९}=\frac{३५५८०}{६८९}=५१\frac{४४१}{६८९}\times\frac{६०}{१}$$

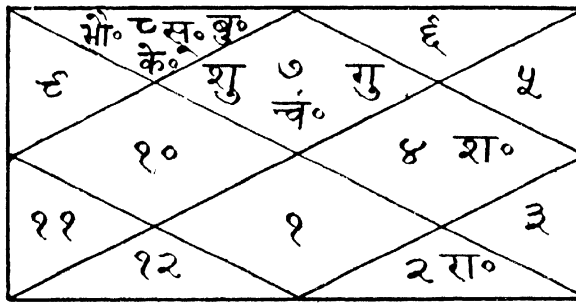
३८$\frac{२७८}{६८९}$ अर्थात् ५१ कला ३८ विकला। इस प्रकार वर्षप्रवेशका लग्न ६।२३।५१।३८ हुआ।

वर्षप्रवेश कालीन इष्टकाल परसे ग्रहस्पष्ट जन्मकुण्डलीके गणितके समान ही कर लेने चाहिये। नीचे गणित कर केवल ग्रहस्पष्ट चक्र लिखा जा रहा है—

वर्षप्रवेश कालीन ग्रहस्पष्ट चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०	ग्र०
७	६	७	७	६	६	३	१	७	राशि
५	१६	१७	०	२३	८	१२	२२	२२	अंश
४१	१२	२	३९	१०	४७	७	५३	५३	कला
४१	५१	३५	५६	२९	३९	३०	२८	२८	विकला
६०	७४५	४३	४१	३	४	०	३	३	कला विक-
४९	३६	२२	२०	१८	३३	५५	११	११	लात्मगति
		व०		व०	व०				

वर्ष कुण्डली



वर्ष कुण्डलीके अन्य गणित, द्वादश भाव चक्र, चलित चक्र आदिका साधन जन्मकुण्डलीके गणितके समान करना चाहिये। वर्षपत्रके लिखनेकी विधि भी जन्मपत्रसे लिखनेके समान ही है। सिर्फ गताब्द और प्रवेशाब्द अधिक लिखे जाते हैं तथा जन्मके स्थान पर वर्ष प्रवेश लिखा जाता है।

मुन्था-साधन

नव ग्रहोंके समान ताजिक शास्त्रमें मुन्था भी एक ग्रह माना गया है। इसकी वार्षिक गति १ राशि, मासिक २॥ अंश और दैनिक ५ कला है। गणित द्वारा इसका साधन करनेके लिये गतवर्ष संख्यामें १ जोड़ कर १२ का भाग देना चाहिए। जन्म लग्न राशिसे शेष संख्या तक गिनने पर मुन्थाकी राशि आती है। मुन्था लग्नस्पष्ट करनेकी यह प्रक्रिया है कि जन्म लग्न स्पष्टमें गतवर्ष संख्याको जोड़कर १२ का भाग देने पर शेष तुल्य स्पष्ट मुन्थाका लग्न आता है।

उदाहरण—गतवर्ष संख्या ३४+१=३५÷१२=२ लब्धि और शेष ११ आया। अभीष्ट कुण्डलीकी लग्नराशि मकर है, अतएव मकरसे आगे ११ राशियोंकी गणना करने पर वृश्चिक राशि मुन्थाकी आई।

मुन्था साधनका अन्य नियम

जन्म लग्नमें गतवर्षकी संख्याको जोड़कर १२ का भाग देनेसे शेष तुल्य मुन्था-लग्न होता है।

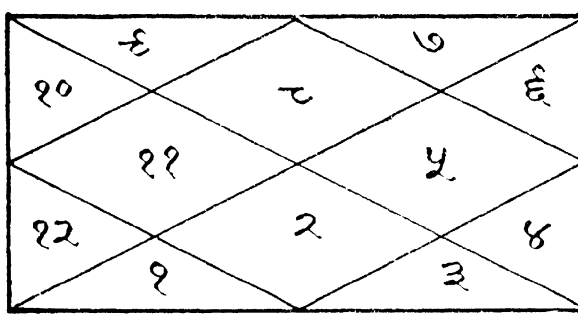
उदाहरण—९।३।१०।० जन्मलग्न

३४।०।०।० गतवर्ष संख्या

४३।३।१०।० योगफल संख्या

४३।३।१०।०÷१२=२ लब्धि और शेष ७।३।१०।० अर्थात् वृश्चिक राशि मुन्था-लग्न हुई—

मुन्था कुण्डली चक्र



भावस्पष्ट—इस गणितकी विधि जन्मकुण्डलीके गणितमें विस्तारसे प्रतिपादित की गई है। यहाँ पर सिर्फ 'लग्नसे दशम भाव साधन सारणी' द्वारा वर्ष लग्नके राशि, अंशोंका फल लेकर दशम भावका साधन किया जा रहा है। वर्ष लग्न ६।२३।५१।३८ है, इसका फल उक्त सारणीमें ३।२७।१५।५६ दशम भावका लग्न मिला।

३।२७।१५।५६ दशम भाव

६।० । ० । ०

९।२७।१५।५६ चतुर्थ भावमें से

६।२३।५१।३८ लग्नको घटाया
३।३।२४।१८÷६=
६)३।३।२४।१२(०
०
३×३०=९०+३=
६)९३(१५
६
३३
३०
३×६०=१८०+२४=
६)२०४(३४
१८
२४
२४
०×६०=०×१८=
६)१८(३
१८
×
०।१५।३४।३ षष्ठचंश हुआ
६।२३।५१।३८ लग्नमें
१५।३४। ३ षष्ठचंशको जोड़ा
७। ९।२५।४१ लग्नकी सन्धिमें
१५।३४। ३ षष्ठचंशको जोड़ा
७।२४।५९।४४ द्वितीय भावमें
१५।३४। ३ षष्ठचंशको जोड़ा
८।१०।३३।४७ द्वितीय भावकी सन्धिमें
१५।३४।३ षष्ठचंशको जोड़ा
८।२६।७।५० तृतीय भावमें
१५।३४।३ षष्ठचंशको जोड़ा

९।११।४१।५३ तृतीय भावकी सन्धिमें
१५।३४। ३ षष्ठचंशको जोड़ा
९।२७।१५।५६ चतुर्थ भाव
३०।०।० में से
१५।३४।३ षष्ठचंशको घटाया
१४।२५।५७ शेष
९।२७।१५।५६ चतुर्थभावमें
१४।२५।५७ शेषको जोड़ा
१०।११।४१।५३ चतुर्थ भावकी सन्धिमें
१४।२५।५७ शेषको जोड़ा
१०।२६।७।५० पंचम भाव
१०।२६।७।५० पंचम भावमें
१४।२५।५७ शेषको जोड़ा
११।१०।३३।४७ पंचम भावकी सन्धिमें
१४।२५।५७ शेषको जोड़ा
११।२४।५९।४४ षष्ठ भावमें
१४।२५।५७ शेषको जोड़ा
०।९।२५।४१ षष्ठ भावकी सन्धिमें
१४।२५।५७ शेषको जोड़ा
०।२३।५१।३८ सप्तमभाव

लग्नमें छः राशि जोड़नेपर भी सप्तम भाव आता है। यदि उपर्युक्त गणित द्वारा साधित सप्तम भाव, इस छः राशिके योगवाले सप्तम भावसे मिल जाय तो अपना गणित शुद्ध समझना चाहिए।

६।२३।५१।३८
६।० ।० ।०
०।२३।५१।३८ यह सप्तम भाव पहले वाले गणितसे मिल गया, अतः गणित क्रिया शुद्ध है।

७।९।२५।४१ लग्न सन्धिमें
६।०। ०। ० जोड़ा
१।९।२५।४१ सप्तम भाव सन्धि
७।२४।५९।४४ द्वितीय भावमें
६।० ।० ।० जोड़ा

१।२४।५९।४४ अष्टम भाव
८।२६।७।५० तृतीय भावमें
६।० ।० ।० जोड़ा

२।२६।७।५० नवम भाव
९।११।४१।५३ तृतीय भावकी सन्धिमें
६। ०। ०। ० जोड़ा

३।११।४१।५३ नवम भावकी सन्धि
९।२७।१५।५६ चतुर्थ भावमें
६। ०। ०। ०

३।२७।१५।५६ दशम भाव यह दशम भाव पहलवाले दशम भावसे मिल जाय तो गणित शुद्ध समझना चाहिये, अन्यथा अशुद्ध ।

१०।११।४१।५३ चतुर्थ भावकी सन्धिमें
६ । ०। ०।० जोड़ा

४।११।४१।५३ दशम भावकी सन्धि
१०।२६।७।५० पंचम भावमें
६ । ०।०।० जोड़ा

४।२६।७।५० एकादश भाव
११।१०।३३।४७ पंचम भावकी सन्धिमें
६। ०। ०। ० जोड़ा

५।१०।३३।४७ एकादशम भावकी सन्धि
११।२४।५९।४४ षष्ठ भावमें
६ । ०। ०। ० जोड़ा

५।२४।५९।४४ द्वादशम भावकी सन्धि
०।९।२५।४१ षष्ठ भावकी सन्धिमें
६।०।० । ०। जोड़ा

६।९।२५।४१ द्वादशम भावकी सन्धि

द्वादशभाव स्पष्ट चक्र

ल०	स०	ध०	स०	स०	स०	सु०	सं०	पु०	स०	रि०	स०
६	७	७	८	८	९	९	१०	१०	११	११	०
१३	९	२४	१०	२६	११	२७	११	२६	१०	२४	९
५१	२५	५९	३३	७	४१	१५	४१	७	३३	५९	२५
३८	४१	४४	४७	५०	५३	५६	५३	५०	४७	४४	४१
स्त्री.	स०	आ.	स०	ध०	स०	क०	स०	आय०	स०	य०	स०
०	१	१	२	२	३	३	४	४	५	५	६
२३	९	२४	१०	२६	११	२७	११	२६	१०	२४	९
५१	२५	५९	३३	७	४१	१५	४१	७	३३	५९	२५
३८	४१	४४	४७	५०	५३	५६	५३	५०	४७	४४	४१

ताजिक मित्रादि-संज्ञा

प्रत्येक ग्रह अपने भावसे ३,५,९ और ११ वें भावको मित्र दृष्टिसे; २,९,८ और १२ वें भावको समदृष्टिसे एवं १,४, और १० वें भावको शत्रु दृष्टिसे देखता है। अभिप्राय यह है कि जो ग्रह जहाँ पर हो उसके ३,५,९ और ११ वें स्थानमें रहने वाले ग्रह मित्र, २, ६, ८ और १२वें स्थानमें रहने वाले ग्रह सम एवं १,४, ७ और १० वें भावमें रहने-वाले ग्रह शत्रु होते हैं। यह विचार वर्ष कुण्डलीसे किया जाता है।

पंचवर्ग

वर्षपत्रमें पंचवर्गका गणित लिखा जाता है। इसके पंचवर्गोंमें गृह, उच्च, हद्दा, द्रेष्काण और नवांश ये पाँच गिनाये गये हैं। इनमें गृह, द्रेष्काण एवं नवांश साधनकी विधि पहले लिखी जा चुकी है। यहाँ पर हद्दा साधनका प्रकार लिखा जाता है।

हद्दा-साधन

मेषके ६ अंश तक गुरु, ७ से १२ अंश तक शुक्र. १३ से २० अंश तक बुध, २१ से २५ अंश तक भौम और २६ से ३० अंश तक शनि हद्देश होता है। वृषके ८ अंश तक शुक्र, ९ से १४ अंश तक बुध, १५ से २२ अंश तक गुरु, २३ से २७ अंश तक शनि और २८ से ३० अंश तक मंगल हद्देश होता है। मिथुनके ६ अंश तक बुध, ७ से १२ अंश तक शुक्र, १३से १७ अंशतक गुरु, १८से २४ अंशतक मंगल और २५से ३० अंशतक शनि हद्देश होता है। कर्कके ७ अंशतक मंगल, ८से१३ अंशतक शुक्र, १४से १९ अंशतक बुध, २०से २६ अंशतक गुरु और २७ से ३० अंशतक शनि हद्देश होता है। सिंहके ६ अंशतक गुरु, ७से ११ अंशतक शुक्र, १२से १८ अंशतक शनि, १९से २४ अंशतक बुध और २५से ३० अंशतक मंगल हद्देश होता है। कन्याके ७ अंशतक बुध, ८से १७ अंशतक शुक्र, १८ से२१ अंशतक गुरु, २२से २८ अंशतक मंगल और २९से ३० अंशतक शनि हद्देश होता है। तुलाके ६ अंशतक शनि, ७से १४ अंशतक बुध, १५से २१ अंशतक गुरु, २२से २८ अंशतक शुक्र और २९से ३० अंशतक मंगल हद्देश होता है। वृश्चिकके ७अंशतक मंगल, ८से ११ अंशतक शुक्र, १२से १९ अंशतक बुध, २०से २४ अंशतक गुरु और २५से ३० अंशतक शनि हद्देश होता है। धनुके १२ अंशतक गुरु, १३से १७ अंशतक शुक्र, १८से २१ अंशतक बुध, २२से २६ अंशतक मंगल और २७से ३० अंशतक शनि

हद्देश होता है। मकरके ७ अंशतक बुध, ८से १४ अंशतक गुरु, १५से २२ अंशतक शुक्र, २३से २६ अंशतक शनि और २७से ३०अंश तक मंगल हद्देश होता है। कुम्भके ७ अंशतक शुक्र, ८से १३ अंशतक बुध, १४से २० अंशतक गुरु, २१से २५ अंश तक मंगल और ३६से ३० अंश-तक शनि हद्देश होता है। मीनके १२ अंशतक शुक्र, १३से १६ अंशतक गुरु, १७से १९ अंशतक बुध, २०से २८ अंशतक मंगल और २९से ३० अंशतक शनि हद्देश होता है।

वर्षकालीन स्पष्टग्रहोंसे प्रत्येक ग्रहका हद्दा अवगतकर नव ग्रहोंका हद्दाचक्र बना लेना चाहिये।

उदाहरण—सूर्य ७।५ है—अर्थात् वृश्चिक राशिके ५ अंशका है, अतः मंगलके हद्दामें माना जायगा। चन्द्रमा ६।१६—अर्थात् तुला राशिके १६ अंश है तथा तुला राशिके १६वें अंशसे २१वें अंश तक गुरुका हद्दा होता है, अतः चन्द्रमा गुरुके हद्दामें समझा जायगा। मंगल ७।१७—अर्थात् वृश्चिक राशिके १८ अंश है तथा वृश्चिकके १२वे अंशसे १९वें अंशतक बुधका हद्दा होता है अतः मंगल बुधके हद्दामें समझा जायगा। इसी प्रकार बुध मंगलके हद्दामें, गुरु शुक्रके हद्दामें, शुक्र बुधके हद्दामें, शनि शुक्रके हद्दामें, राहु शनिके हद्दामें और केतु गुरुके हद्दामें माना जायगा। प्रस्तुत उदाहरणका हद्देशचक्र निम्न प्रकार है—

सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शान	राहु	केतु	ग्रह
मंगल	गुरु	बुध	मंगल	शुक्र	बुध	शुक्र	शनि	गुरु	हद्देश

उच्चबल साधन

द्वितीय अध्यायमें उच्चबल साधनकी जो प्रक्रिया बताई गई है, उससे

प्रत्येक ग्रहका उच्चबल निकाल लेना चाहिये। जो कलात्मक उच्चबल आये उसमें तीनका भाग देनेसे ताजिकका उच्चबल आ जाता है। उदाहरणमें पहले सूर्यका उच्चबल ५९।२९ आया है। अतएव—५९।२९÷३ =१९।५०, यह वर्षपत्रके लिये उच्चबल हुआ।

सारणी द्वारा उच्चबल साधन

जिस ग्रहका उच्चबल साधन करना हो उसकी उच्चबल साधन सारणीमें राशिके सामने और अंशके नीचे जो फल लिखा हो उसे ग्रहण कर लेना चाहिये। कला, विकलाके फलके लिये आगे और पीछेके अंशोंका अन्तर करनेसे जो आये, उससे कला, विकलाको गुणाकर ६०का भाग देनेसे कला, विकलाका फल आ जाता है; दोनों फलोंका योग करनेसे उच्चबल हो जाता है।

उदाहरण—वर्षप्रवेश कालीन सूर्य ७।५।४१।४१ है, सूर्य उच्चबल साधन सारणीमें सात राशिके सामने और पाँच अंशके नीचे २।४६ दिया है। कला विकलाका फल निकालनेके लिये पाँच अंश और छः अंशवाले कोष्ठकका अन्तर किया—२।५३

२।४६

०।७

४१।४१×७=२८७। २८७÷६०=४।५१

४।५१ विकलात्मक फल। २।४६ प्रथम फलमें

४।५१ द्वितीय फल जोड़ा

२।५०।५१

अर्थात् २।५०।५१ सूर्यका उच्चबल।

चन्द्रमा—६।१६।१२।५१ है, चन्द्र उच्चबल सारणीमें ६ राशिके सामने और १६ अंशके नीचे १।५३ है।

१।५३—१६ अंशका फल
१।४६—१५ अंशका फल

०। ७

१२।५१।×७=८४।३५७÷६०=१।२९,
१।५३
१।२९

१।५४।२९ चन्द्र उच्चबल

मंगल—७।१७।२।३५ है। मंगल उच्चबल सारणीमें ७ राशि और १७ अंशके नीचे १२।६ है।

१२।१३—१८ अंशका फल
१२। ६—१७ अंशका फल

०। ७ २।३५×७=१४।२४५÷६०=०।१८
१२।१३
०।१८

१२।१३।१८ मंगल उच्चबल

इसी प्रकार बुधका उच्चबल १४।५७, गुरुका ८।२, शुक्रका १।१८, शनि ९।७ है।

पञ्च वर्गी बल साधन

अपनी राशिमें जो ग्रह हो उसका ३० विश्वाबल, जो अपने उच्चमें हो उसका २० विश्वाबल, जो अपने हद्दामें हो उसका १५ विश्वाबल, जो अपने द्रेष्काणमें हो उसका १० विश्वाबल और जो अपने नवमांशमें हो उसका ५ विश्वाबल होता है। इन पाँचों अधिकारियोंके बलोंको जोड़कर चारका भाग देनेसे विश्वाबल या विशोपकबल निकलता है।

यदि कोई ग्रह अपनी राशि, अपने उच्च, अपने हद्दा, अपने द्रेष्काण

और अपने नवमांशमें न पड़ा हो तो उसके बलका विचार निम्न प्रकार करना चाहिये ।

जो ग्रह अपने मित्रके घरमें हो वह तीन चौथाई बलवान्; समराशिमें हो तो आधा बलवान् एवं शत्रुराशिमें हो तो चौथाई बलवान् होता है । यह बलसाधनकी प्रक्रिया गृह, हद्दा, उच्च, नवमांश और द्रेष्काणमें एक-सी होती है ।

बल बोधक चक्र

	स्व०	मि०	सम	शत्रु
गृहेश	३० ०	२२ ३०	१५ ०	७ ३०
हद्देश	१५ ०	११ १५	७ ३०	३ ४५
द्रेष्काणेश	१० ०	७ ३०	५ ०	२ ३०
नवमाशेश	५ ०	३ ४५	२ ३०	१ १५

सूर्य मंगलके गृहमें है और मंगल उसका शत्रु है, अतः सूर्यका गृहबल ७।३० हुआ । चन्द्रमा वर्षकुण्डलीमें शुक्रके गृहमें है, शुक्र चन्द्रमाका शत्रु है, अतः चन्द्रमाका गृहबल ७।३० हुआ । मंगल स्वगृही है अतः मंगलका ३०।० हुआ । बुध मंगलके गृहमें है और मंगल बुधका शत्रु है अतः शत्रुगृही होनेसे बुधका गृहबल ७।३० हुआ । इसी प्रकार गुरुका ७।३०, शुक्रका ७।३० और शनिका ७।३० हुआ । उच्चबल—पहले साधन किया है ।

सभी ग्रहोंकी उच्चबल साधन सारणी आगे दी जाती है ।

सूर्य-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे.	१८	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	२०	१९	१९	१९
०	५३	००	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	००	५३	४६	४०
वृ.	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१६	१६	१६	१६	१६	१६
१	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	००	५३	४६	४०	३३	२६	२०
मि.	१४	१४	१४	१४	१४	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३
२	२६	२०	१३	६	००	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	०६	००
क.	११	११	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	९	९	९
३	६	००	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	००	५३	४६	४०
सिं.	७	७	७	७	७	७	७	७	६	६	६	६	६	६
४	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	००	५३	४६	४०	३३	२६	२०
कं.	४	४	४	४	४	३	३	३	३	३	३	३	३	३
५	२६	२०	१३	६	००	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	००

(परमोच्च ०।१०)

अं.	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी.
१४	१९ ३३	१६ १३	१२ ५३	९ ३३	६ १३	२ ५३
१५	१९ २६	१६ ०६	१२ ४६	९ २६	६ ६	२ ४६
१६	१९ २०	१६ ००	१२ ४०	९ २०	६ ००	२ ४०
१७	१९ १३	१५ ५३	१२ ३३	९ १३	५ ५३	२ ३३
१८	१९ ६	१५ ४६	१२ २६	९ ६	५ ४६	२ २६
१९	१९ ००	१५ ४०	१२ २०	९ ००	५ ४०	२ २०
२०	१८ ५३	१५ ३३	१२ १३	८ ५३	५ ३३	२ १३
२१	१८ ४६	१५ २६	१२ ०६	८ ४६	५ २६	२ ६
२२	१८ ४०	१५ २०	१२ ००	८ ४०	५ २०	२ ००
२३	१८ ३३	१५ १३	११ ५३	८ ३३	५ १३	१ ५३
२४	१८ २६	१५ ०६	११ ४६	८ २६	५ ६	१ ४६
२५	१८ २०	१५ ००	११ ४०	८ २०	५ ००	१ ४०
२६	१८ १३	१४ ५३	११ ३३	८ १३	४ ५३	१ ३३
२७	१८ ६	१४ ४६	११ २६	८ ६	४ ४६	१ २६
२८	१८ ००	१४ ४०	११ २०	८ ००	४ ४०	१ २०
२९	१७ ५३	१४ ३३	११ १३	७ ५३	४ ३३	१ १३

सूर्य-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु. ६	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	० १३	० २०
वृ. ७	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०
ध. ८	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ०
म. ९	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	१० २०
कुं. १०	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०
मी. ११	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	१६ ५३	१७ ०

(परमोच्च ०।१०)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं.
० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०	१ ४६	१ ५३	२ ०	२ ६	तु० ६
३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	वृ० ७
७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	ध. ८
१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	म. ९
१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	कुं. १०
१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	मी. ११

चन्द्र उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे.	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७
०	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६
वृ.	१९	१९	१९	२०	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१८
१	४०	४६	५३	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३
मि.	१७	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१५	१५	१५	१५
२	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३
क.	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२
३	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३
सिं.	१०	१०	१०	१०	९	९	९	९	९	९	९	९	९	८
४	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३
कं.	७	६	६	६	६	६	६	६	६	६	५	५	५	५
५	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३

(परमोच्च १।३)

अं.	मे. ०	वृ १	मि. २	क. ३	सिं. ४	क. ५
१४	१७ ५३	१८ ४६	१५ २६	१२ ६	८ ४६	५ २६
१५	१८ ०	१८ ४०	१५ २०	१२ ०	८ ४०	५ २०
१६	१८ ६	१८ ३३	१५ १३	११ ५३	८ ३३	५ १३
१७	१८ १३	१८ २६	१५ ६	११ ४६	८ २६	५ ६
१८	१८ २०	१८ २०	१५ ०	११ ४०	८ २०	५ ०
१९	१८ २६	१८ १३	१४ ५३	११ ३३	८ १३	४ ५३
२०	१८ ३३	१८ ६	१४ ४६	११ २६	८ ६	४ ४६
२१	१८ ४०	१८ ०	१४ ४०	११ २०	८ ०	४ ४०
२२	१८ ४६	१७ ५३	१४ ३३	११ १३	७ ५३	४ ३३
२३	१८ ५३	१७ ४६	१४ २६	११ ६	७ ४६	४ २६
२४	१९ ०	१७ ४०	१४ २०	११ ०	७ ४०	४ २०
२५	१९ ६	१७ ३३	१४ १३	१० ५३	७ ३३	४ १३
२६	१९ १३	१७ २६	१४ ६	१० ४६	७ २६	४ ६
२७	१९ २०	१७ २०	१४ ०	१० ४०	७ २०	४ ०
२८	१९ २६	१७ १३	१३ ५३	१० ३३	७ १३	३ ५३
२९	१९ ३३	१७ ६	१३ ४६	१० २६	७ ६	३ ४६

चन्द्र उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु. ६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३
वृ. ७	० २०	० १३	० ६	० ०	० ०६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६
ध. ८	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६
म. ९	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६
कुं. १०	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६
मी. ११	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१३ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६

(परमोच्च १।३)

अं.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.
१	२ ६	१ १३	४ ३३	७ ५३	११ १३	१४ ३३
२	२ ०	१ २०	४ ४०	८ ०	११ २०	१४ ४०
३	१ ५३	१ २६	४ ४६	८ ६	११ २६	१४ ४६
४	१ ४६	१ ३३	४ ५३	८ १३	११ ३३	१४ ५३
५	१ ४०	१ ४०	५ ०	८ २०	११ ४०	१५ ०
६	१ ३३	१ ४६	५ ६	८ २६	११ ४६	१५ ६
७	१ २६	१ ५३	५ १३	८ ३३	११ ५३	१५ १३
८	१ २०	२ ०	५ २०	८ ४०	१२ ०	१५ २०
९	१ १३	२ ६	५ २६	८ ४६	१२ ६	१५ २६
१०	१ ६	२ १३	५ ३३	८ ५३	१२ १३	१५ ३३
११	१ ०	२ २०	५ ४०	९ ०	१२ २०	१५ ४०
१२	० ५३	२ २६	५ ४६	९ ६	१२ २६	१५ ४६
१३	० ४६	२ ३३	५ ५३	९ १३	१२ ३३	१५ ५३
१४	० ४०	२ ४०	६ ०	९ २०	१२ ४०	१६ ०
१५	० ३३	२ ४६	६ ६	९ २६	१२ ४६	१६ ६
१६	० २६	२ ५३	६ १३	९ ३३	१२ ५३	१६ १३

भौम-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे. ०	१३ ६	१३ ०	१२ ५३	१२ ४६	१२ ४०	१२ ३३	१२ २६	१२ २०	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०
वृ. १	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६	९ ०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०
मि २	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६	५ ४०	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०
क. ३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६	२ २०	२ १३	२ ६	२ ०	१ ५३	१ ४६	१ ४०
सि. ४	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३	१ ०	१ ६	१ १३	१ २०	१ २६	१ ३३	१ ४०
कं. ५	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३	४ २०	४ २६	४ ३३	४ ४०	४ ४६	४ ५३	५ ०

(परमोच्च ९।२८)

अं.	मे.	बृ.	मि.	क.	सिं	कं.
१	०	१	२	३	४	५
२	३०	१३	१३	३३	६	६
३	०	२६	२६	६	८	७
४	३०	४०	४०	१०	१०	८
५	०	५३	५३	१३	१२	९
६	३०	६६	६६	१६	१४	१०
७	०	८०	८०	२०	१६	११
८	३०	९३	९३	२३	१८	१२
९	०	१०६	१०६	२६	२०	१३
१०	३०	११०	११०	३०	२२	१४
११	०	१२३	१२३	३३	२४	१५
१२	३०	१३६	१३६	३६	२६	१६
१३	०	१४०	१४०	४०	२८	१७
१४	३०	१५३	१५३	४३	३०	१८
१५	०	१६६	१६६	४६	३२	१९
१६	३०	१८०	१८०	५०	३४	२०
१७	०	१९३	१९३	५३	३६	२१
१८	३०	२०६	२०६	५६	३८	२२
१९	०	२१०	२१०	६०	४०	२३
२०	३०	२२३	२२३	६३	४२	२४
२१	०	२३६	२३६	६६	४४	२५
२२	३०	२४०	२४०	७०	४६	२६
२३	०	२५३	२५३	७३	४८	२७
२४	३०	२६६	२६६	७६	५०	२८
२५	०	२८०	२८०	८०	५२	२९
२६	३०	२९३	२९३	८३	५४	३०
२७	०	३०६	३०६	८६	५६	३१
२८	३०	३१०	३१०	९०	५८	३२
२९	०	३२३	३२३	९३	६०	३३
३०	३०	३३६	३३६	९६	६२	३४

भौम उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु. ६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३	७ ४०	७ ४६	७ ५३	८ ०	८ ६	८ १३	८ २०
वृ. ७	१० १३	१० २०	१० २६	१० ३३	१० ४०	१० ४६	१० ५३	११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०
ध. ८	१३ ३३	१३ ४०	१३ ४६	१३ ५३	१४ ०	१४ ६	१४ १३	१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०
म. ९	१६ ५३	१७ ०	१७ ६	१७ १३	१७ २०	१७ २६	१७ ३३	१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०
कुं. १०	१९ ४६	१९ ४०	१९ ३३	१९ २६	१९ २०	१९ १३	१९ ६	१९ ०	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०
मी. ११	१६ २६	१६ २०	१६ १३	१६ ६	१६ ०	१५ ५३	१५ ४६	१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०

(परमोच्च ९।२८)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं.
८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६	९ ५३	१० ०	१० ६	तु. ६
११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६	१३ १३	१३ २०	१३ २६	वृ. ७
१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६	१६ ३३	१६ ४०	१६ ४६	ध. ८
१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६	१९ ५३	२० ०	१९ १३	म. ९
१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३	१६ ४६	१६ ४०	१६ ३३	कुं. १०
१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३	१३ २६	१३ २०	१३ १	मी. ११

बुध-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे. ०	१ ८०	१ ८६	१ ५३	२ ०	२ ६	२ १३	२ २०	२ २६	२ ३३	२ ४०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६
वृ. १	५ ०	५ ६	५ १३	५ २०	५ २६	५ ३३	५ ४०	५ ४६	५ ५३	६ ०	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६
मि. २	८ २०	८ २६	८ ३३	८ ४०	८ ४६	८ ५३	९ ०	९ ६	९ १३	९ २०	९ २६	९ ३३	९ ४०	९ ४६
क. ३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	१२ ४६	१२ ५३	१३ ०	१३ ६
सि. ४	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	१६ ६	१६ १३	१६ २०	१६ २६
कं. ५	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	१९ २६	१९ ३३	१९ ४०	१९ ४६

(परमोच्च ५।१५)

अ.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	कं.
१४	३ १३	६ ३३	९ ५३	१३ १३	१६ ३३	१९ ५३
१५	३ २०	६ ८०	१० ०	१३ २०	१६ ८०	२० ०
१६	३ २६	६ ८६	१० ६	१३ २६	१६ ८६	१९ ५३
१७	३ ३३	६ ५३	१० १३	१३ ३३	१६ ५३	१९ ४६
१८	३ ४०	७ ०	१० २०	१३ ४०	१७ ०	१९ ४०
१९	३ ४६	७ ६	१० २६	१३ ४६	१७ ६	१९ ३३
२०	३ ५३	७ १३	१० ३३	१३ ५३	१७ १३	१९ २६
२१	४ ०	७ २०	१० ४०	१४ ०	१७ २०	१९ २०
२२	४ ६	७ २६	१० ४६	१४ ६	१७ २६	१९ १३
२३	४ १४	७ ३३	१० ५३	१४ १३	१७ ३३	१९ ६
२४	४ २०	७ ४०	११ ०	१४ २०	१७ ४०	१९ ०
२५	४ २६	७ ४६	११ ६	१४ २६	१७ ४६	१८ ५३
२६	४ ३३	७ ५३	११ १३	१४ ३३	१७ ५३	१८ ४६
२७	४ ४०	८ ०	११ २०	१४ ४०	१८ ०	१८ ४०
२८	४ ४६	८ ६	११ २६	१४ ४६	१८ ६	१८ ३३
२९	४ ५३	८ १३	११ ३३	१४ ५३	१८ १३	१८ २६
३०	५ १३	८ १९	११ ४०	१५ ३	१८ १९	१८ २०

बुध-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु. ६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	१७ १३	१७ ६	१७ ०	१६ ५३
वृ. ७	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	१३ ५३	१३ ४६	१३ ४०	१३ ३३
ध. ८	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३
म. ९	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६	७ २०	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३
कुं. १०	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६	४ ०	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३
मी. ११	१ ४०	१ ३३	१ २६	१ २०	१ १३	१ ६	१ ०	० ५३	० ४६	० ४०	० ३३	० २६	० २०	० १३

(परमोच्च ५।१५)

अं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
१	१५ ६	११ ४६	८ २६	५ ९	१ ४६	१ ३३
२	१५ १३	११ ५३	८ ३३	५ १३	१ ५३	१ २६
३	१५ २०	१२ ०	८ ४०	५ २०	२ ०	१ २०
४	१५ २६	१२ ६	८ ४६	५ २६	२ ६	१ १३
५	१५ ३३	१२ १३	८ ५३	५ ३३	२ १३	१ ६
६	१५ ४०	१२ २०	९ ०	५ ४०	२ २०	१ ०
७	१५ ४६	१२ २६	९ ६	५ ४६	२ २६	० ५३
८	१५ ५३	१२ ३३	९ १३	५ ५३	२ ३३	० ४६
९	१५ ०	१२ ४०	९ २०	६ ०	२ ४०	० ४०
१०	१५ ६	१२ ४६	९ २६	६ ६	२ ४६	० ३३
११	१५ १३	१२ ५३	९ ३३	६ १३	२ ५३	० २६
१२	१५ २०	१३ ०	९ ४०	६ २०	३ ०	० २०
१३	१६ २६	१३ ६	९ ४६	६ २६	३ ६	० १३
१४	१६ ३३	१३ १३	१० ५३	६ ३३	३ १३	० ६
१५	१६ ४०	१३ २०	१० ०	६ ४०	३ २०	० ०
१६	१६ ४६	१३ २६	१० ६	६ ४६	३ २६	० ०

गुरु–उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे.	९	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३
वृ.	१२	१२	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१४	१४	१४
१	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३
मि.	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१७	१७	१७	१७	१७	१७
२	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३
क.	१९	१९	१९	१९	१९	२०	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९
३	२६	३३	४०	४६	५३	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६
सि.	१७	१७	१७	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१५	१५
४	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६
कं.	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१२	१२	१२	१२	१२
५	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६

(परमोच्च ३।५)

१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	अं.
११ ०	११ ६	११ १३	११ २०	११ २६	११ ३३	११ ४०	११ ४६	११ ५३	१२ ०	१२ ६	१२ १३	१२ २०	१२ २६	१२ ३३	१२ ४०	मे. १
१४ २०	१४ २६	१४ ३३	१४ ४०	१४ ४६	१४ ५३	१५ ०	१५ ६	१५ १३	१५ २०	१५ २६	१५ ३३	१५ ४०	१५ ४६	१५ ५३	१६ ०	वृ० २
१७ ४०	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३	१९ २०	मि. ३
१९ ०	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६	१७ २०	क. ४
१५ ४०	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६	१४ ०	सिं. ५
१२ २०	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २६	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६	१० ४०	कं. ६

गुरु—उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु. ६	१० ३३	१० २६	१० २०	१० १३	१० ६	१० ०	९ ५३	९ ४६	९ ४०	९ ३३	९ २६	९ २०	९ १३	९ ६
वृ. ७	७ १३	७ ६	७ ०	६ ५३	६ ४६	६ ४०	६ ३३	६ २६	६ २०	६ १३	६ ६	६ ०	५ ५३	५ ४६
ध. ८	३ ५३	३ ४६	३ ४०	३ ३३	३ २६	३ २०	३ १३	३ ६	३ ०	२ ५३	२ ४६	२ ४०	२ ३३	२ २६
म. ९	० ३३	० २६	० २०	० १३	० ६	० ०	० ६	० १३	० २०	० २६	० ३३	० ४०	० ४६	० ५३
कुं. १०	२ ४६	२ ५३	३ ०	३ ६	३ १३	३ २०	३ २६	३ ३३	३ ४०	३ ४६	३ ५३	४ ०	४ ६	४ १३
मी. ११	६ ६	६ १३	६ २०	६ २६	६ ३३	६ ४०	६ ४६	६ ५३	७ ०	७ ६	७ १३	७ २०	७ २६	७ ३३

(परमोच्च ३।५)

अं.	तु०		वृ०		ध०		म०		कुं०		मी.	
१४	९	०	५	४०	२	२०	१	०	४	२०	७	४०
१५	८	५३	५	३३	२	१३	१	६	४	२६	७	४६
१६	८	४६	५	२६	२	६	१	१३	४	३३	७	५३
१७	८	४०	५	२०	२	०	१	२०	४	४०	८	०
१८	८	३३	५	१३	१	५३	१	२६	४	४६	८	६
१९	८	२६	५	६	१	४६	१	३३	३	५३	८	१३
२०	८	२०	५	०	१	४०	१	४०	५	०	८	२०
२१	८	१३	४	५३	१	३३	१	४६	५	६	८	२६
२२	८	६	४	४६	१	२६	१	५३	५	१३	८	३३
२३	८	०	४	४०	१	२०	२	०	५	२०	८	४०
२४	७	५३	४	३३	१	१३	२	६	५	२६	८	४६
२५	७	४६	४	२६	१	६	२	१३	५	३३	८	५३
२६	७	४०	४	२०	१	०	२	२०	५	४०	९	०
२७	७	३३	४	१३	०	५३	२	२६	५	४६	९	६
२८	७	२६	४	६	०	४६	२	३३	५	५३	९	१३
२९	७	२०	४	०	०	४०	२	४०	६	०	९	२०
अं.	तु०		वृ०		ध०		म०		कुं०		मी.	
१४	९	०	५	४०	२	२०	१	०	४	२०	७	४०
१५	८	५३	५	३३	२	१३	१	६	४	२६	७	४६
१६	८	४६	५	२६	२	६	१	१३	४	३३	७	५३
१७	८	४०	५	२०	२	०	१	२०	४	४०	८	०
१८	८	३३	५	१३	१	५३	१	२६	४	४६	८	६
१९	८	२६	५	६	१	४६	१	३३	३	५३	८	१३
२०	८	२०	५	०	१	४०	१	४०	५	०	८	२०
२१	८	१३	४	५३	१	३३	१	४६	५	६	८	२६
२२	८	६	४	४६	१	२६	१	५३	५	१३	८	३३
२३	८	०	४	४०	१	२०	२	०	५	२०	८	४०
२४	७	५३	४	३३	१	१३	२	६	५	२६	८	४६
२५	७	४६	४	२६	१	६	२	१३	५	३३	८	५३
२६	७	४०	४	२०	१	०	२	२०	५	४०	९	०
२७	७	३३	४	१३	०	५३	२	२६	५	४६	९	६
२८	७	२६	४	६	०	४६	२	३३	५	५३	९	१३
२९	७	२०	४	०	०	४०	२	४०	६	०	९	२०

शुक्र—उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे०	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१८	१८	१८	१८	१८	१८	१८
०	८०	३३	२६	२०	१३	६	०	१३	२६	४०	५३	२६	२०	१३
वृ.	६१	६१	१६	१६	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१४
१	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३
मि.	१३	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	११	११	११	११
२	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३
क.	९	९	९	९	९	९	९	८	८	८	८	८	८	८
३	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३
सि.	६	६	६	६	५	५	५	५	५	५	५	५	५	४
४	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३
कं.	३	२	२	२	२	२	२	२	२	२	१	१	१	१
५	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३

(परमोच्च ११।२७)

अं.	मे०	वृ०	मि.	क०	सिं.	कं०
१४	१८ ६	१४ ४६	११ २६	८ ६	४ ४६	१ २६
१५	१८ ०	१४ ८०	११ २०	८ ०	४ ८०	१ २०
१६	१७ ५३	१४ ३३	११ १३	७ ५३	४ ३३	१ १३
१७	१७ ४६	१४ २६	११ ६	७ ४६	४ २६	१ ६
१८	१७ ४०	१४ २०	११ ०	७ ४०	४ २०	१ ०
१९	१७ ३३	१४ १३	१० ५३	७ ३३	४ १३	० ५३
२०	१७ २६	१४ ६	१० ४६	७ २६	४ ६	० ४६
२१	१७ २०	१४ ०	१० ४०	७ २०	४ ०	० ४०
२२	१७ १३	१३ ५३	१० ३३	७ १३	३ ५३	० ३३
२३	१७ ६	१३ ४६	१० २६	७ ६	३ ४६	० २६
२४	१७ ०	१३ ४०	१० २०	७ ०	३ ४०	० २०
२५	१६ ५३	१३ ३३	१० १३	६ ५३	३ ३३	० १३
२६	१६ ४६	१३ २६	१० ६	६ ४६	३ २६	० ६
२७	१६ ४०	१३ २०	१० ०	६ ४०	३ २०	० ०
२८	१६ ३३	१३ १३	९ ५३	६ ३३	३ १३	० ५३
२९	१६ २६	१३ ६	९ ४६	६ २६	३ ६	० ४६
३०	१६ २०	१३ १	९ ४०	६ २०	३ ०	० ४०

शुक्र–उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु.	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	१
६	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६
वृ.	३	३	३	४	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५
७	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६
ध.	७	७	७	७	७	७	७	७	७	८	८	८	८	८
८	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६
म.	१०	१०	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	११	११	११	११
९	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६
कु.	१३	१३	१३	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१५	१५
१०	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६
मी.	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१७	१८	१८	१८	१८	१८
११	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६

(परमोच्च ११।२७)

अं.	२९	२८	२७	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४
तु.	३	३	३	३	३	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	१
	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३
वृ.	६	६	६	६	६	६	६	६	६	५	५	५	५	५	५	५
	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३
ध.	१०	१०	१०	९	९	९	९	९	९	९	९	९	८	८	८	८
	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३
म.	१३	१३	१३	१३	१३	१३	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	११
	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३
कुं.	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१६	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५
	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३
मी.	१९	१९	२०	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१९	१८	१८	१८	१८
	४६	५३	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३

शनि उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
मे.	२	२	२	१	१	१	१	१	१	१	१	०	०	०
०	१३	६	०	५३	४६	४०	३३	२६	२०	१३	६	०	५३	४६
वृ.	१	१	१	१	१	१	१	१	२	२	२	२	२	२
१	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३
मि.	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	५
२	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३
क.	७	७	८	८	८	८	८	८	८	८	८	९	९	९
३	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३
सिं.	११	११	११	११	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१२	१२
४	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३
कं.	१४	१४	१४	१४	१४	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५	१५
५	२६	३३	४०	४६	५३	०	६	१३	२०	२६	३३	४०	४६	५३

(परमोच्च ६।२२।०)

अं.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	कं.
१४	०	२	६	९	१२	१६
	४०	४०	०	२०	४०	०
१५	०	२	६	९	१२	१६
	३३	४६	६	२६	४६	६
१६	०	२	६	९	१२	१६
	२६	५३	१३	३३	५३	१३
१७	०	३	६	९	१३	१६
	२०	०	२०	४०	०	२०
१८	०	३	६	९	१३	१६
	१३	६	२६	४६	६	२६
१९	०	३	६	९	१३	१६
	६	१३	३३	५३	१३	३३
२०	०	३	६	१०	१३	१६
	०	२०	४०	०	२०	४०
२१	०	३	६	१०	१३	१६
	६	२६	४६	६	२६	४६
२२	०	३	७	१०	१३	१६
	१३	३३	५३	१३	३३	५३
२३	०	३	७	१०	१३	१७
	२०	४०	०	२०	४०	०
२४	०	३	७	१०	१३	१७
	२६	४६	६	२६	४६	६
२५	०	३	७	१०	१३	१७
	३३	५३	१३	३३	५३	१३
२६	०	४	७	१०	१४	१७
	४०	०	२०	४०	०	२०
२७	०	४	७	१०	१४	१७
	४६	६	२६	४६	६	२६
२८	०	४	७	१०	१४	१७
	५३	१३	३३	५३	१३	३३
२९	१	४	७	११	१४	१७
	०	२०	४०	०	२०	४०

शनि-उच्चबल सारणी

अंश	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
तु. ६	१७ ४६	१७ ५३	१८ ०	१८ ६	१८ १३	१८ २०	१८ २६	१८ ३३	१८ ४०	१८ ४६	१८ ५३	१९ ०	१९ ६	१९ १३
वृ. ७	१८ ५३	१८ ४६	१८ ४०	१८ ३३	१८ २६	१८ २०	१८ १३	१८ ६	१८ ०	१७ ५३	१७ ४६	१७ ४०	१७ ३३	१७ २६
ध. ८	१५ ३३	१५ २६	१५ २०	१५ १३	१५ ६	१५ ०	१४ ५३	१४ ४६	१४ ४०	१४ ३३	१४ २६	१४ २०	१४ १३	१४ ६
म. ९	१२ १३	१२ ६	१२ ०	११ ५३	११ ४६	११ ४०	११ ३३	११ २७	११ २०	११ १३	११ ६	११ ०	१० ५३	१० ४६
कुं. १०	८ ५३	८ ४६	८ ४०	८ ३३	८ २६	८ २०	८ १३	८ ६	८ ०	७ ५३	७ ४६	७ ४०	७ ३३	७ २६
मी. ११	५ ३३	५ २६	५ २०	५ १३	५ ६	५ ०	४ ५३	४ ४६	४ ४०	४ ३३	४ २६	४ २०	४ १३	४ ६

(परमोच्च ६।२२।०)

अ.	तु. ६	वृ. ७	ध. ८	म. ९	कुं. १०	मी. ११
१	१९ २०	१७ २०	१४ ०	१० ४०	७ २०	४ ०
२	१९ २६	१७ १३	१३ ५३	१० ३३	७ १३	३ ५३
३	१९ ३३	१७ ६	१३ ४६	१० २६	७ ६	३ ४६
४	१९ ४०	१७ ०	१३ ४०	१० २०	७ ०	३ ४०
५	१९ ४६	१६ ५३	१३ ३३	१० १३	६ ५३	३ ३३
६	१९ ५३	१६ ४६	१३ २६	१० ६	६ ४६	३ २६
७	२० ०	१६ ४०	१३ २०	१० ०	६ ४०	३ २०
८	१९ ५३	१५ ३३	१३ १३	९ ५३	६ ३३	३ १३
९	१९ ४६	१३ २६	१३ ६	९ ४६	६ २६	३ ६
१०	१९ ४०	१६ २०	१३ ०	९ ४०	६ २०	३ ०
११	१९ ३३	१६ १३	१२ ५३	९ ३३	६ १३	२ ५३
१२	१९ २६	१६ ६	१२ ४६	९ २६	६ ६	२ ४६
१३	१९ २०	१६ ०	१२ ४०	९ २०	५ ५३	२ ४०
१४	१९ १३	१५ ५३	१२ ३३	९ १३	५ ४६	२ ३३
१५	१९ ६	१५ ४६	१२ २६	९ ६	५ ४०	२ २६
१६	१९ ०	१५ ४०	१२ २०	९ ०	५ ४०	२ २०
१७	१९ ५३	१५ ३३	१२ १३	८ ५३	५ ३३	२ १३
१८	१९ ४६	१६ २६	१२ ६	८ ४६	५ २६	२ ६
१९	१९ ४०	१६ २०	१२ ०	८ ४०	५ २०	२ ०
२०	१९ ३३	१६ १३	११ ५३	८ ३३	५ १३	१ ५३
२१	१९ २६	१६ ६	११ ४६	८ २६	५ ६	१ ४६
२२	१९ २०	१६ ०	११ ४०	८ २०	५ ०	१ ४०
२३	१९ १३	१५ ५३	११ ३३	८ १३	४ ५३	१ ३३
२४	१९ ६	१५ ४६	११ २६	८ ६	४ ४६	१ २६
२५	१९ ०	१५ ४०	११ २०	८ ०	४ ४०	१ २०
२६	१९ ५३	१५ ३३	११ १३	७ ५३	४ ३३	१ १३
२७	१९ ४६	१५ २६	११ ६	७ ४६	४ २६	१ ६
२८	१९ ४०	१५ २०	११ ०	७ ४०	४ २०	१ ०
२९	१९ ३३	१५ १३	१० ५३	७ ३३	४ १३	० ५३

हद्दाबल—सूर्य मंगलके हद्दामें है और सूर्यका मंगल शत्रु है, अतः शत्रुके हद्दामें होनेके कारण सूर्यका हद्दाबल ३।४५ हुआ। चन्द्रमा गुरुके हद्दामें है और गुरु चन्द्रमाका शत्रु है, अतः शत्रुके हद्दामें होनेके कारण चन्द्रमाका हद्दाबल ३।४५ हुआ। मंगल बुधके हद्दामें है और बुध मंगलका शत्रु है अतः भौमका हद्दाबल ३।४५ हुआ। इसी प्रकार बुधका हद्दाबल ३।४५, गुरुका ३।४५, शुक्रका ३।४५ और शनिका ३।४५ हुआ।

द्रेष्काण—द्वितीय अध्यायमें बतायी गई विधिसे द्रेष्काण लाकर तब विचार करना चाहिये। यहाँ सूर्य भौम द्रेष्काणमें है अतः उसका २।३० बल हुआ। चन्द्रमा शनिके द्रेष्काणमें है अतः २।३० बल हुआ। मंगल गुरुके द्रेष्काणमें है अतः समगृही द्रेष्काण होनेके कारण ५।० बल हुआ। बुध मंगलके द्रेष्काणमें है अतः उसका २।३० बल हुआ। इसी प्रकार गुरुका द्रेष्काणबल ५।०, शुक्रका १०।० और शनिका ७।३० है।

नवमांशबल—द्वितीय अध्यायमें बताई गई विधिसे सूर्य अपने ही नवमांशमें है अतः इसका नवमांशबल ५।० हुआ। चन्द्रमा शनिके नवमांशमें है और शनि चन्द्रमाका शत्रु है, अतः शत्रुगृही नवमांश होनेसे इसका नवमांशबल १।१५ हुआ। मंगल गुरुके नवमांशमें है और गुरु मंगलका सम है अतः इसका बल २।३० हुआ। इसी प्रकार बुधका नवमांश बल २।३०, गुरुका २।३०, शुक्रका १।१५ और शनिका १।१५ हुआ।

बलीग्रहका निर्णय

जिस ग्रहका विंशोपकबल ११ से २० अंश तक हो वह पूर्वबली, जिसका ६ से १० अंश तक हो वह मध्यबली, जिसका १ से ५ अंश तक हो वह अल्पबली और जिसका विंशोपक बल शून्य हो वह निर्बल कहलाता है। कहीं-कही ५ अंशसे कम विंशोपकवाले ग्रहको ही निर्बल माना है। स्वयंका अनुभव भी यही है कि ५ अंशसे कम विंशोपक वाला ग्रह निर्बल होता है।

पञ्चाधिकारी

जन्मलग्नेश, वर्षलग्नेश, मुन्थाधिप, त्रिराशिपति और दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो सूर्यराशिपति तथा रात्रिमें वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रराशिपति ये पाँच ग्रह वर्ष पत्रिकामें विशेषाधिकारी माने जाते हैं।

त्रिराशिपति विचार

नीचेके चक्रमेंसे दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो वर्ष लग्नकी राशिके अनुसार दिवा त्रिराशिपति और रात्रिमें वर्ष प्रवेश हो तो रात्रिका त्रिराशिपति ग्रहण करना चाहिये।

त्रिराशिपति चक्र

राशि	मे०	वृ०	मि०	क०	सिं०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कुं०	मी.
दिवा त्रिराशिपति	सू०	शु०	श०	शु०	गु०	च०	बु०	मं०	श०	मं०	गु०	चं०
रात्रि त्रिराशिपति	गु०	चं०	बु०	मं०	सू०	शु०	श०	शु०	श०	मं०	गु०	च०

उदाहरण कुण्डलीके पंचाधिकारी निम्न प्रकार हैं

जन्मलग्नेश	वर्षलग्नेश	मुन्थेश	त्रिराशीश	चन्द्रराशीश
भौम	शुक्र	भौम	शनि	शुक्र
१३	५	१३	७	५
२२	५७	२२	१६	५७
०	०	०	५	०
पूर्णबली	अल्पबली	पूर्णबली	मध्यबली	अल्पबली

उदाहरण—कुण्डलीका पञ्चवर्गी बलचक्र निम्न प्रकार हुआ—

सू०	च०	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	ग्रह
७	७	३०	७	७	७	७	गृहबल
३०	३०	०	३	३३०	३०	३०	
२	१	१२	१४	८	१	९	उच्चबल
५०	५४	१३	५७	२	१८	७	
३	३	३	३	३	३	३	हद्दाबल
४५	४५	४५	४५	४५	४५	४५	
२	२	५	२	५	१०	७	द्रेष्काणबल
३०	३०	०	३०	०	०	३०	
५	१	२	२	२	१	१	नवमांशबल
०	१५	३०	३०	३०	१५	१५	
२१	१६	५३	३१	२६	२३	२९	योगबल
३५	५४	२८	१२	४७	४८	७	
५	४	१३	७	६	५	७	विश्वाबल
२३	१३	२२	४८	४१	५७	१६	
४५	३०	०	०	४५	०	४५	

ताजिक शास्त्रानुसार ग्रहोंकी दृष्टि

ताजिकमें ग्रहोंकी दृष्टि प्रत्यक्षस्नेहा, गुप्तस्नेहा, गुप्तवैरा और प्रत्यक्षवैरा, इस प्रकार चार तरहकी होती है। वर्ष कुण्डलीमें ग्रह जहाँ रहता है उससे नौवें और पाँचवें स्थानमें स्थित ग्रहको प्रत्यक्ष स्नेहा ४५ कलावाली दृष्टिसे देखता है। यह दृष्टि सम्पूर्ण कार्योंमें सिद्धि देनेवाली, मेलापक संज्ञावाली बताई गई है।

कोई ग्रह अपने स्थानसे तीसरे और ग्यारहवें स्थानमें स्थित ग्रहको गुप्तस्नेहा, दृष्टिसे देखता है। तीसरे भावकी दृष्टि ४० कलावाली और ११वें भावकी दृष्टि १० कलावाली होती है। यह दृष्टि कार्य सिद्ध करनेवाली और स्नेहवर्द्धिनी बताई गई है।

चौथे और दसवें भावमें गुप्तवैरा एवं १५ कलावाली दृष्टि होती है। पहले और सातवें भावमें प्रत्यक्षवैरा एवं ६० कलावाली दृष्टि होती है। ये दोनों ही दृष्टियाँ क्षुत संज्ञक कार्य नाश करनेवाली बताई गई हैं।

विशेष—दृश्य, द्रष्टाका अन्तर द्वादशांश (बार भाग) से अधिक न हो तो दृष्टियोंका फल ठीक घटता है, अन्यथा नहीं घटता।

बलवती दृष्टि

वाम भागस्थ—छटवेंसे बारहवें भाग तक रहनेवाले ग्रहकी दक्षिण भागस्थ—लग्नसे छठवें भाव तक स्थित ग्रहके ऊपर बलवती दृष्टि होती है। दक्षिण भागस्थ ग्रहकी वाम भागस्थ ग्रहके ऊपर निर्बल दृष्टि होती है।

विशेष दृष्टि

द्रष्टा ग्रहके दीप्तांशोंके मध्यमें ही दृश्य ग्रह आगे व पीछे स्थित हो तो विशेष दृष्टिका फल होता है और दीप्तांशोंसे अधिक दृश्य ग्रह आगे पीछे स्थित हो तो मध्यम दृष्टिका फल होता है।

दीप्तांश

सूर्यके १५ अंश, चन्द्रके १२ अंश, मंगलके ८ अंश, बुधके ७ अंश, गुरुके ९ अंश, शुक्रके ७ अंश और शनिके ९ अंश दीप्तांश होते हैं।

उदाहरण—वर्ष कुण्डलीमें सूर्य, मंगल और बुधकी शनिके ऊपर प्रत्यक्ष स्नेही दृष्टि ह। सूर्य वर्षकालीन स्पष्टग्रहमें वृश्चिक राशिके पांच अंशका आया है और शनि कर्क राशिके बारह अंशका आया है। अंशोंके मानमें सूर्यसे शनि ७ अंश आगे हैं। सूर्यके दीप्तांश १५ हैं,

अतः शनि सूर्यके दीप्तांशसे भीतर हुआ अतएव सूर्यकी दृष्टिका पूर्ण फल समझना चाहिये।

मंगलका स्पष्टमान ७।१७ और शनिका ३।१२ है। दोनोंके अंशोंमें ५ का अन्तर है। मंगलके दीप्तांश ८ हैं, अतएव दृश्य ग्रह दीप्तांशके भीतर होनसे पूर्ण फलवाली दृष्टि मानी जायगी। इसी प्रकार अन्य ग्रहोंकी दृष्टि भी समझ लेनी चाहिये।

वर्षेशका निर्णय

वर्षके पञ्च अधिकारियोंमें जो ग्रह बलवान् होकर लग्नको देखता हो वही वर्षेश होता है। यदि पञ्चाधिकारियोंमें कई ग्रहोंका बल समान हो तो जो लग्नको देखता है, वही ग्रह वर्षेश होता है।

पञ्चाधिकारियोंकी लग्नपर समान दृष्टि हो और बल भी बराबर हो अथवा पाँचों निर्बली हों तो मुन्थेश ही वर्षेश होता है। यदि पाँचोंकी ही दृष्टि लग्न पर न हो तो उनमें जो अधिक बली होता है वही वर्षेश होता है।

कई आचार्योंका मत है कि पञ्चाधिकारियोंकी दृष्टि एवं बल समान हो तो समयाधिपति—दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो सूर्य राशीश और रातमें वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्र राशीश वर्षेश होता है।

चन्द्रवर्षेशका निर्णय

ताजिक शास्त्रके आचार्योंने चन्द्रमाको वर्षेश होना नहीं माना है। उनका अभिमत है कि कोमल प्रकृति जलीय चन्द्र अनुशासनका कार्य नहीं कर सकता है। दूसरी बात यह भी है कि चन्द्रमा मनका स्वामी है, और शासन मनसे नहीं होता है, उसके लिये शारीरिक बलकी भी आवश्यकता होती है। इसी लिये इस शास्त्रके वेत्ताओंने चन्द्रमाको वर्षेश स्वीकार नहीं किया है।

यदि पूर्वोक्त नियमोंके अनुसार चन्द्रमा वर्षेश आता हो तो वह जिस ग्रहके साथ इत्थशाल योग करता है, वही ग्रह वर्षेश होता है यदि चन्द्र किसी ग्रहके साथ इत्थशाल नहीं करता हो तो वर्ष कुण्डलीका चन्द्र राशीश ही वर्षेश होता है। उदाहरण—पूर्वोक्त उदाहरण वर्ष कुण्डली-के पञ्चाधिकारियोंमें सबसे बली मंगल आया है, मंगलकी लग्नपर दृष्टि भी है अतएव मंगल ही वर्षेश होगा।

हर्षबल साधन

ग्रहोंके हर्षस्थान चार प्रकारके होते हैं।

१—वर्ष लग्नसे सूर्य ९वें, चन्द्र ३रे, मंगल ६वें, बुध लग्नमें, गुरु ११वें, शुक्र ५वें और शनि १२वें स्थानमें हों तो ये ग्रह हर्षित होते है।

२—स्वग्रह और स्वोच्चमें ग्रह हर्षित होते हैं।

३—वर्ष लग्नसे १।२।३।७।८।९वें भावोंमें स्त्री[1]ग्रह और ४।५।६ १०।११।१२वें भावोंमें पुरुष ग्रह हर्षित होते हैं।

४—पुरुषग्रह—रवि, मंगल, गुरु दिनमें और स्त्रीग्रह तथा नपुंसक ग्रह —शुक्र, चन्द्र, बुध शनि रातमें वर्ष प्रवेश होने पर हर्षित होते हैं।

जहाँ हर्षबल प्राप्त हो वहाँ ५ विश्वात्मक बल होता है।

उदाहरण—प्रस्तुत वर्ष कुण्डलीमें प्रथम प्रकारका हर्षबल किसी ग्रहका नहीं है। द्वितीय प्रकारका हर्षबल स्वगृही होनेसे शुक्र और मंगलका है। तृतीय प्रकारका हर्षबल शुक्र, चन्द्र, बुधका है, और चतुर्थ प्रकारका हर्ष बल रातमें वर्ष प्रवेश होनेके कारण चन्द्र, बुध, शुक्र और शनि इन चारों ग्रहोंका है।

---

[1]यहाँ स्त्री ग्रहोंमें शुक्र, बुध, शनि और चन्द्र इन चारोंको ग्रहण किया है।

हर्षबल चक्र

सू०	च०	भौ०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	प्रथम
०	०	५	०	०	५	०	द्वितीय
०	५	०	५	०	५	०	तृतीय
०	५	०	५	०	५	·५	चतुर्थ
०	१०	५	१०	०	१५	५	ऐक्य

जिस ग्रहका हर्षबल ५ विश्वा हो वह अल्पबली, १० विश्वा हो वह मध्यबली, १५ विश्वा हो वह पूर्णबली और शून्य विश्वा हो वह निर्बल माना जाता है। हर्षित ग्रह अपनी दशामें अच्छा फल देता है।

षोड़श योगोंका फलसहित लक्षण

ताजिक शास्त्रमें लग्नके स्वामीको लग्नेश और शेष भावोंके स्वामियों-को कार्येश कहा गया है। इन दोनोंके योगसे षोड़श योग बनते हैं।

१–**इक्कवाल**––केन्द्र और पणफरमें सभी ग्रह हों तो इक्कवाल योग होता है, इस योगके होनेसे जातककी उन्नति होती है, उसे यश, धन और सन्तानकी प्राप्ति होती है।

२–**इन्दुवार**––आपोक्लिममें सभी ग्रह हों तो इन्दुवार योग होता है। इसके होनेसे सामान्य सुखकी प्राप्ति होती है।

३–**इत्थशाल**–इस योगके इत्थशाल पूर्ण इत्थशाल और भविष्यत् इत्थशाल ये तीन भेद हैं।

(क) लग्नेश तथा कार्येश दोनोंमें जो ग्रह मन्दगति हो वह शीघ्र गति-ग्रहसे अधिक अंश पर हो तथा दोनोंकी परस्पर दृष्टि हो तो इत्थशाल योग होता है और **दोनोंमें दीप्तांश तुल्य अन्तर हो तो मुत्थशिल योग होता है।**

(ख) लग्नेश और कार्येशमें मन्दगति ग्रह से शीघ्र गति ग्रह १ विकला

से ३० विकला तक न्यून हो तो पूर्ण इत्थशाल योग होता है।

(ग) मन्दगति[1] ग्रह जिस राशिमें हो उससे पिछली राशिमें शीघ्र-गति ग्रह उस मन्दगति ग्रहसे दीप्तांश तुल्य अन्तर पर हो।

जैसे चन्द्रमा ३।२८ और बुध ४।१० है। यहाँ पर चन्द्रमा शीघ्र-गति ग्रह है, जोकि मन्दगति ग्रह बुधसे एक राशि पीछे है। चन्द्रमासे मन्दगति ग्रह बुध चन्द्रमाके दीप्तांश तुल्य आगे है अतः यह भविष्यत् इत्थशाल योग हुआ।

लग्नेशसे जिन-जिन भावोंके स्वामियोंका इत्थशाल योग हो उन-उन भाव सम्बन्धी लाभ होता है। लग्नेश, कार्येश परस्पर मित्र हों तो सुख पूर्वक अन्यथा कठिनाईसे लाभ होता है। इस योगमें लग्नेश तथा कार्येशकी दृष्टि लग्न तथा कार्य भाव पर होना नितांत आवश्यक है।

४–**ईशराफ**–मन्दगति ग्रहसे शीघ्रगति ग्रह अधिकसे अधिक एक अंश आगे हो तो ईशराफ योग होता है। यह योग शुभ ग्रहसे हो तो शान्ति, सुख अन्यथा क्लेश होता है।

५–**नक्त**––लग्नेश तथा कार्येशमें जो शीघ्रगति ग्रह हो वह थोड़े अंश पर और मन्दगति ग्रह अधिक अंश पर हो या दोनोंकी परस्पर दृष्टि न हो तथा अन्य कोई शीघ्रगति दोनोंके मध्यमें किसी अंश पर स्थित होकर अन्योन्य दृष्ट हो तो नक्त योग होता है।

६–**यमय**––लग्नेश कार्येशमें जो शीघ्रगति ग्रह हो वह थोड़े अंशपर और मन्दगति ग्रह अधिक अंशपर हो तथा दोनोंकी आपसमें दृष्टि न हो और मध्यवर्ती कोई मन्दगति ग्रह दीप्तांश तुल्य अन्तरसे देखता हो तो यमय योग होता है।

नक्त और यमय योग जिस वर्ष कुण्डलीमें पड़ते हैं उस वर्ष कुण्डली वाला व्यक्ति अन्य लोगोंकी सहायतासे अपने कार्यको सफल करता है।

---

[1]चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य, भौम, गुरु और शनि उत्तरोत्तर मन्द गति हैं।

७–**मणऊ**––लग्नेश और कार्येशमें जो शीघ्रगति ग्रह हो उससे हीनाधिक अंशपर शनि या मंगल स्थित हों तथा उस शीघ्रगति ग्रहको शत्रु-दृष्टिसे देखते हों तो मणऊ योग होता है। इस योगके होनेसे व्यक्तिको वर्षभरमें हानि, अपमान आदि सहन करने पड़ते हैं।

८––**कंबूल**–लग्नेश और कार्येशका इत्थशाल या मुत्थशिल हो तथा इनमेंसे एकसे या दोनोंसे चन्द्रमा इत्थशाल अथवा मुत्थशिल योग करे तो कंबूल योग होता है। इस कंबूल योगके उत्तम, मध्यम, अधम आदि कई भेद हैं।

उत्तमोत्तम कंबूल––चन्द्रमा उच्चका या स्वगृहका हो और लग्नेश और कार्येश भी इसी प्रकारकी स्थितिमें हो अथवा दोनोंमेंसे एक स्वगृही, उच्चका हो; जिससे कि चन्द्रमा इत्थशाल करता हो तो उत्तमोत्तम कंबूल योग होता है।

मध्यमोत्तम कंबूल योग––चन्द्रमा स्वहद्दा, स्वद्रेष्काण अथवा स्वनवांशमें हो और लग्नेश कार्येश उच्चके या स्वगृही हों तो यह मध्यमोत्तम कंबूल योग कार्य साधक होता है। इस योगके होनेसे वर्ष पर्यन्त व्यक्तिके समस्त कार्य बिना विघ्न-बाधाओंके अच्छी तरह होते हैं।

उत्तम कंबूल––चन्द्र अधिकार रहित हो और लग्नेश, कार्येश स्वगृही या उच्चके हों तो उत्तम कंबूल योग होता है। इस योगके होनेसे दूसरेकी प्रेरणा या दूसरेकी सहायतासे कार्य सिद्ध होते हैं।

अधमोत्तम कंबूल––चन्द्रमा नीच या शत्रुराशिका और लग्नेश, कार्येश उच्चके या स्वगृही हों तो अधमोत्तम कंबूल योग होता है। इस योगके होनेसे असन्तोषसे कार्य सिद्धि होती है।

अधमाधम कंबूल––चन्द्रमा लग्नेश, और कार्येश नीच या शत्रुके क्षेत्रमें हों और इत्थशाल या मुत्थाशिल योग करते हों तो अधमाधम कंबूल योग होता है। इसके होनेसे महाकष्ट और विपत्ति होती है।

लग्नेश और कार्येशके अधिकार परिवर्तनसे कंबूल योगके और भी

कई भेद होते हैं। इन सब योगोंका फल प्रायः अनिष्ट कारक है।

९–**गैरिकंबूल**––लग्नेश और कार्येशका इत्थशाल योग हो और शून्य मार्ग गत चन्द्रमा राशिके अन्तिम २९वें अंशमें स्थित हो––आगेकी राशिमें जानेवाला हो और उससे अग्रिम राशिमें स्वगृही या उच्चका लग्नेश, अथवा कार्येश स्थित हो, जिससे चन्द्रमा मुत्थशील योग करे तो गैरिकंबूल योग होता है। इस योगके होनेसे अन्यकी सहायतासे कार्य सफल होता है।

१०–**खल्लासर**––लग्नेश, कार्येशका इत्थशाल योग हो और चन्द्रमा शून्य मार्गमें स्थित हो तो खल्लासर योग होता है। इस योगके रहनेसे कंबूल योग नष्ट हो जाता है।

११–**रद्द**––जो ग्रह अस्त, नीच, शत्रुगृही, वक्री, हीनकान्ति, बलहीन होकर इत्थशाल योग करता हो तथा यह कार्येश रूपमें केन्द्रमें स्थित हो अथवा वक्री होकर आपोक्लिममेंसे केन्द्रमें जाता हो तो रद्द योग होता हो। यह योग कार्यनाशक है।

१२–**दुष्फालिकुथ**––मन्दगति ग्रह स्वोच्च, स्वगृह आदिके अधिकारमें[1] हो और अधिकार रहित शीघ्रगति ग्रहसे इत्थशाल योग करे तो दुष्फालिकुथ योग होता है।

१३–**दुत्थोत्थदिवीर**––लग्नेश, कार्येश दोनों रद्दयोगमें हों और दोनोंमेंसे एक किसी अन्य दूसरे स्वगृह आदि अधिकारवान् ग्रहसे मुथशिल योग करे तो दुत्थोत्थदिवीर योग होता है।

१४–**तम्बीर**––लग्नेशसे कार्येशका इत्थशाल योग न हो और इनमें से कोई एक बलवान् मार्गी ग्रह राशिके अन्तिम अंशमें हो और इसके दीप्तां-

---

[1]**जो ग्रह स्वक्षेत्र, स्वोच्च आदि शुभ या अशुभ कोई भी अधिकारमें न हो और न किसी ग्रहकी दृष्टि हो तो वह शून्य मार्गगत कहलाता है।**

शवर्ती अग्रिम राशिमें कोई स्वगृही या उच्च राशिमें ग्रह स्थित हो तो तम्बीर नामका योग होता है।

१५–**कुत्थयोग**––लग्नमें स्थित ग्रह बलवान् होता है, इनसे २।३। ४।५।७।९।१०।११वें स्थानमें स्थित ग्रह उत्तरोत्तर हीनबल होते हैं। इसी प्रकार, स्वक्षेत्र स्वोच्च स्वहद्दा, स्वद्रेष्काण, स्वनवमांशमें स्थित, हर्षित, आदि अधिकार सम्पन्न ग्रह उत्तरोत्तर बली होते हैं। इन ग्रहोंके सम्बन्ध-को कुत्थयोग कहते हैं।

१६–**दुरफ़्फ**––६।८।१२वें भावमें स्थित ग्रह, वक्री होनेवाला, वक्री, शत्रुगृही नीच, पापग्रहसे युत, कान्तिहीन, अस्त, बलहीनग्रह; इसी प्रकारके अन्य निर्बल ग्रहसे मुत्थशिल योग कर्त्ता हो तो दुरफ्फ योग होता है। इस योगका फल अनिष्टकारक होता है।

सहम साधन

ताजिक शास्त्रमें पुण्यादि[1] ५० सहमोंका साधन किया गया है। यहाँ कुछ आवश्यक सहमोंका गणित लिखा जाता है

सहम संस्कार

जिसमें घटाया जाय उसे शुद्धाश्रय और जो घटाया जाय उसे शोध्य कहते हैं। यदि इन दोनोंके मध्यमें लग्न न हो तो एक राशि जोड़ देना चाहिये और मध्यमें लग्न हो तो एक राशि नहीं जोड़ना चाहिये।

उदाहरण––चन्द्रमा कन्या राशिका, सूर्य मकर राशिका और लग्न मेष राशिका है। यहाँ कन्या और मकरके बीचमें लग्नकी राशि नहीं है, अतः एक जोड़ा जायगा।

---

[1]देखें ताजिक नीलकण्ठी, पृ०१२५

पुण्य सहमका साधन

दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमामेंसे सूर्यको घटाये और रातमें वर्ष प्रवेश हो तो सूर्यमेंसे चन्द्रमाको घटाकर शेषमें लग्न जोड़कर पूर्वोक्त सहम संस्कार करनेपर पुण्य सहम होता है।

उदाहरण—प्रस्तुत वर्ष कुण्डलीका वर्ष प्रवेश रातको हुआ है अतएव-

७।५।४१।४१ सूर्यमेंसे	१।१९।२८।५० शेषमें
६।१६।१२।५१ चन्द्रमाको घटाया	६।२३।५१।३८ लग्नको जोड़ा
०।१८।२८।५० शेष	७।१३।२०।२८
	पुण्य सहम हुआ

यहाँ लग्न शोध्य और शुद्धाश्रयके बीचमें है। क्योंकि चन्द्रमा तुलाका और सूर्य वृश्चिकका है तथा लग्न तुलाका है जो दोनोंके मध्यमें पड़ता है, अतएव एक राशि जोड़नेकी आवश्यकता नहीं है।

गुरु और विद्या सहम

दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो सूर्यमेंसे चन्द्रमाको घटाये और रातमें वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमामेंसे सूर्यको घटाकर लग्न जोड़ देनेसे विद्या और गुरु सहम होते हैं। सहम संस्कार यहाँ पर भी अवश्य करना चाहिये।

उदाहरण—

६।१६।१२।५१	चन्द्रमामेंसे सूर्यको घटाया जा रहा है, क्योंकि वर्ष-
७।५।४१।४१	प्रवेश रातमें हुआ है।
११।१०।३१।१०	शेषमें
६।२३।५१।३८	लग्नको जोड़ा
६।४।२२।४८	गुरु और विद्या सहम

यहाँ पर सैक (एक-सहित) नहीं किया गया, क्योंकि लग्न चन्द्रमा और सूर्यके बीचमें है।

यश सहम

रातमें वर्ष प्रवेश हो तो पुण्यसहममेंसे गुरु सहमको घटाये और दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो गुरु सहममेंसे पुण्यसहमको घटाकर शेषमें लग्न जोड़ना चाहिये तथा पूर्वोक्त सहम संस्कार भी करना चाहिये।

मित्र सहम

दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो गुरु सहममेंसे पुण्य सहमको घटावे, रातमें वर्षप्रवेश हो तो पुण्य सहममेंसे गुरु सहमको घटाकर शेषमें शुक्रको जोड़ संस्कार करनेसे मित्र सहम होता है।

आशा सहम

दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो शनिमेंसे शुक्रको घटाये और रातमें वर्ष प्रवेश हो तो शुक्रमेंसे शनिको घटाकर शेषमें लग्नको जोड़ सैकता (एक-सहित) करनेसे आशा सहम होता है।

राज सहम (पिता सहम)

दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो शनिमेंसे सूर्यको घटाये और रातमें वर्ष प्रवेश हो तो सूर्यमेंसे शनिको घटाकर लग्नको जोड़ पूर्ववत् सैकता करनेसे राज-सहम होता है। इसका दूसरा नाम पिता सहम भी है।

माता सहम

दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो चन्द्रमेंसे सूर्यको घटाये और रातमें वर्ष प्रवेश हो तो शुक्रमेंसे चन्द्रको घटाकर शेषमें लग्नको जोड़ सैकता करनेसे माता-सहम होता है।

कर्म सहम

दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो भौममेंसे बुधको घटाये और रातमें वर्ष प्रवेश हो तो बुधमेंसे मंगलको घटाकर शेषमें लग्नको जोड़ पूर्ववत् सैकता करनेसे कर्मसहम होता है।

प्रसूति सहम

रातमें वर्ष प्रवेश हो तो बुधमेंसे बृहस्पतिको घटाये और दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो गुरुमेंसे बुधको घटाकर शेषमें लग्नको जोड़ पूर्ववत् सैकता करनेसे प्रसूति सहम होता है।

शत्रु सहम

दिनमें वर्ष प्रवेश हो तो भौममेंसे शनिको घटाये और रातमें वर्ष-प्रवेश हो तो शनिमेंसे भौमको घटाकर शेषमे लग्नको जोड़ पूर्ववत् सैकता करनेसे शत्रु सहम होता है।

बन्धन सहम

दिनमें वर्षप्रवेश हो तो पुण्यसहममेंसे शनिको घटाये और रातमें वर्ष प्रवेश हो तो शनिमेंसे पुण्यसहमको घटाकर अवशेषमें लग्नको जोड़कर पूर्ववत् सैक करनेसे बन्धन सहम होता है।

भ्रातृ सहम[1]

गुरुमेंसे शनिको घटाकर शेषमें लग्नको जोड़कर सैकता करनेसे भ्रातृसहम होता है।

---

[1]यहाँसे दिन-रातके वर्ष प्रवेशके सहम साधनमें भेद नहीं है।

पुत्र सहम

गुरुमेंसे चन्द्रको घटाकर अवशेषमें लग्नको जोड़कर पूर्ववत् सैकता करनेसे पुत्र सहम होता है।

विवाह सहम

शुक्रसे शनिको घटाकर शेषमें लग्नको जोड़कर पूर्ववत् सैकता कर देनेसे विवाह सहम होता है।

व्यापार सहम

मंगलमेंसे बुधको घटाकर शेषमें लग्नको जोड़कर पूर्ववत् सैकता करनेसे व्यापार सहम होता है।

रोग सहम

लग्नमेंसे चन्द्रको घटाकर शेषमें लग्नको जोड़कर पूर्वोक्त सैकता करनेसे रोग सहम होता है। रोग सहममें सर्वदा एक जोड़ा जाता है।

मृत्यु सहम

अष्टम भावमेंसे चन्द्रको घटाकर शेषमें शनिको जोड़ कर सैकता करनेसे मृत्युसहम होता है।

यात्रा सहम

नवम भावमेंसे नवमेशको घटाकर शेषमें लग्नको जोड़कर सैकता करनेसे यात्रा सहम होता है।

धन सहम

धन भावमेंसे धनेशको घटाकर अवशेषमें लग्नको जोड़कर सैकता कर देने पर अर्थ सहम होता है।

विशेष—इस प्रकार सहमोंका साधन कर वर्ष कुण्डलीमें जिस स्थानमें जिस सहमकी राशि हो उस राशिमें उस सहमको रख देना चाहिए। इस प्रकार सहम कुण्डली बन जायगी।

विंशोत्तरी मुद्दादशा

अश्विनीसे जन्म नक्षत्र तक गिननेसे जो संख्या हो उसमें गतवर्षोंको जोड़ देना चाहिए। योगफलमें से दो घटाकर अवशेषमें ९ का भाग देनेसे एकादि शेषमें क्रमशः सूर्य, चन्द्र, भौम, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु और शुक्रकी दशा होती है।

विंशोत्तरी दशाके वर्षोंको उसे गुणा करनेसे विंशोत्तरी मुद्दादशाके दिन होते हैं।

उदाहरण—सूर्य ६×३=१८ दिन, चन्द्रमा १०×३=३० दिन अर्थात् १ मास, भौम ७×३=२१ दिन, राहु १८×३=५४ दिन अर्थात् १ मास २४ दिन, १६×३=४८ दिन अर्थात् १ मास १८ दिन, शनि १९×३=५७ दिन अर्थात् १ मास २७ दिन, बुध १७×३=५१ दिन अर्थात् १ मास २१ दिन, केतु ७×३=२१ दिन और शुक्र २०×३=६० दिन अर्थात् २ मासकी मुद्दा दशा है।

विंशोत्तरी मुद्दादशा चक्र

आ०	चं०	भौ०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रह
०	१	०	१	१	१	१	०	२	मास
१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	दिन

वर्षपत्रमें विंशोत्तरी मुद्दादशा लिखनेका उदाहरण—

जन्म नक्षत्र विशाखा है, अश्विनीसे गणना करने पर १६ संख्या हुई, १६+३४=५०—२=४८÷९=५ ल० ३ शे०, भौम दशामें वर्ष प्रवेश हुआ अतएव प्रारम्भमें भौमदशा रखकर चक्र बना दिया जायगा।

विंशोत्तरी मुद्दादशा चक्र

भौ०	रा०	जी०	श०	बु०	के०	शु०	आ०	चं०	ग्र०
०	१	१	१	१	०	२	०	१	मास
२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	१८	०	दिन
२००३	२००३	२००३	२००३	२००४	२००४	२००४	२००४	२००४	२००८
७	७	९	११	१	२	३	५	६	७
५	२६	२०	८	५	२६	१७	१७	५	५

योगिनी मुद्दादशा

अश्विनीसे जन्मनक्षत्रतक गिननेसे जितनी संख्या हो उसमें ३ और गताब्द संख्या जोड़नेसे जो योगफल आये उसमें ८ का भाग देनेसे एकादि शेषमें क्रमशः मंगला, पिंगला, धान्या, भ्रामरी, भद्रा, उल्का, सिद्धा और संकटाकी दशा होती है।

योगिनी दशाके वर्षोंको १० से गुणा करनेपर मुद्दा योगिनी दशाकी दिनादि संख्या होती है। मंगला १×१०=१० दिन, पिंगला २×१०=२० दिन, धान्या ३×१०=३० दिन--एक मास, भ्रामरी ४×१०=४० दिन --१ मास १० दिन, भद्रा ५×१०=५० दिन — १ मास २० दिन, उल्का ६×१०=६० दिन --२ मास, सिद्धा ७×१०=७० दिन--२ मास १० दिन और संकटा ८×१०=८० दिन--२ मास २० दिनकी होती है।

योगिनी मुद्दादशा अन्तर्दशा

मं०	पिं०	धा०	भ्रा०	म०	उ०	सि०	सं०	ग्रह
०	०	१	१	१	२	२	२	
१०	२०	०	१०	२०	०	१०	२०	

उदाहरण--जन्मनक्षत्र विशाखा है, अश्विनीसे गिननेपर १६ संख्या

हुई। १६+३=१९+३४ गताब्द=५३÷८=६ ल० ५ शे० भद्राकी दशामें वर्ष प्रवेश हुआ माना जायगा।

योगिनी मुद्दादशा चक्र

भ०	उ०	सि०	सं०	मं०	पि०	शु०	भा०	दशा
१	२	२	२	०	०	१	१	मास
२०	०	१०	२०	१०	२०	०	१०	दिन
२००३	२००३	२००३	२००४	२००४	२००४	२००४	२००४	२००४
७	८	१०	१	३	४	४	५	७
५	२५	२५	५	२५	५	२५	२५	५

मास प्रवेश साधन

वर्ष प्रवेशका ही सूर्य प्रथम मासका सूर्य है। इसमें एक राशि जोड़नेसे द्वितीय मासका सूर्य होता है। द्वितीय मासके सूर्यमें एक राशि जोड़नेसे तृतीय मासका सूर्य होता है। इसी स्पष्ट सूर्यके समय मासका प्रवेश होता है। मास प्रवेशका समय साधन करनेकेलिये मास प्रवेश समयके स्पष्ट सूर्यके तुल्य अथवा कुछ न्यूनाधिक स्पष्टसूर्य पञ्चाङ्गमें देख कर उस पञ्चाङ्गस्थ स्पष्टसूर्य और मास प्रवेशके स्पष्ट सूर्यका अन्तर करके जो अंशादि शेष रहें उनकी विकला बना लेना चाहिये। इन विकलाओंमें सूर्यकी गतिकी विकलाएँ बनाकर भाग देनेसे लब्ध दिन; शेषको ६० से गुणाकर इसी भाजकका भाग देनेसे लब्ध घटिकाएँ और शेषको ६० से गुणाकर उक्त भाजकका भाग देने पर लब्ध पल आयेंगे। यदि मास प्रवेशका सूर्य पञ्चाङ्गके सूर्यमेंसे घट गया हो तो आये हुए दिनादिको पञ्चाङ्गके दिनादिमेंसे घटा देना; अन्यथा जोड़ देना चाहिये।

उदाहरण—प्रस्तुत वर्ष कुण्डलीके प्रथम मासका स्पष्ट सूर्य ७।५।४१।४१ है, इसमें एक राशि जोड़ी—

७।५।४१।४१

१।

———————

८।५।४१।४१ द्वितीय मास प्रवेशका स्पष्ट सूर्य सं० २००३ के विश्वपञ्चाङ्गमें ८।५।०।५७ स्पष्ट सूर्य पौष कृष्ण १२ शुक्रवारका ४४।१८ मिश्रमानका दिया है।

८।५।४१।४१ मास प्रवेशके सूर्यमें से

८।५। ०।५७ पञ्चांगस्थ सूर्यको घटाया

———————

०।४०।४४ इसकी विकलाएँ बनाई

२४००+४४=२४४४; सूर्यकी गति ६१।२३ है, इसकी विकलाएं =६१।२३

६०

————

३६६०×२३=३६८३

२४४४÷३६८३=० लब्धि, २४४४ शे०; २४४४×६०=

१४६६४०÷३६८३=३९ लब्धि; ३००३ शे० ; ३००३×६० =१८०१८०÷३६८३=४५ । ०।३९।४५ दिनादि आया यहाँ मास-प्रवेशके सूर्यमेंसे ही पञ्चाङ्गके सूर्यको घटाया है अतएव पञ्चाङ्गके दिनादिमें जोड़ा--

६।४४।१८

०।३९।४५

———————

७।२४। ३ अर्थात् शनिवारको २४ घटी ३ पल इष्टकाल पर द्वितीय मास प्रवेश होगा। इस इष्टकालके लग्न, ग्रहस्पष्ट, भावस्पष्ट आदि पूर्ववत् बना लेने चाहिये। तथा मासप्रवेशकी कुण्डली भी तैयार कर लेना चाहिए। इस प्रकार द्वादश महीनोंकी मास कुण्डलियां तैयार कर लेनी चाहिए।

वर्षेशका फल

पूर्ण बलवान् वर्षेश हो तो सुख, धनप्राप्ति, यश लाभ और निर्बल वर्षेश हो तो नाना प्रकारके कष्ट, धनहानि, शारीरिक रोग होते हैं।

वर्षेश सूर्यका फल—पूर्णबली सूर्य वर्षेश हो तो प्रतिष्ठा लाभ, धन, पुत्र, यशका लाभ, कुटुम्बियोंको सुख, स्वास्थ्यलाभ, शासनसे लाभ, मकान सुख और सुख-शान्ति होती है। किन्तु यह फल तभी घटता है जब सूर्य जन्मकालमें भी बलवान् हो; जो ग्रह जन्म समयमें निर्बल होता है, उसका फल मध्यम मिलता है।

मध्यमबली सूर्य वर्षेश हो तो अल्पसुख, कलह, स्थानच्युति, भय, अल्प धनलाभ, सन्तान लाभ और रोगभय होता है। अल्पबली सूर्य वर्षेश हो तो विदेश गमन, धन नाश, शोक, शत्रुभय, आलस अपयश और कलह आदि फल होते हैं।

चन्द्रमा—पूर्णबली चन्द्रमा वर्षेश हो तो धन, स्त्री, पुत्र, गृह विलासिताकी सामग्री, नाना प्रकारके वैभव और उच्चपद आदि फलोंकी प्राप्ति होती है।

मध्यबली चन्द्रमा वर्षेश हो तो साधारण सुख, कुटुम्बियोंसे कलह, सम्मान प्राप्ति, स्थान त्याग, धनागम और साधारण रोग आदि फल होते हैं। पापग्रहके साथ चन्द्रमा हो तो कफ जन्य रोग, कास, ज्वर आदिसे पीड़ा होती है।

नष्ट या हीनबली चन्द्रमा वर्षेश हो तो शीतज्वर, कफज्वर, खाँसी, मृत्युतुल्य कष्ट और नाना प्रकारकी व्याधियाँ होती हैं।

मंगल—पूर्णबली भौम वर्षेश हो तो कीर्त्ति, जयलाभ, नायकत्व, धनलाभ, पुत्रलाभ, सम्मानप्राप्ति और नाना प्रकारके वैभव प्राप्त होते हैं। मध्यबली भौम वर्षेश हो तो रुधिरविकार, घाव, फोड़ा, फुन्सियोंके

कष्टसे पीड़ा, सम्मान, नायकत्व, अल्प धनलाभ और साधारण सुख प्राप्त होते हैं। हीनबली भौम वर्षेश हो तो शत्रुओंसे भय, अपवाद, अग्निभय, शस्त्रघात, विदेशगमन और दुराचरण आदि फल मिलते हैं।

बुध—बलवान् बुध वर्षेश हो तो प्रत्युत्पन्नमतित्व, विद्यालाभ, कलाओं-में निपुणता, गणित-लेखन-वैद्यविद्यासे विशेष सम्मान और शासनाधिकार प्राप्त होते है। मध्यबली बुध वर्षेश हो तो व्यापारसे लाभ, मित्रोंसे प्रेम, यश और विद्यामें सफलता आदि फल प्राप्त होते हैं। हीनबली बुध वर्षेश हो तो धर्मनाश, उन्मत्तता, धनहानि, पुत्रमृत्यु, दुराचरण और तिरस्कार आदि फल प्राप्त होते हैं।

गुरु—पूर्णबली गुरु वर्षेश हो तो शत्रुनाश, सन्तान-धन-कीर्त्तिका लाभ, लोकमें विश्वास, उत्तम बुद्धि, निधिलाभ, और राजमान्यता आदि फल होते हैं। मध्यमबली वर्षेश हो तो उपर्युक्त फल मध्यम रूपमें मिलता है। हीनबली वर्षेश हो तो धन, धर्म और सौख्य हानि, लोकनिन्दा, कलह और रोग आदि फल होते हैं।

शुक्र—पूर्णबली शुक्र वर्षेश हो तो मिष्टान्नलाभ, विलासकी वस्तुओंकी प्राप्ति, प्रतापवृद्धि, विजयलाभ, प्रसन्नता, सुखलाभ, सम्मान प्राप्ति और व्यापारसे प्रचुर लाभ होता है। मध्यबली शुक्र वर्षेश हो तो गुप्त रोग, धनहानि, व्यापारसे अल्पलाभ, साधारण सुख और यशलाभ आदि फल प्राप्त होते हैं। हीनबली शुक्र वर्षेश हो तो कलह, धननाश, आजीविका रहित और नाना कष्ट आदि फल होते हैं।

शनि—पूर्णबली शनि वर्षेश हो तो नवीन भूमि, नवीन घर तथा खेत लाभ, बगीचा, तालाब, कुआँ आदिका निर्माण, स्वास्थ्यलाभ, उच्चपद प्राप्ति आदि फल मिलते हैं। मध्यबली शनि वर्षेश हो तो कामुकता वासनाका प्राबल्य, धनहानि, और अल्पसुख प्राप्त होते हैं। अल्पबली शनि वर्षेश हो तो धननाश, विपत्ति, शत्रुभय और कुटुम्बियोंसे कलह आदि फल प्राप्त होते हैं।

मुन्थाफल

मुन्था लग्नमें हो तो आरोग्य, सुख, शान्ति; द्वितीयमें हो तो धनप्राप्ति, व्यापारसे लाभ, अकस्मात् धनलाभ; तृतीय स्थानमें हो तो बल, गौरव, पराक्रमकी प्राप्ति, यशलाभ, सम्मान; चतुर्थ स्थानमें हो तो दुःख, कलह, अशान्ति; पंचम स्थानमें हो तो आरोग्य, धनलाभ, कुटुम्बियोंसे प्रेम; छष्टवें स्थानमें हो तो रोग, अग्निभय, शत्रुचिंता; सप्तममें हो तो स्त्रीको रोग, सन्तानको कष्ट, स्वयंको आधि-व्याधि; अष्टम स्थानमें हो तो मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट; नौवें भावमें हो तो धर्म, धनका लाभ, भाग्यकी वृद्धि; दसवें भावमें हो तो मानवृद्धि, शासनमें अधिकार, राजमान्यता; ग्यारहवेंमें हो तो हानि, व्यापारमें क्षति एवं व्यय भावमें हो तो रोग, हानि और कष्ट आदि फल प्राप्त होते हैं।

वर्ष-अरिष्ट-योग

वर्षलग्नेश, अष्टमेश और मुन्थेश ४।८।१२वें स्थानमें हों या जन्मलग्नेश अथवा चन्द्रमा अनेक पापग्रहोंसे युक्त, दृष्ट आठवें स्थानमें हों और शनि वर्षलग्नमें हो तो वर्ष-अरिष्टकारक होता है।

२—जन्मलग्नेश, त्रिराशीश, मुन्थेश अस्त हों, तथा वर्षलग्नेश, और वर्षेश नीच राशिमें हों तो वर्ष-अरिष्ट-योग होता है।

३—बलवान् अष्टमेश केन्द्रमें या वर्षलग्नेश आठवेंमें अथवा अष्टमेश लग्नमें हों और इनपर पापग्रहोंकी दृष्टि हो तो वर्ष कष्टकारक होता है।

४—शुक्र नीच राशिमें या गुरु अन्य ग्रहोंके वर्गमें हो अथवा बुध, शुक्र अस्त हों और चन्द्रमा नीच राशिमें हो अरिष्टयोग होता है।

५—लग्नेश मेष या वृश्चिक राशिगत अष्टम स्थानमें मंगलसे दृष्ट हो साथ-ही-साथ शुक्र, बुध अस्त हों तो अरिष्टयोग होता है।

६—धनेश, भाग्येश नीच राशिमें तथा वर्षेश निर्बल हो पापग्रहोंसे दृष्ट हो तो अरिष्टयोग होता है।

७--चन्द्र और सूर्यकी युति ६।८।१२वें स्थानमें हो या दोनोंमें १२ अंशसे अधिक अन्तर न हो तो अरिष्टयोग होता है।

८--वर्षलग्नेश चन्द्रके साथ अष्टम स्थानमें हो और अष्टमेश वर्षलग्नमें हो तो अरिष्टयोग होता है।

९--लग्नेश, नवमेश वक्री होकर ९वें या ७वें स्थानमें स्थित हों और शनि अथवा चन्द्रमा आठवे भावमें हों तो अरिष्टयोग होता है।

१०--वर्षलग्नेश शनि पापग्रहोंसे युत या दृष्ट ३।४।७वें स्थानमें हो तो सन्निपात रोग होता है।

११--चन्द्र और मंगलकी युति आठवें स्थानमें हो तो नाना रोग होते हैं।

१२--कर्क राशिका शनि वर्षलग्नसे ७ या ८वें भावमें हो तथा जन्मकुण्डलीमें भी इन्हीं भावोंमें हो तो रोग होते हैं।

अरिष्टभंगयोग

अरिष्टभंगयोग--वर्षलग्नेश पंचवर्गीमें सबसे अधिक बलवान् होकर १।४।५।७।९।१०वें भावमें हो तो अरिष्टनाशक योग होता है।

२--सप्तमेश गुरुसे युत या दृष्ट होकर लग्नमें हो अथवा त्रिराशीश बलवान् होकर केन्द्र या त्रिकोणमें स्थित हो तो अरिष्टनिवारक योग होता है।

३--उच्चराशिका शनि बलवान् होकर वर्षेश हो तथा वह ३।११वें भावमें स्थित हो तो अरिष्टनाशक होता है।

४--बलवान् सुखेश सुख स्थानमें शुभग्रहोंसे युत या दृष्ट हो अथवा शुभग्रह १।४।५।७।९।१०वें भावोंमें और पापग्रह ३।६।११वें भावोंमें हो तो अरिष्टनाशक योग होता है।

धन प्राप्तिका विचार

जन्मकुण्डलीमें गुरु जिस भावका स्वामी हो यदि वर्षकुण्डलीमें वह उसी भावमें बैठा हो और वर्षलग्नेशके साथ मुत्थशिल योग करता हो तो वर्षभर व्यक्तिको अर्थलाभ होता है ।

वर्षकालमें गुरु धन स्थानमें और उसको शुभ ग्रह देखते हों अथवा शुभग्रहोंसे युक्त हो तो धनलाभ और सम्मान देनेवाला योग होता है ।

धनभाव और धनसहम स्थानमें बुध, गुरु और शुक्र हों अथवा इन दोनोंपर इनकी दृष्टि हो तो प्रचुर धनलाभ होता है ।

धनेश और वर्षलग्नेश इन दोनोंका मित्रदृष्टिसे मुत्थशिल योग हो तो व्यक्तिको बिना प्रयासके धन मिलता है । यदि इन दोनोंका मुसरिफ योग हो तो धननाश होता है ।

धनभावका विचार करनेके लिये साधारण नियम यह है कि धनेश बलवान होकर बली ग्रहोंसे युत या दृष्ट केन्द्र, त्रिकोण या लाभ स्थानमें हो और लग्नेश मैत्री तथा इत्थशाल आदि शुभ सम्बन्ध करता हो तो धनलाभ होता है । इसी प्रकार अन्य भावोंका विचार करना चाहिये ।

स्वास्थ्य विचार

बलवान् वर्षेश, लग्नेश, मुन्थेश तथा मुन्था शुभग्रहोंसे युक्त, दृष्ट केन्द्र या त्रिकोणमें हों तो शरीर स्वस्थ और सुख एवं उक्त ग्रह नीच, बलहीन, अस्तंगत, शत्रुक्षेत्रमें—६।८।१२वें स्थानमें पापग्रहोंसे युत, दृष्ट हों तो महाकष्ट, रोग, पीड़ा एवं शुभ और पापग्रह दोनोंसे युत दृष्ट हों तो मिश्रित फल होता है ।

इन्ही नियमोंसे अन्य भावोंका भी विचार कर लेना चाहिये ।

मास प्रवेश कुण्डली और ग्रहस्पष्टोंसे प्रत्येक मासका फलाफल ग्रहोंके बल तथा स्थित स्थानानुसार निकाल लेना चाहिये ।

सहम फल

सहम राशिका स्वामी अपने उच्च, अपने घर, अपने हद्दा, अपने नवमांशमें स्थित हो और लग्नको देखता हो तो बली कहा जाता है। और सहम राशिका स्वामी उच्चका, स्वराशिका होकर भी लग्नको नहीं देखता हो तो निर्बल कहा जाता है। जन्म समय सूर्य जिस राशिमें बैठा हो उसका स्वामी तथा चन्द्रमा जिस राशिमें बैठा हो उसका स्वामी; इन दोनों ग्रहोंके बलाबलका विचार भी कर लेना आवश्यक है।

सहमका फल अपनी राशिके स्वामीकी दशामें प्राप्त होता है।

पुण्यसहम—बली पुण्यसहम शुभग्रह या अपने राशीशसे युत या दृष्ट हो तो धर्म और धनकी वृद्धि होती है। यदि निर्बल पुण्यसहम पापग्रहोंसे युत या दृष्ट हो तो संचित धनका नाश और अधर्मकी वृद्धि होती है। पुण्यसहम वर्षकुण्डलीमें ६।८।१२वें भावमें हो तो धर्म, धन और यशका नाश करता है और शुभग्रहोंसे दृष्ट या युत हो तो नाना प्रकारकी विभूतियोंकी वृद्धि होती है। जिस वर्षमें पुण्यसहम शुभ फल देनेवाला होता है, उस वर्ष व्यक्तिको सभी प्रकारके सुख होते हैं। उसकी उन्नति सर्वतोमुखी होती है।

कार्यसिद्धिसहम—कार्यसिद्धिसहम शुभ ग्रहोंसे युक्त या दृष्ट हो तो व्यक्तिको जय, सम्मान और अर्थलाभ होता है।

विवाहसहमका फल—वर्षकालमें विवाहसहम अपने स्वामीसे युत या दृष्ट हो तथा अन्य शुभग्रहोंसे युत अथवा दृष्ट हो या शुभग्रहोंसे मुथशिल करता हो तो उस वर्षपत्रवालेका विवाह होता है या उसे उस वर्ष स्त्रीसुखकी प्राप्ति होती है। विवाहसहम पापग्रहोंसे युत या अष्टमेशसे युत अथवा दृष्ट हो तो विवाह सुख नहीं होता।

यशसहमका फल—जिस वर्षकुण्डलीमें यशसहमकी राशिका स्वामी आठवें स्थानमें पापग्रहोंसे युत या दृष्ट हो तो यशका नाश होता है।

रोग सहमका फल

जिस वर्षकुण्डलीमें रोगसहमका स्वामी पापग्रह हो या पापग्रहोंसे युत हो तो व्यक्तिको रोग होता है। यदि रोग सहमका स्वामी अष्टमेशसे मृत्यशिल करे तो उस प्राणीका मरण होता है।

इस प्रकार समस्त सहमोंका फल शुभग्रहसे युत या दृष्ट आदि बलाबलों-के अनुसार स्वबुद्धिसे जान लेना चाहिये। ६।८।१२वें भावमें सभी सहमोंके स्वामियोंका रहना हानिकारक होता है। जिस सहमका स्वामी उक्त स्थानोंमें होता है, उस सहम सम्बन्धी कार्य उस वर्षपत्रवाले व्यक्तिके बिगड़ जाते हैं।

पंचम-अध्याय

मेलायक

यह पहले ही लिखा जा चुका है कि ज्योतिष शास्त्र सूचक है। विवाहके पूर्व वर-कन्याकी जन्मपत्रियोंको मिलानेका आशय केवल परम्पराका निर्वाह नही है, किन्तु भावी दम्पत्तिके स्वभाव, गुण, प्रेम और आचार-व्यवहारके सम्बन्धमें ज्ञात करना है। जबतक समान आचार-व्यवहार-वाले वर-कन्या नहीं होते तबतक दाम्पत्य जीवन सुखमय नहीं हो सकता है। जन्मपत्रियोंकी मेलनपद्धति वर-कन्याके स्वभाव, रूप और गुणोंको अभिव्यक्त करती है। भारतीय संस्कृतिमें प्रेमपूर्वक विवाह कल्याणकारी नहीं माना गया है किन्तु दो अपरिचित व्यक्तियोंका जीवनभरके लिये गठबन्धन कर दिया जाता है। यदि ऐसी परिस्थितिमें उन दोनोंके स्वभावके बारेमें सूचक ज्योतिष द्वारा कुछ जान लिया जाय तो अत्यन्त उपकार उन व्यक्तियोंका हो सकता है। अतएव इस वैज्ञानिक मेलन पद्धतिकी उपेक्षा करना नितान्त अनुचित है। ज्योतिष नक्षत्र, योग, ग्रह राशि आदिके तत्त्वोंके आधारपर व्यक्तिके स्वभाव, गुणका निश्चय करता है। वह बतलाता है कि अमुक नक्षत्र, ग्रह और राशिके प्रभावसे उत्पन्न पुरुषका अमुक नक्षत्र, ग्रह और राशिके प्रभावसे उत्पन्न नारीके साथ सम्बन्ध करना अनुकूल है। या प्रभाव-शामक सामञ्जस्यके होनेसे दोनोंके स्वभाव-गुणोंमें समानता है। अतएव मेलन-पद्धति द्वारा वर-कन्याकी जन्मपत्रियोंका विचार अवश्य करना चाहिये। यहाँ सर्वप्रथम ग्रह मिलाने-की विधि लिखी जाती है।

ज्योतिष शास्त्रमें स्त्रीनाशक और पतिनाशक योग बताये गये है, जिनमें अधिकांशका उल्लेख तृतीय अध्यायमें किया जा चुका है।

जन्मकुण्डलीमें १।४।७।८।१२वें भावमें पापग्रहोंका होना पति या पत्नी नाशक कहा गया है। इन स्थानोंमें पुरुषकी कुण्डलीमें मंगल होनेसे समंगल और स्त्रीकी कुण्डलीमें मंगल होनेसे मंगली संज्ञक योग होते हैं। समंगल पुरुषका मंगली स्त्रीके साथ सम्बन्ध करना ठीक कहा जाता है, इसी प्रकार मंगली स्त्रीका समंगल पुरुषके साथ सम्बन्ध होना अच्छा होता है। ज्योतिषमें उपेर्युक्त स्थानोंमें स्थित मंगल सबसे अधिक दोषकारक उससे कम शनि और शनिसे कम अन्य पापग्रह बताये गये हैं। इस योगको चन्द्रमा, शुक्र और सप्तमेशसे भी देख लेना चाहिये। स्त्रीकी कुण्डलीमें सप्तम और अष्टम स्थानमें शनि और मंगल इन दोनोंका रहना बुरा माना है। सप्तमेश और अष्टमेशका एक साथ रहना पति या पत्नीकी कुण्डलीमें अनिष्टकारक होता है। यदि यही योग दोनोंकी कुण्डलीमें हो तो अच्छा होता है।

ज्योतिष शास्त्रमें एक मत यह है कि वरकी कुण्डलीमें लग्न और शुक्र एवं कन्याकी कुण्डलीमें लग्न और चन्द्रमासे १।४।७।८।१२वें स्थानके पापग्रहोंका विचार करते हैं। वर और कन्याके अनिष्टकारी पाप-ग्रहोंकी संख्या समान या कन्यासे वरके ग्रहोंकी संख्या अधिक होनी चाहिये। कन्याका सातवाँ और आठवाँ स्थान विशेष रूपसे देखना चाहिये।

वरकी कुण्डलीमें लग्नसे छटवें स्थानमें मंगल, सातवेंमें राहु और आठवें-में शनि हो तो भार्याहन्ता योग होता है, इसी प्रकार कन्याकी कुण्डलीमें उपर्युक्त योग हो तो पतिहन्ता योग होता है।

सौभाग्य विचार

'सप्तममें शुभग्रह हों, तथा सप्तमेश शुभ ग्रहोंसे युत या दृष्ट हो तो सौभाग्य अच्छा होता है। अष्टम स्थानमें शनि या मंगलका होना सौभाग्य-

को बिगाड़ता है। अष्टमेश स्वयं पापी हो या पापीग्रहोंसे युत या दृष्ट हो तो सौभाग्यको खराब करता है। सौभाग्यका विचार वर और कन्या दोनोंकी कुण्डलीमें कर लेना चाहिये। यदि कन्याका सौभाग्य वरके सौभाग्यसे यथार्थ न मिलता हो तो सम्बन्ध नहीं करना चाहिये।

मिलान करनेके अन्य नियम

१—वरके सप्तम स्थानका स्वामी जिस राशिमें हो, वही राशि कन्याकी हो तो दाम्पत्य जीवन सुखमय बीतता है।

२—यदि कन्याकी राशि वरके सप्तमेशका उच्च स्थान हो तो दाम्पत्य जीवनमें प्रेम बढ़ता है। सन्तान और सुख होता है।

३—वरके सप्तमेशका नीच स्थान यदि कन्याकी राशि हो तो भी वैवाहिक जीवन सुखी रहता है।

४—वरका शुक्र जिस राशिमें हो, वही राशि यदि कन्याकी हो तो विवाह कल्याणकारी होता है।

५—वरकी सप्तमांश राशि यदि कन्याकी राशि हो तो दाम्पत्य जीवन सुखकारक होता है। सन्तान, ऐश्वर्यकी बढ़ती होती है।

६—वरका लग्नेश जिस राशिमें हो, वही राशि कन्याकी हो या वरके चन्द्रलग्नसे सप्तम स्थानमें जो राशि हो वही राशि यदि कन्याकी हो तो दाम्पत्य जीवन प्रेम और सुखपूर्वक व्यतीत होता है।

७—वरकी राशिसे सप्तम स्थानपर जिन-जिन ग्रहोंकी दृष्टि हो, वे ग्रह जिन-जिन राशियोंमें बैठे हों उन राशियोंमेंसे कोई भी राशि कन्याकी जन्म राशि हो तो दम्पतिमें अपूर्व प्रेम होता है।

८—जिन कन्याओंकी जन्मराशि वृष, सिंह, कन्या या वृश्चिक होती है, उनको सन्तान कम उत्पन्न होती है।

९—यदि पुरुषकी जन्मकुण्डलीकी षष्ठ और अष्टम स्थानकी राशि कन्याकी जन्मराशि हो तो दम्पतिमें परस्पर कलह होती है ।

१०—वर-कन्याके जन्मलग्न और जन्मराशिके तत्त्वों[1]का विचार करना चाहिये । यदि दोनोंकी राशियोंके एक ही तत्त्व हों तो मित्रता होती है । अभिप्राय यह है कि कन्याकी जन्मराशि या जन्मलग्न जलतत्त्व-वाली हो तो वरकी जन्मराशि या जन्मलग्न जल या पृथ्वी तत्त्ववाली हो तो मित्रता और प्रेम समझना चाहिये । तत्त्वोंकी मित्रता निम्न प्रकार है ।

पृथ्वीतत्त्वकी मित्रता जलतत्त्वके साथ, अग्नितत्त्वकी मित्रता वायु-तत्त्वके साथ तथा पृथ्वीतत्त्वकी अग्नितत्त्वके साथ; जलतत्त्वकी अग्नितत्त्वके साथ और जलतत्त्वकी वायुतत्त्वके साथ शत्रुता होती है । तत्त्वके इस विचारको जन्मलग्न और जन्मराशिके साथ अवश्य देख लेना चाहिये ।

११—वर-कन्याके लग्नेश और राशीशोंके तत्त्वोंकी मित्रता भी देख लेनी चाहिये । यदि दोनोंके लग्नेश एक ही तत्त्व या मित्रतत्त्वके हों अथवा दोनों राशीश भी लग्नेशके समान एक ही तत्त्व या मित्रतत्त्वके हों तो दाम्पत्य जीवन दोनोंका सुख-शान्तिपूर्वक व्यतीत होता है । अन्यथा कलह, झगड़ा और अशान्ति रहती है ।

१२—वर और कन्याकी कुण्डलीमें सन्तान भावका विचार अवश्य करना चाहिये । सन्तान योग तृतीय अध्यायमें बताये गये है ।

ज्योतिषमें लग्नको राशि और चन्द्रमाको मन माना गया है । प्रेम मनसे होता है, शरीरसे नहीं । इसलिये आचार्योंने जन्मराशिसे मेलापक विधिका ज्ञान करना बताया है । गुण मिलान द्वारा वर और कन्याकी प्रजनन शक्ति, स्वास्थ्य, विद्या एवं आर्थिक परिस्थितका ज्ञान करना

---

[1]ग्रह और राशियोंके तत्त्व ततीय अध्यायमें लिखे गये हैं ।

चाहिये। इस गुण मिलान पद्धतिमें निम्न बातें होती हैं। (१) वर्ण (२) वश्य (३) तारा (४) योनि (५) ग्रहमैत्री (६) गणमैत्री (७) भकूट (८) नाड़ी। इनमें एक अधिक गुण माने गये है। अर्थात् वर्णका एक, वश्यका दो, ताराका तीन, योनिका चार, ग्रहमैत्रीका पाँच, गणमैत्री-का छः, भकूटका सात, और नाड़ीका आठ गुण होता है। इस प्रकार कुल ३६ गुण होते हैं। इनमें कम-से-कम १८ गुण मिलनेपर विवाह किया जा सकता है परन्तु, नाड़ी और भकूटके गुण अवश्य होने चाहिये। इनके गुण बिना १८ गुणोंमें विवाह मंगलकारी नहीं माना जाता है।

वर्ण जाननेकी विधि

मीन, वृश्चिक और कर्क ये राशियाँ ब्राह्मण वर्ण है। मेष, सिंह और धनु ये राशियाँ क्षत्रिय वर्ण हैं। मिथुन, तुला और कुम्भ ये राशियाँ शूद्र वर्ण हैं। कन्या, वृष और मकर ये राशियाँ वैश्य वर्ण है। इस वर्ण विचारमें श्रेष्ठ वर्णकी कन्या त्याज्य होती है।

वर्ण ज्ञात करनेका चक्र

वर्ण	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
राशि	१२।८।४	१।५।९	६।२।१०	३।७।११

वर्ण गुण बोधक चक्र

वरका वर्ण

कन्याका वर्ण		ब्रा०	क्ष०	वै०	शू०
	ब्राह्मण	१	०	०	०
	क्षत्रिय	१	१	०	०
	वैश्य	१	१	१	०
	शूद्र	१	१	१	१

वश्य विचार

आधी मकर, मेष, सिंह, वृष और आधी धनु ये राशियाँ चतुष्पाद संज्ञक हैं। वृश्चिककी सर्व संज्ञा है। तुला, मिथुन, कन्या और धनुका पहला भाग ये राशियाँ द्विपद संज्ञक है। कर्क राशि कीट संज्ञक है। मकरका उत्तरार्द्ध भाग कुम्भ और मीन ये राशियाँ जलचर संज्ञक है।

पहले वर और कन्याकी राशि मालूम करके वर्णका ज्ञान करना चाहिये। पश्चात् इस चक्रके अनुसार वर्णका गुण ज्ञात करना चाहिये। उदाहरण— इन्दुमती और चन्द्रवंशका वर्ण गुण ज्ञात करना हो तो इन्दुमतीकी वृष राशि हुई तथा इसका क्षत्रिय वर्ण हुआ और चन्द्रवंशकी मीन राशि तथा ब्राह्मण वर्ण हुआ। मिलान किया तो एक गुण आया।

वश्य बोधक चक्र

मकरका पूर्वार्द्ध, मेष, सिंह, धनुका उत्तरार्द्ध, वृष	चतुष्पद
कर्क	कीट
वृश्चिक	सर्व
तुला, मिथुन, कन्या, धनुका पूर्वार्द्ध	द्विपद
मकरका उत्तरार्द्ध, कुम्भ, मीन	जलचर

वश्य बोधक चक्र

वरका वश्य

कन्याका वश्य		च०	की०	स०	द्वि०	ज०
	च०	२	१	१	½	२
	की०	१	२	१	०	१
	स०	१	१	२	०	१
	द्वि०	०	०	०	२	१
	ज०	१	१	१	१	२

उदाहरण--पूर्वोक्त इन्दुमतीकी वृष राशि होनेसे चतुष्पद वश्य हुआ और चन्द्रवंशकी मीन राशि होनेसे जलचर वश्य हुआ। अतः कोष्ठकमें मिलानेसे दो गुण आये।

तारा-विचार

कन्याके नक्षत्रसे वरके नक्षत्र[1] तक गिने और वरके नक्षत्रसे कन्याके नक्षत्र तक गिने, गिननेसे जो आवे उसमें अलग-अलग ९ का भाग देनेपर जो शेष बचे उसको ही तारा जानना चाहिये।

तारा गुण-बोधक चक्र

वरकी तारा

कन्याकी तारा	१	२	३	४	५	६	७	८	९
१	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
२	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
३	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
४	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
५	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
६	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
७	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
८	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
९	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३

उदाहरण--इन्दुमतीका कृत्तिका नक्षत्र है और चन्द्रवंशका रेवती

[1]वर और कन्याका जन्म नक्षत्र, नक्षत्रोंके चरणोंके अक्षरोंसे मालूम करना चाहिये।

नक्षत्र। कृत्तिकासे रेवती तक गिननेसे २५ संख्या आई और रेवतीसे कृत्तिका तक गिननेसे ४ संख्या आई। इन दोनोंमें ९ का भाग दिया तो पहले स्थानमें ७ संख्या शेष बची। अतः ७वीं तारा कन्याकी हुई और दूसरी जगह ९ का भाग देनेसे चार शेष बचा। अतः वरकी ४थी तारा हुई। इन दोनोंको उपर्युक्त कोष्ठकमें मिलानेसे १॥ गुण ताराका प्राप्त हुआ। इसी प्रकार सब जगह तारा मिला लेना चाहिये।

योनि ज्ञान विधि

अश्विनी-शतभिषाकी अश्व योनि; स्वाति-हस्तकी महिष योनि; पूर्वा भाद्रपद, धनिष्ठकी सिंह योनि; भरणी, रेवतीकी गज योनि; कृत्तिका, पुष्यकी मेष (मेढ़ा) योनि; श्रवण-पूर्वाषाढाकी वानरयोनि; उत्तराषाढ़ा अभिजित्की नेवला योनि; रोहिणी, मृगशिराकी सर्प योनि; ज्येष्ठा, अनुराधाकी मृग योनि; मूल, आर्द्राकी श्वान योनि; पुनर्वसु, आश्लेषाकी विलाव योनि; पूर्वा फाल्गुनी-मघाकी मूषक योनि; विशाखा, चित्राकी व्याघ्र योनि और उत्तरा फाल्गुनी और उत्तरा भाद्रपदकी गो योनि होती है।

योनि वैर ज्ञान विधि

गो और व्याघ्रका, महिष और अश्वका, कुत्ता और मृगका, सिंह और गजका, वानर और मेढ़ाका, नेवला और सर्पका वैर होता है।

योनि	अश्व	महिष	सिंह	हस्ती	मेष	वानर	नकुल	सर्प	मृग	श्वान	बिल्ली	मूषक	व्याघ्र	गौ
नक्षत्र	अ०	स्वा०	ध०	भ०	भृ०	श्र०	अभि०	मृ०	ज्ये०	मू०	पुन०	म०	वि०	उ० भा०
	श०	ह०	पू०का०	रे०	कृ०	पू० षा०	उ०षा०	रो०	अनु०	आ०	श्लै०	पू०फा०	धि०	उ० फा०

योनि गुण बोधक चक्र वरकी योनि

कन्याकी योनि

	अश्व	गज	मेष	सर्प	श्वान	बिल्ला	मूषक	गौ	महिष	व्याघ्र	मृग	वानर	नकुल	सिंह
अश्व	४	२	३	२	२	३	३	३	०	१	३	२	२	१
गज	२	४	३	२	२	३	३	३	३	१	३	२	२	०
मेष	३	३	४	२	२	३	३	३	३	१	३	०	२	१
सर्प	२	२	२	४	२	१	१	२	२	२	२	१	०	२
श्वान	२	२	२	२	४	१	२	२	२	२	०	२	२	२
बिलाव	३	३	३	१	१	४	०	३	३	२	३	२	२	२
मूष	३	३	३	१	२	०	४	३	३	२	३	२	१	१
गौ	३	३	३	२	२	३	३	४	३	०	३	२	२	१
महिष	०	३	३	२	२	३	३	३	४	१	३	२	२	१
व्याघ्र	१	१	१	२	२	२	२	०	१	४	२	२	२	१
मृग	३	३	३	२	०	३	२	३	३	१	४	२	२	३
वानर	२	२	०	१	२	२	२	२	२	२	२	४	२	२
नकुल	२	२	२	०	२	२	१	२	२	२	२	२	४	२
सिंह	१	०	१	२	२	२	२	१	१	२	१	२	२	४

उदाहरण—इन्दुमतीका कृत्तिका नक्षत्र होनेसे सर्प योनि हुई और चन्द्रवंशका रेवती नक्षत्र होनेसे गज योनि हुई। मिलानेसे दो गुण प्राप्त हुए। इसी प्रकार अन्य जगह भी मिला लेना चाहिये।

ग्रह-मैत्री

सूर्यके मंगल, बृहस्पति और चन्द्रमा मित्र; बुध सम, शुक्र और शनैश्चर शत्रु हैं। चन्द्रमाके बुध और सूर्य मित्र; मंगल, बृहस्पति, शुक्र और शनि सम और शत्रु कोई नहीं है। मंगलके चन्द्रमा, बृहस्पति और सूर्य मित्र; बुध शत्रु; शुक्र और शनैश्चर सम है। बुधके शुक्र और सूर्य मित्र; चन्द्रमा शत्रु; बृहस्पति शनैश्चर और मंगल सम हैं। बृहस्पतिके सूर्य, मंगल और चन्द्रमा मित्र; बुध और शुक्र शत्रु तथा शनैश्चर सम है। शुक्रके बुध और शनैश्चर मित्र; चन्द्रमा और सूर्य शत्रु तथा मंगल और बृहस्पति सम है। शनैश्चरके शुक्र और बुध मित्र, सूर्य, चन्द्रमा और मंगल शत्रु तथा बृहस्पति सम है।

ग्रह-मैत्री गुण बोधक चक्र

वरका राशि-स्वामी

कन्याका राशि-स्वामी	सू०	चं०	मं०	बु०	वृ०	शु०	श०
सू०	५	५	५	४	५	०	०
चं०	५	५	४	१	४	॥	॥
मं०	५	४	५	॥	५	३	॥
बु०	४	१	॥	५	॥	५	४
वृ०	५	४	५	॥	५	॥	३
शु०	०	॥	३	५	॥	५	५
श०	०	॥	॥	४	३	५	५

उदाहरण—इन्दुमतीकी वृष राशि होनेसे, राशि स्वामी शुक्र हुआ और चन्द्रवंशकी मीन राशि होनेसे राशि स्वामी बृहस्पति हुआ। अतः

उपर्युक्त कोष्ठकमें वर और कन्याके राशि स्वामियोंको मिलानेसे ½ गुण आया। इसी प्रकार सब जगह ग्रहमैत्री गुणको लाना चाहिये।

गण जाननेकी विधि

मघा, आश्लेषा, धनिष्ठा, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा, कृत्तिका, चित्रा और विशाखा ये नक्षत्र राक्षसगण; तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, भरणी और आर्द्रा ये नक्षत्र मनुष्यगण; और अनुराधा, पुनर्वसु, मृगशिरा, श्रवण, रेवती, स्वाति, हस्त, अश्विनी और पुष्य ये नक्षत्र देवतागण संज्ञक हैं।

गण बोधक चक्र

म०	आश्ले०	ध०	ज्ये०	मू०	श०	कृ०	चि०	वि०	राक्षस
पू०भा०	पू०षा०	पू०फा०	उ०भा०	उ०षा०	उ०फा०	रो०	भ०	आ०	मयष्नु
अनु०	पुन०	मृ०	श्र०	रे०	स्वा०	ह०	अ०	पु०	देवता

गण-गुण बोधक चक्र

वरका गण

		दे०	म०	रा०
कन्याका गण	द०	६	५	१
	म०	६	६	०
	रा०	०	०	६

उदाहरण—इन्दुमतीका कृत्तिका नक्षत्र होनेसे राक्षस गण हुआ और चन्द्रवंशका रेवती नक्षत्र होनेसे देवगण हुआ। उपर्युक्त कोष्ठकमें वर और कन्याके गणको मिलानेसे शून्य गुण आया। इसी प्रकार अन्यत्र भी गण मिलाना चाहिये।

भकूट जाननेकी विधि और उसका फल

कन्याकी जन्मराशिसे वरकी जन्मराशि तक गिनना चाहिये तथा इसी प्रकार वरकी जन्मराशिसे कन्याकी जन्मराशि तक भी गिनना चाहिये। यदि गिननेसे दोनोंकी राशि छटवी और आठवीं हो तो दोनोंकी मृत्यु, नवमी और पाँचवीं हो तो सन्तानकी हानि तथा दूसरी और बारहवीं हो तो निर्धन होते है। इससे भिन्न राशियोंमें दोनों सुखी रहते हैं।

भकूट-गुण बोधक चक्र

वरकी राशि

कन्याकी राशि	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०
मे०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०
वृ०	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७
मि०	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७
क०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०
सि०	०	०	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०
क०	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७
तु०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०
वृ०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०
ध०	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७
म०	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७
कु०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०
मी०	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७

उदाहरण—इन्दुमतीकी वृष राशि और चन्द्रवंशकी मीन राशि है। इनको कोष्ठकमें मिलाया तो ७ गुण भकूटका हुआ। इसी प्रकार अन्यत्र भी भकूट मिलाना चाहिये।

नाड़ी जाननेकी विधि

ज्येष्ठा, मूल, आर्द्रा, पुनर्वसु, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, अश्विनी इन नक्षत्रोंकी आदि नाड़ी; मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, भरणी, धनिष्ठा, पूर्वाषाढा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद इनकी मध्य नाड़ी और स्वाति, विशाखा, कृत्तिका, रोहिणी, आश्लेषा, मघा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, रेवती इन नक्षत्रोंकी अन्त्य नाड़ी होती है।

नाड़ीका फल

यदि आदि और अन्त्य नाड़ीके नक्षत्र वर और कन्याके हों तो विवाह अशुभ होता है। मध्य नाड़ीके नक्षत्र होनेपर दोनोंकी मृत्यु होती है।

नाड़ी बोधक चक्र

अ०	आ०	पुन०	उ० फा०	ह०	ज्ये०	मू०	श०	पू० भा०	आदि नाड़ी
भ०	मृ०	पु०	पू० फा०	चि०	अनु०	पू० षा०	ध०	उ० भा०	मध्य नाड़ी
कृ०	रो०	आश्ले०	म०	स्वा.	वि०	उ० षा०	श्र०	रे०	अन्त्य नाडी

नाड़ी-गुण बोधक चक्र

वरकी नाड़ी

कन्याकी नाड़ी		आ०	म०	अ०
	आ०	०	८	८
	म०	८	०	८
	अ०	८	८	०

उदाहरण—इन्दुमतीका कृत्तिका नक्षत्र होनेसे अन्त्य नाड़ी हुई और चन्द्रवंशका रेवती नक्षत्र होनेसे अन्त्य हुई। कोष्ठकमें दोनोंकी नाड़ी मिलाई तो शून्य गुण प्राप्त हुआ। इसी प्रकार अन्यत्र भी नाड़ीका मिलान

करना चाहिये। कुमारी इन्दुमती और कुमार चन्द्रवंशके गुण निम्न प्रकार सिद्ध हुए।

वर	गुण	कन्या
ब्राह्मण वर्ण	१	क्षत्रियवर्ण
जलचर वश्य	२	चतुष्पद वश्य
चतुर्थी तारा	१॥	सातवी तारा
गजयोनि	२	सर्पयोनि
राशीश बृहस्पति	॥	राशीश शुक्र
देवगण	०	राक्षस गण
मीनराशि (भकूट)	७	वृषराशि (भकूट)
अन्त्य नाड़ी	०	अन्त्य नाड़ी

इस प्रकार कुल १४ गुण प्राप्त हुए। किन्तु कम-से-कम १८ गुण होना परमावश्यक था। अतः गुणोंकी दृष्टिसे कुण्डली नही मिली।

मुहूर्त्त विचार

प्राचीन कालसे ही प्रत्येक माङ्गलिक कार्यके लिये शुभ समयका विचार किया जाता रहा है। क्योंकि समयका प्रभाव जड़ और चेतन सभी प्रकारके पदार्थोंपर पड़ता है, इसीलिये हमारे आचार्योंने गर्भाधानादि अन्यान्य संस्कार एवं प्रतिष्ठा, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, यात्रा आदि सभी माङ्गलिक कार्योंके लिये मुहूर्त्तका आश्रय लेना आवश्यक बतलाया है। अतएव नीचे प्रमुख आवश्यक मुहूर्त्त दिये जाते हैं।

सूतिका स्नान मुहूर्त्त

रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, मृगशिर, हस्त, स्वाति, अश्विनी और अनुराधा इन नक्षत्रोंमें; रवि, मंगल और बृहस्पति इन वारोंमें प्रसूता स्त्रीको स्नान कराना शुभ है। आर्द्रा, पुनर्वसु,;

पुष्य, श्रवण, मघा, भरणी, विशाखा, कृत्तिका, मूल और चित्रा इन नक्षत्रोंमें बुध और शनि इन वारोंमें एवं अष्टमी, षष्ठी, द्वादशी, चतुर्थी, नवमी और चतुर्दशी इन तिथियोंमें प्रसूता स्त्रीको स्नान कराना वर्जित है ।

विशेष—प्रत्येक शुभ कार्यमें व्यतीपात योग, भद्रा, वैधृति नामक योग, क्षयतिथि, वृद्धितिथि, क्षयमास, अधिकमास, कुलिक, अर्द्धयाम, महापात, विष्कम्भ और वज्रके आदिकी तीन-तीन घटियाँ, परिघ योगका पूर्वार्द्ध, शूलियोगकी पाँच घटियाँ, गण्ड और अतिगण्डकी छः छः घटियाँ एवं व्याघात योगकी नौ घटियाँ त्याज्य है ।

स्तन पान मुहूर्त्त

अश्विनी, रोहिणी, पुष्य, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, अनुराधा, मूल, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्टा, शतभिषा, उत्तराभाद्रपद और रेवती इन नक्षत्रों; सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोंमें तथा शुभ लग्नोंमें स्तनपान कराना चाहिये ।

जातकर्म और नामकर्मका मुहूर्त्त

यदि किसी कारणवश जन्म कालमें जातकर्म नही किया गया हो तो अष्टमी, चतुर्दशी, आमावास्या, पौर्णमासी, सूर्यसंक्रान्ति तथा चतुर्थी और नवमी छोड़ अन्य तिथियोंमें; सोम, बुध गुरु और शुक्र इन वारोंमें; जन्म कालसे ग्यारहवें या बारहवें दिनमें; मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा इन नक्षत्रोंमें जातकर्म और नामकर्म करना शुभ है । जैन मान्यताके अनुसार नाम कर्म जन्म दिनसे ४५ दिनतक किया जा सकता है ।

दोलारोहण

रेवती मृगशिर, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी इन नक्षत्रोंमें तथा सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोंमें पहले-पहल बालकको पालनेमें झुलाना शुभ है ।

भूम्युपवेशन मुहूर्त्त

रोहिणी, मृगशिर, ज्येष्ठा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा और उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रोंमें; चौथ, नवमी और चतुर्दशीको छोड़ शेष तिथियोंमें एवं सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोंमें बालकको भूमिपर बैठाना शुभ है ।

बालकको बाहर निकालनेका मुहूर्त्त

अश्विनी, मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, और रेवती इन नक्षत्रोंमें; द्वितीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी और त्रयोदशी इन तिथियोंमें एवं सोम, बुध, गुरु, शुक्र और रवि इन वारोंमें बालकको पहले-पहल घरसे बाहर निकालना शुभ है ।

अन्नप्राशन मुहूर्त्त

चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी, अष्टमी, अमावास्या और द्वादशी तिथिको छोड़ अन्य तिथियोंमें; जन्मराशि अथवा जन्मलग्नसे आठवीं राशि, आठवाँ नवांश, मीन, मेष और वृश्चिकको छोड़ अन्य लग्नोंमें, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिष नक्षत्रमें, छठवें माससे लेकर सम मासमें अर्थात् छठवें, आठवें दशवें इत्यादि मासोंमें बालकोंका और पाँचवें माससे लेकर विषम मासोंमें अर्थात् पाँचवें, सातवें, नवें इत्यादि मासोंमें कन्याओंका अन्नप्राशन शुभ

होता है। परन्तु अन्नप्राशन शुक्लपक्षमें दोपहरके पूर्व करना चाहिये।

अन्नप्राशनके लिये लग्न शुद्धि

लग्नसे पहले, चौथे, सातवें और तीसरे स्थानमें शुभग्रह हों; दशवें स्थानमें कोई ग्रह न हो; तृतीय, षष्ठ और एकादश स्थानमें पापग्रह हों और लग्न, आठवें और छटवें स्थानको छोड़ अन्य स्थानोंमें चन्द्रमा स्थित हो ऐसे लग्नमें अन्नप्राशन शुभ होता है।

अन्नप्राशन मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	रो० उभा० उषा० उफा० रे० चि० अनु० ह० पु० अश्वि० अभि० पुन० स्वा० श्र० ध० श०
वार	सो० बु० वृ० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।१३।१५
लग्न	२।३।४।५।६।७।९।१०।११
लग्न शुद्धि	शुभग्रह १।४।७।९।५।३में; पापग्रह ३।६।११ इन स्थानोंमें

कर्णवेध मुहूर्त्त

चैत्र, पौष, आषाढ़ शुक्ल एकादशीसे कार्त्तिक शुक्ल एकादशी तक, जन्ममास, रिक्ततिथि (४।९।१४), सम वर्ष और जन्मताराको छोड़कर जन्मसे छटवें, सातवें, आठवें महीनेमें अथवा बारहवें या सोलहवें दिन, बुध, गुरु, शुक्र, सोमवारमें और श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्रमें बालकका कर्णवेध शुभ होता है।

कर्णवेधमुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	श्र० ध० पुन० मृ० रे० चि० अनु० ह० अश्वि० पु न० अभि०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	१।२।३।५।६।७।१०।११।१२।१३।१५
लग्न	२।३।४।६।७।९।१२
लग्न शुद्धि	शुभग्रह १।३।४।५।७।९।१०।११ इन स्थानोंमें; पापग्रह ३।६।११ इन स्थानोंमें शुभ होते हैं। अष्टममें कोई ग्रह न हो। यदि गुरु लग्नमें हो तो विशेष उत्तम होता है।

चूड़ाकर्म (मुण्डन) का मूहूर्त्त

जन्मसे तीसरे, पाँचवें, सातवें इत्यादि विषम वर्षोंमें; अष्टमी, द्वादशी, चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, प्रतिपदा, षष्ठी, अमावस्या, पूर्णमासी और सूर्यसंक्रान्तिको छोड़ अन्य तिथियोंमें; चैत्रमहीनेको छोड़ उत्तरायणमें; बुध, चन्द्र, शुक्र और बृहस्पति वारमें; शुभग्रहोंके लग्न अथवा नवांशमें; जिसका मुण्डन कराना हो उसके जन्मलग्न अथवा जन्मराशिसे आठवीं राशिको छोड़कर अन्य लग्न व राशिमें; लग्नसे आठवें स्थानमें शुक्रको छोड़ अन्य ग्रहोंके न रहने; ज्येष्ठा, मृगशिर, रेवती, चित्रा, स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्रमें; लग्नसे तृतीय, एकादश और षष्ठ स्थानमें पापग्रहोंके रहते मुण्डन कराना शुभ है।

मुण्डन मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	ज्ये० मृ० रे० चि० ह० अश्वि० पु० अभि० स्वा० पुन० श्र० ध० श०
वार	सो० बु० बृ० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१३
लग्न	२।३।४।६।७।९।१२
लग्नशुद्धि	शुभग्रह १।२।४।५।७।९।१० इन स्थानोंमें शुभ होते हैं; पापग्रह ३।६।११में शुभ हैं। अष्टममें कोई ग्रह न हो।

अक्षरारम्भ मुहूर्त्त

जन्मसे पाँचवें वर्षमें, एकादशी, द्वादशी, दशमी, द्वितीया, षष्ठी, पञ्चमी और तृतीया तिथिमें; उत्तरायणमें; हस्त अश्विनी, पुष्य, श्रवण, स्वाति, रेवती, पुनर्वसु, आर्द्रा, चित्रा और अनुराधा नक्षत्रमें; मेष, मकर, तुला और कर्कको छोड़ अन्य लग्नमें बालकको अक्षरारम्भ कराना शुभ है।

अक्षरारम्भ मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	ह० अश्वि० पु० श्र० स्वा० रे० पुन० चि० अनु०
वार	सो० बु० शु० श०
तिथि	२।३।५।६।१०।११।१२
लग्न	२।३।६।१२ इन लग्नोंमें परन्तु अष्टममें कोई ग्रह न हो।

विद्यारम्भका मुहूर्त्त

मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, हस्त, चित्रा, स्वाति, श्रवण, धनिष्ठा,

शतभिषा, अश्विनी, मूल, तीनों पूर्वा (पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाफाल्गुनी) पुष्य, आश्लेषा इन नक्षत्रोंमें; रवि, गुरु, शुक्र इन वारोंमें; षष्ठी, पंचमी, तृतीया, एकादशी, द्वादशी, दशमी, द्वितीया इन तिथियोंमें और लग्नसे नवमें, पाँचवें, पहले, चौथे, सातवें, दशवे स्थानमें शुभग्रहोके रहनेपर विद्यारम्भ करना शुभ है। किसी-किसी आचार्यके मतसे तीनों उत्तरा, रेवती और अनुराधामें भी विद्यारम्भ करना शुभ कहा गया है।

वाग्दानमुहूर्त्त

उत्तराषाढ़ा, स्वाति, श्रवण तीनों पूर्वा, अनुराधा, धनिष्ठा, कृत्तिका, रोहिणी, रेवती, मूल, मृगशिरा, मघा, हस्त, उत्तराफाल्गनी और उत्तराभाद्रपद नक्षत्रोंमें वाग्दान करना शुभ है।

विवाह मुहूर्त्त

मूल, अनुराधा, मृगशिर, रेवती, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, स्वाति, मघा, रोहिणी इन नक्षत्रोमें और ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख, मार्गशीर्ष, आषाढ़ इन महीनोंमें विवाह करना शुभ है।

विवाहमें कन्याके लिये गुरुबल, वरके लिये सूर्यबल, और दोनोंके लिये चन्द्रबलका विचार करना चाहिए।

प्रत्येक पंचांगमें विवाहके मुहूर्त्त लिखे रहते हैं। इनमें शुभ सूचक, खड़ी रेखाएँ और अशुभ सूचक टेढ़ी रेखाएँ होती है। ज्योतिषमें दस दोष बताये गये हैं, जिस विवाहके मुहूर्त्तमें जितने दोष नहीं होते हैं, उतनी ही खड़ी रेखाएँ होती हैं और दोषसूचक टेढ़ी रेखाएँ मानी जाती हैं। सर्वश्रेष्ठ मुहूर्त्त दस रेखाओंका होता है, मध्यम सात-आठ रेखाओंका और जघन्य पाँच रेखाओंका होता है। इससे कम रेखाओंके मुहूर्त्तको निन्द्य कहते हैं।

गुरुबल विचार

बृहस्पति कन्याकी राशिसे नवम, पंचम, एकादश, द्वितीय और सप्तम राशिमें शुभ; दशम, तृतीय, षष्ठ और प्रथम राशिमें दान देनेसे शुभ और चतुर्थ, अष्टम, द्वादश राशिमें अशुभ होता है।

सूर्यबल विचार

सूर्य वरकी राशिसे तृतीय, षष्ठ, दशम, एकादश राशिमें शुभ; प्रथम, द्वितीय, पंचम, सप्तम, नवम राशिमें दान देनेसे शुभ और चतुर्थ, अष्टम, द्वादश राशिमें अशुभ होता है।

चन्द्रबल विचार

चन्द्रमा वर और कन्याकी राशिसे तीसरा, छटवाँ, सातवाँ, दसवाँ, ग्यारहवाँ शुभ; पहला, दूसरा, पाँचवाँ, नौवाँ दान देनेसे शुभ और चौथा, आठवाँ, बारहवाँ अशुभ होता है।

विवाहमें अन्धादि लग्न

दिनमें तुला और वृश्चिक; रात्रिमें तुला और मकर बधिर हैं। तथा दिनमें सिंह, मेष, वृष और रात्रिमें कन्या, मिथुन, कर्क, अन्ध संज्ञक हैं। दिनमें कुम्भ और रात्रिमें मीन दो लग्न पंगु होते हैं। किसी-किसी आचार्यके मतसे धनु, तुला, वृश्चिक ये अपराह्नमें बधिर हैं; मिथुन, कर्क, कन्या ये लग्न रात्रिमें अन्धे हैं; सिंह, मेष, वृष ये लग्न दिनमें अन्धे हैं और मकर, कुम्भ, मीन ये लग्न प्रातःकाल तथा सायंकालमें कुबड़े होते हैं।

अन्धादि लग्नोंका फल

यदि विवाह बधिर लग्नमें हो तो वर कन्या दरिद्र; दिवान्ध लग्नमें हो तो कन्या विधवा; रात्र्यन्ध लग्नमें हो तो सन्तति मरण और पंगुमें हो तो धन-नाश होता है।

विवाहके शुभ लग्न

तुला, मिथुन, कन्या, वृष एवं धनु लग्न शुभ हैं, अन्य लग्न मध्यम हैं

लग्न शुद्धि

लग्नसे बारहवें शनि, दसवें मङ्गल, तीसरे शुक्र, लग्नमें चन्द्रमा और क्रूरग्रह अच्छे नही होते। लग्नेश, शुक्र, चन्द्रमा छठवें और आठवेंमें शुभ नहीं होते। लग्नेश और सौम्य ग्रह आठवेंमें अच्छे नहीं होते हैं और सातवेंमें कोई भी ग्रह शुभ नही होता है।

ग्रहोंका बल

प्रथम, चौथे, पाँचवें, नवें और दसवें स्थानमें स्थित बृहस्पति सब दोषोंको नष्ट करता है। सूर्य ग्यारहवें स्थानमें स्थित तथा चन्द्रमा वर्गोत्तम लग्नमें स्थित नवांश दोषको नष्ट करता है। बुध लग्न, चौथे, पाँचवें, नवें और दसवें स्थानमें हो तो सौ दोषोंको दूर करता है। यदि शुक्र इन्हीं स्थानोंमें हो तो दो सौ दोषोंको दूर करता है। यदि इन्हीं स्थानोंमें बृहस्पति स्थित हो तो एक लाख दोषोंको दूर करता है। लग्नका स्वामी अथवा नवांशका स्वामी यदि लग्न, चौथे, दसवें, ग्यारहवें स्थानमें स्थित हो तो अनेक दोषोंको शीघ्र ही भस्म कर देता है।

बधू प्रवेश मुहूर्त्त

विवाहके दिनसे १६ दिनके भीतर नव, सात, पाँच दिनमें वधूप्रवेश शुभ है। यदि किसी कारणसे १६ दिनके भीतर वधूप्रवेश न हो तो विषम मास, विषम दिन और विषम वर्षमें बधूप्रवेश करना चाहिए।

तीनों उत्तरा (उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा) रोहिणी,

अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, अनुराधा, रेवती, मृगशिर, श्रवण, धनिष्ठा, मूल, मघा और स्वाति नक्षत्रमें; रिक्ता (४।९।१४) छोड़ शुभ तिथियोंमें और रवि, मंगल, बुध छोड़ शेष वारोंमें वधूप्रवेश करना शुभ है।

द्विरागमन मुहूर्त्त

विषम (१।३।५।७) वर्षोंमें; कुम्भ, वृश्चिक, मेष राशियोंके सूर्यमें; गुरु, शुक्र, चन्द्र इन वारोंमें; मिथुन, मीन, कन्या, तुला, वृष इन लग्नोंमें और अश्विनी, पुष्य, हस्त, उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती, मूल, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रोंमें द्विरागमन शुभ है।

द्विरागमन मुहूर्त्त चक्र

समय	१।३।५।७।९ विवाहके बाद इन वर्षोंमें कु० वृ० मे०के सूर्यमें
नक्षत्र	अश्वि० पु० ह० उषा० उभा० उफा० रो० श्र० ध० श० पुन० स्वा० मू० मृ० रे० चि० अनु०
वार और तिथि	बु० बृ० शु० सो०—१।२।३।५।७।१०।११।१२।१३।१५ इन तिथियोंमें
लग्न और उसकी शुद्धि	२।३।६।७।१२ इन लग्नोंमें; लग्नसे १।२।३।५।७।१०। ११ इन स्थानोंमें शुभग्रह और ३।६।११में पापग्रह शुभ होते है।

यात्रा मुहूर्त्त

अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण और धनिष्ठा ये नक्षत्र यात्राके लिये उत्तम; रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी,

उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, ज्येष्ठा, मूल और शतभिषा ये नक्षत्र मध्यम एवं भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, चित्रा, स्वाति और विशाखा ये नक्षत्र निन्द्य है। तिथियोमें द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दसमी, एकादशी और त्रयोदशी शुभ बताई गई है। यात्राके लिये वारशूल, नक्षत्रशूल, दिक्शूल, चन्द्रवास और राशिसे चन्द्रमाका विचार करना आवश्यक है। कहा भी गया है—

"दिशाशूल ले आओ वामे राहु योगिनी पीठ
सम्मुख लेव चन्द्रमा, लावे लक्ष्मी लूट"

वार शूल और नक्षत्र शूल

ज्येष्ठा नक्षत्र, सोमवार तथा शनिवारको पूर्व; पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र और गुरुवारको दक्षिण; शुक्रवार और रोहिणी नक्षत्रको पश्चिम और मंगल तथा बुधवारको उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें उत्तर दिशाको नही जाना चाहिए। यात्रामें चन्द्रमाका विचार अवश्य करना चाहिए। दिशाओंमें चन्द्रमाका वास निम्न प्रकारसे जाना जाता है।

चन्द्रवास विचार

मेष, सिह और धनु राशिका चन्द्रमा पूर्व दिशामें; वृष, कन्या और मकर राशिका चन्द्रमा दक्षिण दिशामें; तुला, मिथुन और कुम्भ राशिका चन्द्रमा पश्चिम दिशामें; कर्क, वृश्चिक और मीनका चन्द्रमा उत्तर दिशामें वास करता है।

चन्द्र फल

सम्मुख चन्द्रमा धनलाभ करनेवाला, दक्षिण चन्द्रमा सुख-सम्पत्ति

देनेवाला, पृष्ठ चन्द्रमा शोक-संताप देनेवाला और वाम चन्द्रमा धन-नाश करनेवाला होता है।

यात्रा मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	अश्वि० पुन० अनु० मृ० पु० रे० ह० श्र० ध० ये उत्तम हैं। रो० उषा० उभा० उफा० पूषा० पूभा० ज्ये० मू० श० ये मध्यम हैं। भ० कृ० आ० आश्ले० म० चि० स्वा० वि० ये निन्द्य है।
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१३

चन्द्र वास चक्र

पूर्व	पश्चिम	दक्षिण	उत्तर
मेष	मिथुन	वृष	कर्क
सिंह	तुला	कन्या	वृश्चिक
धनु	कुम्भ	मकर	मीन

समय शूल चक्र

पूर्व	प्रातःकाल
पश्चिम	सायंकाल
दक्षिण	मध्याह्नकाल
उत्तर	अर्द्धरात्रि

दिक्शूल चक्र

पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
चं० श०	बृ० [illegible]	सू० शु०	मं० बु०

योगिनी चक्र

पू०	आ०	द०	नै०	प०	वा०	उ०	ई०	दिशा
९।१	३।११	१३।५	१२।४	१४।६	१५।७	१०।२	३०।८	तिथि

गृहारम्भमुहूर्त्त चक्र

मृगशिरा, पुष्य, अनुराधा, धनिष्ठा, शतभिषा, चित्रा, हस्त, स्वाति, रोहिणी, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तरापाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, इन नक्षत्रोंमें; चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, त्रयोदशी इन तिथियोंमें गृहारम्भ श्रेष्ठ होता है।

गृहारम्भ मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	मृ० पु० अनु० उफा० उभा० उषा० ध० श० चि० ह० स्वा० रो० रे०
वार	चं० बु० बृ० शु० श०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१३।१५
मास	वै० श्रा० मा० पौ० फा०
लग्न	२।३।५।६।८।९।११।१२
लग्न शुद्धि	शुभग्रह लग्नसे १।४।७।१०।५।९ इन स्थानोंमें एवं पापग्रह ३।६।११ इन स्थानोंमें शुभ होते हैं। ८।१२ स्थानमें कोई ग्रह नहीं होना चाहिये।

नूतन गृह प्रवेश मुहूर्त्त

उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तरापाढ़ा, रोहिणी, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती इन नक्षत्रोंमें; चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पंचमी. षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी इन तिथियोंमें गृहप्रवेश करना शुभ है।

नूतन गृह-प्रवेश मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	उभा० उषा० उफा० रो० मृ० चि० अनु० रे०
वार	चं० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।६।७।१०।११।१३
लग्न	२।५।८।११ उत्तम है। ३।६।९।१२ मध्यम हैं।
लग्नशुद्धि	लग्नसे १।२।३।५।७।९।१०।१ १इन स्थानोंमें शुभग्रह शुभ होते हैं। ३।६।११ इन स्थानोंमें पापग्रह शुभ होते है। ४।८ इन स्थानोंमें कोई ग्रह नहीं होना चाहिए।

जीर्ण गृह-प्रवेश मुहूर्त्त

शतभिषा, पुष्य, स्वाती, धनिष्ठा, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी इन नक्षत्रोंमें चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी इन तिथियोंमें जीर्ण गृहप्रवेश करना शुभ है।

जीर्ण ग्रह-प्रवेश मुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	श० पु० स्वा० ध० चि० अनु० मृ० रे० उभा० उषा० उफा० रो०
वार	चं० बु० बृ० शु० श०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३
मास	का० मार्ग० श्रा० मा० फा० वै० ज्ये०

शान्तिक और पौष्टिक कार्यका मुहूर्त्त

अश्विनी, पुष्य, हस्त, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाति, अनुराधा, मघा, इन नक्षत्रोंमें; रिक्ता (४।९।१४), अष्टमी, पूर्णमासी, अमावस्या इन तिथियोंको छोड़ अन्य तिथियोमें और रवि, मगल, शनि इन वारोंको छोड़ शेष वारोंमें शान्तिक और पौष्टिक कार्य करना शुभ है।

शान्ति और पौष्टिक कार्यके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	अ० पु० ह० उषा, उफा० उभा० रो० रे० श्र० ध० श० पुन० स्वा० अनु० म०
वार	चं० बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३

कुँआ खुदवानेका मुहूर्त्त

हस्त, अनुराधा, रेवती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, धनिष्ठा, शतभिषा, मघा, रोहिणी, पुष्य, मृगशिर, पूर्वाषाढ़ा इन नक्षत्रोंमें; बुध, गुरु, शुक्र इन वारोंमें और रिक्ता (४।९।१४) छोड़ सभी तिथियोंमें शुभ होता है।

कुंआ खुदवानेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	ह० अनु० रे० उफा० उषा० उभा० ध० श० म० रो० पु० मृ० पुषा०
वार	बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२।१३।१५

दूकान करनेका मुहूर्त्त

रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, हस्त, पुष्य, चित्रा, रेवती, अनुराधा, मृगशिरा अश्विनी इन नक्षत्रोंमें तथा शुक्र, बुध गुरु, सोम इन वारोंमें और रिक्ता, अमावस्याको छोड़ शेष तिथियोंमें, दूकान करना शुभ है।

दूकान करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	रो० उषा० उभा० उफा० ह० पु० चि० रे० अनु० मृ० अश्वि०
वार	शु० गु० बु० सो०
तिथि	२।३।५।७।१०।१२।१३

बड़े-बड़े व्यापार करनेका मुहूर्त्त

हस्त, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, चित्रा इन नक्षत्रोंमें, शुक्र, बुध, गुरु इन वारोंमें और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, एकादशी, त्रयोदशी इन तिथियोंमें बड़े-बड़े व्यापार सम्बन्धी कारोबार करना शुभ है।

बड़े-बड़े व्यापारिक कार्य प्रारंभ करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	ह० पु० उफा० उभा० उषा० चि०
वार	बु० गु० शु०
तिथि	२।३।५।७।११।१३

राजासे मिलनेका मुहूर्त्त

श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, मृगशिरा, पुष्य, अनुराधा, रोहिणी, रेवती, अश्विनी, चित्रा, स्वाति इन नक्षत्रोंमें और रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्र इन वारोंमें राजासे मिलना शुभ है।

बगीचा लगानेका मुहूर्त्त

शतभिषा, विशाखा, मूल, रेवती, चित्रा, अनुराधा, मृगशिर, उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य इन नक्षत्रोंमें तथा शुक्र, सोम, बुध, गुरु इन वारोंमें बगीचा लगाना शुभ है।

रोग मुक्त होनेपर स्नान करनेका मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी, आश्लेषा, पुनर्वसु, स्वाति, मघा, रेवती इन नक्षत्रोंको छोड़ शेष नक्षत्रोंमें; रवि, मंगल, गुरु इन वारोंमे और रिक्तादि तिथियोंमे रोगीको स्नान करना शुभ है।

नौकरी करनेका मुहूर्त्त

हस्त, चित्रा, अनुराधा, रेवती, अश्विनी, मृगशिर, पुष्य इन नक्षत्रोंमें; बुध, गुरु, शुक्र, रवि इन वारोंमें और शुभ तिथियोंमें नौकरी करना शुभ है।

मुकद्दमा दायर करनेका मुहूर्त्त

ज्येष्ठा, आर्द्रा, भरणी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, मूल, आश्लेषा, मघा इन नक्षत्रोंमें; तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी, पंचमी, दशमी, पूर्णमासी इन तिथियोंमें और रवि, बुध, गुरु, शुक्र इन वारोंमें मुकद्दमा दायर करना शुभ है।

मुकद्दमा दायर करनेके मुहूर्त्तका चक्र

नक्षत्र	ज्ये० आ० भ० पूषा० पभा० पफा० म० आश्ले० म०
वार	र० बु० गु० श०
तिथि	३।५।८।१०।१३।१५
लग्न	३।६।७।८।११
लग्नशुद्धि	सूर्य, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र व ग्रह १।४।७।१० इन स्थानोंमे और पापग्रह ३।६।११ इन स्थानोंमे शुभ होते है, परन्तु अष्टममें कोई ग्रह नही होना चाहिये।

औषध बनानेका मुहूर्त्त

हस्त, अश्विनी, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मूल, पुनर्वसु, स्वाति, मृगशिरा, चित्रा, रेवती, अनुराधा इन नक्षत्रोंमें और रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्र इन वारोंमें औषध निर्माण करना शुभ है ।

मंत्र सिद्ध करनेका मुहूर्त्त

उत्तराफाल्गुनी, हस्त, अश्विनी, श्रवण, विशाखा, मृगशिरा इन नक्षत्रोंमें; रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्र इन वारोमें और द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी, त्रयोदशी, पूर्णिमा इन तिथियोंमें यंत्र-मंत्र सिद्ध करना शुभ होता है ।

सर्वारम्भ मुहूर्त्त

लग्नसे बारहवाँ और आठवाँ स्थान शुद्ध हो और कोई ग्रह नहीं हो तथा जन्मलग्न व जन्मराशिसे तीसरा, छटवाँ, दशवाँ, ग्यारहवाँ लग्न हो और शुभग्रहोंकी दृष्टि हो तथा शुभग्रहयुक्त हों; चन्द्रमा जन्मलग्न व जन्मराशिसे तीसरे, छटवें, दशवें, ग्यारहवें स्थानमें हो तो सभी कार्य प्रारम्भ करना शुभ होता है ।

मन्दिर-निर्माणका मुहूर्त्त

पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, मृगशिरा, श्रवण, अश्विनी, चित्रा, पुनर्वसु, विशाखा, आर्द्रा, हस्त, धनिष्ठा और रोहिणी इन नक्षत्रोंमें; सोम, बुध, गुरु, शुक्र और रवि इन वारोंमें एवं द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी इन तिथियोंमें मन्दिर निर्माण करना शुभ है ।

मन्दिर निर्माणके मुहूर्त्तका चक्र

मास	माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ, मार्गशीर्ष, पौष (मतान्तरसे)
नक्षत्र	पु०, उत्तराफा० उत्तराषा० उभा० मृ० श्र० अश्वि० चि० पुन० वि० आ० ह० ध० रो०
वार और तिथि	सोम० बुध० गु० शुक्र० रवि०—२।३।५।७।११।१२।१३ ये तिथियाँ

प्रतिमा-निर्माणका मुहूर्त्त

पुष्य, रोहिणी, श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा, आर्द्रा, अश्विनी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, हस्त, मृगशिर, रेवती और अनुराधा इन नक्षत्रोंमें; सोम, गुरु और शुक्र इन वारोंमें एवं द्वितीया, तृतीया, पंचमी, सप्तमी, एकादशी और त्रयोदशी इन तिथियोंमें प्रतिमा निर्माण करना शुभ है।

प्रतिष्ठा मुहूर्त्त

अश्विनी, रोहिणी, मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद और रेवती इन नक्षत्रोंमें; सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोंमें एवं शुक्लपक्षकी प्रतिपदा, द्वितीया, पंचमी, दसमी, त्रयोदशी और पूर्णिमा तथा कृष्णपक्षकी प्रतिपदा, द्वितीया और पंचमी इन तिथियोंमें प्रतिष्ठा करना शुभ है। प्रतिष्टाके लिये स्थिर संज्ञक राशियाँ लग्नके लिये शुभ बताई गई हैं।

प्रतिष्ठा मुहूर्त्तका चक्र

समय	उत्तरायणमें; बृहस्पति, शुक्र और मंगलके बलवान् होनेपर
तिथि	शुक्लपक्षकी १।२।५।१०।१३।१५ और कृष्णपक्षकी १।२।५ मतान्तरसे शुक्लपक्षकी ७।११
नक्षत्र	पु० उत्तराफा० उषा० उभा० ह० रे० रो० अश्वि० मृ० श्र० ध० पुन० मतान्तरसे—चि० स्वा० भ० मू० (आवश्यक होनेपर)
वार	सो० बु० गु० शु०
लग्नशुद्धि	२।३।५।६।८।९।११।१२ लग्नराशियाँ—शुभग्रह १।४।७।५।९।१०में शुभ है और पापग्रह ३; ६।११में शुभ हैं, अष्टममें कोई भी ग्रह शुभ नहीं होता है।

मण्डप बनानेका मुहूर्त्त

सोम, बुध, गुरु और शुक्र इन वारोंमें; २।५।७।११।१२।१३ इन, तिथियोंमें एवं मृगशिर, पुनर्वसु, पुष्य, अनुराधा, श्रवण, उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढ़ा और उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रोंमें मण्डप बनाना शुभ है।

होमाहुतिका मुहूर्त्त

सूर्य जिस नक्षत्रमें स्थित हो उससे तीन-तीन नक्षत्रोंका एक-एक त्रिक होता है, ऐसे सत्ताइस नक्षत्रोंके नौ त्रिक होते है। इनमें पहला सूर्यका, दूसरा बुधका, तीसरा शुक्रका, चौथा शनैश्चरका, पाँचवाँ चन्द्रमाका, छटवाँ मंगलका, सातवाँ बृहस्पतिका, आठवाँ राहुका और नौवाँ केतुका त्रिक होता है। होमके दिनका नक्षत्र जिसके त्रिकमें पड़े उसी ग्रहके अनुसार

फल समझना चाहिये। रवि, मंगल, शनि, राहु और केतु इन ग्रहोंके त्रिकमें हवन करना वर्जित है।

अग्निवास और उसका फल

शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर अभीष्ट तिथितक गिननेसे जितनी संख्या हो, उसमें एक और जोड़े; फिर रविवारसे लेकर इष्टवारतक गिननेसे जितनी संख्या हो उसको भी उसीमें जोड़े। जोड़नेसे जो राशि आवे उसमें ४का भाग दे। यदि तीन अथवा शून्य शेष रहे तो अग्निका वास पृथ्वीमें होता है। यह होम करनेके लिये उत्तम होता है। एक शेषमें अग्निका आवास आकाशमें होता है, इसका फल प्राणोंको नाश करनेवाला बताया गया है और दो शेषमें अग्निका वास पातालमें होता है, इसका फल अर्थनाशक कहा गया है।

प्रश्नविचार

जिस समय किसी भी कार्यके लाभालाभ शुभाशुभ जाननेकी इच्छा हो उस समयका इष्टकाल बनाकर प्रश्नकुण्डली, ग्रहस्पष्ट, भावस्पष्ट, नवमांश कुण्डली और चलित कुण्डली बनाकर विचार करना चाहिये। प्रश्नलग्नमें चररााशि, बलवान् लग्नेश, कार्येश शुभग्रहोंसे युत या दृष्ट हो तथा वे १।४।५।७।९।१० स्थानोंमें हो तो प्रश्नकर्ता जिस कार्यके सम्बन्धमें पूछ रहा है, वह जल्द पूरा होगा। यदि स्थिर लग्न हो, लग्नेश और कार्येश बलवान् हो तो विलम्बसे कार्य होता है। द्विस्वभाव राशि लग्नमें हो तथा १।४।५।७।९।१०वें भावमें बलवान् पापग्रह हो; लग्नेश, कार्येश हीनबल, नीच, अस्तंगत या शत्रुक्षेत्री हो तो कार्य सफल नहीं होता। धन प्राप्तिके प्रश्नमें लग्न-लग्नेश, धन-धनेश और चन्द्रमासे; यश प्राप्तिके लिये लग्न, तृतीय, दशम और इनके स्वामी तथा चन्द्रमासे; सुख, शान्ति, गृह, भूमि आदिकी प्राप्तिके लिये लग्न, चतुर्थ, दशम स्थान, इनके स्वामी

और चन्द्रमासे; परीक्षामें यश प्राप्तिके लिये लग्न, पंचम, नवम, दशम स्थान, इनके स्वामी और चन्द्रमासे; विवाहके लिये लग्न, द्वितीय, सप्तम स्थान, इन स्थानोंके स्वामी और चन्द्रमासे; नौकरी, व्यवसाय और मुकद्दमामें विजय प्राप्त करनेके लिये लग्न-लग्नेश, दशम-दशमेश, एकादश-एकादशेश और चन्द्रमासे; बड़े व्यापारके लिये लग्न-लग्नेश, द्वितीय-द्वितीयेश, सप्तम-सप्तमेश, दशम-दशमेश, एकादश-एकादशेश और चन्द्रमासे; लाभके लिये लग्न-लग्नेश, एकादश-एकादशेश और चन्द्रमासे एवं सन्तान प्राप्तिके लिये लग्न-लग्नेश, द्वितीय-द्वितीयेश, पंचम-पंचमेश और गुरुसे विचार करना चाहिये।

रोगीके स्वस्थ, अस्वस्थ होनेका विचार

प्रश्नलग्नमें पापग्रहकी राशि हो, लग्न पापग्रहसे युत या दृष्ट हो या अष्टम स्थानमें चन्द्रमा अथवा पापग्रह हों तो रोगीका मरण होता है।

प्रश्नलग्नकुण्डलीमें पापग्रह आठवें या बारहवें स्थानमें हो या चन्द्रमा १।६।७।८वें स्थानमें हो तो शीघ्र ही रोगीकी मृत्यु होती है। चन्द्रमा लग्नमें, सूर्य सप्तममें, मंगल मेष राशिस्थ वृश्चिकके नवमांशमें, चन्द्रमासे युक्त हो तो रोगीका शीघ्र मरण होता है। प्रश्नलग्नसे सातवें स्थानमें पापग्रह हों तो रोगीको महाकष्ट और शुभग्रह हों तो रोगी स्वस्थ होता है। सप्तम स्थानमें शुभ-अशुभ दोनों प्रकारके ग्रह हों तो मिश्रित फल होता है।

लग्नेश निर्बल हो, अष्टमेश बली हो और चन्द्रमा छटवें या आठवें भावमें हो अथवा अष्टममें शनि मंगलसे दृष्ट हो तो रोगीकी मृत्यु होती है। आठवेंमें सूर्य हो तो रक्तपित्त, बुध हो तो सन्निपात, राहुसे युक्त सूर्य आठवेंमें हो तो कुष्ट, राहुसे युक्त शनि आठवेंमें हो तो वायुविकार एवं चन्द्रमा और शुक्र आठवेंमें हों तो सन्निपात होता है।

लग्नेश बलवान् और अष्टमेश निर्बल हो तो रोगीका रोग जल्द अच्छा हो जाता है।

नक्षत्रानुसार रोगीके रोगकी अवधिका ज्ञान

स्वाति, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, आर्द्रा और आश्लेषामें जिस व्यक्तिको रोग हो उसकी मृत्यु होती है। रेवती और अनुराधामें रोग हो तो रोग अधिक दिनतक जाता है; भरणी, श्रवण, शतभिषा और चित्रामें रोग हो तो ११ दिनतक रोग; विशाखा, हस्त और धनिष्ठामें हो तो १५ दिनतक रोग; मूल, कृत्तिका और अश्विनीमें हो तो ९ दिनतक; मघामें हो तो ७ दिनतक रोग; मृगशिरा और उत्तराषाढ़ामें हो तो एक महीना रोग रहता है। भरणी, आश्लेषा, मूल, कृत्तिका, विशाखा, आर्द्रा और मघा नक्षत्रमें किसीको सर्प काटे तो उसकी मृत्यु होती है।

शीघ्रमृत्यु योग

आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, शतभिषा, भरणी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, विशाखा, धनिष्ठा और कृत्तिका नक्षत्र; रवि, मंगल और शनि ये वार एवं चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, एकादशी और षष्ठी इन तिथियोंके योगमें रोगग्रस्त होनेवाले व्यक्तिकी मृत्यु होती है।

चोरज्ञान

प्रश्नलग्न स्थिर राशि हो या स्थिर राशिके नवमांशमें प्रश्नलग्न हो अथवा अपने वर्गोत्तम नवमांशकी प्रश्नलग्न राशि हो तो बन्धु, स्वजातीय, उच्चजातीय व्यक्ति या दासको चोर समझना चाहिये।

प्रश्नलग्न प्रथम द्रेष्काणमें हो तो चोरी गई चीज घरके द्वारके पास; द्वितीय द्रेष्काणमें हो तो घरके मध्यमें और तृतीय द्रेष्काणमें हो तो घरके पीछेके भागमें होती है।

लग्नमें पूर्ण चन्द्र हो और उसके ऊपर गुरुकी दृष्टि हो तथा शीर्षोदय राशि ३।५।६।७।८।११ लग्न हों तथा लग्नमें बलवान् और शुभग्रह स्थित

हों और लग्नेश, सप्तमेश, दशमेश, लाभेश, बलवान् चन्द्रमा परस्पर मित्र हों या इत्थशाल आदि शुभ योग करते हों तो चोरी गई वस्तुकी पुनः प्राप्ति हो जाती है ।

बली या पूर्ण चन्द्र लग्नमें, शुभग्रह शीर्षोदय या एकादशमें हों तथा शुभ ग्रहसे युत या दृष्ट हों तो नष्ट धन--चोरी गया धन मिल जाता है । पूर्णचन्द्र लग्नमें हो, गुरु या शुक्रकी उसपर दृष्टि हो अथवा शुभग्रह ११वें भावमें हों तो भी चोरी गया धन मिल जाता है ।

प्रश्नकालमें जो ग्रह केन्द्रमें हो उसकी दिशामें चोरीकी वस्तुको कहना चाहिए । यदि केन्द्रमें दो या बहुतसे ग्रह हों तो उनमेंसे जो बली हो उस ग्रहकी दिशामें नष्टधन कहना चाहिए । यदि केन्द्रमें ग्रह नही हो तो लग्नराशिकी दिशामें चोरी गई वस्तु बतलानी चाहिए ।

सप्तम स्थानमें शुभग्रह हो या लग्नेश सप्तम स्थानमें बैठा हो अथवा क्षीण चन्द्रमा सप्तम भवनमें हो तो चोरी गई या भूली हुई वस्तु मिलती नही है । सप्तमेश और चन्द्रमा सूर्यके साथ स्थित हों तो चोरी गई वस्तु नही मिलती । ३।५।७।११वें स्थानमें शुभग्रह हों तो प्रश्नकर्त्ताका धन मिल जाता है ।

लग्नपर सूर्य, चन्द्रमाकी दृष्टि हो तो आत्मीय चोर होता है; लग्नेश और सप्तमेश लग्नमें हो तो कुटुम्बका व्यक्ति चोर होता है । सप्तमेश २।१२वे स्थानमें हो तो नौकर चोर होता है । मेष प्रश्न लग्न हो तो ब्राह्मण चोर, वृष हो तो क्षत्रिय चोर, मिथुन लग्न हो तो वैश्य चोर, कर्क लग्न हो तो शूद्र चोर, सिंह लग्न हो तो अन्त्यज चोर, कन्या लग्न हो तो स्त्री चोर, तुला लग्न हो तो पुत्र , भाई या मित्र चोर, वृश्चिक हो तो नौकर, धनु हो तो स्त्री या भाई चोर, मकर हो तो वैश्य, कुम्भ हो तो मनुष्येतर प्राणी चूहा आदि और मीन हो तो ऐसे ही भूली हुई समझना चाहिए ।

चर प्रश्न लग्न हो तो दो अक्षरके नामवाला चोर, स्थिर हो तो चार

अक्षरके नामवाला चोर और द्विस्वभाव लग्न हो तो तीन अक्षरके नामवाला चोर होता है ।

ज्योतिषमें एक सिद्धान्त यह भी बताया गया है कि प्रश्नलग्न चर हो तो चोरके नामका पहला अक्षर संयुक्त होता है, जैसे द्वारिका, व्रजरत्न आदि । स्थिर लग्न हो तो कृदन्त--पदसंज्ञक वर्ण चोरके नामका प्रथम अक्षर होता है, जैसे मंगलसेन, भवानी शंकर इत्यादि । द्विस्वभाव लग्न हो तो स्वर वर्ण चोरके नामका प्रथम अक्षर होता है, ईश्वरीप्रसाद, उजागरसिंह, उग्रसेन इत्यादि । चोरका विशेष स्वरूप लग्नके द्रेष्काण[1]के अनुसार जानना चाहिये ।

नक्षत्रानुसार चोरी गई वस्तुकी प्राप्तिका विचार

रोहिणी, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, विशाखा, पूर्वाषाढ़ा, धनिष्ठा और रेवती ये नक्षत्र अन्धलोचन संज्ञक हैं । इनमें खोई या चोरी गई वस्तु पूर्वदिशामें होती है और शीघ्र मिल जाती है । मृगशिरा, आश्लेषा, हस्त, अनुराधा, उतराषाढ़ा, शतभिषा और अश्विनी इन नक्षत्रोंकी मन्दलोचन संज्ञा है । इनमें खोई या चोरी गई वस्तु पश्चिम दिशामे होती है और अधिक प्रयत्न करनेपर मिलती है । आर्द्रा, मघा, चित्रा, ज्येष्ठा, अभिजित्, पूर्वाभाद्रपद और भरणी इन नक्षत्रोंकी काणलोचन या मध्यलोचन संज्ञा है । इनमें खोई या चोरी गई वस्तुकी दक्षिण दिशामें होती है और उस वस्तुकी प्राप्ति नहीं होती, किन्तु बहुत दिनोंके बाद समाचार उसके सम्बन्धमें सुननेको मिलते हैं । पुनर्वसु, पूर्वाफाल्गुनी, स्वाति, मूल, श्रवण, उत्तराभाद्रपद और कृत्तिका सुलोचन संज्ञक हैं । इन नक्षत्रोंमें खोई या चोरी गई वस्तु उत्तर दिशामें रहती है और कभी भी प्राप्त नहीं होती तथा न उसके सम्बन्धमे कभी समाचार ही मिलते हैं ।

---

[1]देखें बृहज्जातकका द्रेष्काणाध्याय ।

मघासे उत्तराफाल्गुनी पर्यन्त नक्षत्रोंमें खोई हुई वस्तु पासहीमें मिल जाती है, उसके लिये विशेष झंझट नहीं करना पड़ता। हस्तसे धनिष्ठा पर्यन्त नक्षत्रोंमें खोई हुई वस्तु अन्य व्यक्तिके हाथमें दिखलाई पड़ती है। शतभिषासे भरणी पर्यन्त नक्षत्रोंमें खोई हुई वस्तु अपने घरमें ही दिखलाई पड़ती है। कृत्तिकासे आश्लेषा पर्यन्त नक्षत्रोंमें खोई हुई वस्तु देखनेमें नहीं आती, कही दूर चली जाती है।

प्रवासी प्रश्न विचार

प्रश्नकुण्डलीमें शुक्र और गुरु २।३ स्थानोंमें हो तो प्रवासी विलम्बसे; यदि ये ग्रह १।४ स्थानमें हों तो जल्द ही घर वापस आता है। ६।७वें स्थानमें कोई ग्रह हो, केन्द्रमें गुरु हो और त्रिकोणमें बुध अथवा शुक्र हो तो जल्द ही प्रवासी लौटता है। लग्नमें चर राशि हो या चन्द्रमा चर अथवा द्विस्वभाव राशिमें चर नवमांशका होकर स्थित हो तो प्रवासी लौट आता है। यदि स्थिर लग्न हो तो वह वापस नही आता। लग्नेश २।३।८।९वें स्थानमें हो तो प्रवासी लौटकर रास्तेमें ठहरा हुआ होता है। २।३।५।६।७वें स्थानमें वक्रीग्रह हों, केन्द्रमें गुरु या बुध हो और त्रिकोणमें शुक्र हो तो प्रवासी जल्द वापस आता है।

प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षरोंकी संख्याको ६से गुणाकर जो गुणनफल हो, उसमें एक जोड़नेसे जो आवे उसमें ७का भाग दे। एक शेष रहे तो प्रवासी आधे मार्गमें, दो शेष रहे तो घरके समीप, तीन शेष रहे तो घरपर, चार शेष रहे तो लाभयुक्त, पाँच शेष रहे तो रोगी, छः शेष रहे तो पीड़ित और शून्य शेष रहे तो आनेको तत्पर होता है।

गर्भस्थ सन्तान पुत्र है या पुत्री, का विचार

१—प्रश्नकुण्डलीमें लग्नमें सूर्य, गुरु या मंगल हो अथवा ये ग्रह

३।५।७।९वें स्थानमें हों तो पुत्र, और कोई ग्रह इन स्थानोंमें हो तो कन्या होती है ।

२—प्रश्नलग्न विषम राशि या विषम नवमांशमें हो और लग्नमें सूर्य, गुरु तथा चन्द्रमा बलवान् होकर स्थित हों तो पुत्रका जन्म होता है । समराशि या समराशिके नवमांशमें ये ग्रह स्थित हों तो कन्याका जन्म होता है । गुरु और सूर्य विषमराशिमें हों तो पुत्र; चन्द्रमा, शुक्र और मंगल समराशिमें हों तो कन्याका जन्म होता है ।

३—शनि लग्नके सिवा अन्यत्र विषम राशिमें स्थित हो तो पुत्र एवं द्विस्वभाव लग्नपर बुधकी दृष्टि हो तो यमल सन्तान उत्पन्न होती है ।

४—लग्नमें पुरुष राशि हो और बलवान् पुरुष ग्रहकी उसपर दृष्टि हो तो पुत्र; समराशि हो और स्त्री ग्रहकी दृष्टि हो तो कन्याका जन्म होता है ।

५—पंचमेश और लग्नेश समराशिमें हों तो कन्या; विषमराशिमें हों तो पुत्र उत्पन्न होता है । लग्नेश, पंचमेश एक साथ बैठे हों अथवा एक दूसरेको देखते हों अथवा परस्पर एक दूसरेके स्थानमें हों तो पुत्रयोग होता है ।

६—पुरुषग्रह—सूर्य, मंगल, गुरु बलवान् हों तो पुत्र जन्म और स्त्री ग्रह—चन्द्र, शुक्र बलवान् हों तो कन्याका जन्म होता है । प्रश्नकुण्डली-में ३।५।९।११वें स्थानमें सूर्य, मंगल और गुरु हों तो पुत्रका जन्म अथवा ५।९वें भावमें बलवान् गुरु बैठा हो तो पुत्रका जन्म होता है ।

७—पृच्छक जिस दिन पूछ रहा है, शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर उस दिनतककी तिथिसंख्या, प्रहरसंख्या, वारसंख्या, नक्षत्रसंख्याको जोड़कर, योगफलमेंसे एक घटाकर सातका भाग देनेसे विषम अंक शेष रहे तो पुत्र और सम अंक रहे तो कन्या होती है ।

८—गर्भिणीके नामके अक्षरोंमें वर्तमान तिथिसंख्या तथा पन्द्रह

जोड़कर ९का भाग देनेसे विषम अंक शेष रहे तो पुत्र और सम अंक शेष रहे तो कन्या होती है ।

९—तिथि, वार, नक्षत्र संख्यामें गर्भिणीके नामके अक्षरोंको जोड़कर सातका भाग देनेसे एकादि शेषमें रविवार, सोमवार आदि होते हैं । इस प्रक्रियासे रवि भौम और गुरुवार निकले तो पुत्र; शुक्र, चन्द्र और बुधवार निकले तो कन्या एवं शनिवार निकले तो क्षीण सन्तति समझना चाहिये ।

१०—गर्भिणीके नामके अक्षरोंमें २०का अंक, वर्तमान तिथि संख्या और ४का अंक जोड़कर ९का भाग देनेसे सम अंक शेष रहे तो कन्या और विषम अंक शेष रहे तो पुत्र उत्पन्न होता है ।

११—यदि प्रश्नकर्त्ता प्रश्न करते समय अपने दाहिने अंगका स्पर्श करते हुए प्रश्न करे तो पुत्र और बायें अंगका स्पर्श करते हुए प्रश्न करे तो कन्याका जन्म होता है ।

मूक प्रश्न विचार

यदि प्रश्नलग्न मेष हो तो प्रश्नकर्त्ताके मनमें मनुष्योंकी चिन्ता, वृष हो तो चौपायों या मोटरकी चिन्ता, मिथुन हो तो गर्भकी चिन्ता, कर्क हो तो व्यवसायकी चिन्ता, सिंह हो तो जीवकी चिन्ता, कन्या हो तो स्त्रीकी चिन्ता, तुला हो तो धनकी चिन्ता, वृश्चिक हो तो रोगीकी चिन्ता, मकर हो तो शत्रुकी चिन्ता कुम्भ हो तो स्थानकी चिन्ता और मीन हो तो दैव सम्बन्धी चिन्ता समझनी चाहिये ।

१—लग्नेश या लाभेशसे जिस स्थानमें चन्द्रमा बैठा हो उसी भावकी चिन्ता पृच्छकके मनमें होती है ।

२—बलवान् चन्द्रमासे जिस स्थानमें लग्नेश बैठा हो उस भावका प्रश्न जानना चाहिए ।

३—जिस स्थानमें चन्द्रमा बैठा हो उस स्थानका प्रश्न या उच्च और

सबसे अधिक बलवान् ग्रह जिस भावमें बैठा हो उस भावका प्रश्न जानना चाहिए ।

४––लाभेशसे जो ग्रह बलवान् (निसर्ग, काल, चेष्टा, दृष्टि, दिशा आदि बलसे युक्त) हो उससे चन्द्रमा जिस भावमें हो उस भाव सम्बन्धी प्रश्न प्रश्नकर्त्ताके मनमें जानना चाहिये ।

५––यदि लग्नमें बलवान् ग्रह हो तो अपने विषयमें, तीसरे स्थानमें बलवान् ग्रह हो तो भाईके विषयमें, पंचम स्थानमें हो तो सन्तानके विषयमें, चतुर्थ स्थानमें हो तो माता और मौसीके विषयमें, छटवें स्थानमें हो तो शत्रुके विषयमें, सप्तम स्थानमें हो तो स्त्रीके विषयमें, नवम स्थानमें हो तो धर्म या भाग्यके विषयमें, दशममें हो तो राजाके विषयमें प्रश्न समझना चाहिये ।

६––सूर्य अपने घरका हो तो राजा, राज्यके सम्बन्धमें अपनी या पिताकी चिन्ता; चन्द्रमा स्वगृही हो तो जल, खेत, गढ़ा, धन और माताकी चिन्ता; मंगल स्वगृही हो तो शत्रुभय, राजभय, भूमि, जमीन्दारीकी चिन्ता; बुध स्वगृही हो तो खेत, आयुध, चाचा और स्वामीकी चिन्ता; गुरु स्वगृही हो तो धर्म, मित्र, विद्या, गुरु और शासनके सम्बन्धमें चिन्ता; शुक्र स्वगृही हो तो अच्छी बातोंकी चिन्ता और शनि हो तो घर और भूमिकी चिन्ता पृच्छकके मनमें होती है।

७––चन्द्रमा लग्नमें हो तो मार्ग, या शत्रुकी चिन्ता; धनमें हो तो क्षेत्र, धन, भोज्य पदार्थोंकी चिन्ता; तीसरे स्थानमें हो तो प्रवासकी चिन्ता; चतुर्थ स्थानमें हो तो घर और माताके विषयमें चिन्ता; पंचममें हो तो सन्तानकी चिन्ता; षष्ठमें हो तो रोगचिन्ता, सप्तममें हो तो स्त्रीकी चिन्ता; अष्टम स्थानमें हो तो मृत्युकी चिन्ता; नवममें हो तो यात्राकी; दशममें हो तो खेत, कार्यसिद्धिकी; एकादशमें हो तो वस्त्र, लाभकी; और बारहवेंमें हो तो चोरी गई वस्तुके लाभकी चिन्ता पृच्छकके मनमें होती है ।

८—मंगल बलवान् हो तो अपने विषयमें, गुरु बलवान् हो तो स्त्रीके विषयमें, चन्द्रमा बलवान् हो तो माताके विषयमें, शुक्र बलवान् हो तो वंशके विषयमें; शनि बलवान् हो तो शत्रुके विषयमें और सूर्य बलवान् हो तो पिताके विषयमें प्रश्न पृच्छकके मनमें होता है।

मुष्टिका प्रश्न विचार

प्रश्न समय मेष लग्न हो तो मुट्ठीकी वस्तुका लालरंग, वृष लग्न हो तो पीला, मिथुन हो तो नीला, कर्क हो तो गुलाबी, सिंह हो तो धूमिल, कन्या हो तो नीला, तुला हो तो पीला, वृश्चिक हो तो लाल, धनु हो तो पीला, मकर तथा कुम्भमें कृष्ण वर्ण और मीनमें पीला वर्ण होता है। वस्तुका विशेष स्वरूप लग्नेशके स्वरूप, गुण और आकृतिसे कहना चाहिए।

केरल मतानुसार प्रश्न विचार

प्रातःकाल पृच्छक आये तो उसके प्रश्नाक्षरोंको या बालकके मुखसे किसी पुष्पका नाम, मध्याह्नमें बालकके मुखसे फलका नाम, दिनके तीसरे पहरमें बालकके मुखसे देवका नाम और सायंकालमें नदी या तालाबका नाम ग्रहण करना चाहिए। बालकके अभावमें प्रश्नकर्त्ताके मुखसे ही पुष्पादिका नाम ग्रहण करना चाहिए। जो पृच्छकका प्रश्न वाक्य हो उसके स्वर और व्यञ्जनोंका विश्लेषण कर निम्न प्रकारसे पिण्ड बना लेना चाहिए।

अ=१२, आ=२१, इ=११, ई=१८, उ=१५, ऊ=२२, ए=१८, ऐ=३२, ओ=२५, औ=१९, अं=२५, क=१३, ख=११, ग=२१, घ=३०, ङ=१०, च=१५, छ=२१, ज=२३, झ=२६, ञ=२६, ट=१०, ठ=१३, ड=२२, ढ=३५, ण=४५, त=१४, थ=१८, द=१७, ध=१३, न=३५, प=२८, फ=१८, ब=२६,

भ=२७, म=८६, य=१६, र=१३, ल=१३, व=३५, श=२६, ष=३५, स=३५, ह=१२

मात्रावर्ण ध्रुवाङ्क चक्र

अ	१२	क	१२	ठ	१२	ब	२६
आ	२१	ख	१२	ड	२२	भ	२७
इ	११	ग	२१	ढ	३५	म	८६
ई	१८	घ	३०	ण	४५	य	१६
उ	१५	ङ	१०	त	१४	र	१३
ऊ	२२	च	१५	थ	१८	ल	१३
ए	१८	छ	२१	द	१७	व	३५
ऐ	३२	ज	२३	ध	१३	श	२६
ओ	२५	झ	२६	न	३५	ष	३५
औ	१९	ञ	२६	प	२८	स	३५
अं	२५	ट	१७	फ	१८	ह	१२

लाभालाभके प्रश्नमें पिण्ड संख्यामें ४२ क्षेपकका अंक जोड़ देना चाहिए और जो योगफल आवे उसमें ३का भाग देनेपर १ शेष बचे तो पूर्ण लाभ, २ शेष बचे तो अल्पलाभ और शून्य शेष बचे तो हानि कहना चाहिए।

उदाहरण--गोपाल प्रातःकाल लाभालाभका प्रश्न पूछनेके लिए आया, इसलिये उससे किसी फूलका नाम पूछा, उसने चमेलीका नाम लिया। 'चमेली' प्रश्न वाक्यमें च्+अ+म्+ए+ल्+ई ये स्वर और व्यञ्जन हैं। मात्रा और वर्ण ध्रुवाङ्कपरसे पिण्ड बनाया--

च्=१५, अ=१२, म्=८६, ए=१८, ल्=१३, ई=१८ १५+१२+८६+१८+१३+१८=१६२ पिण्डाङ्क, इसमें क्षेपाङ्क जोड़ा। १६२+४२=२०४÷३=६८ ल०, शेष ०। यहाँ शून्य शेष रहा है, अतएव हानि फल समझना चाहिये।

जयपराजय--पिण्डाङ्कमें ३४ जोड़कर तीनका भाग देनेसे १ शेष

रहे तो जय, २ शेषमें सन्धि और शून्यमें पराजय कहनी चाहिए ।

सुख-दुख––पिण्डाङ्कमें ३८ जोड़कर २का भाग देनेसे एक शेषमें सुख और शून्यमें दुःख समझना चाहिए ।

गमनागमन––यात्राके प्रश्नमें पिण्डाङ्कमें ३३ जोड़कर ३का भाग देनेसे १ शेष रहे तो तत्काल यात्रा, दो शेषमें यात्राका अभाव और शून्य शेषमें पीड़ा और कष्ट फल समझना चाहिए ।

जीवनमरण––किसी रोगी या अन्य किसी व्यक्तिके सम्बन्धमें कोई पूछे कि अमुक जीवित रहेगा या मरेगा अथवा जीवित है या मर गया है तो इस प्रकारके प्रश्नमें पिण्डाङ्कमें ४० जोड़कर ३का भाग देनेसे एक शेष रहनेसे जीवित; दो रहनेसे कष्टसाध्य और शून्य शेष रहनेसे मृत समझना चाहिए ।

वर्षाप्रश्न––वर्षा होगी या नहीं ? इस प्रकारके प्रश्नमें पिण्डाङ्कमें ३२ जोड़कर ३का भाग देनेसे एक शेषमें वर्षा, दोमें अल्पवृष्टि और शून्य शेषमें वर्षाका अभाव ज्ञात करना चाहिए ।

गर्भका प्रश्न––गर्भ है या नही इस प्रकारके प्रश्नमें पिण्डाङ्कमें २९ जोड़कर ३का भाग देनेसे एक शेष रहे तो गर्भ, दो शेषमें सन्देह और शून्य शेषमें गर्भका अभाव समझना चाहिए ।

उदाहरण––देवदत्त अपने मुकद्दमाके सम्बन्धमें पूछने आया कि मैं उसमें विजय प्राप्त करूँगा या नही ? उसके मुखसे फलका नाम उच्चारण कराया तो उसने नीबूका नाम लिया । इस प्रश्न वाक्यका पिण्डाङ्क बनानेके लिये स्वर व्यञ्जनोंका विश्लेषण किया तो––

न्+ई+ब्+ऊ=३५+१८+२६+२२=१०१ पिण्डाङ्क, जय-पराजयका प्रश्न होनेके कारण पिण्डाङ्कमें ३४ जोड़ा तो––

१०१+३४=१३५÷३=४५ ल०, शेष शून्य रहा । अतएव यहाँ मुकद्दमेमें पराजय समझना चाहिये । इसी प्रकार उपर्युक्त सभी प्रकारके प्रश्नोंके उदाहरण समझ लेना चाहिये ।

प्रकारान्तरसे पुत्र-कन्या प्रश्न--यदि कोई प्रश्न करे कि कन्या होगी या पुत्र ? तो प्रश्न समयके तिथि, वार, नक्षत्र और योगको जोड़कर उसमें नामकी अक्षर संख्याको भी जोड़कर ७से भाग देना चाहिए । भाग देनेसे सम अंक--२।४।६ शेष रहें तो कन्या और विषम अंक--१।३।५।७ शेष रहें तो पुत्रका जन्म कहना चाहिए ।

प्रश्नपिण्डाङ्कमे ३का भाग देनेसे एक शेषमें पुत्रका जन्म, दोमें कन्याका जन्म और शून्यमें गर्भका अभाव समझना चाहिए ।

उदाहरण--प्रश्नकर्त्ताका प्रश्नवाक्य यमुना नदी है इसका विश्लेषण किया तो--य्+अ+म्+उ+न्+आ हुआ । १६+१२+८६+१५+३५+२१=१८५ पिण्डाङ्क, १८५÷३=६१ ल०, २ शे० यहाँ दो शेष रहा है अतः कन्याका जन्म समझना चाहिए ।

कार्यसिद्धिकी समय मर्यादा--कोई पूछे हमारा कार्य कबतक होगा ऐसे प्रश्नमे उस समयका तिथि सख्या, वार सख्या और नक्षत्र सख्याका योग-कर, योगफलको ३से गुणाकर ६ और जोड़ दे । इस योगफलमे ९का भाग देनेसे एक शेषमें पक्ष, दोमे मास, तीन शेषमे ऋतु, चार शेषमे अयन अर्थात् छह मास, पाँच शेषमें दिन, छः शेषमें रात, सात शेष रहे तो प्रहर, आठ शेषमे घटी और नौ शेष रहे तो एक मिनट कार्य होनेकी अवधि समझना चाहिये ।

उदाहरण--हरि पूछने आया कि मेरा कार्य कितने समयमे होगा ? जिस दिन हरि आया उस दिन सप्तमी तिथि[1], गुरुवार और मघा नक्षत्र था । इन तीनोकी सख्याका योग किया ७+५+१०=२२, २२×३=६६+६=७२, ७२÷९=८ ल० ९ शे०, एक मिनटमे अर्थात् तत्काल ही पृच्छकका कार्य सिद्ध होगा ।

---

[1]**तिथि गणना प्रतिपदासे, नक्षत्रगणना अश्विनीसे और वारगणना रविवारसे ली जाती है ।**

विवाह प्रश्न––पृच्छक पूछे कि मेरा या अन्य किसीका विवाह होगा अथवा नहीं ? यदि होगा तो कम परिश्रमसे होगा या अधिकसे ? इस प्रकारके प्रश्नकी पिण्डाङ्क संख्यामें ८से भाग देनेपर एक शेष रहे तो अनायास ही विवाह, दो शेष रहे तो कष्टसे विवाह; तीन शेष रहे तो विवाहका अभाव; चार शेषमें जिस कन्याके साथ विवाह होनेवाला है उसकी मृत्यु; पाँचमें किसी कुटुम्बीकी मृत्यु; छः शेषमें विवाहके समय राजभय; सात शेष रहे तो दम्पत्ति का मरण अथवा ससुरका मरण; और आठ शेष रहे तो सन्तानकी मृत्यु समझनी चाहिए ।

उदाहरण––पृच्छकका प्रश्न वाक्य यमुना है जिसकी पिण्डाङ्क संख्या १८५ है, इसमें आठसे भाग दिया––

१८५÷८=२३ ल०, १ शे० । यहाँ एक शेष रहा है अतः आसानीसे बिना कष्टके विवाह होगा, ऐसा फल कहना चाहिए ।

चमत्कार प्रश्न

१––**जन्मपत्री मृतककी है या जीवितकी**––इस प्रश्नमें जन्मलग्न अष्टम स्थानकी राशि और प्रश्नलग्न इन तीनोंकी संख्याको जोड़कर जन्मकुण्डलीके अष्टमेशकी राशि संख्यासे गुणाकर लग्नेशकी राशि संख्यासे भाग देनेपर विषम अंक १।३।५।७।९।११ शेष रहें तो जीवितकी और सम अंक २।४।६।८।१०।१२ शेष रहें तो मृतककी पत्रिका होती है ।

उदाहरण––प्रश्नलग्न तुला जन्मलग्न मीन, अष्टमेशकी राशि ९, लग्नेशकी राशि ५ है

७+१२+७=२६×९=२३४÷५=४६ ल० ४ शे० । अतएव मृतककी जन्मपत्रिका कहनी चाहिये ।

२––जन्मलग्न, प्रश्नलग्न और जन्मकुण्डलीके अष्टमेशकी राशि; इन तीनोंको जोड़नेसे जो योगफल आवे उसमें अष्टमेशकी राशिसे गुणा करना चाहिये और गुणनफलमें प्रश्न समयमें सूर्य जिस नक्षत्रपर हो उसकी

संख्यासे भाग देना चाहिये । सम शेषमें मृतककी जन्मपत्री और विषम शेषमें जीवितकी जन्मपत्री होती है ।

उदाहरण--जन्मल० १२+७ प्रश्नल०+अष्टमेश रा० ९= १२+७+९=२८

२८×९=२५२, प्रश्न समयमें सूर्य ५ राशिका है अतः ५से भाग दिया तो--२५२÷५=५० ल० २ शे० । समशेष रहनेसे मृतककी जन्मपत्री समझनी चाहिये ।

१--**पुरुष-स्त्रीकी जन्मपत्रीका विचार**--राहु और सूर्य जिस राशि-पर हो उस राशिकी अंक संख्या तथा लग्नांक संख्याको जोड़कर तीनका भाग देनेसे शून्य और एक शेषमें स्त्रीकी और दो शेषमें पुरुषकी जन्मपत्री होती है ।

उदाहरण--राहु कन्याराशि, सूर्य कर्क राशिमें और लग्न धनु-राशि है ।

६+४+९=१९÷३=६ ल० १ शे० । स्त्रीकी जन्मपत्री है ।

२--जन्मलग्नको छोड़ अन्यत्र विषम स्थानमें शनि स्थित हो और पुरुषग्रह बलवान हों तो पुरुषकी कुण्डली; इससे विपरीत हो तो स्त्रीकी कुण्डली समझनी चाहिए ।

दम्पतिकी मृत्युका ज्ञान--स्त्री पुरुष मे किसकी मृत्यु पहले होगी, इसका विचार करनेके लिये नामाक्षर संख्याको तिगुना करना और मात्रा संख्याको चौगुना कर, दोनों संख्याओंको जोड़कर तीनका भाग देनेपर एक या शून्य शेष रहे तो पुरुषकी पहले मृत्यु और दो शेष रहे तो स्त्रीकी मृत्यु पहले होती है ।

२--पुरुष-स्त्रीकी जन्मराशि संख्याको जोड़कर तीनका भाग देनेसे शून्य और एक शेष रहे तो पुरुषकी मृत्यु एवं दो शेष रहे तो पहले स्त्रीकी मृत्यु होती है । इस प्रकार प्रश्नोंका फल निकाल लेना चाहिए ।

इस प्रकार भारतीय ज्योतिषके व्यावहारिक सिद्धान्त वैदिक कालसे आजतक उत्तरोत्तर विकसित होते चले आ रहे हैं। ऋग्वेद, कृष्ण यजुर्वेद, अथर्ववेद, शतपथ ब्राह्मण, मुण्डकोपनिषद्, छान्दोग्योपनिषद्, तैत्तिरीय ब्राह्मण, मैत्रायणी संहिता, काठक संहिता, अनुयोगद्वार सूत्र एवं समवायाङ्ग आदिमें प्राचीन कालमें ही ज्योतिषकी महत्वपूर्ण चर्चाएँ लिखी गयी है। मेरा विश्वास है कि भारतीय वाङ्मयका ऐसा एक भी ग्रन्थ नहीं है, जिसमें ज्योतिषका उपयोग न किया गया हो। यह विज्ञान निरन्तर विकसित होता हुआ अपनी प्रभारश्मियोंको दर्शनादि शास्त्रों पर विकीर्ण करता रहा है।

मैंने अथाह ज्योतिष-सागरमेंसे कतिपय रत्नोंको निकाल कर राष्ट्रभाषाके प्रेमी पाठकोंके समक्ष रखनेका प्रयास किया है। यद्यपि इन रत्नोंके साथ फेन भी मिलेगा, जिससे इनकी चमक मटमैली प्रतीत होगी, तो भी व्यावहारिक जीवनोपयोगी ज्ञानको ये अवश्य आलोकित करेंग, इसमें सन्देह नहीं।

ज्योतिष के सैद्धान्तिक गणितको मैंने इसमें नहीं छूआ है। अवसर मिलनेपर एक स्वतन्त्र पुस्तक ग्रहण, ग्रहोंकी गतियाँ एवं उनके बीज संस्कार आदि पर लिखूँगा। हिन्दी भाषाके प्रेमी पाठक इस आनन्दवर्द्धक विषयका आस्वादन करें, यही मेरी आकांक्षा है।

ॐ शान्तिः ! ॐ शान्तिः !! ॐ शान्तिः !!!

लेखनमें प्रयुक्त ग्रन्थों की अनुक्रमणिका

अकलंक संहिता—अकलंकदेवकृत, हस्त लिखित, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा

अथर्व ज्योतिष—सुधाकर सोमाकर भाष्य सहित, मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स, काशी

अथर्ववेद—सायण भाष्य

अथर्ववेद संहिता—हिन्दी भाष्य

अद्भुततरंगिणी—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ

अद्भुतसागर—बल्लालसेन विरचित, प्रभाकरी यन्त्रालय, काशी

अद्वैतसिद्धि—गवर्नमेन्ट संस्कृत लाइब्रेरी, मैसूर

अनन्तफलदर्पण—हस्तलिखित

अर्घकाण्ड—दुर्गदेव, हस्तलिखित

अर्घप्रकाश—निर्णयसागर प्रेस, बम्बई

अर्हच्चूड़ामणिसार—भद्रबाहु स्वामी, महावीर ग्रन्थमाला, धुलियान

अलबरूनीज इंडिया—अंग्रेजी

आचाराङ्ग सूत्र—आगमोदय समिति

आयज्ञानतिलक संस्कृत टीका—भट्टवोसरि, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा

आयसद्भाव प्रकरण—मल्लिवेण, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा

आरम्भसिद्धि—हेमहंसगणि टीका सहित, लब्धि सूरीश्वर जैन ग्रन्थमाला छाणी

आर्यभटीय—ब्रजभूषणदास एण्ड सन्स, बनारस

आर्य सिद्धान्त—ब्रजभूषणदास एण्ड सन्स, बनारस

इंडिया ह्वाट कैन इट टीच अस—अंग्रेजी

उत्तरकालामृत—अंग्रेजी अनुवाद, बेंगलोर

ऋग्वेद—सायण भाष्य सहित, पूना
ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका
ऋग्वेदिक इंडिया
ऋग्वेद अंग्रेजी अनुवाद—मैक्समूलर
ऋग्वेद ज्योतिष—सोम-सुधाकर भाष्य
एवरी डे एस्ट्रोलाजी—बी० ए० ऐयर, तारापोरेवाला सन्स एण्ड को०. बम्बई
एस्ट्रोनामी इन ए नट्शेल—गैरट पी० सर्विस विरचित तारापोरेवाला सन्स एण्ड को० बम्बई
एस्ट्रोनामी—टौमस हीथ, तारापोरेवाला सन्स एण्ड को० बम्बई
एस्ट्रोनामी—टेट्स विरचित तारापोरेवाला सन्स एण्ड को० बम्बई
एंसाइक्लोपीडिया आफ़ ब्रिटैनिका—
ऐत्तिरेय ब्राह्मण—सायण भाष्य, सं० काशीनाथ
एन्सेन्ट एण्ड मिडीएवुल इंडिया—
करण कुतूहल—बनारस
करण प्रकाश—चौखम्बा संस्कृत सीरिज, काशी
काठक संहिता—
कालजातक—हस्तलिखित
केरल प्रश्नरत्न—बेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बई
केरल' प्रश्न संग्रह— " "
केवलज्ञान प्रश्न चूड़ामणि—भारतीय ज्ञानपीठ, काशी
केवलज्ञान होरा—चन्द्रसेन मुनि, जैन-सिद्धान्त-भवन आरा
खण्डक खाद्य—ब्रह्मगुप्त, कलकत्ता विश्वविद्यालय
खेटकौतुक—सुखसागर, ज्ञान प्रचारक सभा, लोहावट (मारवाड़)
गणकतरंगिणी—सुधाकर द्विवेदी, गवर्नमेन्ट संस्कृत कालेज, काशी
गणितसार संग्रह—महावीराचार्य

गर्ग मनोरमा––बेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
गर्गमनोरमा––सीतारामझा की टीका, बनारस
गौरीजातक––हस्तलिखित
ग्रहलाघव––सुधामंजरी टीका, बनारस
ग्रहलाघव––सुधाकर टीका
चन्द्रार्क ज्योतिष––नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
चन्द्रोन्मीलन प्रश्न––हस्तलिखित, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
चन्द्रोन्मीलन प्रश्न––बृहद्ज्योतिषार्णवके अन्तर्गत
चमत्कार चिन्तामणि––भाव प्रबोधिनी टीका, चौखम्बा संस्कृत सीरिज काशी
छान्दोग्योपनिषद्––निर्णय सागर प्रेस, बम्बई
छान्दोग्य ब्राह्मण––हिन्दी भाष्य
जातकतत्त्व––महादेवशर्मा, रतलाम
जातक पद्धत्ति––केशवीय, वामनाचार्य संशोधन सहित, काशी
जातकपारिजात––परिमल टीका, चौखम्बा काशी
जातकाभरण––ढुंढिराज, बम्बई भूषण प्रेस, मथुरा
जातकक्रोड़पत्र––शशिकान्त झा, मुजफ्फरपुर
ज्योतिर्गणित कौमुदी––रजनीकान्त, बम्बई
ज्योतिष तत्त्वविवेक निबन्ध––बम्बई
ज्योतिर्विवेकरत्नाकर––कर्मवीर प्रेस, जबलपुर
ज्यातिषसार––हस्तलिखित, नया मन्दिर दिल्ली
ज्योतिषसार संग्रह (प्राकृत) ––भगवानदास टीका, नरसिंह प्रेस, २०१ हरीसन रोड, कलकत्ता
ज्योतिष श्याम संग्रह––बेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
ज्योतिष सिद्धान्तसार संग्रह––नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
ज्योतिष सागर–– ,, ,,

ज्योतिष सिद्धान्त सार––नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
ज्ञानप्रदीपिका––जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
ठाणाङ्ग––हस्तलिखित, आरा
तत्त्वार्थसूत्र––पन्नालाल वाकलीवाल टीका
ताजिक नीलकंठी––शक्तिधर टीका
त्रिलोक प्रज्ञप्ति––जीवराज ग्रन्थमाला, शोलापुर
त्रिलोकसार––माधव चन्द्रत्रैवेद्य संस्कृत टीका, बम्बई
दशाफल दर्पण––महादेव पाठक, भुवनेश्वरी प्रेस, रतलाम
दैवज्ञ काम धेनु––व्रजभूषणदास एण्ड सन्स, काशी
दैवज्ञ कल्पद्रुम––धौलपुर
दैवज्ञ वल्लभ––चौखम्बा संस्कृत सीरिज, काशी
नरपति जयचर्या––निर्णय सागर प्रेस, बम्बई
नारचन्द्र ज्योतिष––हस्तलिखित, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
नारचन्द्र ज्योतिष प्रकाश––रतीलाल-प्राणभुवनदास, चूड़ीवाला, हीरापुर, सूरत
निमित्तशास्त्र––ऋषिपुत्र, सोलापुर
पञ्चाङ्ग तत्त्व––निर्णय सागर प्रेस, बम्बई
पञ्चसिद्धान्तिका––डा० थीबो तथा सुधाकर टीका
पञ्चाङ्गफल––ताड़पत्रीय, जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
पाशाकेवली––हस्तलिखित, जैन-सिद्धान्त-भवन आरा
प्रश्नकुतूहल––बेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
प्रश्नोपनिषद्––हस्तलिखित जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा
प्रश्नकौमुदी––बेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
प्रश्नचिन्तामणि–– ,, ,,
प्रश्ननारदीय––बम्बई भूषण प्रेस, मथुरा
प्रश्न वैष्णव––बेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई

प्रश्नसिद्धान्त—बेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
प्रश्नसिन्धु—मनोरंजन प्रेस, बम्बई
बृहद्ज्योतिषार्णव—बम्बई
बृहज्जातक—मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स, काशी
बृहत्पराशरी—मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स, काशी
बृहत्संहिता—वी० जे० लाजरस् कम्पनी, काशी
ब्रह्मसिद्धान्त—ब्रजभूषणदास एण्ड सन्स, काशी
भविष्यज्ञान ज्योतिष—तिलकविजय रचित, कटरा खुशालराम, देहली
भावप्रकरण—विमल गणि विरचित, सुखसागर ज्ञानप्रचारक सभा, लाहा-वट (मारवाड़)
भावकुतूहल—ब्रजवल्लभ हरिप्रसाद कालवादेवी रोड, रामवाड़ी बम्बई
भावनिर्णय—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
भुवनदीपक—पद्मप्रभसूरिदेव, बेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
मण्डलप्रकरण—मुनि चतुरविजय कृत, आत्मानन्द जैन सभा, भावनगर
महाभारत—आदिपर्व और वनपर्व, हिन्दी टीका
मानस सागरी पद्धत्ति—निर्णय सागर प्रेस, बम्बई
मानससागरी पद्धति—चौखम्बा संस्कृत सीरिज, काशी
मुहूर्त्त चिन्तामणि—पीयूषधाराटीका
मुहूर्त्त चिन्तामणि—मिताक्षराटीका
मुहूर्त्त मार्त्तण्ड—चौखम्बा संस्कृत सीरिज, काशी
मुहूर्त्तदर्पण—आरा
मुण्डकोपनिषद्—निर्णय सागर प्रेस
मुहूर्त्त संग्रह—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
मुहूर्त्तसिन्धु—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
मुहूर्त्तगणपति—चौखम्बा संस्कृत सीरिज, काशी
यजर्वेद संहिता —वाजसनेय-माध्यन्दिन-संहिता, संस्कृत भाष्य

यन्त्रराज——महेन्द्रगुरु रचित, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई
रिष्टसमुच्चय——दुर्गदेव रचित, गोधा ग्रन्थमाला, इन्दौर
लघुजातक——मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स, काशी
वर्षप्रबोध——मेघविजय गणिकृत, भावनगर
विद्यामाधवीय——गवर्नमेन्ट संस्कृत लाइब्रेरी, मैसूर
विवाहवृन्दावन——मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स, काशी
वैजन्ती गणित——राधायन्त्रालय, बीजापुर
शतपथ ब्राह्मण——सत्यव्रत सामश्रमी, सायण भाष्य सहित
समरसार——वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
समवायाङ्ग——जैन-सिद्धान्त-भवन, आरा हस्तलिखित भण्डार
सर्वानन्दकरण——लोकसंग्रह मुद्रणालय, पूना
सामवेद——सायण भाष्य, दुर्गादास, लाहिड़ी
सारावली——कल्याणवर्मा विरचित, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई
सुगम ज्योतिष——देवीदत्त जोशीकृत, मास्टर खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स, काशी
सूर्यसिद्धान्त——सुधाकर भाष्य सहित

भारतीय ज्ञानपीठ काशीके

सुरुचिपूर्ण प्रकाशन

१. मुक्तिदूत [पौराणिक उपन्यास]	५)
२. दो हजार वर्ष पुरानी कहानियाँ	३)
३. पथचिह्न [स्मृति-रेखाएँ]	२)
४. शेर-ओ-शायरी [द्वितीय संस्करण]	८)
५. मिलनयामिनी [गीत]	४)
६. वैदिक साहित्य	६)
७. हमारे आराध्य [श्री० बनारसीदास चतुर्वेदी]	३)
८. रजतरश्मि [डा० वर्माके एकांकी नाटक]	२।)
९. आधुनिक जैन कवि	३।।)
१०. हिन्दी जैन साहित्यका संक्षिप्त इतिहास	२।।=)
११. कुन्दकुन्दाचार्यके तीन रत्न	२)
१२. जैन शास्त्र [द्वितीय संस्करण]	३)
१३. महाबन्ध [महाधवल सिद्धान्तशास्त्र]	१२)
१४. मदन पराजय	८)
१५. कन्नडप्रान्तीय ताडपत्रीय ग्रन्थसूची	१३)
१६. तत्वार्थवृत्ति [हिन्दीसार सहित]	१६)
१७. न्यायविनिश्चय विवरण [प्रथम भाग]	१५)
१८. सभाष्य रत्नमंजूषा	२)
१९. नाममाला सभाष्य	३।)
२०. केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणि	४)
२१. जातकट्ठकथा	सा. ८) वि. ९)